भारत का आर्थिक भूगोल

(ECONOMIC & COMMERCIAL GEOGRAPHY OF INDIA)

FOR

B. A., B. Com., Inter. (Arts, Com. & Science) and Higher Secondary Classes

लेखक

एम० एल० सोलंकी, एम० ए०

अध्यक्ष, भूगोल विभाग

श्री महाराज कुमार कॉलेज, जोधपुर

पूर्णतया संशोधित एवं परिवर्द्धित संस्करण

दी स्टूडेण्ट्स बुक कम्पनी

जयपुर जोधपुर

छठा संस्करण] १६५६ [पाँच रुपया

प्रकाशक :
दी स्टूडेण्ट्स बुक कम्पनी
जयपुर जोधपुर

दो शब्द

[पंचम संस्करण]

पुस्तक को और अधिक उपयोगी बनाने के लिए दो नए अध्याय लिखे गए हैं। ंचवर्षीय योजना काल में भारत में औद्योगिक विकास की ओर विशेष ध्यान दिया जा रहा ौद्योगिक विकास के महत्व को बताने के लिए भारत के औद्योगिक प्रदेश पर एक स्वतंत्र । दिया गया है।

राजस्थान के आर्थिक विकास पर एक स्वतत्र विस्तृत अध्याय है। यह पुस्तक के ाग में दिया गया है। राजस्थान संबंधी जानकारी देने से पुस्तक माध्यमिक बोर्ड के ौर वाणिज्य के छात्रों के लिए अधिक उपयोगी हो गई है क्योंकि उन कक्षाओं के म में राजस्थान के आर्थिक विकास को निर्धारित किया गया है।

पुस्तक में स्थान स्थान पर विकास सम्बन्धी नवीन अँक दिये गए हैं। चित्रों की ं भी वृद्धि की गई है।

जोधपुर
गांधी जयंती
अक्टूबर १६५८

एम. एल. सोलंकी

[चतुर्थ संस्करण]

इन नवीन संस्करण में पुस्तक को तीन भागों में बाँट दिया है—प्रथम में आर्थिक के मूल तत्वों का दिग्दर्शन कराया गया है. द्वितीय भाग में सामूहिक रूप से भारत र्थिक एवं व्यापारिक विवरण है और तृतीय भाग में नव-भारत निर्माण की नई योजनाओं र्णन है।

इस संस्करण की ये विशेषताएँ हैं:—

१. पुराने मान-चित्रों के स्थान पर लगभग सभी अध्यायों में नये मानचित्र दिये गये हैं।
२. मान-चित्रों की संख्या में पर्याप्त वृद्धि की गई है।
३. विश्व में भारत के महत्व को बताने के लिए एक अलग अध्याय दिया गया है।
४. कृषि की उपज एवं व्यापार सम्बन्धी नवीनतम आंकड़े दिये गए हैं।
५. रेलों के नवीनतम विभागों का विवरण दिया गया है और प्रत्येक विभाग का अलग अलग मानचित्र है।
६. नदी-घाटी योजनाओं की प्रगति एवं उनसे होने वाले लाभों का दिग्दर्शन कराया गया है और मुख्य मुख्य बहुमुखी योजनाओं के मान-चित्र भी दिये गये हैं।
७. उपज के अंक नवीन राजनैतिक विभागों के आधार पर दिए गए हैं।

आशा है पाटकों को इस नवीन संस्करण से अवश्य लाभ होगा। वैसे तो यह डिग्री कक्षाओं तक ही विश्व-विद्यालय के लिए स्वीकृत है किन्तु सामग्री की व्यवस्था ते हुए एम० ए० के छात्र भी इससे लाभ उठा सकते हैं।

जून १६५७]

एम. एल. सोलंकी

[तृतीय संस्करण]

पुस्तक के प्रस्तुत संस्करण में पर्याप्त संशोधन किए गए हैं। इस संस्करण की निम्न-लिखित विशेषताएँ हैं:—

आर्थिक भूगोल की परिभाषा और क्षेत्र को अधिक स्पष्ट रूप से समझाने का प्रयत्न किया गया है।

कृषि की उपज, खनिज सम्पत्ति और कारखानों में उत्पादित माल के नवीन आँकड़े दिये गये हैं।

'कुटीर उद्योग' पर एक स्वतंत्र अध्याय लिखा गया है। बड़े उद्योगों में आज-कल अनेक नवीन उद्योगों का वर्णन किया गया है जैसे—रासायनिक खाद बनाना, साइकिल व्यवसाय, टेलीफोन फैक्ट्री आदि।

जन-सख्या के अध्याय में नवीनतम अंक दिये गए हैं। राजनैतिक विभागों के स्थान पर भारत के भौगोलिक विभागों की जन-संख्या के अंक दिए हैं। इसके अतिरिक्त शहरी और ग्रामीण जन-संख्या, स्त्री-पुरुषों के अनुसार आबादी, जन्म दर और मृत्यु दर तथा प्रवासी भारतीय जनों की संख्या भी दी गई है।

आवागमन के अध्यायों में रेलों के नवीन वर्गीकरण तथा वायु-मार्ग के राष्ट्रीयकरण का वर्णन है।

संवाद-वहन के साधनों—जैसे डाक, तार और टेलीफोन का वर्णन एक अलग स्वतंत्र अध्याय में दिया गया है।

व्यापार के अध्याय में सन् १९५३-५४ के आयात और निर्यात के अंक दिये गये हैं। यह भी बताया गया है कि भारत सरकार हमारे विदेशी व्यापार की उन्नति के लिए क्या उपाय कर रही है?

भारत की पंचवर्षीय योजना, सामुदायिक विकास योजनाओं और नदियों की बहुमुखी योजनाओं पर तीन अलग अलग अध्याय लिखे गए हैं।

पुस्तक के अन्त में परिशिष्ट के रूप में भारत के आर्थिक विकास सम्बन्धी आंकड़े दिये गये हैं, जिनसे विद्यार्थियों को अवश्य लाभ होगा।

१ जुलाई सन् १९५५]

एम. एल. से..

[प्रथम संस्करण]

भारत जैसे विशाल देश के प्राकृतिक स्रोतों तथा उनके आर्थिक विकास का विस्तृत विवरण इस प्रकार की छोटी-सी पुस्तक में दे देना कठिन है। फिर भी इसके द्वारा हमारे देश की आर्थिक उन्नति तथा व्यापार सम्बन्धी प्रायः सभी विषयों पर संक्षिप्त-परन्तु विवेचनापूर्ण ढंग से प्रकाश डालने का प्रयत्न किया गया है।

अभी तक आर्थिक भूगोल पर उच्च कक्षाओं के छात्रों के लिए जो कुछ भी थोड़ी बहुत पुस्तकें प्राप्त हैं, वे प्रायः अंग्रेजी में हैं। देश के प्रमुख विश्वविद्यालयों ने हिन्दी को शिक्षा का माध्यम स्वीकार कर लिया है। प्रायः सभी विषयों पर हिन्दी में लिखित पुस्तकों की कमी है। भूगोल जैसे व्यापक विषय में तो यह कमी बहुत खटकती है। इसी प्रेरणा से प्रेरित होकर लेखक ने यह भारी प्रयास करने का दुस्साहस किया है। कॉलेज की उच्च कक्षाओं के लिये भारत के आर्थिक भूगोल पर हिन्दी में लिखने का कदाचित् यह प्रथम प्रयास है।

हमारे देश का प्राकृतिक वातावरण यहाँ के आर्थिक विकास में कितना सहायक हुआ है और हो सकता है—इसके आधार पर प्रस्तुत पुस्तक में भारत की कृषि की उपज, वन-सम्पदा, खनिज-सम्पत्ति, उद्योग-धन्धे, जन-संख्या का विवरण, यातायात के साधन, व्यापार आदि का विवरण दिया गया है। प्रत्येक अध्याय में यह भी बताने की चेष्टा की गई है कि हमारे आर्थिक विकास में क्या रुकावटें हैं? और उनका निवारण किस प्रकार से किया जा सकता है। गत विश्वव्यापी युद्ध तथा देश के विभाजन का हमारी कृषि की उपज, उद्योग-धन्धे तथा व्यापार पर क्या प्रभाव पड़ा, उसका उल्लेख भी यथास्थान किया गया है।

पुस्तक की भाषा को बहुत सरल बनाने का यत्न किया गया है, जिससे थोड़ी हिन्दी जानने वाले भी इससे लाभ उठा सकें।

लेखक की ओर से पुस्तक के विषय में और अधिक लिखना व्यर्थ है। यह पुस्तक उपयोगी है या अनुपयोगी इसका निर्णय तो इसे पढ़ कर पाठक स्वयं ही कर सकेंगे। हाँ, भूगोल के विद्वानों से एक निवेदन अवश्य है कि उन्हें जो कुछ भी कमी इस पुस्तक में दिखाई दे, कृपया लेखक को सूचित कर दें, जिससे आगे के संस्करण में सुधार कर दिया जाय। लेखक इस कृपा के लिये उन सज्जनों का बहुत आभारी होगा।

इस पुस्तक को तैयार करने में कई लेखकों, प्रकाशकों तथा भूगोल के विद्वानों से सहायता ली गई है। उनकी नामावली देने से एक बहुत लम्बी सूची बन सकती है। लेखक उन सभी का आभारी है और आशा है कि भविष्य में भी उन सभी महानुभावों द्वारा इसी तत्परता से प्रोत्साहन मिलता रहेगा।

यदि पुस्तक से पाठकों को थोड़ा-सा भी लाभ पहुँचा तो लेखक अपने प्रयत्न को सफल समझेगा।

श्री महाराज कुमार कॉलेज,
जोधपुर
गाँधी जयन्ती, सन् १९५०.

एम. एल. सोलंकी

विषय-सूची

प्रथम भाग

(आर्थिक भूगोल के मूल तत्व)

द्वितीय भाग

(भारत का आर्थिक एवं व्यापारिक विवरण)

तृतीय भाग

(नव भारत-निर्माण की नई योजनाएँ)

चतुर्थ भाग

प्रथम भाग

आर्थिक भूगोल के मूल तत्व

भारत का आर्थिक भूगोल

अध्याय १

आर्थिक भूगोल का क्षेत्र

आर्थिक भूगोल का विषय आज इतना व्यापक हो गया है कि सभ्य देशों के प्रायः सभी मनुष्य इससे भली भाँति परिचित हैं। विश्व के विभिन्न प्रदेशों में रहने वाले लोग अपना जीवन निर्वाह करने के लिए अनेक आर्थिक क्रियायें करते हैं। कुछ लोग खेती करते हैं और कुछ कारखानों में काम करते हैं। कुछ जंगलों से लकड़ी काटते हैं और कुछ खानों से खनिज पदार्थ निकालते हैं। समुद्र तट पर रहने वाले लोग मछली पकड़ने में निपुण होते हैं। अधिकांश रूप में मनुष्य के व्यवसाय उसके आसपास के वातावरण पर निर्भर रहते हैं। मैदान के निवासियों को खेती करने में सुविधा रहती है। वनों में लकड़ी काटने का व्यवसाय सुगमता से होता है। मछली-व्यवसाय समुद्र तट पर ही सहूलियत से हो सकता है। अपने वातावरण से प्रभावित होकर जीवन-यापन के लिये मनुष्य जो आर्थिक क्रियाएँ करता है उनका विवरण ही आर्थिक भूगोल का विषय है।

कुछ विद्वानों ने आर्थिक भूगोल की परिभाषा इस इस प्रकार बताई है:—

(1) "Economic Geography may be defined as the study of the influence exerted upon the economic activities of man by his physical environment."

(मनुष्य की आर्थिक क्रियाओं पर प्राकृतिक वातावरण का जो प्रभाव पड़ता है उसके अध्ययन को आर्थिक भूगोल का विषय माना गया है।)

Mcfarlane.

(2) "Economic Geography is that aspect of the subject which deals with the influence of the invironment, inorganic and organic, on the economic activities of man."

(आर्थिक भूगोल वह विषय है जिसमें मनुष्य की आर्थिक क्रियाओं पर वातावरण द्वारा डाले हुए प्रभाव का अध्ययन होता है।)

Rudmose Brown.

(3) "Economic Geography is that part of human Geography that considers only man's work in relation to the world in which he lives."

(आर्थिक भूगोल मानव भूगोल का वह अङ्ग है जिसमें संसार में रहते हुए मनुष्य के कार्यों का वर्णन होता है।)

Buchanan.

इन परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि अपने वातावरण से प्रभावित होकर मनुष्य जो कार्य करता है उसका अध्ययन ही आर्थिक भूगोल का विषय है। इस प्रकार आर्थिक भूगोल के अध्ययन में दो बातों का वर्णन होता है:—

(१) भौगोलिक वातावरण:—इसके अन्तर्गत विश्व की भू-रचना, जलवायु, प्राकृतिक वनस्पति, खनिज सम्पत्ति, पशु-धन आदि का वर्णन होता है।

(२) मनुष्य की आर्थिक क्रियाएँ:—भौगोलिक वातावरण में रहता हुआ मनुष्य उस से प्रभावित होकर जीवन निर्वाह के लिए जो कार्य करता है वह इसके अन्तर्गत आता है। ऐसे कार्यों में खेती करना, कारखानों में काम करना, लकड़ी काटना, मछली पकड़ना आदि हैं।

आजकल आर्थिक और व्यापारिक भूगोल के व्यापक अर्थ में उत्पादित वस्तुओं के वितरण का भी विशेष महत्व है। इसके अन्तर्गत व्यापार और यातायात के सुगम साधनों का वर्णन होता है। इन्हें भी आर्थिक भूगोल में सम्मिलित करते हैं।

आर्थिक भूगोल का अन्य विषयों से सम्बन्ध:—भूगोल विषय के कई अङ्ग होते हैं। प्राकृतिक वातावरण का वर्णन प्राकृतिक भूगोल में किया जाता है। मानवी क्रियाओं का वर्णन मानवी भूगोल का विषय है। इन दोनों का एक दूसरे पर क्या प्रभाव पड़ता है, इसका अध्ययन आर्थिक भूगोल कहलाता है। इनके अतिरिक्त भिन्न भिन्न देशों का वर्णन राजनैतिक भूगोल कहलाता है। पृथ्वी का विस्तार, उसकी ग्रहों और नक्षत्रों से दूरी आदि का अध्ययन गणित सम्बन्धी भूगोल का विषय है। भूगोल के इन दोनों अङ्गों का सम्बन्ध किसी न किसी प्रकार आर्थिक भूगाल से अवश्य है।

आर्थिक भूगोल का विषय इतना विस्तृत है कि इसका सम्बन्ध न केवल भूगोल के भिन्न-भिन्न अङ्गों से ही है परन्तु अन्य विषय भी इससे सम्बन्धित हैं। उदाहरण के लिए लोहे के कारखानों का वर्णन करते समय यह बताया जाता है कि लोहा और कोयला कहाँ मिलता है। यह भूगर्भ विद्या का विषय है। कृषि की उपज पढ़ते समय यह ज्ञात किया जाता है कि गेहूँ और चावल भिन्न-भिन्न जलवायु में पैदा होते हैं। यह जलवायु-विज्ञान का विषय है। विषुवत रेखा के निकट घने वन क्यों हैं और सहारा में वृक्ष क्यों नहीं हैं यह जानना वनस्पति विज्ञान का विषय है। आर्थिक भूगोल में इन सभी विषयों की सहायता लेनी पड़ती है। इसलिए आर्थिक भूगोल अनेक विषयों से सम्बन्धित है।

आर्थिक-भूगोल के अध्ययन से लाभः—आर्थिक-भूगोल के अध्ययन से प्रायः सभी प्रकार के व्यवसाय करने वाले लोगों को लाभ है:—

(१) एक व्यापारी को व्यापार करने से पूर्व यह सोचना पड़ता है कि उसको किन-किन वस्तुओं का व्यापार करना चाहिए जिससे कि लाभ हो। कौन-कौन सी वस्तुएँ कहाँ-कहाँ से मँगवाई जाएँ और कहाँ-कहाँ भेजी जाएँ। ये सब बातें आर्थिक भूगोल के अध्ययन से ज्ञात होती हैं।

(२) उद्योग-धन्धे खोलने वाले व्यक्ति के लिए भी आर्थिक भूगोल का ज्ञान होना आवश्यक है। मान लीजिए एक मनुष्य सूती वस्त्र बनाने का कारखाना खोलना चाहता है। उसको पहले यह मालूम करना पड़ेगा कि सूती वस्त्र बनाने के लिए कच्चा माल अर्थात् कपास कहाँ उत्पन्न होती है, कारखाने के लिए मशीनें कहाँ से आएँगी, तैयार किया हुआ माल बेचने के लिए कहाँ भेजा जायगा, कारखाने में काम करने के लिए पड़ौस में कुशल कारीगर हैं या नहीं आदि आदि। इन बातों को बिना जाने कारखाना खोलने से बहुत हानि उठानी पड़ेगी।

(३) किसान के लिए भी आर्थिक भूगोल लाभदायक होता है। गेहूँ के लिए किस प्रकार के जलवायु की आवश्यकता होती है, कपास के लिए कौन सी मिट्टी उपयोगी होगी, चावल की खेती किस ऋतु में होती है, आदि का ज्ञान हुए बिना खेती नहीं की जा सकती। आर्थिक भूगोल के विद्यार्थी को ये सब बातें सीखनी पड़ती हैं।

(४) अपने देश की उन्नति चाहने वाले कुशल व्यक्ति को आर्थिक योजनाएँ बनानी पड़ती हैं। हमारे देश में किस धन्धे की उन्नति अधिक हो सकती है, बढ़ती हुई आबादी को किस धन्धे में लगाया जाय, कृषि की उपज किस प्रकार बढ़ाई जाय, आदि प्रश्नों का उत्तर आर्थिक भूगोल में मिलता है। स्वतन्त्र देश के निवासी के लिए ऐसे ज्ञान का होना बहुत आवश्यक है।

(५) सरकारी कर्मचारी को भी आर्थिक भूगोल सहायक होता है। डाकखाने में काम करने वाले व्यक्ति को देश के प्रमुख स्थानों की स्थिति और वहाँ तक पहुँचने का मार्ग मालूम होना चाहिए। इसी प्रकार रेलवे कर्मचारी को यातायात के साधनों को जानना पड़ता है। सरकारी उच्च कर्मचारी को अपने द्वारा आयोजित सभी स्थानों का बोध होना चाहिये जिससे उनकी जाँच के लिए वह सभी स्थानों को आसानी से जा सके।

(६) देशाटन करने वाले व्यक्ति को यदि विश्व के आर्थिक भूगोल का ज्ञान हो तो वह बिना किसी से पूछे ही संसार के सब भागों की यात्रा कर सकता है। मार्ग में वह अपनी आवश्यकता की वस्तुएँ भी खरीद सकता है।

(७) आर्थिक भूगोल का अध्ययन करने से हम अपने घर के कमरे में बैठे हुए ही सारे संसार की झाँकी देख सकते हैं। अमेरिका में गेहूँ की खेती किस प्रकार होती है, इंग्लैंड

में लोग कोयले की खानों में किस प्रकार काम करते हैं, एस्किमो लोग किस प्रकार बर्फ के घरों में रहते हैं, सहारा के लोग किस प्रकार मरुस्थल को पार करते हैं, आदि सब बात हम घर बैठे-बैठे आर्थिक भूगोल की किसी भी पुस्तक को पढ़कर ज्ञात कर सकते हैं। हम अपने जीवन की तुलना संसार के अन्य देशों के निवासियों के जीवन से कर सकते हैं और इस प्रकार हमें अपनी वास्तविक स्थिति का ज्ञान हो जाता है।

(८) एक सैनिक के लिए भी आर्थिक भूगोल का ज्ञान लाभप्रद है। शत्रु देश के आर्थिक स्रोतों का पता लग जाने से पहले उन्हीं पर अधिकार कर लिया जाता है जिससे शत्रु कमजोर पड़ जायं। ऐसे स्थलों में पेट्रोल तथा कोयला उत्पादक क्षेत्र मुख्य हैं।

इस प्रकार आर्थिक भूगोल का अध्ययन करना बहुत ही उपयोगी और लाभदायक है। ज्ञान के सहारे एक साधारण व्यक्ति भी महान् पुरुष बन सकता है।

सारांश

मनुष्य किस प्रकार अपने वातावरण से प्रभावित होकर काम करता है, इसका अध्ययन ही आर्थिक भूगोल का विषय है। वास्तव में आर्थिक भूगोल प्राकृतिक भूगोल और मानवी भूगोल का सम्मिश्रण है।

आर्थिक भूगोल में खनिज पदार्थों का अध्ययन किया जाता है। प्राकृतिक वनस्पति भी इसके अध्ययन का एक अङ्ग है। भूगोल के इस अङ्ग के अन्तर्गत जलवायु भी आ जाता है। इस प्रकार आर्थिक भूगोल भूगर्भ वनस्पति विज्ञान, जलवायु-विज्ञान आदि कई विषयों से सम्बन्धित हैं।

एक व्यापारी, औद्योगिक व्यक्ति, देश का नेता, सरकारी कर्मचारी, देशाटन करने वाला व्यक्ति इन सभी को आर्थिक और व्यापारिक भूगोल से लाभ होता है।

प्रश्न

१. आर्थिक भूगोल की क्या परिभाषा है?
२. किन-किन अन्य विषयों से आर्थिक भूगोल का सम्बन्ध है? किस प्रकार?
३. आर्थिक भूगोल के अध्ययन से एक व्यापारी को क्या लाभ है?
४. किसान के लिए आर्थिक भूगोल का ज्ञान होना क्यों आवश्यक है?
५. "आर्थिक भूगोल के द्वारा हम घर बैठे ही संसार की वास्तविक स्थिति जान सकते हैं"—क्या यह बात सच है? किस प्रकार?

अध्याय २

मनुष्य और वातावरण

मनुष्य का जीवन अपनी परिस्थितियों के अनुकूल ही बन जाता है। आदमी जैसे वातावरण में रहेगा उसके सारे कार्य उसके वातावरण के अनुसार ही होंगे। परन्तु वातावरण एकसा होने पर भी मनुष्य की उन्नति की प्रगति एकसी नहीं होती। दो भिन्न-भिन्न देश हैं। उन दोनों में ही उपजाऊ मैदान है जहाँ खेती होती है। एक देश में तो खेती की उपज बहुत अधिक होती है और दूसरे देश में कम। प्राकृतिक वातावरण दोनों देशों का एकसा ही है परन्तु एक देश के निवासी अधिक परिश्रमी और बुद्धिमान् हैं अतः वहाँ की उपज भी अच्छी है। दूसरे देश के निवासी पिछड़े हुए होने से वहाँ की पैदावार कम है। इस प्रकार कुछ मनुष्य अपनी बुद्धि से अपने प्राकृतिक वातावरण से अधिक लाभ उठा सकते हैं। मनुष्य के स्वयं के कार्य जैसे राजनैतिक विभाग, जन संख्या का वितरण, आदि कृत्रिम वातावरण के अन्तर्गत हैं।

प्राकृतिक और कृत्रिम वातावरण से मनुष्य किस प्रकार प्रभावित होता है इसका वर्णन यहाँ किया जाता है:—

(अ) प्राकृतिक वातावरण

आर्थिक भूगोल में प्राकृतिक वातावरण बड़े महत्व का है। प्राकृतिक वातावरण में निम्नलिखित बातें आती हैं:—

१. **स्थिति**:—कुछ देश समुद्र से बहुत अधिक दूर होते हैं। उनका संबन्ध विश्व के अन्य देशों से बहुत कम रहता है। जो देश समुद्र के निकट हों वहाँ जहाजों द्वारा आसानी से पहुँचा जा सकता है। वहाँ का व्यापार अच्छा होगा। उदाहरण के लिए ग्रेट ब्रिटेन के चारों ओर जल है। यह द्वीपसमूह संसार के अन्य देशों के बीच में भी है जिससे सारे महाद्वीपों को यहाँ से जहाज जाते हैं। शीतोष्ण कटिबन्ध में होने से यहाँ का जलवायु भी बड़ा सुहावना है। यहाँ लोग साल भर कार्य कर सकते हैं। यही कारण है कि अपनी उत्तम स्थिति के कारण ग्रेट ब्रिटेन ने इतनी अधिक उन्नति की।

दूसरा उदाहरण भारत का है। इसकी स्थिति पूर्वी गोलार्द्ध के मध्य में है और इसके दक्षिण में हिन्द महासागर आया हुआ है। समुद्र-मार्गों द्वारा भारत आस्ट्रेलिया, अफ्रीका तथा एशिया महाद्वीप के अन्य देशों से सम्बन्धित है। अपनी उत्तम स्थिति के ही कारण आज हमारा देश एशिया महाद्वीप का नेता बनने जा रहा है।

२. समुद्र-तट की रचना:—यों तो प्रायः अधिकांश देशों के निकट ही समुद्र
किन्तु तट की रचना सब जगह एक सी नहीं
कहीं कहीं पर समुद्र का किनारा कटा हुआ
कहीं पर वह सपाट है। कहीं पर किनारे के
की भूमि पथरीली है और कहीं पर रेतीली।
हुआ किनारा सबसे उत्तम गिना जाता है।
पर कई प्राकृतिक बन्दरगाह होते हैं जिनके
अच्छा व्यापार होता है। यूरोप का समुद्र-तट
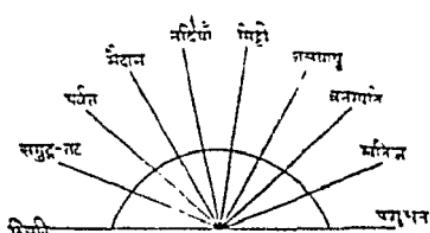
चित्र सं० १. प्राकृतिक वातावरण के अंग

हुआ है। यही कारण है कि वहाँ पर उत्तम बन्दरगाह हैं। हॉलैण्ड और इंगलैण्ड निवासी उत्तम बन्दरगाहों से लाभ उठाकर ही इतने उन्नतिशाली हो गए। हमारे देश का समुद्र-किनारा कटा हुआ बहुत कम है। यही कारण है कि हमारे यहाँ प्राकृतिक बन्दर की कमी है। यही हाल अफ्रीका का है। सपाट समुद्री किनारा होने से ही वहाँ कम बन्दर हैं और इसलिए वहाँ के देश अभी तक उन्नति नहीं का पाए हैं।

३. पर्वतः—पर्वतीय भागों में खेती करने योग्य भूमि कम होने से वहाँ बहुत आदमी रहते हैं। वहाँ मैदान न होने से यातायात के साधनों की कमी रहती है और इसी वहाँ व्यापार नहीं हो सकता। पामीर के पठार पर बहुत कम लोग रहते हैं। एक प्रकार से पहाड़ आदमी की उन्नति में बाधक हैं। परन्तु यदि दूसरी दृष्टि से देखा जाय तो पर्वत म के बड़े काम के हैं। जल भरी हवाओं को ठंडा करके पर्वत वर्षा करते हैं। भारत के उत्तर में हि लय बड़े काम का है। इसी से वहाँ वर्षा होती है। हिमालय से अनेक नदियाँ निकल कर मै में आती हैं और फिर उनसे कई लाभ होते हैं। साइबेरिया से आने वाली ठंडी हवाओं भी ये पर्वत रोक लेते हैं। पहाड़ी भागों के झरनों से जल-विद्युत् उत्पन्न की जाती है। पह ढालों पर वन होते हैं जिनसे उत्तम लकड़ी प्राप्त की जाती है। खनिज पदार्थ भी प्रायः पह भूमि में ही मिलते हैं।

४. मैदानः—विश्व के अधिकांश लोग मैदानों में ही रहते हैं। समतल मैदान, ज अच्छी वर्षा होती हो या जहां सिंचाई के साधन अच्छे हों, खेती के लिए बड़े उत्तम होते बहुत गर्म तथा अत्यन्त शीत जलवायु वाले मैदान भी अच्छे नहीं होते जैसे सहारा, ट आदि। इनको छोड़ कर संसार के अन्य मैदान घनी आबादी के स्थल हैं।

गंगा-सिन्धु का मैदान भारत उपमहाद्वीप का सबसे अच्छा भाग गिना जाता है। अके गंगा के मैदान में भारत की कुल जनसंख्या का लगभग ४०% निवास करता है। इसी प्र उत्तरी अमेरिका के प्रैरी नामक मैदान में अधिक लोग रहते हैं। चीन की जन-संख्या अधिकांश वहाँ के मैदानों में ही है।

मैदान में यातायात की सुविधा रहती है। संसार का लगभग ६० प्रतिशत रेल-मा

मैदानों में ही है। बड़े-बड़े नगर भी मैदानों में ही बसे होते हैं। बड़े-बड़े कारखाने भी मैदानों में ही स्थापित किए जाते हैं।

समुद्री किनारे के निकट के मैदान भीतरी मैदानों की अपेक्षा अधिक उत्तम होते हैं। वहाँ और भी घनी आबादी हो जाती है। वहीं पर उत्तम बन्दरगाह होते हैं जहाँ से देश का सम्बन्ध अन्य देशों से रहता है।

५. नदियाँ:—नदियों ने भिन्न-भिन्न देशों के विकास में बहुत योग दिया है परन्तु हर एक नदी से लाभ नहीं उठाया जा सकता। उत्तम नदी की यह पहचान है कि उसमें साल भर पानी जमे नहीं, पानी की गहराई इतनी हो कि उसमें नावें चल सकें, उसमें पानी साल भर बहता रहे तथा नदी मैदान में बहे। इस प्रकार की नदियाँ ही उत्तम गिनी जाती हैं।

यदि सच पूछा जाय तो विश्व की सभ्यता का जन्म ही नदियों की घाटियों या मैदान में हुआ। मिस्र की प्राचीन सभ्यता नील नदी के कारण ही है। चीन की सभ्यता का विकास वहाँ की प्रमुख नदियों—ह्वांगहो और यांगटिशीक्यांग—के मैदानों में हुआ। भारत की प्राचीन सभ्यता का प्रादुर्भाव गङ्गा-सिंधु के मैदान में ही हुआ।

नदियों से सिंचाई करके खेती की जाती है। उत्तरी-भारत की पैदावार नदियों से नहरें निकाल कर सिंचाई करने से ही होती है। नील नदी को 'मिस्र का प्रसाद' तथा सिन्धु नदी को 'पाकिस्तान का प्रसाद' इसी कारण कहा जाता है। नदियों में नावें चलती हैं। ग्रेट ब्रिटेन, जर्मनी, फ्रांस तथा संयुक्तराष्ट्र अमेरिका में नदियाँ यातायात का मुख्य साधन हैं। वहाँ यात्री एक स्थान से दूसरे स्थान को नावों में बैठकर जाते हैं तथा माल भी नदियों द्वारा ही ढोया जाता है। दजला और फरात नदियाँ ईराक देश का प्राण हैं।

६. मिट्टी:—कृषि की उपज मिट्टी के उपजाऊपन पर ही निर्भर है। लम्बा-चौड़ा मैदान किसी काम का नहीं यदि वहाँ की मिट्टी खराब हो। मिट्टी तीन प्रकार की होती है—(अ) रेतीली—इसके कण बड़े-बड़े होते हैं जिनके कारण इसमें पानी अधिक समय तक नहीं ठहरता। (आ) चिकनी मिट्टी—इसके कण बहुत बारीक होने से पौधे की जड़ें फैलने में कठिनाई होती है। (इ) दुमट मिट्टी—इसमें इन दोनों प्रकार की मिट्टियों का मिश्रण होता है। यह मिट्टी सर्वोत्तम होती है। गंगा के मैदान की मिट्टी दुमट है अतः वहाँ अनेक प्रकार की पैदावार होती है। उपजाऊ और नवीनतम मिट्टी के कारण ही गंगा के डेल्टे में पाट की खेती का एकाधिकार है। उपजाऊ मिट्टी के मैदान की आबादी बहुत घनी होती है।

७. जलवायु:—मनुष्य के जीवन पर जितना प्रभाव जलवायु का पड़ता है उतना किसी अन्य बात का नहीं। आदमी का खान-पान, वेश-भूषा, उद्योग-धन्धे आदि सभी जलवायु से नियंत्रित होते हैं।

गर्म देश के निवासी सूती वस्त्र पहनते हैं। यही कारण है कि वहाँ के कारखानों में सूती वस्त्र अधिक बनेगा। यदि शीतोष्ण कटिबन्ध के कारखानों में सूती वस्त्र तैयार होता है

तो वह भी उष्ण कटिबन्ध के लोगों के लिए तैयार होता है। ठंडे देशों के लोग ऊनी वस्त्र पहनते हैं। एस्किमो लोग तो ठण्ड से बचने के लिए चमड़े के कपड़े पहनते हैं। ठण्डे देश के लोगों के घरों की बनावट भी गर्म देश वालों से भिन्न होती है। वहाँ के लोग मकानों में कम खिड़कियाँ रखेंगे परन्तु गर्म देशों में अधिकतर खुले मकान बनते हैं।

शीतोष्ण जलवायु के देशों के लोग अधिक समय तक काम कर सकते हैं, परन्तु ग्रीष्म जलवायु में थोड़ा काम करने पर ही पसीना आने लगता है और काम करने में बहुत बाधा पड़ती है।

व्यवसाय और उद्योग-धन्धे भी जलवायु से ही नियंत्रित किए जाते हैं। भारत में बम्बई और अहमदाबाद में जलवायु में नमी होने से ही वहाँ सूती कपड़ा बुनने में सुविधा है।

पंजाब में आटा पीसने की चक्कियां बहुत हैं क्योंकि वहाँ का शुष्क जलवायु इसमें सहायक है।

जन-संख्या का वितरण भी जलवायु के अनुसार ही होता है। स्वास्थ्यप्रद जलवायु में अधिक लोग रहेंगे। मलेरिया-उत्पादक जलवायु में लोग रहना पसन्द न करेंगे।

कृषि की उपज तो सर्वथा जलवायु पर ही निर्भर है। चाहे मनुष्य कितना ही चतुर क्यों न हो, वह टंड्रा में चावल की खेती नहीं कर सकता। इसी प्रकार गेहूँ की खेती विषुवत्-रेखीय प्रदेशों में कभी लाभकारी नहीं हो सकती। अतः मनुष्य के सारे कार्यों पर जलवायु का नियंत्रण है।

८. प्राकृतिक वनस्पतिः—किसी भी देश की प्राकृतिक वनस्पति वहाँ की भूमि की रचना और जलवायु पर निर्भर होती है। जहाँ वर्षा अधिक होती हो वहाँ वन होते हैं। कम वर्षा वाले भागों में घास के मैदान होते हैं तथा बहुत ही कम वर्षा के भागों में वनस्पति का अभाव रहता है और वहाँ कँटीली झाड़ियाँ तथा मरुभूमि होती है।

घने जंगलों को साफ करना बड़ा कठिन काम है, अतः जहाँ घने वन हैं वहाँ की आबादी बहुत कम होती है। वहाँ लोग जंगली अवस्था में रहते हैं। वे इधर-उधर पशुओं का शिकार करते रहते हैं। दक्षिणी अमेरिका के अमेजन नदी के बेसिन तथा अफ्रीका की कांगो नदी के वनों में रहने वाले लोग बहुत पिछड़े हुए हैं। हाँ, इण्डोनेशिया में लोगों ने बहुत परिश्रम करके वनों को काट कर खेती की है और आज वहाँ की आबादी घनी हो गई है। घास के मैदानों को साफ करना कठिन नहीं है। वहाँ पर लोग खेती आसानी से कर सकते हैं। उत्तरी-अमेरिका के प्रैरी, दक्षिणी अमेरिका के पम्पा तथा रूस के स्टेप के घास के मैदानों में आज खूब खेती होती है। वहाँ आबादी भी अच्छी है और लोग बहुत उन्नतिशील हो गये हैं। मरुस्थल के लोगों का जीवन कठिन है। जहाँ यातायात के थोड़े बहुत साधन हैं वहाँ तो फिर भी कुछ लोग रहते हैं। वनस्पति की कमी के कारण वहाँ के लोग पशु भी कम ही रखते हैं।

९. खनिज-सम्पत्तिः—यदि भूमि बिलकुल उपजाऊ न हो परन्तु उसके नीचे खनिज पदार्थ हों तो वह देश धनवान गिना जायगा। खनिज पदार्थ प्रायः चट्टानों में छिपे हुए होते हैं। नवीन चट्टानों में कोयला और मिट्टी का तेल मिलता है और पुरातन चट्टानों में सोना, लोहा आदि बहुमूल्य खनिज मिलते हैं। साधारणतया मनुष्य वहीं रहना पसन्द करता है जहाँ का जलवायु उत्तम हो। परन्तु जहाँ खनिज पदार्थ मिलते हों वहाँ पर प्रतिकूल जलवायु होने पर भी लोग रहेंगे। उत्तरी अमेरिका के एलास्का प्रदेश में सोना मिलता है अतः वहाँ अधिक ठंड पड़ने पर भी लोग काम करते रहते हैं। आस्ट्रेलिया के मरुस्थली भाग में सोना और कोयले की खानों के निकट अंग्रेज लोग जा बसे हैं यद्यपि वहाँ का गर्म जलवायु उनके लिए प्रतिकूल है। इसी प्रकार दक्षिणी अफ्रीका के पठारी भाग में भी लोग रहना पसन्द कर रहे हैं क्योंकि वहाँ हीरा, पन्ना आदि की खानें हैं और निकट ही कोयला भी पर्याप्त मिलता है।

१०. पशु-धनः—पशुओं का जीवन वनस्पति पर निर्भर रहता है। जहाँ वनस्पति अच्छी हो वहाँ पशु भी अधिक रहेंगे। यही कारण है कि जंगलों में अधिक पशु मिलते हैं।

पशु दो प्रकार के होते हैं—जंगली और पालतू। जंगली पशु तो मनुष्य के अधिक काम के नहीं हैं जैसे शेर, चीता आदि। मनुष्य उनका शिकार अवश्य करता है। कभी कभी वे हानियाँ भी पहुँचाते हैं। पालतू पशु मनुष्य के बड़े काम के होते हैं। गाय, भैंस आदि दूध देती हैं जो हमारे भोजन की कमी की पूर्ति करता है। भेड़-बकरी का मांस काम में आता है। ऊन से वस्त्र बनाये जाते हैं। बैल हल चलाता और गाड़ी खींचता है। कृषि प्रधान देशों में तो यह मनुष्य का सच्चा साथी है। ऊँट "रेगिस्तान का जहाज" कहलाता है। मरुभूमि के लोगों का यह एकमात्र सहारा है क्योंकि वहाँ यह कई कामों में आता है।

इस प्रकार पशु हमारे बड़े काम के हैं। जहाँ रेल तथा मोटर नहीं चलती वहाँ पशु ही यातायात के साधन हैं। पहाड़ी भागों में तो पशुओं की पीठ पर ही बोझा ढोया जाता है, जैसे तिब्बत में याक और पीरु देश में लामा।

(आ) कृत्रिम वातावरण

प्राकृतिक वातावरण चाहे कितना ही अनुकूल क्यों न हो मनुष्य उसका पूर्ण लाभ तब ही उठा सकेगा, जब वह बुद्धिमान् हो, उसमें कार्य करने की क्षमता हो, धार्मिक बाधाएँ उसके मार्ग में न आवें, अपने कार्य में उसे राज्य की ओर से सहायता मिले, आदि। इन सबको मनुष्य का बनाया हुआ वातावरण ही कह सकते हैं।

१. मनुष्य-जातिः—यों तो संसार के भिन्न २ देशों में भिन्न भिन्न प्रकार के लोग रहते हैं परन्तु हम उन सबको तीन बड़े भागों में बांट सकते हैं।

(क) गौर वर्ण के लोगः—ये लोग मुख्यतः यूरोप तथा उत्तरी अमेरिका में अधिक रहते हैं। मध्य एशिया तथा उत्तरी भारत के निवासी भी इसी श्रेणी में गिने जा सकते हैं। इन लोगों

ने बहुत उन्नति की है। आज यूरोप तथा अमेरिका वासी विज्ञान में बहुत बढ़े हुए हैं और सारे संसार का व्यापार उनके हाथ में ही है। वे लोग अधिक कार्य करने की क्षमता रखते हैं। वहाँ का जलवायु उनकी उन्नति में बहुत सहायक हुआ है।

(ख) पीले रंग के लोगः—ये लोग पूर्वी एशिया विशेषतः चीन और जापान में रहते हैं। इनकी सभ्यता भी पुरानी है। चीन देश के निवासियों ने तो कई आविष्कार किये। आज कल जापान ने बहुत उन्नति की है।

(ग) कृष्ण वर्ण के लोगः—उष्ण कटिबन्ध में रहने वाले लोग इस श्रेणी में आते हैं जैसे अफ्रीका के निग्रो। आस्ट्रेलिया के आदि निवासी भी इसी श्रेणी के हैं। ये लोग बहुत पिछड़े हुए हैं और अभी तक जंगली अवस्था में रहते हैं। उष्ण जलवायु इन लोगों की प्रगति में बहुत बाधक है।

२. धर्मः—विभिन्न देशों के लोग कई धर्मों के अनुयायी हैं परन्तु संसार के मुख्य धर्म चार हैं—बौद्ध, हिन्दू, ईसाई और इस्लाम। इन धर्मों के नियमों में कुछ विभिन्नता होने से इनके अनुयायियों के उद्योग-धन्धों पर भी इनका प्रभाव पड़ा।

चित्र सं० २. कृत्रिम वातावरण के अङ्ग
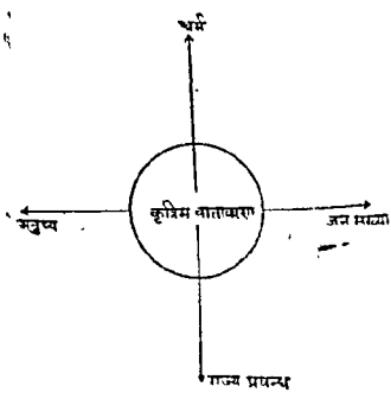
बौद्ध धर्म को मानने वाले अहिंसा में विश्वास रखते हैं। वे पशु-वध नहीं करते हैं। वे जानवर भी कम रखते हैं। यही कारण है कि चीन और जापान में पशु-पालन और दुग्ध व्यवसाय की कमी है। हिन्दुओं में कई जातियाँ हैं। अलग अलग जाति के लोगों का धन्धा भी अलग है, जैसे कपड़े की सिलाई दर्जी करते हैं, लकड़ी का काम बढ़ई करते हैं आदि। आजकल तो अन्य जातियों के लोग भी ये कार्य करने लगे हैं परन्तु अभी तक इन व्यवसायों की सीमा अधिकतर जातियों तक ही है। यही कारण है कि हमारे देश में अभी तक बड़े पैमाने पर कार्य करने के लिए कुशल कारीगरों का अभाव रहता है। इस्लाम धर्म में रुपये का ब्याज लेना वर्जित है। इसलिए मुसलमान लोग अधिक धन संग्रह नहीं कर सकते हैं और उनसे बड़े व्यवसाय नहीं हो सकते हैं। वे शराब भी नहीं पीते। इसी कारण भूमध्यसागर के निकट के मुस्लिम राज्यों में अंगूर की पर्याप्त उत्पत्ति होने पर भी वहाँ अंगूर की शराब बनाने का व्यवसाय कम होता है। ईसाई धर्म में ऐसे नियमों की बंदिश कम है। वे लोग मांसाहारी हैं और शराब का प्रयोग भी करते हैं। यही कारण है कि पाश्चात्य देशों में मांस के लिए बहुत से पशु पाले जाते हैं। फ्रांस तथा इटली में, जहाँ अंगूर की अच्छी पैदावार होती है, बहुत से लोग मदिरा बनाने में लगे हुए हैं। उन लोगों के देशों में और भी कई व्यवसाय होते हैं।

३. जनसंख्या का वितरणः—लोग प्रायः वहीं रहना पसन्द करेंगे जहाँ या तो उन्हें खाने के लिए भोजन मिल जाय या उनके पास ऐसे साधन हों जिनके द्वारा वे भोजन खरीद सकें। इसी कारण लोग या तो उपजाऊ मैदान में रहकर खेती करेंगे या कारखानों में काम करेंगे। जहाँ यह दोनों प्रकार की सुविधाएँ हैं वहाँ की जन संख्या अधिक होगी। घनी जन-संख्या के भागों में काम करने के लिए अधिक मनुष्य होंगे और यातायात के सुगम साधन तैयार किये जाएँगे। ऐसा होने से वे देश उन्नतिशाली होंगे। चाहे किसी देश में कितनी ही अधिक प्राकृतिक सम्पत्ति क्यों न हो, यदि वहाँ उसका उपयोग करने वाले लोग नहीं हैं तो वह बेकार है। उत्तरी अमेरिका की भूमि पहले भी उपजाऊ थी, परन्तु वहाँ गेहूँ और कपास की खेती तब हुई जब वहाँ यूरोप के निवासी जाकर बस गये।

सहारा और टन्ड्रा प्रदेश में कम व्यक्ति रहते हैं। इसी कारण वे स्थान अवनत हैं। कभी ऐसा भी होता है कि देश में खाद्य-सामग्री या उद्योग-धन्धों की कमी हो तो वहाँ की घनी आबादी दुखदायी हो जाती है जैसा कि मानसून प्रदेशों में है। भारत और चीन में बहुत लोग रहते हैं। परन्तु उनके लिए जीवन निर्वाह के साधनों की कमी होने से उनका जीवन स्तर नीचा है। भोजन-सामग्री में वृद्धि करने पर ही वे लोग आराम से रह सकते हैं।

४. राज्य प्रबन्धः—राज्य की सुव्यवस्था होने से देश में अमन चैन रहता है और तब वहाँ के उद्योग-धन्धों का विकास भी होता है। लोग नये-नये आविष्कार शान्ति के समय ही करते हैं। चीन में अस्थायी राज्य के कारण देश की आर्थिक उन्नति को बहुत धक्का पहुँचा। जापान गत महायुद्ध से पूर्व उन्नति के शिखर पर पहुँच गया था क्योंकि वहाँ की सरकार ने देश के उद्योगों को संरक्षण दिया। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, रूस, फ्रांस, डेनमार्क आदि स्वतन्त्र देश इस बात के प्रमाण हैं कि यदि किसी देश की सरकार चाहे तो वह अपने देश का बहुत विकास कर सकती है। भारत में विदेशी राज्य शासन के कारण देश का आर्थिक विकास न हो सका परन्तु स्वतन्त्रता मिले थोड़ा ही समय होने पर भी यहाँ की राष्ट्रीय सरकार ने आर्थिक विकास की कई योजनाएँ बनाली हैं और कितने ही नए-नए उद्योग-धन्धे यहाँ प्रारम्भ हो गए हैं। इसे हम सभी जानते हैं।

इस प्रकार हमने देखा कि यदि किसी देश में उत्तम प्राकृतिक स्रोत हो और यदि वहाँ की जनता तथा सरकार प्रयास करें तो वह देश विश्व में अग्रणी हो सकता है। इन्हीं नियमों के आधार हर आगे के पृष्ठों में यह बताने की चेष्टा की गई है कि हमारे देश भारत पर प्रकृति देवी की कितनी कृपा है—यहाँ के प्राकृतिक स्रोतों की क्या दशा है, तथा यहाँ की जनता अपनी राष्ट्रीय सरकार के संरक्षण से किस प्रकार उन स्रोतों का विकास कर भारत को विश्व का शक्तिशाली राष्ट्र बना सकती है।

सारांश

जैसा कि पिछले पृष्ठों में बताया गया है मनुष्य अपने वातावरण के अनुकूल ही काय

करता है और उसका जीवन वातावरण पर बहुत कुछ निर्भर रहता है। इसके लिए कई उदाहरण दिये गये हैं। लोग मैदान में कृषि करते हैं, पर्वतीय भाग के लोगों का धन्धा खेती करना नहीं हो सकता, मरुस्थल के निवासी घुमक्कड़ होते हैं, टंड्रा में लोग भूमि के नीचे मकान बनाकर रहते हैं, आदि।

परन्तु यह बात सर्वदा सत्य नहीं है कि मनुष्य अपनी परिस्थितियों का दास ही है। हाँ, पिछड़े हुए और अवनत लोग अवश्य अपनी परिस्थितियों के दास हैं परन्तु बुद्धिमान अपनी बुद्धि और अध्यवसाय से अपने वातावरण में कुछ सीमा तक परिवर्तन कर अपने जीवन को सुखमय बना सकते हैं। इसके कुछ उदाहरण हमारे सामने हैं। मिस्र देश सहारा मरुस्थल रेगिस्तान का ही पूर्वी भाग है परन्तु वहाँ के लोगों ने नील नदी से नहरें निकाल कर सिंचाई की और अपने देश को समृद्ध बनाया। इन्डोनेशिया में वनों को साफ करके चावल, चाय, रबर, सिनकोना, गर्म मसाले आदि की उत्पत्ति की गई। भारत के पंजाब राज्य को नहरों द्वारा देश का धनी भाग बनाया गया। आस्ट्रेलिया की मरुभूमि में पाताल तोड़ कुएँ बनाकर गेहूँ की खेती की गई।

यह सब कुछ होने पर भी मनुष्य अपने प्राकृतिक वातावरण को बिलकुल नहीं बदल सकता। जलवायु में कुछ परिवर्तन नहीं किया जा सकता। ठंडे देश के लोगों को गर्म वस्त्र पहनने ही पड़ेंगे। इसी प्रकार पर्वतीय भागों में मैदानों की भाँति लम्बे चौड़े खेत नहीं बनाये जा सकते। टन्ड्रा देश की बर्फीली भूमि में खेती नहीं की जा सकती।

प्रश्न

१. प्राकृतिक वातावरण के अन्तर्गत कौन-कौन सी बातें आती हैं?
२. संसार के अधिकांश लोग मैदानों में क्यों रहते हैं?
३. नदियों से मनुष्य को क्या लाभ हैं?
४. जलवायु का मनुष्य के जीवन पर क्या प्रभाव पड़ता है?
५. 'मनुष्य अपनी परिस्थितियों का दास है'—क्या यह कथन ठीक है? किस प्रकार?

द्वितीय भाग

भारत का आर्थिक एवं व्यापारिक विवरण

चित्र सं० ३. पूर्वी गोलार्द्ध में भारत की स्थिति का महत्व

अध्याय ३

विश्व में भारत का महत्व

प्राचीनकाल में भारत उन्नति की चरम सीमा पर था। राजनैतिक, व्यापारिक और आर्थिक दृष्टिकोण से भारत ने कई देशों पर विजय प्राप्त की थी। परन्तु समय के चक्र से यह देश भी न बचा। विदेशी लोगों ने भारत पर अधिकार किया और इस देश का महत्व कम होने लगा। पराधीन भारत अपने प्राचीन गौरव को खो बैठा। फिर धीरे धीरे यहाँ पर भी लोगों के हृदय में स्वतन्त्रता के अंकुर फूटने लगे। फल यह हुआ कि आज से दस वर्ष पूर्व हमारा देश फिर आजाद हो गया और इस दस वर्ष के छोटे समय में ही हम लोगों ने देश के निर्माण के वे कार्य कर दिखाये जिन्हें देखकर विश्व के प्रायः सभी देश आश्चर्य चकित हो गये हैं और यदि उन्नति की यही रफ्तार बनी रही तो इसमें कोई सन्देह नहीं कि हमारा देश अगले दस वर्षों में संसार के किसी भी उन्नतिशील राष्ट्र से कम न रहेगा।

आज विश्व का सबसे शक्तिशाली देश वही माना जाता है जिसमें आत्म-निर्भरता के साधन सबसे अधिक हों। आत्म-निर्भरता का अर्थ यह है कि उस देश के खेतों में इतना अन्न उत्पन्न हो कि वहाँ के निवासियों के लिए वह पर्याप्त हो तथा कारखानों में काम आने वाला कच्चा माल भी वहाँ उत्पन्न हो। अन्न के अतिरिक्त जीवन यापन के लिए वस्त्र तथा अनेक प्रकार की अन्य वस्तुओं की भी आवश्यकता होती है। ये सब वस्तुएँ कारखानों में तैयार होती हैं। इसलिए एक आत्म निर्भर देश में खेती के साथ ही साथ उद्योग व्यवसायों का विकास होना भी अत्यन्त आवश्यक है।

आत्म-निर्भरता की कसौटी पर कसने से ज्ञात होता है कि संयुक्त राष्ट्र अमेरिका और रूस दोनों ही देश आत्म-निर्भर हैं। उन राष्ट्रों में अनेक प्रकार की खेती की उपज पर्याप्त मात्रा में उत्पन्न होती है और वहाँ के कारखानों में सभी प्रकार की आवश्यकता की वस्तुएँ तैयार की जाती हैं। अन्य राष्ट्रों में आत्म-निर्भरता प्राप्त करने के पूर्ण साधन नहीं हैं। तीसरा राष्ट्र जो आत्म-निर्भर बनने जा रहा है वह भारत है। इस राष्ट्र में खेती के साधन उपलब्ध हैं और कारखानों के लिए कच्चा माल पर्याप्त है। विदेशी राज्य के कारण इतने दिन यहाँ खेती और उद्योगों का समुचित विकास न हो पाया परन्तु स्वतन्त्रता मिलने के पश्चात् जिस अल्प समय में आत्म निर्भरता की ओर जो प्रयास किए गए हैं उनके निष्कर्ष को देखने से ज्ञात होता है कि कुछ समय पश्चात् अमेरिका और रूस की भाँति भारत भी आत्म-निर्भर हो जायगा।

भारत की भूमि बहुत उपजाऊ है। अन्य देशों में खेतों में खाद के दिये बिना बहुत

कम पैदावार होती है परन्तु यहाँ के खेतों में बिना खाद दिये ही उत्पादन हो जाता है। यदि उन खेतों में खाद दे दी जाय तो पैदावार कई गुना बढ़ जायगी। सिन्दरी के रासायनिक खाद के कारखाने के खुल जाने से अब हमें उत्तम खाद मिलने लगी है। उसका प्रयोग कई जगह किया भी गया है जिसके फल-स्वरूप खेतों की पैदावार में पर्याप्त वृद्धि हुई है। रासायनिक खाद के और कारखाने खुल जाने से खेतों का उपजाऊपन और अधिक बढ़ जायगा।

भारत की वनसम्पदा भी पर्याप्त है। मरुस्थली प्रदेशों में फिर से वन लगाने के लिए जोधपुर में एक अनुसंधान शाला खोली गई है। वहाँ के प्रयत्न पर्याप्त सफल हुए हैं। कई जगह पहले की पड़ी हुई उजाड़ भूमि हरी भरी हो गई है। इन नवीन वनों से मरुस्थल का आगे बढ़ना रुक जायगा और बंजर भूमि खेती योग्य बना ली जायगी।

मध्य प्रदेश की ऊबड़ खाबड़ भूमि और तराई प्रदेश की ऊँची-नीची भूमि ट्रेक्टरों द्वारा समतल बनाई जा रही है। तराई प्रदेश में पाट का उत्पादन बढ़ाया जा रहा है और मध्य प्रदेश में चावल अधिक बोया जाने लगा है। आसाम, बम्बई, मद्रास आदि अन्य राज्यों में भी भूमि को फिर से सुधारने का पूर्ण प्रयत्न किया जा रहा है।

कृषि के उत्पादन में वृद्धि करने के लिए सिंचाई के साधनों में लगातार वृद्धि की जा रही है। बड़े पैमाने पर सिंचाई करने के लिए योजना काल में विशाल नदी घाटी योजनाएँ बनाई जा रही है। भाकरा-नांगल, कोसी, हीराकुड आदि योजनाओं के पूर्ण हो जाने पर भारत में खेती का उत्पादन इतना अधिक हो जायगा कि यहां पर काम में ले लेने के पश्चात् उसे विदेशों को निर्यात करना पड़ेगा।

खेती में योग देने के लिए भारत का पशु-धन भी पर्याप्त है। चौपायों की संख्या के अनुसार भारत का विश्व में प्रथम स्थान है। यहाँ के पशुओं की नसल सुधारी जा रही है और पशु-चिकित्सालयों की संख्या में पर्याप्त वृद्धि की जा रही है। गाय और भैंस के दूध के आधार पर डेरी व्यवसाय में उन्नति की जा रही है। खाद्य-सामग्री में वृद्धि करने के लिए मछली-व्यवसाय में सुधार किये जा रहे हैं।

हमारे यहाँ कई प्रकार के खनिज पदार्थ पाए जाते हैं। लोहा यहाँ उच्च कोटि का मिलता है और उसका यहाँ है भी अतुल भंडार। कारखाने चलाने के लिए कोयले की कमी नहीं है। अभ्रक और मैंगनीज तो हमारे यहाँ बहुत अधिक मात्रा में उपलब्ध है। नमक, चूना, शोरा आदि भी यहाँ खूब मिलते हैं। थोरियम, टीटेनियम, इल्मेनाइट, मोनाजाइट आदि उपयोगी खनिजों की भी हमारे यहाँ कमी नहीं है। ये खनिज कई व्यवसायों में कच्चे माल के रूप में काम आते हैं।

कोयले के अतिरिक्त जल-विद्युत् का विकास भी खूब हो रहा है। बहु-प्रयोजन योजनाओं द्वारा सिंचाई के अतिरिक्त जल-शक्ति का विकास भी किया जा रहा है। अब हमें सस्ती

बिजली मिलने लगेगी। सबसे अधिक आशाजनक बात तो यह है कि हमारे यहाँ नदियों का पानी इतना अधिक है कि जल-विद्युत् के विकास करने के लिए बहुत सम्भावना है। अभी तक तो संभावित शक्ति के दस प्रतिशत का भी विकास नहीं हुआ है। कोयला और जल-विद्युत् के अतिरिक्त पैट्रोल निकलने वाले क्षेत्रों की जाँच की जा रही है। यदि इसमें सफलता मिल गई तो हमारे कारखानों के लिए यांत्रिक शक्ति की कमी न रहेगी।

कच्चे माल, खनिज पदार्थ तथा यांत्रिक-शक्ति के साधन उपलब्ध होने से भारत में औद्योगिक विकास के लिए बहुत अधिक संभावना है। विदेशी शासन-काल में कारखाने खोलने की आज्ञा न मिलने के कारण यहाँ पर उद्योग-धन्धों का विकास न हो पाया। स्वतन्त्रता-प्राप्ति के पश्चात् हमारे यहाँ कई नये-नये कारखाने खुल गये हैं। अब यहाँ पर कारखानों में काम में आनेवाली मशीनें, रेल के इंजिन, मोटरें, साइकिलें, जल-जहाज, वायुयान आदि सभी बनने लगे हैं। कपड़े के कारखानों तथा पाट की मिलों की संख्या में पर्याप्त वृद्धि हो गई है। चीनी, सीमेंट, कांच, दियासलाई आदि बनाने के कारखाने खूब खुल रहे हैं। भिलाई, दुर्गापुरा और रूरकेला के लोहे के कारखाने तो विश्व के बड़े कारखानों में गिने जायेंगे। हमारी द्वितीय पंचवर्षीय योजना में उद्योग-धन्धों के विकास की ओर विशेष ध्यान दिया गया है।

एक आत्म-निर्भर और स्वतन्त्र राष्ट्र के लिए यातायात के साधनों में वृद्धि करना भी आवश्यक है। इसी बात को ध्यान में रखते हुए अगले पांच वर्षों में भी ऐसे साधनों में वृद्धि करने का लक्ष्य बनाया गया है। हमारे रेल-मार्ग, सड़कों और वायु-मार्गों में निरन्तर वृद्धि हो रही है। भारत की बढ़ती हुई कृषि की पैदावार और कारखानों में बने माल को आवश्यकता के स्थान पर पहुँचाने के लिए यातायात के पर्याप्त साधनों की आवश्यकता है। इन्हीं साधनों में वृद्धि होने से हमारे विदेशी व्यापार में भी वृद्धि होगी।

ऊपर के वर्णन से स्पष्ट हो जाता है कि आज का भारत उन्नति के पथ पर अग्रसर हो रहा है। यहाँ की बनी वस्तुओं की मांग विश्व के अन्य देशों के बाजारों में बढ़ती जा रही है। हमारे खेत इतना अनाज उत्पन्न करने लग गए हैं कि अब हमें अन्य राष्ट्रों से खाद्य-सामग्री मँगाने की आवश्यकता न होगी। राष्ट्र का आर्थिक विकास करने के साधन तो हमारे यहाँ पहले भी थे, परन्तु मानव-प्रयास की कमी थी। स्वतन्त्र भारत के लोगों में अब राष्ट्र-निर्माण की भावना उत्पन्न हो गई है। पहले लोग कहने लग गये थे कि अमीर भारत गरीब लोगों का देश है परन्तु कुछ वर्षों पश्चात् यह कहावत गलत हो जायगी। देश तो हमारा धनी ही रहेगा परन्तु यहाँ के निवासी गरीब न रहेंगे।

वर्तमान भारत के विकास के लिए किए गए प्रयत्नों को देखकर यहाँ आनेवाले विदेशी लोग चकित होने लगे हैं। वे ऐसा अनुमान लगाने लगे हैं कि भारत कुछ ही समय पश्चात् पाश्चात्य देशों की तुलना में आर्थिक विकास के अनुसार आगे बढ़ जायगा। इसमें कोई संदेह नहीं है कि निकट भविष्य में भारत विश्व के महान् राष्ट्रों में अग्रणी हो जायगा।

सारांश

प्राचीन-काल में भारत विश्व में प्रसिद्ध था। बीच में यह विदेशियों के अधिकार में होने से उन्नति न कर पाया। स्वतन्त्रता मिल जाने पर फिर इस राष्ट्र का विकास होने लगा। पिछले दस वर्षों में खेती की उपज में पर्याप्त वृद्धि हो गई है। हमारे खेतों की भूमि का उपजाऊपन बढ़ाया जा रहा है। वन-सम्पदा और पशु-धन में सुधार किया जा रहा है। खनिज-पदार्थों को निकालने की ओर ध्यान दिया जा रहा है और राष्ट्र में कई प्रकार की वस्तुओं के बनाने के लिए कारखानों की संख्या में वृद्धि की जा रही है।

किसी भी देश को आत्म-निर्भर बनाने के लिए दो बातों की आवश्यकता होती है—कृषि की पैदावार पर्याप्त होना और कारखानों में सब प्रकार की आवश्यकता की वस्तुएँ बनाना। हमारी प्रथम पंचवर्षीय योजना में खेती की उपज बढ़ाने की ओर विशेष ध्यान दिया गया और द्वितीय योजना का मुख्य लक्ष्य कारखानों में वृद्धि करना तथा राष्ट्र में औद्योगिक विकास करना है। इन प्रयत्नों में आशा से भी अधिक सफलता मिल रही है अतः आशा की जाती है कि थोड़े ही समय में भारत विश्व की महान् शक्तियों में गिना जाने लगेगा।

प्रश्न

१. प्राचीन भारत में आर्थिक विकास किस प्रकार होता था ?
२. विदेशी शासन-काल में भारत अधिक उन्नति क्यों नहीं कर पाया ?
३. विश्व में कौन से राष्ट्र आत्म-निर्भर हैं ?
४. क्या भारत भी आत्म-निर्भर हो सकता है ?
५. दस वर्ष पश्चात् भारत का विश्व में क्या स्थान होने की संभावना है ?

अध्याय ४

नवीन भारत का साधारण परिचय

हमारा देश भारत एशिया महाद्वीप का एक महान् राष्ट्र है। महाद्वीप के दक्षिणी भाग में भारत हिन्द महासागर और हिमालय पर्वत के बीच स्थित है। हमारा राष्ट्र इतना विशाल है कि इसमें कई प्रकार की पैदावार होती है, यहाँ भूमि की बनावट में विभिन्नता है। राष्ट्र के लोग
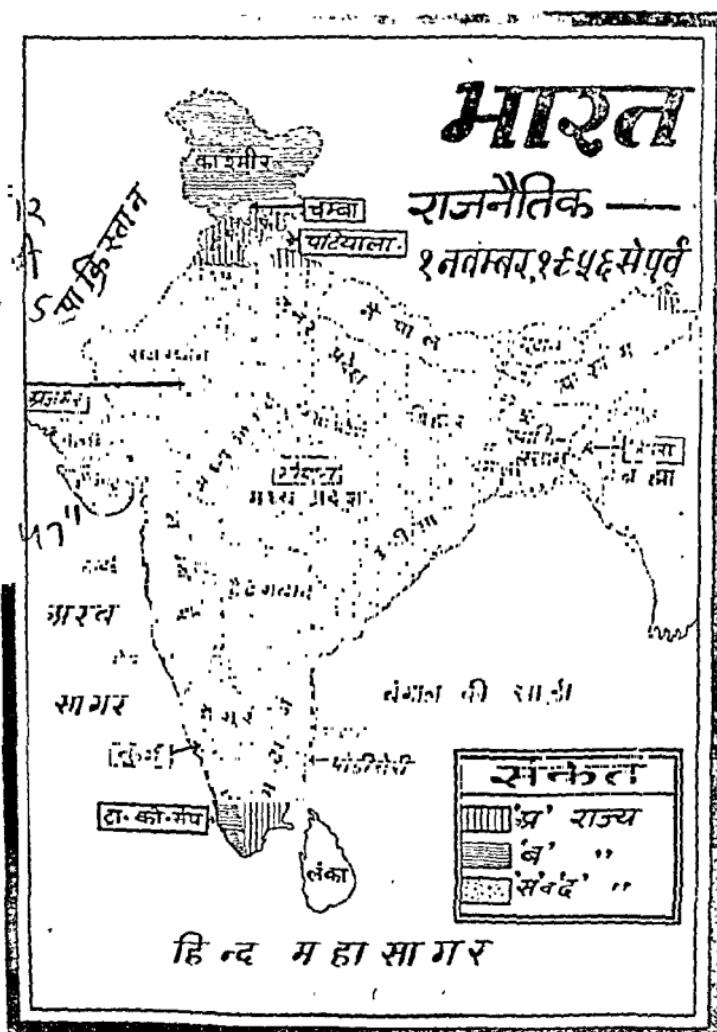
चित्र सं० ४. स्वतन्त्रता मिलने के पश्चात् भारत के राजनैतिक विभाग

विभिन्न भाषाएँ बोलते हैं और वेष-भूषा भी विभिन्न भागों में अलग अलग है। इन्हीं सब कारणों से कई लोग भारत को एशिया का उप-महाद्वीप कहने लग गये हैं।

अंग्रेजी काल में भारत के दो राजनैतिक विभाग थे—गवर्नर के प्रान्त और देशी राज्य। आजादी मिलने के पश्चात् उन राजनैतिक विभागों का संगठन किया गया। प्रान्तों के अतिरिक्त जो देशी राज्य थे उनका विलीनीकरण किया गया। कुछ देशी राज्यों को प्रान्तों में मिला दिया गया, कुछ को स्वतन्त्र रूप दे दिया गया और कुछ को मिला कर अलग संघ बनाये गये। प्रान्तों और देशी राज्यों के भेद को मिटाकर भारत के सभी राज्यों को चार श्रेणियों में बाँट दिया गया:—

(अ) गवर्नर के राज्य—आंध्र, आसाम, बिहार, बम्बई, मध्य प्रदेश, मद्रास, उड़ीसा, पंजाब, उत्तर प्रदेश और पश्चिमी बंगाल। इनका प्रबन्ध गवर्नर द्वारा होता था।

चित्र सं० ५. भारत के वर्तमान राजनैतिक विभाग

(ब) इस श्रेणी में देशी राज्यों के संघ बनाये गये। उनके नाम इस प्रकार से थे—मैसूर, हैदराबाद, जम्मू और काश्मीर, मध्य भारत, राजस्थान, सौराष्ट्र, ट्रावनकोर-कोचीन और पटियाला तथा पूर्वी पंजाब राज्य। इन संघों का शासन प्रबन्ध राज प्रमुख द्वारा होता था।

(स) इस श्रेणी में वे छोटे छोटे राज्य रखे गये जिनका प्रबन्ध केन्द्रीय सरकार की देख रेख में चीफ कमिश्नर द्वारा होता था। ये राज्य दिल्ली, अजमेर, भोपाल, विंध्य प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, कुर्ग, कच्छ, मनीपुर और त्रिपुरा थे। फ्रांस से प्राप्त हो जाने पर पाँडीचेरी राज्य को भी इसी श्रेणी में ले लिया गया है।

(द) इस श्रेणी में हिन्द महासागर में स्थित अंदमान और निकोबार द्वीपों को रखा गया। उनका प्रबन्ध भी केन्द्र की अध्यक्षता में चीफ कमिश्नर द्वारा होता था।

ये चार प्रकार के राज्य विकास की सुविधा के अनुसार रखे गए। 'अ' श्रेणी के राज्य अंग्रेजों के समय में पर्याप्त उन्नति पर थे परन्तु 'ब' श्रेणी के राज्य देशी रियासतों के समूह होने से पिछड़े हुए थे, अतः उनमें अधिक विकास करने की आवश्यकता हुई। इसी प्रकार 'स' और 'द' श्रेणी के राज्यों का सम्बन्ध सीधा केन्द्रीय सरकार से रखा गया जिससे उनका आर्थिक विकास ठीक तरह से हो सके।

जब इन सभी राज्यों में सुधार के काम होने लगे तो यह निश्चय किया गया कि भारत के इन सभी राज्यों का पुनर्गठन किया जाय। एक ही भाषा बोलने वाले लोगों का यदि एक अलग राज्य बना दिया जाय तो ठीक रहेगा। इस प्रकार अन्य भी कई बातों को ध्यान में रख कर १ नवम्बर सन् १९५६ से भारत के राज्यों का पुनर्गठन किया गया।

इस नवीन योजना के अनुसार राजप्रमुख के पद को हटा दिया गया। गवर्नर के १४ राज्य रखे गये और ६ छोटे क्षेत्र केन्द्र के अधीन रखे गये।

नए राज्यों के नाम इस प्रकार हैं—

१. आंध्र प्रदेश
२. आसाम
३. बिहार
४. बम्बई
५. जम्मू और काश्मीर
६. केरल
७. मध्य प्रदेश
८. मद्रास
९. मैसूर
१०. उड़ीसा
११. पंजाब
१२. राजस्थान
१३. उत्तर प्रदेश
१४. पश्चिमी बंगाल

इनके अतिरिक्त 'स' केन्द्र द्वारा शासित ६ क्षेत्र इस प्रकार हैं:—

१. अन्दमान और निकोबार द्वीप
२. दिल्ली
३. हिमाचल प्रदेश
४. लेकेदिव और एनिदिव द्वीप
५. मनीपुर
६. त्रिपुरा

यह पुनर्गठित भारत का नया रूप है। क्षेत्रफल के अनुसार बम्बई सबसे बड़ा राज्य है। इसके पश्चात् मध्यप्रदेश, राजस्थान और आंध्र प्रदेश का स्थान है। जनसंख्या के अनुसार उत्तर प्रदेश सर्वप्रथम है। उसके पश्चात् बम्बई, बिहार और आंध्र प्रदेश का स्थान है।

भारत की स्थिति बड़े महत्व की है। इस उत्तम स्थिति से देश को बहुत से लाभ पहुँचे:—

१. देश के दक्षिण में हिन्द महासागर है। उसके पूर्व की शाखा बंगाल की खाड़ी भारत के पूर्व में है और पश्चिम की शाखा अरब सागर भारत के पश्चिमी तट को छूती है। हमारे देश का समुद्र तट बहुत लम्बा है। हिन्द महासागर के उत्तम जल मार्गों द्वारा हमारे देश का विदेशी व्यापार होता है।

२. पूर्वी गोलार्द्ध के लगभग बीच में भारत स्थित है। यहाँ से आस्ट्रेलिया, अफ्रीका और यूरोप लगभग समान दूरी पर हैं। अतः उन महाद्वीपों से सम्पर्क करने में भारत को कठिनाई नहीं पड़ती।

३. भूमि के मार्गों से भी भारत कई देशों से जुड़ा हुआ है। पहले यूरोप और भारत के बीच भू-मार्गों द्वारा ही व्यापार होता था। आजकल भारत और चीन तथा तिब्बत के बीच कई दर्रों के भीतर होकर मार्ग जाते हैं और उनके द्वारा व्यापार होता है।

४. भारत के उत्तर में हिमालय पर्वत है। इससे देश को अनेक लाभ हैं। यह पर्वत उत्तर की ओर से आने वाली ठंडी हवाओं को रोक लेता है। दक्षिण से आने वाली जलभरी पवनें पर्वत से रुक कर ऊँची उठती हैं और ठंडी होकर वर्षा करती हैं। अधिक ऊँचाई के कारण पड़ौसी देश हिमालय को पार कर भारत पर आक्रमण नहीं कर सकते।

५. कर्क रेखा भारत के मध्य से गुजरती है। इस रेखा के दक्षिण के प्रदेश का राज्य गर्म है परन्तु उत्तरी प्रदेश में वह शीतोष्ण है। जलवायु में विभिन्नता होने से ही हमारे देश में कई प्रकार की खेती की उपज उत्पन्न होती है। देश के एक भाग में गेहूँ उत्पन्न होता है एवं अन्य भागों में चावल, पाट आदि का उत्पादन होता है।

६. भारत के दक्षिण में हिन्द महासागर होने से तथा देश का आधा भाग उष्ण कटिबन्ध होने के कारण यहाँ पर मानसून उत्पन्न होता है। यह मानसून भारत की विशेषता है क्योंकि इसी से देश में वर्षा होती है। मानसूनी प्रदेश होने के कारण ही भारत में खेती का विशेष महत्व है।

७. वायु-मार्गों के दृष्टिकोण से भी भारत की स्थिति विशेष महत्व रखती है। यह देश यूरोप तथा आस्ट्रेलिया के बीच में स्थित है। अतः यूरोप महाद्वीप से आस्ट्रेलिया जाने वाले वायुयान भारत होकर ही गुजरते हैं। वायु-मार्गों से हम विश्व के अन्य भागों से भी सम्बन्धित हैं।

भारत का क्षेत्रफल १,२६६,६४० वर्गमील है। इसका अर्थ यह हुआ कि हमारा राष्ट्र रूस को छोड़कर सम्पूर्ण यूरोप के दो तिहाई भाग के बराबर है। हमारा राष्ट्र ब्रिटेन से १३ गुना बड़ा है और जापान से इसका क्षेत्रफल ८ गुना है।

उत्तर से दक्षिण को भारत का विस्तार लगभग दो हजार मील है। पूर्व से पश्चिम का विस्तार लगभग १७०० मील है। भारत की स्थल-सीमा ८,२०० मील लम्बी है और राष्ट्र के समुद्र तट की लम्बाई ३,५०० मील है।

इस प्रकार भारत विश्व का एक महान् राष्ट्र है।

सारांश

स्वतन्त्रता मिलने से पूर्व भारत में दो प्रकार के राजनैतिक विभाग थे—अंग्रेजी प्रान्त और देशी राज्य। आजादी मिलने पर देशी राज्यों का विलीनीकरण किया गया। सम्पूर्ण भारत को चार प्रकार के राजनैतिक भागों में बाँट दिया गया—(अ) गवर्नर के राज्य, (ब) देशी राज्यों के संघ, (स) केन्द्र द्वारा शासित छोटे राज्य और (द) हिन्दमहासागर में स्थित द्वीप अन्दमान और निकोबार। परन्तु ये विभाग स्थायी रूप से नहीं बनाए गए थे। भाषावार राज्यों के बनने की माँग प्रजा की ओर से बहुत पुरानी थी। और भी कई प्रश्न विचाराधीन थे। इन्हीं के फलस्वरूप १ नवम्बर सन् १९५६ से भारत के राज्यों का पुनर्गठन किया गया।

भारत के १४ नवीन राज्य इस प्रकार हैं:—

आंध्र-प्रदेश, आसाम, बिहार, बम्बई, जम्मू और काश्मीर, केरल, मध्य-प्रदेश, मद्रास, मैसूर, उड़ीसा, पंजाब, राजस्थान, उत्तर-प्रदेश और पश्चिमी बंगाल। इन राज्यों के अतिरिक्त छः ऐसे क्षेत्र हैं जो केन्द्र द्वारा शासित किए जाते हैं। उनके नाम इस प्रकार हैं—हिमाचल प्रदेश, मनीपुर, त्रिपुरा, अन्दमान, निकोबार और माल द्वीप तथा एनिदिव द्वीप।

भारत को अपनी स्थिति से बहुत लाभ है। इसके दक्षिण में हिन्द महासागर है जिसके द्वारा यह विश्व के अन्य राष्ट्रों से व्यापार करता है। उत्तर में हिमालय पर्वत है जो उधर से आनेवाली ठण्डी हवाओं को रोक लेता है और दक्षिण से आनेवाली मानसून से वर्षा करने में

सहायक होता है। कर्क रेखा देश के मध्य से गुजरती है जिससे देश के जलवायु में भिन्नता हो गई है और यहाँ कई प्रकार की पैदावार होने लगी है। यूरोप और आस्ट्रेलिया के मध्य में स्थित होने से वायु-मार्गों के दृष्टिकोण से भी भारत का महत्त्व है।

भारत का क्षेत्रफल १,२६६,६४० वर्गमील है। यह राष्ट्र ब्रिटेन से ८ गुना बड़ा है। रूस को छोड़कर शेष यूरोप का भारत दो-तिहाई भाग है।

इस प्रकार भारत एक महान् राष्ट्र है।

प्रश्न

१. भारत को एशिया का उप-महाद्वीप क्यों कहते हैं ?
२. स्वतन्त्रता मिलने पर भारत के चार प्रकार के राज्य कौन-कौन से थे ?
३. पुनर्गठन योजना के अनुसार भारत के वर्तमान राजनैतिक-विभाग कौन-कौन से हैं ?
४. भारत की स्थिति का क्या महत्त्व है ?
५. भारत एक महान राष्ट्र किस प्रकार से है ?

अध्याय ५

प्राकृतिक दशा

भारत के प्राकृतिक नक्शे को देखने से ज्ञात होता है कि देश के उत्तर में पहाड़ी प्रदेश है जिसकी औसत ऊँचाई पाँच हजार फीट से अधिक है। इसकी बहुत सी चोटियाँ तो बीस हजार फीट से भी अधिक ऊँची हैं। इस पर्वतीय भाग के दक्षिण में समतल मैदान है जिसमें उत्तरी भारत की मुख्य नदियाँ बहती हैं। मैदान के दक्षिण में त्रिभुजाकार पठार है जो उत्तरी पहाड़ों की भांति अधिक ऊँचा नहीं है। पठार के पूर्वी और पश्चिमी किनारे पर समुद्र तट के सँकरे मैदान हैं।

इस प्रकार भारत की प्राकृतिक-रचना सब जगह एक सी नहीं है। कहीं ऊँचे पहाड़ हैं, कहीं मैदान तथा कहीं पठारी भूमि है। भू-रचना के अनुसार देश निम्नलिखित चार बड़े-बड़े प्राकृतिक भागों में बाँटा जा सकता है :—

(१) उत्तरी पहाड़ी प्रदेश

(२) उत्तरी भारत का विशाल मैदान

(३) दक्षिणी भारत का पठारी भाग

(४) समुद्र-तट के मैदान

इन चारों भागों की प्राकृतिक अवस्था में अन्तर होने के कारण वहाँ के जलवायु, प्राकृतिक वनस्पति, कृषि की उपज तथा लोगों के व्यवसाय में भी अन्तर है। इन भागों की प्राकृतिक दशा ने वहाँ के निवासियों के जीवन पर क्या प्रभाव डाला इसका विवेचन यहाँ किया जाता है।

उत्तरी पहाड़ी प्रदेश

भूगर्भ-शास्त्र के अनुसार जिस स्थान पर आज भारत के उत्तरी पहाड़ हैं वहाँ एक महासागर था जिसको तेथिस (Tethys) महासागर कहते थे। उस समुद्र का विस्तार पश्चिम में भूमध्यसागर से पूर्व में चीन की दक्षिणी-पश्चिमी सीमा तक था। उस समुद्र के तल से भूमि का उत्थान हुआ और वहाँ ऊँचे-ऊँचे पर्वत खड़े हो गये। इन पर्वतों को बने बहुत अधिक समय नहीं हुआ और ये संसार के नवीन पर्वतों में गिने जाते हैं। नवीन पर्वत होने के कारण ही इनकी ऊँचाई अधिक है।

उत्तरी पर्वतीय भाग को तीन विभागों में बांटा जा सकता है—(अ) मुख्य हिमालय जिसका विस्तार सिन्धु और ब्रह्मपुत्र नदियों के बीच में है, (आ) हिमालय की उत्तरी-पश्चिमी शाखा और (इ) हिमालय की दक्षिणी-पूर्वी शाखा।
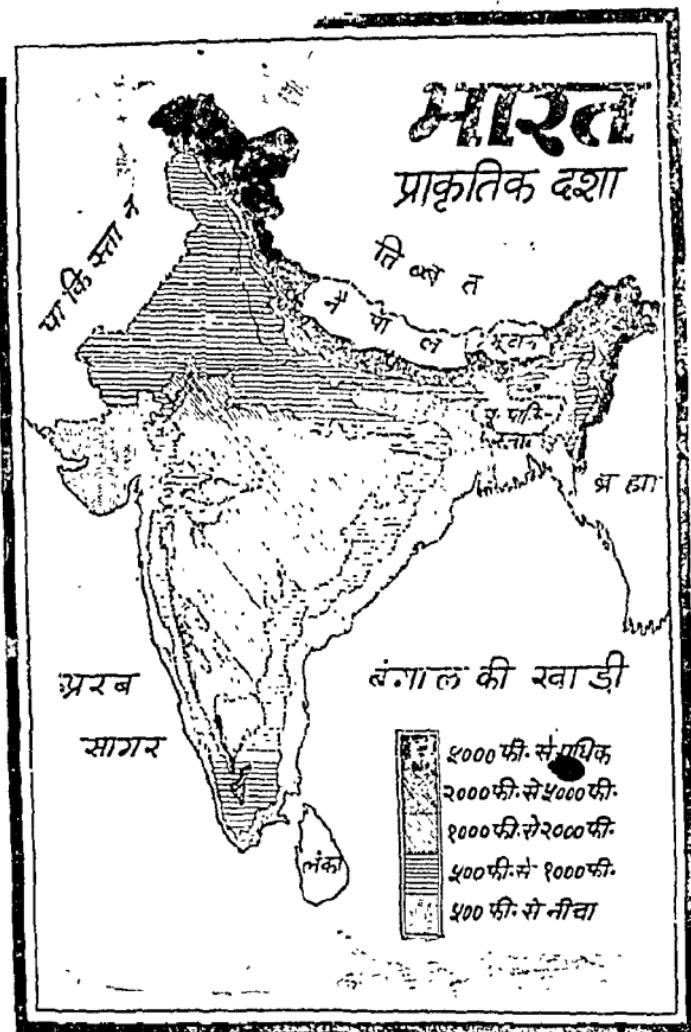
चित्र सं० ६. भारत की प्राकृतिक दशा

(अ) **मुख्य हिमालय**:—इस भाग में तीन मुख्य तीन श्रेणियां हैं:—महा हिमालय, लघुहिमालय और उप-हिमालय। ये श्रेणियां तिब्बत और भारत के बीच स्थित हैं। संसार की सर्वोच्च चोटी माउन्ट-एवरेस्ट इसी भाग में स्थित है। इसके अतिरिक्त और भी कई चोटियां वहाँ हैं। भारत के सुप्रसिद्ध पहाड़ी स्थान शिमला, दार्जिलिंग, नैनीताल आदि भी

वहीं स्थित हैं। इन श्रेणियों की लम्बाई पूर्व से पश्चिम को लगभग १,२५० मील है और चौड़ाई १५० से २०० मील है।
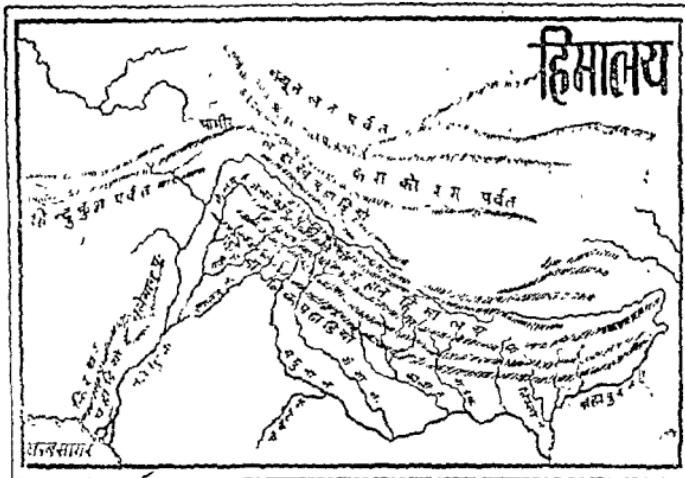
चित्र सं० ७. मुख्य हिमालय की प्रमुख श्रेणियाँ

मुख्य हिमालय की श्रेणियों को पार करने के लिए कई दर्रे हैं जिनमें जोजिला, काराकोरम, शिपकी, जेलेपा आदि उल्लेखनीय हैं। इन दर्रों की औसत ऊँचाई १५,००० फीट से भी अधिक है। यूरोप के आल्पस पर्वत में स्थित दर्रों की ऊँचाई इनकी ऊँचाई से तीन गुना है। इन्ही दर्रों द्वारा तिब्बत और भारत के बीच व्यापार होता है। यहाँ का मुख्य पशु याक है जिसकी पीठ पर माल ढोते हैं। इस पर्वतीय प्रदेश में यह पशु बड़े काम का है।

इस भाग के दक्षिणी ढालों पर अच्छी वर्षा होती है जहाँ वन-प्रदेश हैं। उत्तरी भाग बर्फ से ढका रहता है। उत्तरी भारत की नदियां मुख्य हिमालय से ही निकलती हैं।

(आ) उत्तरी-पश्चिमी शाखाः—मुख्य हिमालय के पश्चिमी नोक पर जहाँ सिन्धु नदी दक्षिण की ओर मुड़ती है वहाँ से एक पर्वतीय शाखा दक्षिण-पश्चिम को जाती है। इसकी मुख्य श्रेणियाँ सुलेमान और किरथर हैं। पहले यह भारत और अफगानिस्तान के बीच सीमा बनाती थी परन्तु अब इस शाखा का अधिकांश भाग पाकिस्तान में है। इस भाग में वर्षा कम होती है और नदियाँ भी कम निकलती हैं। पाकिस्तान से जाने के लिए खैबर और बोलन के दर्रे भी यहीं हैं। शुष्क भाग होने के कारण यहाँ वनस्पति का भी अभाव है।

(इ) दक्षिणी-पूर्वी शाखाः—मुख्य हिमालय की पूर्वी नोक से ब्रह्मपुत्र नदी दक्षिण की ओर मुड़ती है। वहीं पर पर्वत की एक श्रेणी भी दक्षिण की ओर चलती है। यह शृङ्खला आसाम में होती हुई ब्रह्मा में चली जाती है। आसाम में इस शृङ्खला की श्रेणियाँ पटकोई, गारो, खासी और जयन्तिया के नाम से प्रसिद्ध हैं। इनकी ऊंचाई अधिक नहीं है। हिमालय

और इन श्रेणियों के बीच ब्रह्मपुत्र नदी की घाटी है। बीच बीच में पठार आ गये हैं। चीन देश जाने के लिए इस श्रृङ्खला में होकर कुछ दर्रे भी हैं। इस पर्वतीय भाग में वर्षा अधिक होती है और इसी कारण यहाँ वन हैं। वनों को साफ करके कुछ खेती की जाती है। पहाड़ी ढालों पर चाय के बगीचे हैं।

उत्तरी पर्वतीय प्रदेश देश की आर्थिक उन्नति में निम्न प्रकार से सहायक है:—

(१) हिन्द महासागर से आने वाली जल भरी हवाओं को रोक कर ये पर्वत वर्षा करते हैं।

(२) हिमालय पर्वत से अनेक नदियाँ निकलती हैं। इन नदियों से सिंचाई करके गंगा सिन्धु के मैदान में कई प्रकार की कृषि की पैदावार उत्पन्न की जाती है।

(३) पर्वतीय भागों के ढालों पर वन हैं जिनकी लकड़ी कई प्रकार से काम में ली जाती है।

(४) उत्तर में साइबेरिया से आने वाली ठंडी हवाओं को हिमालय रोक लेता है अतः हम लोग ठंड से बच जाते है।

(५) पहाड़ी भागों की निचली भूमि चरागाहों के लिए काम में ली जा सकती है। उत्तरी मैदान में भूमि की कमी के कारण वह चरागाह पशु-पालन में बड़े सहायक हो सकते हैं।

(६) भारत में उत्पन्न होने वाली कुल चाय का लगभग ८० प्रतिशत भाग इन्हीं पहाड़ों से प्राप्त होता है।

(७) पहाड़ी भाग के वनों में कई जङ्गली पशु मिलते हैं जिनका शिकार किया जाता है। इनका चमड़ा व हड्डियाँ काम में ली जा सकती हैं।

(८) हमारे देश के लिए ये पर्वत पहरेदार का काम करते हैं। ये देश में शत्रुओं को प्रवेश करने से रोकते हैं।

(९) पहाड़ी भागों के झरनों से जल-विद्युत् उत्पन्न कर उसको मैदान में पहुँचाया जा सकता है जहाँ कई प्रकार के व्यवसायों में इसका प्रयोग हो सकता है।

(१०) पहाड़ी भाग का जलवायु स्वास्थ्यकर है। वहाँ कई प्रकार के प्राकृतिक दृश्य भी हैं जिन्हें देखने को असंख्य लोग जाते हैं। ग्रीष्म काल में ठंडा जलवायु होने के कारण ही बहुत से लोग पहाड़ी भागों में सैर करने जाते हैं। इसी के फलस्वरूप पहाड़ी ढालों पर शिमला, कूलू, मंसूरी, नैनीताल, दार्जिलिंग, शिलांग आदि नगर बस गए हैं। काश्मीर की घाटी तो प्राकृतिक सौन्दर्य के लिए विश्व में विख्यात है।

उत्तरी भारत का विस्तृत मैदान

उत्तर में हिमालय और दक्षिण में विन्ध्याचल पर्वत श्रेणी के बीच में एक बहुत बड़ा समतल मैदान आया हुआ है। उत्तरी पर्वतीय प्रदेश से आने वाली सिन्धु, गंगा और ब्रह्मपुत्र
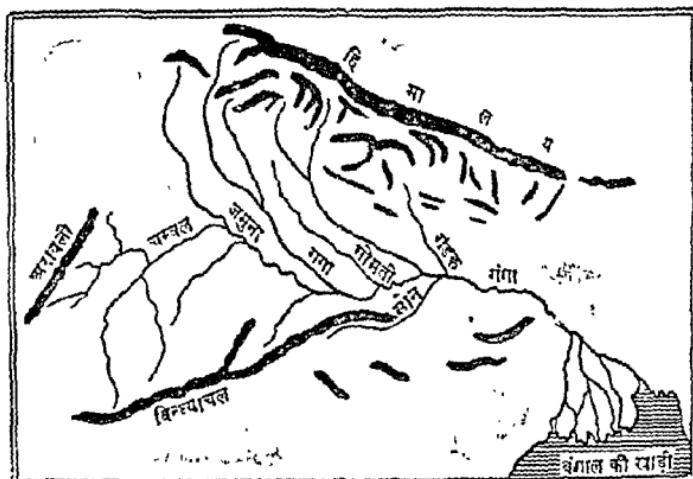
चित्र सं० ८. उत्तरी भारत का मैदान

तथा उनकी सहायक नदियों द्वारा लाई मिट्टी के एकत्रित होने से यह मैदान बना। यह मैदान विश्व के बड़े मैदानों में से है और इसकी मिट्टी बहुत उपजाऊ है। इस मैदान के अधिकांश भाग में गंगा तथा सिन्धु नदियाँ ही बहती हैं, ब्रह्मपुत्र का अधिकांश मार्ग तो पहाड़ों में ही है। इन दोनों नदियों के बेसिन से बना होने के कारण ही इसको गंगा-सिन्धु का मैदान कहते हैं।

गङ्गा-सिन्धु के मैदान का कुल क्षेत्रफल लगभग तीन लाख वर्ग मील है। इस मैदान की पूर्व से पश्चिम की अधिक से अधिक लम्बाई दो हजार मील है और चौड़ाई दो सौ मील।

उत्तरी भारत का मैदान देश का सर्वोत्तम भाग है। यहीं पर देश के अधिक लोग रहते हैं। उपजाऊ भूमि होने से यहाँ कई प्रकार की खेती की उपज होती है। यद्यपि विस्तार में यह भाग देश की सम्पूर्ण भूमि का दसवाँ भाग ही है परन्तु राष्ट्र के लगभग ४०% मनुष्य यहीं रहते हैं। भारत में सभ्यता का विकास भी पहले यहीं पर हुआ। आर्य लोगों ने पहले यहीं पर निवास किया था। देश के बड़े बड़े नगर भी इसी मैदान में स्थित हैं। इस मैदान में रेलों का जाल सा बिछा हुआ है और सड़कें भी बहुत हैं।

दिल्ली के निकट अरावली पर्वत श्रेणी गंगा-सिन्धु के मैदान को दो भागों में बांटती है। पश्चिमी भाग सिन्धु नदी का मैदान कहलाता है और पूर्वी भाग गङ्गा का मैदान। कम वर्षा होने

से सिन्धु का मैदान शुष्क है परन्तु इसमें सिंचाई के उत्तम साधन हैं। यहाँ संसार की सबसे अधिक नहरें हैं। इस मैदान का अधिकांश अब पाकिस्तान में चला गया है। गंगा के मैदान के पूर्वी भाग में अच्छी वर्षा होती है। वहाँ पाट और चावल की खेती होती है। पश्चिमी भाग में कम वर्षा के कारण नदियों से नहरें निकाल कर सिंचाई की जाती है। यहाँ की मुख्य उपज गेहूँ, कपास और गन्ना है।

उत्तरी भारत के मैदान की विशेषतायें.

(१) मैदान की मिट्टी बहुत उपजाऊ है। मिट्टी की यह विशेषता है कि हजारों वर्ष खेती होने पर भी इसका उपजाऊपन कम नहीं हुआ है। बिना खाद दिए ही यहाँ की मिट्टी में अच्छी पैदावार होती है।

(२) इस मैदान की मिट्टी बहुत गहरी है। सैकड़ों फीट-भूमि खोदने पर भी पत्थर नहीं मिलता। मिट्टी है भी बहुत मुलायम। इससे नहरें खोदने में सहूलियत रहती है।

(३) इतना विशाल मैदान होने पर भी यहाँ कोई पहाड़ नहीं है। इस कारण खेती करने में सहूलियत रहती है और रेल-मार्ग तथा सड़कें भी आसानी से बनाई जाती हैं।

(४) सम्पूर्ण मैदान की ऊँचाई समुद्रतल से छः सौ फीट से कहीं भी अधिक नहीं है। ढाल क्रमशः है इसलिए यहाँ नहरें आसानी से बन गई और नदियों में बहुत दूर तक नावें चलती हैं।

(५) कर्क रेखा के उत्तर में होने के कारण मैदान का जलवायु अधिक गर्म नहीं है। वहाँ उष्ण जलवायु तथा समशीतोष्ण जलवायु की पैदावार होती है। मैदान के एक भाग में चावल होता है और दूसरे में गेहूँ।

(७) अधिक विस्तार के कारण मैदान के जलवायु में भी कुछ अन्तर हो जाता है। जलवायु में विभिन्नता होने के कारण ही यहाँ की पैदावार में भी विभिन्नता है।

(८) मैदान में जनसंख्या का वितरण वर्षा के अनुसार है। जिस भाग में अधिक वर्षा होती है वहाँ आबादी भी घनी है जैसे बंगाल और बिहार। जहाँ वर्षा कम होती है वहाँ लोग कम रहते हैं यथा उत्तर प्रदेश का पश्चिमी भाग और पंजाब का मरुस्थली प्रदेश।

मैदान के अधिकांश लोग कृषि करने के कारण भूमि की कमी रहती है परन्तु तराई के निकट बेकार पड़ी हुई भूमि को ठीक करके उसमें खेती की जा सकती है। इसी प्रकार रेह वाली भूमि भी खाद देकर तैयार की जा सकती है।

दक्षिणी भारत का पठार

गंगा-सिन्धु के मैदान के दक्षिण में भारत का प्रायद्वीपी पठारी भाग स्थित है। इसकी औसत ऊँचाई डेढ़ हजार फीट से अढाई हजार फीट के बीच है। परन्तु इसकी कुछ चोटियाँ आठ हजार फीट

तक भी ऊंची हैं। पठार का वह भाग जो कम घिसा है, अधिक ऊंचाई के कारण पर्वत या पहाड़ कहलाता है। विन्ध्याचल, सतपुड़ा, पश्चिमी घाट, पूर्वी घाट आदि इसके उदाहरण हैं।

दक्षिणी भारत रचना के अनुसार बहुत पुराना है। जब हिमालय पर्वत के स्थान पर समुद्र था तो यह भाग भूमि से पर्याप्त ऊंचा उठा हुआ था। अधिक प्राचीन होने से इस भाग में कई परिवर्तन हुए जिनके फलस्वरूप यहाँ कई बहुमूल्य धातुओं की उत्पत्ति हुई। भारत का लोहा, मैंगनीज, अभ्रक, सोना आदि धातुएँ इसी भाग में मिलती हैं।
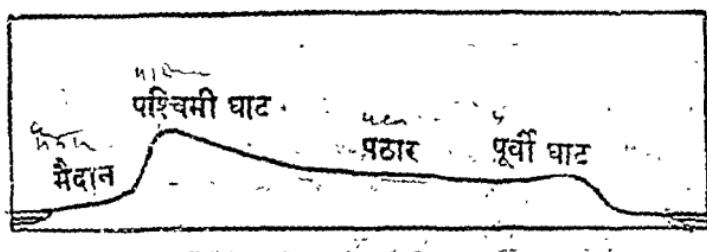
चित्र सं० ९. दक्षिणी पठार की ऊंचाई

प्रायद्वीप का उत्तरी-पश्चिमी भाग काली मिट्टी का बना हुआ है। प्राचीन काल में वहाँ कई भूकम्प हुए। लावा की बनी होने के कारण ही इस मिट्टी का काला रंग है। काली मिट्टी में कपास की खेती अच्छी होती है। इसी कारण बम्बई और अहमदाबाद आदि स्थानों में सूती वस्त्र बनाने की कई मिलें हैं।

प्रायद्वीप के उत्तरी-पूर्वी भाग में अच्छी वर्षा हो जाती है। इस भाग को छोटा नागपुर का पठार कहते हैं। इस भाग में वन हैं जिनकी लकड़ी कई कामों में आती है। भारत के कोयले के मुख्य क्षेत्र भी यहीं पर हैं।

प्रायद्वीप का दक्षिणी भाग 'दक्खन का पठार' (Deccan Plateau) कहलाता है। इसके पूर्व में पूर्वी घाट है और पश्चिम में पश्चिमी घाट है। ठेट दक्षिण में चलकर पूर्वी घाट और पश्चिमी घाट मिल जाते हैं। पश्चिमी घाट के पश्चिमी ढालों पर अच्छी वर्षा होने से घनी वनस्पति है परन्तु इसका पूर्वी ढाल वृष्टि छाया में आने से शुष्क रहता है। इसी भाँति पूर्वी घाट का पश्चिमी भाग भी शुष्क रहता है। दक्षिण के पठार का अधिकांश भाग अकाल-क्षेत्र रहता है। जहाँ तहाँ तालाबों से सिंचाई करके कुछ खेती कर ली जाती है।

पश्चिमी घाट तथा छोटा नागपुर में अच्छी वर्षा होने से वहाँ से कई नदियां निकलती हैं। बङ्गाल की खाड़ी में गिरने वाली नदियों में महानदी, गोदावरी, कृष्णा और कावेरी मुख्य

हैं। अरब सागर में नर्वदा और ताप्ती गिरती हैं। वर्षा ऋतु में तो इन नदियों में बहुत बाढ़ आती है परन्तु ग्रीष्म काल में इनमें बहुत ही कम पानी रह जाता है। द्रुतगामिनी होने तथा पठारी भाग में बहने के कारण इन नदियों में नावें नहीं चल सकतीं। यही कारण है कि उत्तरी भारत की नदियाँ तो देश के लिए बड़ी उपयोगी हैं परन्तु दक्षिणी भारत की नदियाँ इतनी उपयोगी सिद्ध नहीं हुई हैं। हाँ, एक बात अवश्य है। इन नदियों के पानी से जल-विद्युत् का उत्पादन अवश्य किया गया है।
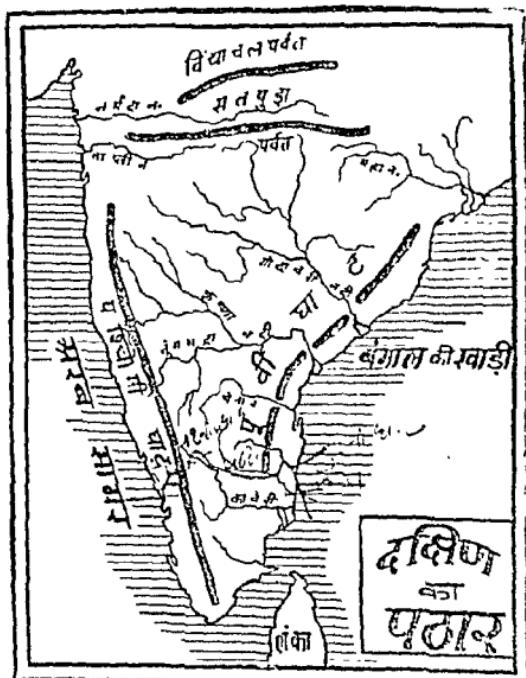
चित्र सं० १०. दक्षिण भारत की नदियाँ

जितना आर्थिक विकास उत्तर के मैदान का हुआ है उतना दक्षिण के पठार का नहीं हुआ। पठारी भाग होने के कारण यहाँ कुछ कठिनाइयां अवश्य हैं—कृषि के लिए अधिक जमीन नहीं है और यातायात के साधनों में भी रुकावट है। परन्तु फिर भी यत्न करने पर इस भाग का विकास हो सकता है। उत्तरी-पूर्वी भाग अर्थात् बिहार उड़ीसा में लोहा और कोयला मिलने के कारण कुछ कारखाने तो हैं लेकिन यत्न करने पर यह स्थान विश्व का बड़ा कारोबारी क्षेत्र हो सकता है। सिंचाई करके कुछ भागों में चावल, कपास और पाट की खेती की जा सकती है। पहाड़ी ढालों पर रबर, सिनकोना तथा चाय की उत्पत्ति बढ़ाई जा सकती है। पश्चिमी घाट के पश्चिमी ढालों पर लकड़ी चीरने का व्यवसाय हो सकता है।

समुद्र-तटीय मैदान

दक्षिण के पठार के पूर्व और पश्चिम में लम्बा समुद्र तट है। इस तट के दो विभाग किए जा सकते हैं:—(अ) पश्चिमी समुद्र तट और (आ) पूर्वी समुद्र तट। इन दोनों का संक्षिप्त वर्णन यहाँ किया जाता है।

(अ) पश्चिमी समुद्र-तट:—यह समुद्र तट अरब सागर और पश्चिमी घाट के बीच स्थित है। तट लम्बा तो पर्याप्त है परन्तु इसकी अधिक से अधिक चौड़ाई ४० मील है।

चित्र सं० ११.
भारत का पश्चिमी समुद्रतट

भारत के पश्चिमी समुद्रतट के उत्तरी आधे भाग को 'कोनकान' तट कहते हैं। इसी तट पर बम्बई बन्दरगाह स्थित है। उत्तरी भाग में नर्बदा और ताप्ती नदियाँ आकर समुद्र में गिरती हैं।

पश्चिमी तट का दक्षिणी भाग 'मलाबार' तट कहलाता है। यहाँ पर तट बहुत संकरा है। पश्चिमी घाट से आने वाले नाले बड़े तेज प्रवाह से समुद्र में गिर जाते हैं। वहाँ पर तट की संकीर्णता के कारण कोई बड़ी नदी नहीं बहती। और अधिक दक्षिण में घिरे मलाबार तट पर बालू रेत से घिरे हुए झीलों की भाँति गड्ढे हैं जिन्हें यहाँ लैगून कहते हैं।

अरब सागर से उठने वाली जलभरी मानसून पश्चिमी तट पर गर्मी के दिनों में अच्छी वर्षा कर देती है। वार्षिक वर्षा का औसत १०० इंच है। मैदान की कमी होने से वहाँ खेती तो अधिक नहीं हो सकती परन्तु पश्चिमी घाट निकट होने से वनों से लकड़ी प्राप्त की जाती है। आजकल तट के निकट समुद्र में मछली व्यवसाय की उन्नति की जा रही है। जहाँ पर समतल भूमि है वहाँ चावल, गर्म मसाला, नारियल आदि का उत्पादन किया जाता है।

(आ) पूर्वी समुद्रतट:—बङ्गाल की खाड़ी और पूर्वी घाट के बीच का समुद्र तट पश्चिमी तट की अपेक्षा अधिक चौड़ा है। इस तटीय मैदान में महानदी, गोदावरी, कृष्णा, कावेरी आदि नदियाँ डेल्टा बनाती हैं। इन नदियों से सिंचाई करके वहाँ पर खेती की जाती है। मुख्य पैदावार चावल है। आजकल वहाँ पर गन्ना और पाट का उत्पादन बढ़ाया जा रहा है।

भारत के पूर्वी समुद्र तट के उत्तरी भाग को 'उत्तरी सरकार' कहते हैं और दक्षिणी भाग को 'कर्नाटक तट' कहते हैं। उत्तरी भाग में गरमी के दिनों में वर्षा होती है और दक्षिणी भाग में सरदी की मानसून से वर्षा होती है। पश्चिमी तट की अपेक्षा पूर्वी तट पर वर्षा कम होती है। वहाँ की वार्षिक वर्षा का औसत लगभग ४५ इंच है।

चित्र सं० १२. भारत का पूर्वी समुद्रतट
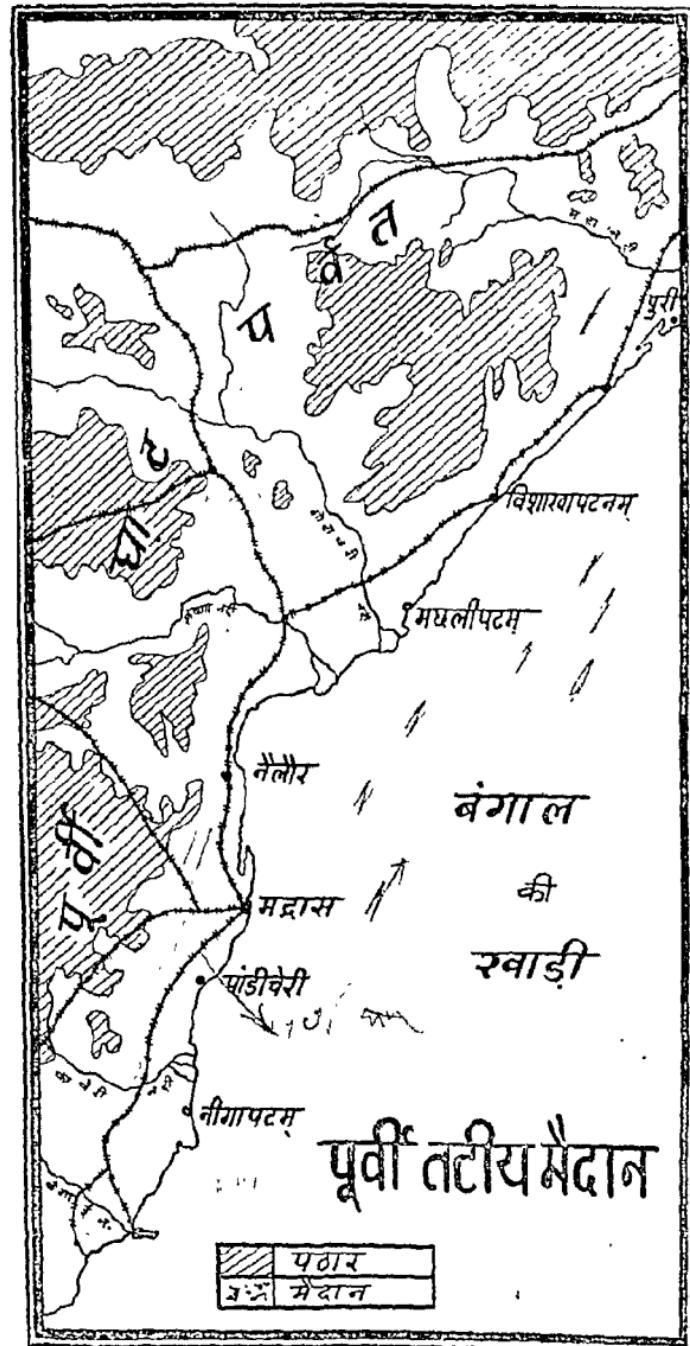
पूर्वी तट के मैदान को पश्चिमी तटीय मैदान की अपेक्षा सबसे बड़ा लाभ यह है कि यह अधिक चौड़ा है। खेती होने से यहाँ पर आबादी भी पश्चिम की अपेक्षा अधिक है। दूसरा लाभ यह है कि पश्चिमी - घाट अधिक ऊंचे नहीं हैं और वे कई जगह कटे हुए हैं। इन कटानों के भीतर से समुद्र तट से राष्ट्र के दक्षिणी प्रदेश में कई रेल मार्ग जाते हैं।

प्रश्न

१. भारत को कितने प्राकृतिक भागों में बाँटा जा सकता है ? कौन कौन से ?

२. हिमालय से देश को क्या लाभ हैं ?

३. गंगा सिन्धु के मैदान की क्या विशेषताएँ हैं ? भारत के चालीस प्रतिशत मनुष्य वहाँ क्यों रहते हैं ?

४. दक्षिणी भारत के पठार का आर्थिक विकास किस प्रकार से किया जा सकता है ?

५. भारत का समुद्र तट बहुत लम्बा होने पर भी देश को इससे अधिक लाभ नहीं है—क्यों ? इस समुद्रतट से लाभ किस प्रकार उठाया जा सकता है ?

अध्याय ६

जलवायु

जैसा कि पहले बताया जा चुका है, जलवायु का प्रभाव मनुष्य के जीवन पर प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष दोनों रूपों से पड़ता है। जिस प्रकार का जलवायु होगा, देश के लोगों का रहन सहन, खान-पान, निवास स्थान, उद्योग-धन्धे सभी वैसे ही होंगे। मनुष्य में कार्य करने की क्षमता भी जलवायु के अनुसार ही होती है।

भारत के निवासियों पर जलवायु का क्या प्रभाव पड़ा है और यहाँ के लोगों का जीवन जलवायु द्वारा किस प्रकार नियन्त्रित किया गया है इसको ज्ञात करने से पूर्व देश के जलवायु की जाँच कर लेना आवश्यक है।

हमारे देश में साल भर एकसा जलवायु नहीं रहता। कभी सर्दी अधिक पड़ती है और कभी गर्मी अधिक। कभी वर्षा खूब होती है। कभी-कभी कई दिनों तक एक बूंद भी पानी नहीं बरसता।

सुविधा के लिए जलवायु के अनुसार हम साल को तीन भागों में बाँट सकते हैं—सर्दी का समय, गर्मी की ऋतु और वर्षा का मौसम।

शरद ऋतुः—नवम्बर से मार्च अर्थात् प्रायः दीपावली से होलिका तक का समय शरद ऋतु में गिना जाता है।

दिसम्बर में सूर्य की किरणें दक्षिणी गोलार्द्ध पर सीधी पड़ती हैं अतः वहाँ तो गर्मी पड़ती है परन्तु उन दिनों उत्तरी गोलार्द्ध में शरद काल होता है। उन दिनों भारत में ठण्ड का समय होता है। दिसम्बर और जनवरी हमारे देश में सबसे अधिक ठंडे महीने होते हैं। परन्तु उन दिनों भी देश के सभी भागों में ठण्ड एक सी नहीं पड़ती। कर्क रेखा से दक्षिण वाले भाग कम ठण्डे होते हैं। हिमालय प्रदेश के स्थान अधिक ठण्डे होते हैं। इसका स्पष्टीकरण करने के लिए हम देश के भिन्न-भिन्न भागों के तीन स्थानों का जनवरी का औसत वार्षिक तापक्रम लेते हैं। जनवरी में मद्रास का तापक्रम ८०° फ०, दिल्ली का लगभग ५८° फ० और शिमले का केवल ४८° फ० होता है। अन्तिम स्थान पर्वतीय भाग में होने के कारण अधिक ठंडा रहता है। इस प्रकार उत्तरी भारत में ठंड अधिक पड़ती है और दक्षिणी भारत में अपेक्षाकृत कम, क्योंकि वह भाग सूर्य की सीधी किरणों के ताप से कुछ पास है।

राजस्थान तथा उत्तर के बड़े मैदान में भूमि के अधिक विस्तार के कारण रात और दिन के तापमान में अधिक अन्तर होता है। वहाँ रात को अधिक ठण्ड पड़ती है।

ग्रीष्म कालः—अप्रैल से जून तक भारत में ग्रीष्म ऋतु होती है। मार्च में सूर्य की सीधी किरणें विषुवत रेखा पर लम्ब रूप से पड़ती हैं। अप्रैल में सूर्य विषुवत रेखा से दक्षिण भारत की ओर बढ़ता है अतः वहाँ उस माह में साल में सबसे अधिक गर्मी पड़ती है। मई में सूर्य की सीधी किरणें मध्य भारत के निकट पड़ने के कारण वहाँ वह साल का सबसे गर्म महीना गिना जाता है। जून में कर्क रेखा पर सूर्य की सीधी किरणें पड़ती हैं अतः उत्तरी भारत विशेषतः राजस्थान तथा पंजाब और उत्तर प्रदेश में जून सबसे अधिक गर्म महीना होता है। उन दिनों इन स्थानों का औसत तापक्रम ९०° फ० हो जाता है। परन्तु वहाँ भी अधिक ऊँचाई के कारण पहाड़ी स्थान मैदान की अपेक्षा अधिक ठण्डे होते हैं। यही कारण है कि उत्तरी भारत के धनी लोग उन दिनों शिमला, नैनीताल, मंसूरी, दार्जिलिंग आदि स्थानों को कुछ समय के लिए चले जाते हैं और गर्मी की ऋतु समाप्त होने पर लौट आते हैं।

दोनों ऋतुओं के तापमान में भेदः—इस प्रकार हमने देखा कि कर्क रेखा तापक्रम के हिसाब से भारत को दो भागों में बाँटती है—दक्षिणी भारत और उत्तरी भारत।

दक्षिणी भारत कर्क रेखा के दक्षिण में होने से वहाँ का तापक्रम अधिक रहता है। वहाँ गर्मी और जाड़े के तापमान में भी बहुत अन्तर नहीं होता क्योंकि उस भाग में भूमि का विस्तार अधिक नहीं है। त्रिभुजाकार होने के कारण समुद्र बहुत दूर नहीं है और समुद्र के निकट वाले स्थानों का तापान्तर सदैव कम रहता है। परन्तु वहाँ के पहाड़ी स्थान यथा नीलगिरी, उटकमण्ड, बंगलौर आदि निचले भागों की अपेक्षा अधिक ठण्डे हैं।

उत्तरी भारत कर्क रेखा के उत्तर में है। इसके पश्चिमी भाग में गर्मी में अधिक गर्मी पड़ती है और जाड़े में अधिक ठण्ड। राजस्थान, पंजाब और पश्चिमी उत्तर प्रदेश में इसी कारण वार्षिक तापक्रम का अन्तर अधिक होता है। उत्तरी भारत के पूर्वी भाग में यथा पूर्वी उत्तर प्रदेश, बिहार और आसाम में ग्रीष्म काल में तो पर्याप्त गर्मी पड़ती है परन्तु शीतकाल में बहुत अधिक ठंड नहीं पड़ती। बंगाल के निकट समुद्र आ जाने से वहाँ के वार्षिक तापक्रम का अन्तर बहुत कम होता है।

शीतकाल में साइबेरिया से ठण्डी हवाएं दक्षिण की ओर चलती हैं। हिमालय पर्वत उन्हें उत्तर में रोक लेता है। यदि हिमालय नहीं होता तो वे ठण्डी हवाएं हमारे देश में प्रवेश करतीं और यहाँ इतनी अधिक ठंड पड़ने लगती कि सर्दी में हमारे लिए कार्य करना दूभर हो जाता।

वर्षा ऋतुः—भारत में वर्षा की ऋतु निश्चित है। देश की अधिकांश वर्षा की मात्रा जुलाई से अक्टूबर के बीच में होती है। केवल थोड़ी सी वर्षा जाड़े में होती है।

साल के निश्चित समय में वर्षा होने से ही यहाँ की वर्षा 'मानसूनी' वर्षा कहलाती है।

एशिया महाद्वीप की विशालता और उसके दक्षिण में हिन्द महासागर होने से भूमि

और जल के तापक्रम में अन्तर नहीं होता है और इसी के फलस्वरूप मानसून की उत्पत्ति होती है।

एशिया के अन्य मानसून जलवायु वाले देशों की भांति हमारे देश भारत में भी साल में दो मानसून आते हैं।

१. दक्षिणी-पश्चिमी मानसून:—जून में जब सूर्य की सीधी किरणें कर्क रेखा पर गिरती हैं तो देश का धरातल गर्म हो जाता है। वहाँ वायु का दबाव अधिक होता है। इसी
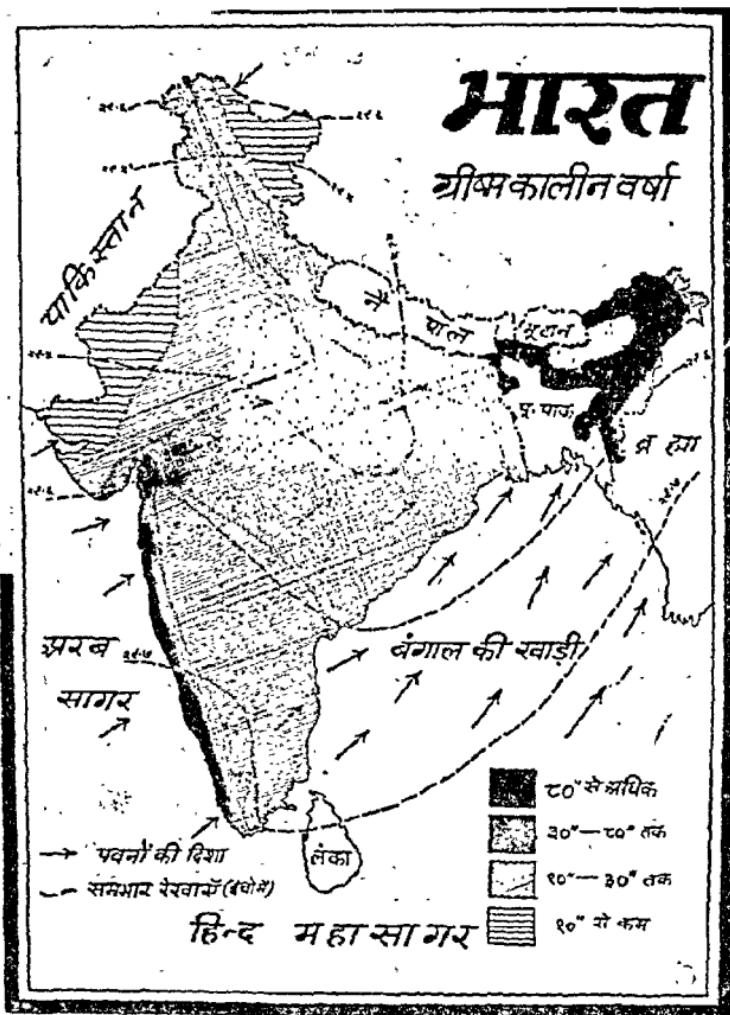
चित्र सं० १३. देश में ग्रीष्मकाल की वर्षा का वितरण

कारण देश के भीतरी भागों में कम दबाव वाले भागों की ओर समुद्र की ओर से जलभरी हवाएं चलने लगती हैं। क्योंकि पृथ्वी पश्चिम से पूर्व की ओर परिक्रमा करती है इसलिये

समुद्र से आने वाली हवाएँ दक्षिण से उत्तर की ओर न चलकर दक्षिण पश्चिम से उत्तर-पूर्व की ओर चलती हैं। इसी कारण इन हवाओं को 'दक्षिणी-पश्चिमी मानसून' कहते हैं।

दक्षिण का पठार नोक की भांति हिन्द महासागर में आजाने के कारण हिन्द महासागर की दो भुजाएँ—अरब सागर और बङ्गाल की खाड़ी बन गई हैं। इसी के फलस्वरूप दक्षिण-पश्चिमी मानसून की भी दो शाखाएँ हो गई हैं:—
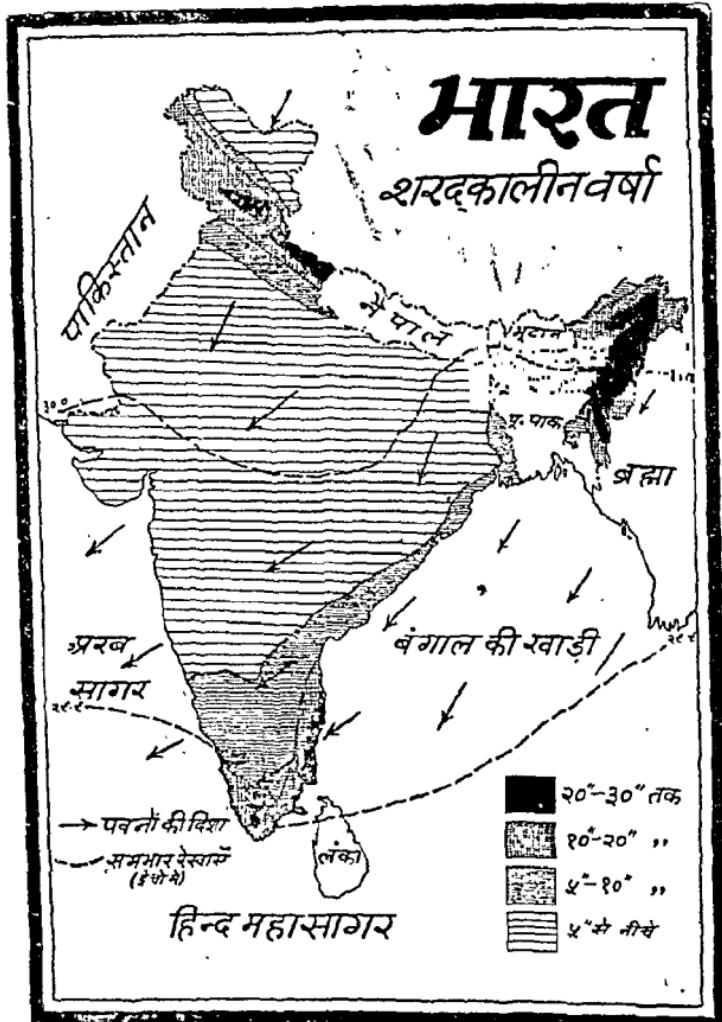
चित्र सं० १४. भारत में शरद्कालीन वर्षा

(अ) अरब सागर की शाखाः—अरब सागर से चलकर ये जलभरी हवाएँ पहले पश्चिमी घाट के निकट पहुँचती हैं। वहाँ ठण्डी होकर खूब वर्षा करती हैं। यही कारण है कि पश्चिमी घाट के पश्चिमी ढालों पर १०० इंच से भी अधिक वर्षा होती है। पश्चिमी घाट को

पार करने के पश्चात् इन हवाओं में बहुत कम पानी रह जाता है। इसीलिए पश्चिमी घाट के पूर्व में दक्षिण का पठारी भाग वृष्टि-छाया में आया हुआ है और वहाँ कम वर्षा होती है।

इसी मानसून की एक शाखा नर्बदा और ताप्ती नदियों की घाटियों में प्रवेश कर छोटा नागपुर के पठार तक पहुँच कर वर्षा करती है। दूसरी शाखा कच्छ, राजस्थान और पंजाब को पार कर हिमालय तक पहुँचती है और वहाँ ठण्डी होकर वर्षा करती है। राजस्थान और पंजाब में इसके मार्ग में कोई ऊँचा पर्वत न होने के कारण इसके द्वारा वहाँ वर्षा बहुत कम होती है।

(आ) बंगाल की खाड़ी की शाखा:—यह मानसून बंगाल की खाड़ी से उठकर बङ्गाल तथा आसाम राज्य में पहुँचती है। वहाँ यह पर्वतीय प्रदेश में प्रवेश करने पर ठण्डी होकर वर्षा कर देती है। आसाम में स्थित चेरापूंजी नामक स्थान में तो इस मानसून द्वारा लगभग पांच सौ इंच वर्षा साल में हो जाती है।
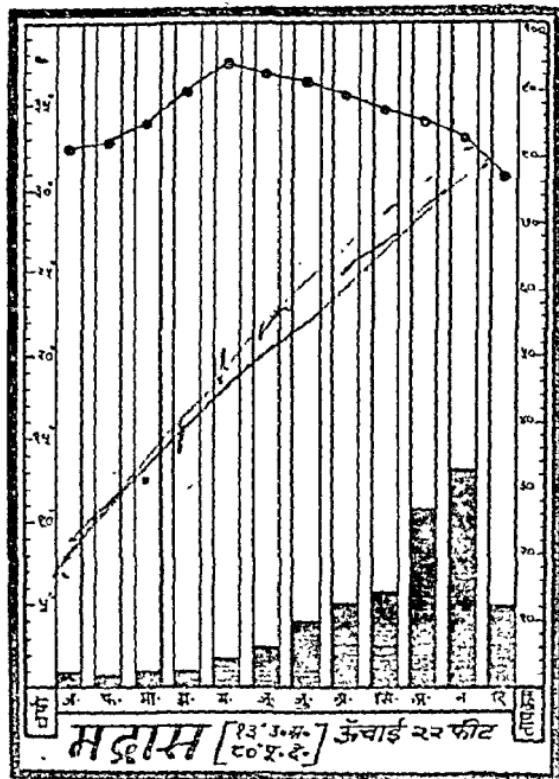
चित्र सं० १५. मद्रास में अधिकांश वर्षा शरद काल में होती है

आसाम से आगे हिमालय शृङ्खला द्वारा इस मानसून का रुख पश्चिम की ओर हो जाता है। हिमालय के साथ-साथ यह पूर्व से पश्चिम की ओर चलती है। जमीन पर बहुत दूर चलने के कारण इस मानसून द्वारा पूर्व से पश्चिम की ओर वर्षा की मात्रा घटती जाती

पूर्वी भाग इसमें सम्मिलित है। यहाँ साल भर की वर्षा का औसत २० इंच और ४० इंच के बीच रहता है। कभी-कभी तो इन भागों में इससे भी कम वर्षा होती है। तब यहाँ अकाल पड़ता है। इन स्थानों में जहाँ सिंचाई के साधन हैं वहाँ अकाल का अधिक प्रभाव नहीं पड़ता। सिंचाई वाले भागों में अच्छी खेती होती है।

(ई) कम वर्षा के क्षेत्रः— राजस्थान का अधिकांश, पंजाब का दक्षिणी भाग तथा उड़ीसा के कुछ भागों में बीस इंच से भी कम वर्षा होती है। राजस्थान के उत्तरी-पश्चिमी भाग
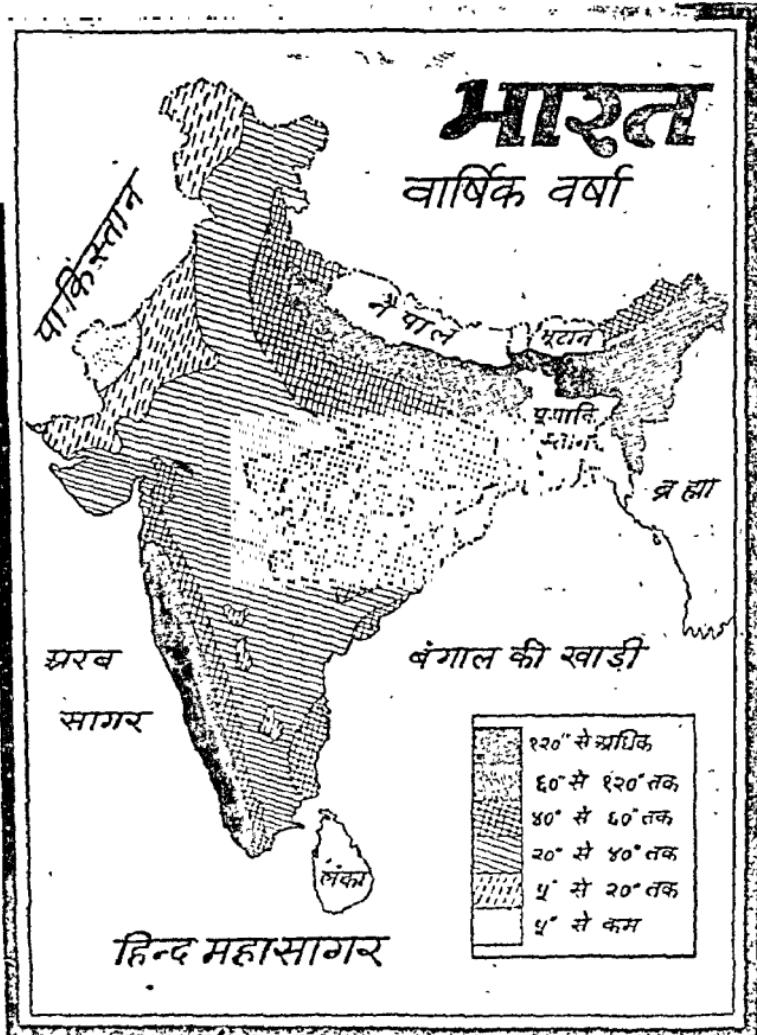
चित्र सं० १६. भारत में वार्षिक वर्षा का वितरण

में तो कभी कभी ५ इंच से भी कम वर्षा होती है। इन भागों में सिंचाई के साधन भी उपलब्ध नहीं है। यही कारण है कि यहाँ अधिक अकाल पड़ते हैं और यहाँ की आबादी बहुत कम है।

कृषि प्रधान देश होने से भारत के लोगों की समृद्धि वर्षा के वितरण पर ही निर्भर है। यही कारण है कि जहाँ अधिक वर्षा होती है वहाँ की आबादी भी घनी है और कम वर्षा वाले भागों में बहुत ही कम लोग रहते हैं तथा वहाँ का आर्थिक विकास बहुत ही कम हुआ है।

भारतीय मानसून की कुछ विशेपतायें

भारत की वर्षा की कई विशेषतायें हैं।

(१) देश की लगभग ६०% वर्षा की मात्रा मानसून द्वारा ही होती है।

(२) अधिकांश वर्षा साल भर न होकर कुछ ही महीनों में होती है। गर्मी के मानसून से अधिक वर्षा होती है।

(३) वर्षा देने वाली मानसून कभी-कभी नियमित समय पर न आकर देर से आती है। ऐसा होने से खरीफ की फसल को हानि होती है।

(४) मानसून कभी अपने निश्चित समय से पहले ही शुरू हो जाती है। इसी कारण वह समाप्त भी शीघ्र हो जाती है और इस तरह खेती को पूरे समय पानी नहीं मिलता जिससे कृषि नष्ट हो जाती है।

(५) मानसून से मूसलाधार वर्षा होती है। पानी बहुत तेजी से बहता है और वह अपने साथ भूमि के उपजाऊ तत्व को बहाकर ले जाता है।

(६) जिस भाग में मानसून का मार्ग है और जहाँ पर्वत है वहाँ अधिक वर्षा होती है। जहाँ मानसून का रुख नहीं है वहाँ वर्षा नहीं होती।

(७) कभी कभी मानसून बड़ी तेजी से उठती है तब वर्षा भी खूब होती है। कमजोर मानसून होने से वर्षा भी कम होती है।

(८) मानसून से पर्वतीय प्रदेशों में ही अधिक वर्षा होती है जहाँ खेती नहीं हो सकती। यदि मैदानों में सिंचाई के साधन न हों तो हमारी खेती की सम्पूर्ण उपज मानसून की वर्षा पर निर्धारित हो।

(९) सर्दी की मानसून से बहुत कम वर्षा होती है और वह भी देश के थोड़े से भाग में।

(१०) मानसून उठते समय समुद्र में बड़े तूफान आते हैं और तब समुद्र तट के प्रदेशों में जन और धन की बहुत हानि होती है।

मानसून से हानियाँ होने पर भी एक भारतीय किसान की आशा नियमित समय पर आई हुई मानसून ही है। जिस साल मानसून से ठीक समय पर वर्षा हो जाती है वह समय वहाँ देश की समृद्धि का समय होता है। नियमित समय पर वर्षा न होने पर साल भर लोगों को कठिनाई से गुजारना पड़ता है। कहते भी हैं कि भारत सरकार की आय मानसून का जुआ है (The Indian Budget is the Gambling of Monsoon)। जिस वर्ष

मानसून से समय पर वर्षा अच्छी होती है उस साल खेती भी अच्छी होती है और मानसून के कमजोर होने से खेती की उपज भी कम होती है।

जलवायु के अनुसार भारत के विभाग और यहाँ के निवासियों के जीवन पर जलवायु का प्रभाव:—

ऊपर सामूहिक रूप से भारत के जलवायु की विवेचना की गई है। हमने देखा है कि भारत के भिन्न-भिन्न भागों में जलवायु भी भिन्न है। भूमि की रचना और देश की विशालता ने ही जलवायु में अन्तर ला दिया है। यहाँ पर समान जलवायु वाले भागों के क्षेत्र निर्धारित करके यह बताने की चेष्टा की गई है कि भिन्न-भिन्न जलवायु वाले प्रदेशों में रहने वाले लोगों का रहन-सहन और व्यवसाय भिन्न-भिन्न क्यों है।

१. हिमालय प्रदेश:—हिमालय पर्वत बहुत ऊँचा है। इसकी ऊँचाई के अनुसार यहाँ के जलवायु में भी अन्तर है। लगभग आठ हजार की ऊँचाई तक तो तापक्रम मनुष्य के रहने योग्य रहता है। वहाँ सर्दी का औसत तापमान ४५° फ० और गर्मी का लगभग ६५° फ० होता है। ऐसे ही भागों में शिमला, नैनीताल, मसूरी आदि पहाड़ी नगर बसे हुए हैं। नौ-दस हजार फीट की ऊँचाई के पश्चात् बर्फ जमी रहती है और इसी कारण वहाँ मनुष्य नहीं रहते। शीतकाल में तो वहाँ पहुँचना ही दूभर है।

वर्षा के वितरण के अनुसार हिमालय-प्रदेश दो भागों में बाँटा जा सकता है—(अ) पूर्वी भाग—इसके दक्षिणी ढालों पर अच्छी वर्षा होती है क्योंकि यह भाग बङ्गाल से आने वाली मानसून के रुख में है। यहाँ ८० इञ्च तक वर्षा होती है। ज्यों-ज्यों पश्चिम की ओर आगे बढ़ते हैं वर्षा की मात्रा कम होती जाती है। (आ) पश्चिमी भाग—हरिद्वार के पश्चात् वर्षा कम होती है। वहाँ अरब सागर से आने वाले मानसून से वर्षा होती है परन्तु वर्षा की मात्रा ३०-४० इञ्च से अधिक नहीं होती। पंजाब के पहाड़ी भाग में तो फिर भी वर्षा हो जाती है परन्तु काश्मीर में इसकी मात्रा बहुत घट जाती है।

हिमालय-प्रदेश के अधिक ऊँचे भागों में पानी गिर कर हिम की वर्षा होती है। इस प्रकार हिमालय-प्रदेश का जलवायु लोगों के रहने के अनुकूल नहीं है। मैदान न होने के कारण वहाँ कृषि भी कम होती है। पहाड़ी घाटियों में जहाँ ठण्ड कम पड़ती है, लोग रहते हैं और कुछ खेती भी करते हैं।

२. आसाम बङ्गाल का भाग:—इस भाग में वर्षा सबसे अधिक होती है। वर्षा का समय भी यहाँ अधिक दिनों तक रहता है। गङ्गा का डेल्टा भी ऐसा ही भाग है जहाँ स्थान स्थान पर पानी के गड्ढे हैं।

इस भाग में गर्मी पर्याप्त पड़ती है परन्तु सर्दी कम रहती है। मैदान में लोग चावल की खेती करते हैं। पाट का तो गङ्गा और ब्रह्मपुत्र के संयुक्त डेल्टे में एकाधिकार सा है।

आसाम की पहाड़ियाँ वनों से आच्छादित हैं। वहाँ पहाड़ी ढालों पर चाय के बगीचे बड़े सुहावने लगते हैं। पहाड़ी भागों में तो बहुत कम लोग रहते हैं परन्तु नदी की घाटी की जन-संख्या बहुत घनी है।

३. गङ्गा नदी का मैदान:—उत्तर प्रदेश और बिहार इस भाग में सम्मिलित हैं। पूर्वी भाग में अच्छी वर्षा होती है परन्तु पश्चिमी भाग में वर्षा की मात्रा कम होती जाती है। वहाँ नहरों द्वारा सिंचाई करके गेहूँ, कपास और गन्ने की खेती की जाती है। पूर्वी भाग में विशेषतः बिहार में चावल और गन्ने की खेती होती है।

इस भाग में मई और जून में दिन के समय कड़ी गर्मी पड़ती है। वर्षा होने पर गर्मी की मात्रा कम हो जाती है। दिसम्बर-जनवरी में ठण्ड अधिक पड़ती है।

गङ्गा के मैदान की भूमि बहुत उपजाऊ होने से वहाँ कई प्रकार की पैदावार होती है। पश्चिमी भाग में ठण्ड अधिक पड़ने से वहाँ की पैदावार पूर्वी भाग से भिन्न है। यही कारण है कि पश्चिमी भाग में गेहूँ, कपास और गन्ना होता है। पूर्वी भाग का जलवायु उष्ण और तर होने के कारण ही वहाँ चावल, पाट और तम्बाकू होती है।

४. उत्तरी पश्चिमी शुष्क प्रदेश:—पंजाब का दक्षिणी भाग और राजस्थान इस भाग में सम्मिलित हैं। यह भाग गर्मियों में बहुत गर्म रहता है और शरद काल में ठण्डा। इसी कारण यहाँ का वार्षिक तापान्तर अधिक होता है। वर्षा वहाँ बहुत कम होती है। गर्मी के अतिरिक्त सर्दी में भी यहाँ कुछ वर्षा होती है। इस भाग की भूमि तो उपजाऊ है परन्तु पानी की कमी के कारण खेती कम होती है। पंजाब में नहरें बन जाने के कारण वहाँ गेहूँ और कपास की अच्छी पैदावार होने लगी है। सर्दी की वर्षा गेहूँ की फसल के लिए बहुत सहायक होती है।

राजस्थान के उत्तरी-पश्चिमी भाग में वर्षा बहुत ही कम होती है। इसी कारण यह भाग भारत के मरुस्थल में गिना जाता है। यहाँ सिंचाई के साधन भी नहीं हैं। बहुत सी भूमि बेकार पड़ी हुई है। हाँ, अरावली श्रेणी के दक्षिणी-पूर्वी ढालों पर वर्षा बीस इंच से अधिक हो जाती है। वहाँ पास के मैदानों में कुछ खेती भी होती है। आगे चलकर मालवे में अच्छी वर्षा होने से वहाँ पैदावार अच्छी हो जाती है।

५. छोटा नागपुर का पठार:—भारत के इस भाग में अच्छी वर्षा हो जाती है। इस कारण यहाँ पहाड़ी भागों में वन हैं। यहाँ गर्मी भी पर्याप्त पड़ती है। खेती के लिए जमीन कम है। अब जंगलों को काटकर चावलों की खेती की जा रही है। पहाड़ी भागों के वनों से लाख प्राप्त की जाती है।

इसी भाग में लोहे और कोयले की खानें हैं। अब यह प्रदेश कृषि-प्रधान होने के बजाय व्यवसाय प्रधान हो रहा है।

६. दक्षिण का पठार:—यहां मई का महीना सबसे अधिक गर्म होता है। सर्दी कम पड़ती है। जनवरी का औसत तापमान ६५° से ७५° फ० तक रहता है। पश्चिमी घाट के वृष्टि छाया में होने से इस भाग में वर्षा कम होती है। केवल दक्षिण में मैसूर राज्य में अच्छी वर्षा हो जाती है जहाँ पहाड़ी ढालों पर चन्दन आदि के वन हैं।

दक्षिणी पठार की भूमि पथरीली है। कहीं-कहीं पर नदियां और घाटियां और छोटे-छोटे मैदानों में तालाबों द्वारा सिंचाई कर कुछ खेती की जाती है। वहाँ की मुख्य उपज ज्वार-बाजरा, कपास और मूंगफली है। कम वर्षा होने के कारण वहाँ आबादी भी कम है।

७. पश्चिमी समुद्र तट:—पश्चिमी घाट और अरब सागर के बीच भूमि की बहुत लम्बी सँकरी पट्टी आई हुई है। यहां दक्षिणी-पश्चिमी मानसून से अधिक वर्षा होती है। पश्चिमी घाट के ढालों पर तो २५० इंच तक वर्षा होती है परन्तु किनारे के मैदान का औसत १०० इंच है।

पश्चिमी किनारे के मैदान का उत्तरी भाग बहुत अधिक गर्म नहीं है। परन्तु दक्षिणी भाग अर्थात् मलाबार तट विषुवत रेखा के निकट होने से बहुत गर्म रहता है।

इस प्रकार समुद्र तट का जलवायु तर और गर्म है। समुद्र निकट होने से वहाँ का वार्षिक तापान्तर भी कम है।

पश्चिमी घाट के पहाड़ी ढालों पर सघन वन हैं। मैदान में चावल और नारियल की अच्छी पैदावार होती है। मैदान की आबादी भी अच्छी है। उत्तरी भाग में लगभग चार सौ मनुष्य प्रति मील रहते हैं परन्तु दक्षिण में केरेला में जहाँ मैदान की चौड़ाई कुछ अधिक है, जन संख्या का घनत्व ६०० मनुष्य प्रति वर्ग मील के लगभग है।

८. पूर्वी समुद्री तट:—इस भाग के जलवायु की यह विशेषता है कि यहाँ गर्मी और सर्दी दोनों ऋतुओं में वर्षा होती है। गर्मी यहाँ पर्याप्त पड़ती है और सर्दी बहुत कम।

उत्तरी भाग में अधिकांश वर्षा ग्रीष्म काल में होती है। परन्तु दक्षिणी भाग अर्थात् कर्नाटक तट पर सर्दियों में उत्तर-पूर्वी मानसून से अच्छी वर्षा हो जाती है।

सम्पूर्ण भाग की वार्षिक वर्षा का औसत लगभग चालीस इंच है। नदियों के डेल्टों में सिंचाई भी की जाती है। यहाँ की मुख्य उपज चावल और बाजरा है। आजकल यहाँ पाट की खेती भी अच्छी होने लगी है। यत्न करने पर इस भाग में गन्ने की पैदावार भी अच्छी हो सकती है।

सर्दी के दिनों में उत्तरी-पश्चिमी मानसून के समय यहाँ बड़े तूफान आते हैं जिनसे कभी कभी खेती नष्ट हो जाती है।

सारांश

इस प्रकार हमने देखा कि भारत के अधिकांश लोगों का जीवन जलवायु पर ही

निर्भर है। मानसून तो यहाँ के लोगों का जीवनाधार ही है। जलवायु में विभिन्नता होने से ही देश के भिन्न भिन्न भागों की कृषि की उपज में भी पर्याप्त विभिन्नता है। प्रायः देखा गया है कि भारत के वर्षा के वितरण के नक्शे और जनसंख्या के वितरण के नक्शे में समानता है।

जैसा कि ऊपर के वर्णन से ज्ञात होता है देश का जलवायु साल भर एकसा नहीं है। किसी भाग में कभी अधिक गर्मी पड़ती है और किसी में कभी ठण्ड अधिक। कभी वर्षा अधिक होती है और कभी कम। देश की विशालता और भूमि की रचना में विभिन्नता होने के कारण ही ऐसा अन्तर हो गया है।

भारत में तापक्रम और वर्षा के वितरण के अनुसार साल को हम तीन भागों में बांट सकते हैं। प्रत्येक भाग को हम एक ऋतु कह सकते हैं:—

१. शरद ऋतुः—यह ऋतु अक्टूबर मास के मध्य से लेकर फरवरी तक रहती है। इन दिनों भारत के उत्तरी मैदान और पहाड़ी स्थानों पर अधिक ठण्ड पड़ती है। हिमालय पर्वत के कई स्थानों पर बर्फ जम जाती है। उत्तर की अपेक्षा दक्षिण में ठण्ड कम पड़ती है। मद्रास के निकट समुद्र तट पर उत्तरी-पूर्वी मानसून से वर्षा होती है। थोड़ी सी वर्षा राजस्थान और पंजाब में भी होती है। शेष भागों में वर्षा नहीं होती।

२. ग्रीष्म ऋतुः—यह ऋतु मार्च से जून तक रहती है। इन दिनों सूर्य की किरणें कर्क रेखा पर सीधी पड़ती हैं। अतः गर्मी देश के अधिकांश भाग में खूब पड़ती है। देश के उत्तरी भाग में जून सबसे अधिक गर्म महीना होता है और दक्षिणी भाग में अप्रैल। वर्षा न होने के कारण जलवायु शुष्क रहता है।

३. वर्षा ऋतुः—जून में जब गर्मी बहुत पड़ने लगती है तो देश में वायु भार बहुत कम हो जाता है। उसी की पूर्ति करने के लिए हिन्द महासागर की ओर से जलभरी हवाएँ (दक्षिण-पश्चिमी मानसून) चलती है जिनसे देश की अधिकांश वर्षा होती है। कुछ भागों में जून में ही वर्षा प्रारम्भ हो जाती है और कुछ में जुलाई में। जुलाई से अक्टूबर के मध्य तक वर्षा ऋतु का समय माना जाता है। वर्षा सर्वत्र एकसी नहीं होती। पहाड़ों के निकट अधिक होती है और मैदानों में कम। आकाश में बादल रहने तथा पानी बरसने के कारण हवा का तापमान कम हो जाता है।

साल के निश्चित समय में वर्षा होने के कारण ही हमारे यहाँ की वर्षा को 'मानसूनी वर्षा' कहते हैं। मानसून से हमें कई लाभ हैं। हमारी खेती की पैदावार मानसून पर ही निर्भर होती है। जिस साल मानसून कमजोर होता है उस साल भारत के कई भागों में अकाल पड़ जाता है। वास्तव में देखा जाय तो भारतीय किसान जीवन मानसून पर ही निर्भर है।

जलवायु के अनुसार भारत के विभागः—

(१) **हिमालय प्रदेश**—अधिक ऊँचे भाग ठण्डे होते हैं। दक्षिणी पहाड़ी ढालों पर वर्षा होती है। (२) **आसाम बङ्गाल**—गर्मी अधिक पड़ती है। वर्षा खूब होती है परन्तु ठण्ड कम पड़ती है। (३) **गङ्गा नदी का मैदान**—पूर्वी भाग में वर्षा अधिक होती है और पश्चिमी भाग में कम। गर्मी की ऋतु में गर्मी पड़ती है और शीतकाल में पश्चिमी भाग अधिक ठण्डा रहता है। (४) **उत्तरी पश्चिमी शुष्क प्रदेश**—इसमें पंजाब का दक्षिणी भाग और राजस्थान है। वर्षा यहाँ बहुत कम होती है और गर्मी अधिक पड़ती है। यह मरुस्थल है। (५) **छोटे नागपुर का पठार**—यहाँ अच्छी वर्षा होती है। पठारी भाग पर वन हैं। अब वनों को काट कर जहाँ मैदान हैं वहाँ खेती की जाने लगी है। (६) **दक्षिण का पठार**—पश्चिमी घाट और पूर्वी घाट के वृष्टि-छाया में आ जाने के कारण यहाँ वर्षा कम होती हैं। भूमि भी पथरीली है अतः खेती कम होती है। समतल भूमि पर तालाबों से सिंचाई करके कपास, मूँगफली, ज्वार, बाजरा आदि की खेती की जाती है। (७) **पश्चिमी समुद्र तट**—इस भाग में दक्षिणी-पश्चिमी मानसून से अच्छी वर्षा हो जाती है। (८) **पूर्वी समुद्र तट**—इस भाग के दक्षिणी भाग में सर्दी के दिनों में उत्तरी-पश्चिमी मानसून से वर्षा होती है। यही यहाँ की विशेषता है।

प्रश्न

१. भारत का जलवायु देश की भू-रचना से किस प्रकार निर्धारित किया जाता है ?
२. उत्तरी भारत का जलवायु दक्षिणी भारत की अपेक्षा अधिक ठंडा क्यों है ?
३. मानसून का क्या अर्थ है ? दक्षिणी-पश्चिमी मानसून किस प्रकार बनती है ?
४. भारत में जाड़े की वर्षा कहाँ-कहाँ होती है ? किस प्रकार ?
५. जलवायु के अनुसार भारत के कितने विभाग किए जा सकते हैं ? प्रत्येक भाग की क्या विशेषता है ?

अध्याय ७

प्राकृतिक वनस्पति

प्राकृतिक वनस्पति का उत्पादन भूमि की रचना और जलवायु पर निर्भर है। जलवायु में भी वर्षा का प्रभाव वनस्पति पर अधिक पड़ता है।

वर्षा के वितरण के अनुसार प्राकृतिक वनस्पति भी तीन प्रकार की होती है। जहाँ अधिक वर्षा होती है तो वहाँ वन होते हैं। कम वर्षा वाले भागों में घास उगती है। बहुत कम वर्षा वाले प्रदेश अथवा मरुभूमि में केवल कँटीली झाड़ियाँ होती हैं। वहाँ वनस्पति का सदैव अभाव रहता है।

मनुष्य ने प्राकृतिक वनस्पति को नष्ट कर खेती करने के लिए मैदान बना लिए हैं। भारत में पहाड़ी भागों को छोड़कर अन्य स्थानों में प्राकृतिक वनस्पति कम पाई जाती है। गंगा-सिन्धु के मैदानों में वृक्षों को साफ कर अब खेती करते हैं। आज कोई भी व्यक्ति यह अनुमान लगाने में असमर्थ है कि किसी समय वहाँ जङ्गल और घास के मैदान थे।

भारत की प्राकृतिक वनस्पति में वनों का ही अधिक महत्व है इसलिए हम यहाँ देश के वनों के विवरण पर ही विचार करते हैं।

भारतीय वन

हमारे देश में वनस्पति के उगने के लिए तापक्रम तो सभी जगह उपयुक्त है परन्तु वर्षा का वितरण सब जगह एक सा नहीं है। अधिक वर्षा वाले भाग ये हैं—

(१) हिमालय पर्वत के ढाल तथा आसाम की पहाड़ियाँ और

(२) पश्चिमी घाट के ढाल।

इसी कारण इन स्थानों में घने वन हैं।

भारत के वनों को हम निम्नलिखित श्रेणियों में बाँट सकते हैं—

१. सदा बहार के वन (Ever-Green Forests):—ये वन देश के उन भागों में पाये जाते हैं जहाँ की वार्षिक वर्षा का औसत लगभग सौ इंच या अधिक है। इस भाग में पश्चिमी घाट के पश्चिमी ढाल, हिमालय प्रदेश का पूर्वी भाग और आसाम राज्य सम्मिलित हैं। वहाँ के वन घने हैं और वृक्ष भी कई प्रकार के हैं। इन वनों में बाँस और बेंत मुख्य वनस्पति है। आजकल यहाँ रबर के पेड़ भी लगाये गये हैं।

२. पतझड़ के वन (Deciduous Forests):—वर्ष के कुछ समय विशेषतः ग्रीष्म काल के प्रारम्भ में इन वनों के वृक्षों के पत्ते झड़ जाते हैं। इसी कारण इन्हें पतझड़ के वृक्ष कहते हैं। इन वनों को मानसून के वन भी कहते है। भारत के कई भागों में ये
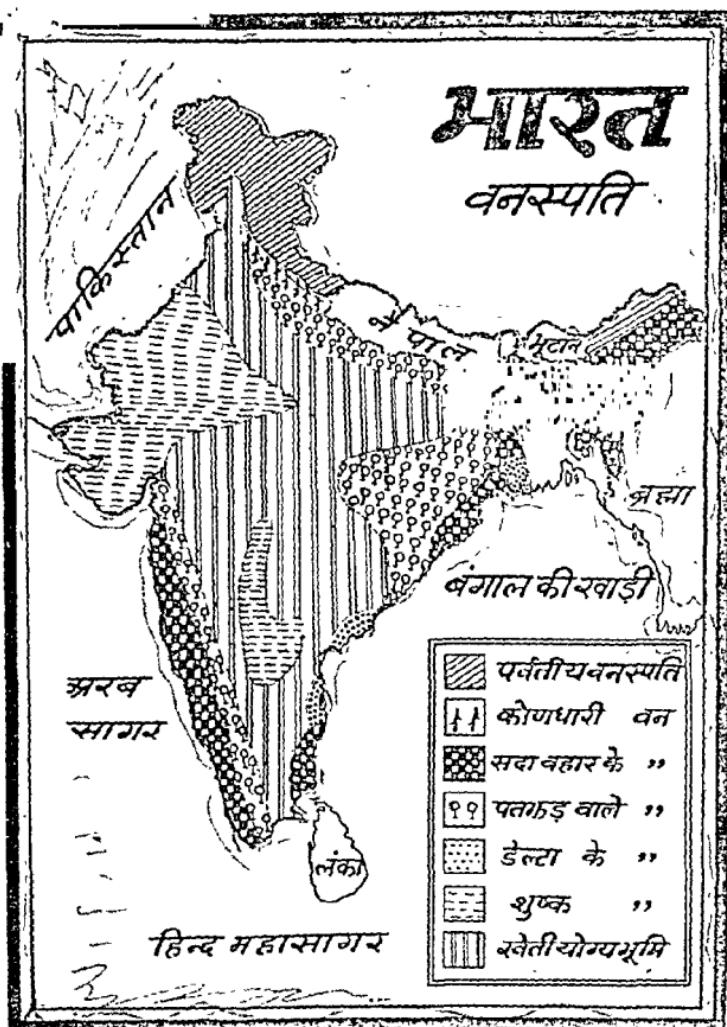
चित्र सं० १७. भारत की वन सम्पदा

वन मिलते हैं परन्तु हिमालय का निचला प्रदेश और छोटा नागपुर का पठार इनके लिए प्रसिद्ध हैं।

इन वनों के मुख्य पेड़ साल, सागवान, चन्दन, शीशम, खैर आदि हैं। इनकी लकड़ी कीमती होती है और फर्नीचर बनाने के काम आती है।

३. कोणधारी वृक्षों के वन (Coniferous Forests):—ये वन हिमालय के दक्षिणी ढालों पर तीन हजार से नौ हजार फीट की ऊँचाई के बीच पाये जाते हैं। ऊँचाई और जलवायु में विभिन्नता होने के अनुसार यहाँ के वृक्ष कई किस्म के हैं। पूर्वी हिमालय तथा आसाम में बलूत और चीड़ के पेड़ मिलते है। उत्तरी-पश्चिमी हिमालय के ढालों पर देवदार के वृक्ष अधिक मिलेंगे। इन वृक्षों का आकार प्रायः त्रिभुजाकार होता है।

४. पर्वतीय वन (Alpine Forests):—हिमालय पर्वत पर नौ हजार फीट से अधिक ऊँचाई पर अधिक ठण्ड पड़ने के कारण छोटे वृक्ष और पौधे पाये जाते हैं। इन वनों में सफेद सनोवर, बर्च आदि के वृक्ष मुख्य हैं। अधिक ऊँचाई के कारण इन वृक्षों तक पहुँचना कठिन है और इसी कारण ये वन अभी तक मनुष्य द्वारा छुए तक नहीं गये हैं।

५. डेल्टा के वन (Tidal Forests):—इस प्रकार के वन समुद्र-तट के दलदली भागों तथा नदियों के डेल्टों में मिलते हैं। यहाँ के वृक्षों की लकड़ी जलाने के अतिरिक्त अन्य काम नहीं आती। गङ्गा के डेल्टा में सुन्दरी वृक्ष मुख्य है। इसी प्रकार महानदी, गोदावरी, कृष्णा आदि नदियों के डेल्टों में भी ऐसे वन हैं।

६. शुष्क वन (Arid Forests):—भारत के जिन भागों में साल में बीस इंच से कम वर्षा होती है वहाँ वृक्ष कम मिलते हैं। ऐसे वृक्षों की जड़ें लम्बी होती हैं और पत्ते छोटे जिससे कम वर्षा होने से ये पनप सकें। इस प्रकार के वृक्षों में राजस्थान का बबूल और खेजड़ी का वृक्ष मुख्य है। इनके अतिरिक्त यहाँ कई प्रकार की कँटीली झाड़ियाँ हैं। इन वृक्षों का केवल स्थानीय महत्व ही है।

वनों से हमें क्या लाभ हैं ?

वनों से हमें बहुत लाभ हैं। आजकल नगरों में रहने वाले लोग वनों की पैदावार का उपयोग वन्य प्रदेश में रहने वाले लोगों से भी अधिक करते हैं। प्रत्येक घर में लकड़ी की चीज मिलती है। वनों से हमें निम्नलिखित लाभ मुख्यतः होते हैं।

(१) हमारे देश के कई भागों में मकान बनाने में लकड़ी काम में ली जाती है। फर्नीचर की सुन्दर वस्तुएँ—मेज, कुर्सी, अलमारी आदि—वनों की लकड़ी ही से तैयार की जाती है।

(२) जलभरी हवाएँ जब वनों के पास से निकलती हैं जो ठण्डी होकर वर्षा कर देती हैं।

(३) वनों की लकड़ी जलाने के काम आती है। भारत में ईंधन का महत्व और भी अधिक है क्योंकि पाश्चात्य देशों की भाँति यहाँ पत्थर का कोयला घरों में काम नहीं लिया जाता। ईंधन के अभाव में यहाँ के किसान गोबर जैसी उपयोगी खाद को जला देते हैं।

(४) वन चरागाहों का काम देते है। हमारे देश में खेती योग्य भूमि की कमी होने के कारण वनों का प्रयोग पशु चराने के लिए किया जाता है। पशुओं के लिए वनों से चरी मिलती है जो विशेष कर अकाल के समय काम आती है।

सागवान की लकड़ी बड़ी मजबूत होती है। इसमें दीमक भी नहीं लगती। यह लकड़ी जहाज और रेल के डिब्बे बनाने में काम आती है। लकड़ी पर वार्निश अच्छा लगता है। सागवान का फर्नीचर बहुत सुन्दर जँचता है।

२. देवदार (Deodar):—यह वृक्ष हिमालय पर्वत पर पांच हजार से अधिक ऊँचाई पर होता है। पंजाब के पर्वतीय भागों की यह मुख्य उपज है। वृक्ष बहुत ऊँचा होता है। इसकी लकड़ी भी साधारणतया कड़ी होती है। यह प्रायः मकान बनाने में काम आती है। छतों की शहतीरें देवदार की लकड़ी से ही बनती हैं। रेल की पटरी के स्लीपर भी इसी लकड़ी के होते हैं।

३. चीड़ (Pine):—इस वृक्ष के लिये कुछ ठंडे जलवायु की आवश्यकता होती है। यह वृक्ष पंजाब, उत्तर प्रदेश, नैपाल तथा काश्मीर के पर्वतीय प्रदेश में तीन हजार फीट की ऊँचाई पर मिलता है। पेड़ का तना सीधा होता है। यह वृक्ष साल भर हरा रहता है। चीड़ की लकड़ी मुलायम होती है। इससे फर्नीचर बनाते हैं। पेकिंग करने के सन्दूक भी इसके बनते हैं। इस वृक्ष से तारपीन का तेल तथा बिरोजा (Resin) भी प्राप्त होता है।

४. साल (Sal):—इस वृक्ष की लकड़ी अधिकतर रेल के स्लीपर बनाने में काम आती है। मकान बनाने में भी इसका प्रयोग होता है। यह वृक्ष प्रायः मध्य प्रदेश, छोटा नागपुर का पठार, हिमालय का पूर्वी भाग तथा पूर्वी घाट के पर्वतीय भागों में मिलता है।

५. आबनूस (Ebony):—इस वृक्ष के लिए अत्यन्त गर्म जलवायु की आवश्यकता है। इसी कारण यह पश्चिमी घाट पर मिलता है। इसकी लकड़ी बहुत कड़ी होती है और इस पर पालिश अच्छी लगती है। यह प्रायः भवन-निर्माण के काम आती है।

६. चन्दन (Sandal wood):—यह वृक्ष भी उष्ण कटिबन्ध में मिलता है। इसी कारण चन्दन का वृक्ष मैसूर के पहाड़ी भागों की मुख्य उपज है। इसकी लकड़ी कड़ी और सुगन्धित होती है। लकड़ी से छोटी छोटी वस्तुयें बनाई जाती हैं जिन पर खुदाई का सुन्दर कार्य किया जाता है। चन्दन की लकड़ी से तेल भी निकाला जाता है जो कई दवाइयों में काम आता है।

७. शीशम (Shisham):—यह लकड़ी उत्तरी-प्रदेश, पंजाब और पश्चिमी बङ्गाल के पर्वतीय प्रदेश में मिलती है। लकड़ी कड़ी मजबूत होती है। इसी कारण यह रेल के डिब्बे, बैलगाड़ी आदि बनाने के काम आती है। इसके फर्नीचर पर पालिश करने से सौन्दर्य बढ़ जाता है।

८. धूप (Dhupa):—इसके लिए भी उष्ण और तर जलवायु चाहिये। यही कारण है कि यह पश्चिमी घाट तथा अन्दमान द्वीप में अधिक मिलता है। इस पेड़ से गोंद

भी एकत्रित किया जाता है। वृक्ष की लकड़ी मुलायम होती है और वह पैकिंग-सन्दूक तथा दियासलाई की तीलियाँ व डिब्बियाँ बनाने के काम में आती है।

९. सुन्दरी वृक्ष (Sundri):—पश्चिमी बंगाल के गंगा के डेल्टा में यह वृक्ष बहुत मिलता है। उसकी लकड़ी प्रायः कलकत्ते आदि में जलाने के काम आती है। बंगाल में छोटी छोटी नावें भी इसकी लकड़ी से बनाते हैं। यह लकड़ी तार के खम्भों के लिए भी काम आती है।

१०. बबूल (Acacia):—यह पेड़ शुष्क जलवायु में पाया जाता है। राजस्थान के कई भागों में इसकी लकड़ी मकानों के दरवाजे तथा खिड़कियाँ बनाने के काम में आती है। लकड़ी कड़ी और मजबूत होती है। बबूल की छाल चमड़ा कमाने के काम आती है।

छोटी उपज

लकड़ी के अतिरिक्त वनों से कई प्रकार की अन्य वस्तुएँ भी प्राप्त होती हैं जैसे—

१. लाख:—यह एक प्रकार के कीड़े द्वारा पेड़ पर एकत्रित कर दी जाती है। विश्व में सबसे अधिक लाख भारत में ही होती है। लाख से ग्रामोफोन के रेकार्ड, चपड़ी, चूड़ियाँ, खिलौने, पालिश आदि तैयार की जाती है। छोटा नागपुर के पठार में बहुत से लोगों का धन्धा लाख एकत्रित करना है। प्रति वर्ष लाखों रुपयों की लाख भारत से निर्यात की जाती है।

२. गोंद:—बबूल, आम साल, वट वृक्ष आदि पर गोंद मिलता है। यह भारत के भिन्न भिन्न भागों के वृक्षों से प्राप्त किया जाता है। गांवों के लोग फुरसत के समय गोंद इकट्ठा कर नगर में ले जाकर बेच देते हैं।

३. तेल:—जैसा कि पहले बताया गया है कई वृक्षों से तेल निकाला जाता है। दक्षिणी भारत में मैसूर, मद्रास, केरेला, बम्बई आदि में चन्दन का तेल निकालते हैं। चीड़ से तारपीन का तेल मिलता है। नीम से भी तेल निकाला जाता है जो चर्म रोग में काम आता है।

४. लुब्दी:—कई वृक्षों की लकड़ी से लुब्दी बनाई जाती है जो कागज तथा कृत्रिम रेशम बनाने के काम आती है। सवाई घास से भी लुब्दी बनाकर कागज बनाते हैं। बाँस की लुब्दी तो कागज के लिए बहुत ही उपयुक्त सिद्ध हुई है।

५. रबड़:—यह एक प्रकार के पेड़ के रस से तैयार किया जाता है। दक्षिणी भारत के केरेला राज्य में रबड़ तैयार करने के कई कारखाने हैं।

६. चमड़ा बनाने का सामान:—कई वृक्षों की छाल और फलों का चूरा तैयार कर चमड़े को साफ करने में काम लिया जाता है। मध्य प्रदेश का महुआ वृक्ष और राजस्थान का बबूल इस काम के लिए बड़े उपयोगी सिद्ध हुए हैं।

७. चायः—पहाड़ी ढालों पर वनों में चाय के बगीचे होते हैं। चाय की पत्तियाँ एक उत्तम पेय गिनी जाती हैं।

८. फलः—कई वृक्षों से फल मिलते हैं। नारियल का फल खाने तथा तेल निकालने के काम आता है। भारत के समुद्री किनारे के मैदान के लोगों का व्यवसाय नारियल के फलों से तेल निकालना तथा उसकी गिरी को सुखाकर बाहर भेजना है। इसी प्रकार खजूर भी अच्छा फल गिना जाता है। आम तो सर्वोच्च फल माना गया है।

९. खेल का सामानः—लकड़ी से हॉकी, बल्ला, टेनिस खेलने का रैकेट आदि तैयार करते हैं। पहले खेल का यह सामान पंजाब के सियालकोट में अधिक बनता था परन्तु अब यह जालंधर, आगरा, कानपुर आदि में भी बनने लगा है।

१०. रेशमः—इसके कीड़े को शहतूत के पत्ते खिला कर पालते हैं। वह कीड़ा रेशम का धागा तैयार करता रहता है। शहतूत का पेड़ काश्मीर, बंगाल तथा मैसूर में अधिक मिलता है। यही कारण है कि वहाँ रेशम के कारखाने हैं।

क्या हमारी वन-सम्पदा देश की मांग की पूर्ति करने में समर्थ है ?

किसी भी देश की सर्वाङ्गीय उन्नति के लिए वहाँ की कुल भूमि के कम से कम पाँचवें भाग में वनों का होना आवश्यक है। वनों के विस्तार की दृष्टि से हम सौभाग्यशाली हैं क्योंकि हमारे यहाँ लगभग १,७१,००० वर्गमील भूमि में वन हैं। यह भूमि देश के कुल क्षेत्रफल का प्रायः २२½% है। पाकिस्तान के विभाजन से देश की वन-सम्पदा पर विशेष प्रभाव नहीं पड़ा क्योंकि पश्चिमी पाकिस्तान का प्रायः सभी भू-भाग वन विहीन है।

वनों का इतना अधिक विस्तार होने पर भी हमारे यहाँ उनसे प्राप्त लकड़ी कम मिलती है। औसतन हमें अपने वनों से लगभग २५ लाख टन इमारती लकड़ी तथा ५० लाख टन ईंधन की प्राप्ति होती है। यह लकड़ी हमारे लिए पर्याप्त नहीं है। यदि वर्तमान उत्पादन में एक तिहाई की वृद्धि और हो जाय तो हमारा काम चल सकता है।

हमारे वनों से लकड़ी की कम उत्पत्ति होने के कई कारण हैं:—

(१) कई वन पर्वतों की अधिक ऊँचाई पर होने के कारण वहाँ पहुँचना कठिन है। यही कारण है कि हिमालय पर्वत और पश्चिमी घाट के कई भागों के वन अभी छुए तक नहीं गए हैं।

(२) लकड़ी ढोने के साधन भी दुर्लभ हैं। अमेरिका और यूरोप में सर्दी की ऋतु में पर्वतीय भाग की नदियाँ बर्फ से जम जाती हैं। उस समय उन पर लकड़ी के लट्ठे काटकर डाल देते हैं। ग्रीष्म काल में जब उन नदियों की बर्फ पिघलती है तो वे लट्ठे मैदान में आ जाते हैं। परन्तु भारत में उष्ण जलवायु के कारण नदियों का पानी जमता नहीं इसलिए लट्ठे

बहाने में कठिनाई होती है। यहाँ के वनों में प्रायः दक्षिणी भारत में हाथियों द्वारा लट्ठे ढोये जाते हैं। कुछ लट्ठे रस्सियों से बाँधकर ढकेले जाते हैं। यहाँ पहाड़ी भागों में पाश्चात्य देशों की भाँति ट्राम-गाड़ियाँ नहीं हैं। अभी तक यहाँ लकड़ी ढोने के लिए, वैज्ञानिक तरीकों का प्रयोग नहीं हुआ।

(३) हमारे देश में उत्तम लकड़ी की आवश्यकता भी अभी तक नहीं रही है। यहाँ के निवासी निर्धन होने के कारण बहुत कम फर्नीचर रखते हैं। मकान भी अधिकतर पत्थर और ईंटों से बनते हैं। उनमें लकड़ी का प्रयोग कम होता है।

(४) भारत में एक ही क्षेत्र में कई प्रकार के वृक्ष मिलते हैं। ऐसा होने से अमुक प्रकार के वृक्ष की लकड़ी को एकत्रित करने में समय भी अधिक लगता है और खर्च भी अधिक।

(५) हमारे यहाँ लकड़ी काटने के तरीके भी पुराने हैं। इससे बहुत सी लकड़ी व्यर्थ ही नष्ट हो जाती है।

(६) देश को स्वतन्त्रता मिलने पर अब प्रत्येक देशवासी का जीवन-स्तर ऊँचा करना होगा। इसके लिये अन्य साधनों के साथ-साथ वन-सम्पदा की वृद्धि करना तथा लकड़ी के उपयोगों में सुधार करने की भी आवश्यकता है।

वर्तमान समय में हमारे देश में लगभग बीस लाख व्यक्तियों का व्यवसाय वनों में काम करना है। वन-सम्पदा के बढ़ने से और अधिक लोगों की रोजी का प्रश्न हल हो सकता है।

प्रबन्ध के अनुसार वनों का वर्गीकरण

वनों के संरक्षण के लिये भारत सरकार की ओर से वन-विभाग है। देश के वनों को निम्नलिखित श्रेणियों में बाँटा गया है:—

(अ) सुरक्षित वन (Reserved Forests) :—ये वे वन हैं जिनकी रक्षा करना जलवायु की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। इनके वृक्ष नहीं काटे जाते और न वहाँ पशु चराने की आज्ञा है।

(आ) रक्षित वन (Protected Forests) :—इन वनों पर भी सरकार की देख-रेख रहती है। आवश्यकतानुसार इनकी लकड़ी भी काटी जाती है और इनमें आज्ञा प्राप्त कर पशु भी चराये जा सकते हैं।

(इ) स्वतन्त्र वन (Unclassed Forests) :—इनमें लकड़ी काटने तथा पशु चराने पर कोई प्रतिबन्ध नहीं है। परन्तु उसके बदले में सरकार को निश्चित फीस देना अनिवार्य है।

सरकार की ओर से देहरादून में 'फॉरेस्ट रिसर्च इन्स्टीट्यूट' नामक महा-विद्यालय है। वहाँ पर वन-विज्ञान पर शिक्षा दी जाती है। वनों के कौन से वृक्ष किस-किस काम आते हैं और

लोहे के स्थान पर लकड़ी की शहतीर काम आ सकती है। टेलीफोन और तार के खम्भे भी लकड़ी से ही तैयार किए जा सकते हैं। उन पर वार्निश कर देने से वे बड़े सुन्दर लगते हैं। पहाड़ी भागों में उत्पन्न की हुई जल की बिजली इन खम्भों के ऊपर तार डालकर बहुत दूर मैदान में पहुँचाई जा सकती है। लकड़ी से बड़े-बड़े पुल भी बनाये जा सकते हैं।

३. प्लाईवुड के अभाव की पूर्ति:—हमारे यहाँ प्रति वर्ष लगभग १५ करोड़ वर्ग फीट प्लाईवुड की आवश्यकता होती है। उसमें से कितनी ही बाहर से मंगवाई जाती है। दक्षिणी भारत तथा अन्दमान द्वीप के वनों से प्लाईवुड प्राप्त की जा सकती है। सस्ती प्लाईवुड मिलने से लोगों को फर्नीचर उपलब्ध हो सकेगा।

४. जलयान बनाना:—अब हमारे देश में भी जहाज बनने लगे हैं। जहाज बनाने योग्य लकड़ी देश के कई भागों में मिलती है। इसका सदुपयोग किया जाना चाहिये।

५. वनों द्वारा रेल-मार्ग में वृद्धि:—रेल के डिब्बे अभी तक अधिकतर बाहर से बनकर आते थे। परन्तु अब वे यहीं बनने लगे हैं। भारतीय वनों से सवारी गाड़ी के डिब्बे बहुत अच्छे बनते हैं। इसके अतिरिक्त रेल की पटरियों के नीचे लोहे के टुकड़ों के स्थान पर लकड़ी के स्लीपरों का अधिक प्रयोग किया जाना चाहिये जिससे बचे हुए लोहे को अन्य काम में लिया जा सके।

६. अस्थायी गृह-निर्माण:—लाखों की संख्या में हमारे भाई पाकिस्तान से आये हैं। वे भारत के विभिन्न भागों में बस रहे हैं। उनके लिए लकड़ी के घर अस्थाई रूप से बनाये जा सकते हैं। फिर वह लकड़ी अन्य काम में आ सकती है।

७. नवीन उद्योग-धन्धे:—जापान, इटली, संयुक्त राष्ट्र आदि की भाँति अब भारत में भी नकली रेशम (Rayon) बनने लगा है। उसके लिए लकड़ी की लुग्दी ही काम आती है। इसी प्रकार साधारण कागज तो यहाँ पहले भी बनता था। परन्तु अखबार का कागज (Newsprint) बाहर से मँगवाते थे। अब उसके बनाने के कारखाने भी हमारे यहाँ खुल गए हैं और उनके बढ़ने की अधिक सम्भावना है।

इस प्रकार हमारी वन-सम्पदा देश के आर्थिक विकास में बहुत सहायक है।

सारांश

प्राकृतिक वनस्पति तीन प्रकार की होती है—(१) कँटीली झाड़ियाँ, (२) घास और (३) घने वन। यह वनस्पति वर्षा पर निर्भर रहती है। अधिक वर्षा वाले भागों में घने वन होते हैं। उससे कम वर्षा वाले प्रदेश में घास उगती है और सबसे कम वर्षा के स्थान अर्थात् मरुस्थल में कँटीली झाड़ियाँ पाई जाती हैं।

हमारे देश में छः प्रकार के वन हैं—(१) शुष्क वन, (२) मानसूनी वन, (३) सदा

बहार वाले वन, (४) पहाड़ी वन, (५) नदियों के डेल्टा के वन और (६) पतझड़ के वन। इन वनों का प्रकार वर्षा और तापमान के वितरण पर निर्भर है।

वनों की उपज दो भागों में बांटी जा सकती है—बड़ी उपज और छोटी उपज। बड़ी उपज में वृक्षों की लकड़ी गिनी जाती है और छोटी उपज में गोंद, तेल, लाख आदि हैं।

वनों से हमें अनेक लाभ हैं—वनों की लकड़ी मकान बनाने में काम आती है। लकड़ी से सुन्दर फर्नीचर तैयार किया जाता है, वनों से ही कागज, दियासलाई आदि के कारखानों के लिए कच्चा माल मिलता है। जलवायु को नम बनाये रखने में भी वनों का हाथ है। वनों की नमी से वर्षा होती है। वन मिट्टी के बहाव को रोकते हैं। वन लगा देने से मरुस्थल की मिट्टी भी कम उड़ती है।

हमारे यहाँ लकड़ी काटने के तरीके बहुत पुराने हैं। बहुत सी लकड़ी यों ही नष्ट हो जाती है। लकड़ी काटने के तरीकों में सुधार करने के अतिरिक्त उन स्थानों में वृक्ष लगाने चाहिये जहाँ आज उनकी कमी है। भारतीय किसान को जलाने के लिए लकड़ी न मिलने के कारण ही वह गोबर जैसी अमूल्य खाद को जलाता है। वास्तव में वनों की रक्षा करना राष्ट्र की उन्नति में योग देना है।

प्रश्न

१. वनों का मनुष्य के लिए क्या महत्व है?

२. भारत में कितने प्रकार के वन हैं? कौन-कौन से? उनमें किस प्रकार की लकड़ी मिलती है?

३. वनों से हमें कौन-कौन सी वस्तुयें मिलती हैं?

४. क्या कारण है कि भारतीय वनों की उन्नति बहुत कम हुई है?

५. वन-सम्पदा में वृद्धि किस प्रकार से की जा सकती है?

अध्याय ८

देश की मिट्टी

वैसे तो मिट्टी की उपयोगिता प्रायः सभी देशों में होती है। परन्तु हमारे देश भारत में तो मिट्टी ही किसान का धन है। यहाँ के अधिकांश लोगों का धन्धा खेती होने के कारण उनकी जीविका मिट्टी के उपजाऊपन पर ही निर्भर है। यही कारण है कि देश की आर्थिक दशा का विवेचन करने के लिए यहाँ की मिट्टी का अध्ययन करना परम आवश्यक है।

मिट्टी पृथ्वी के ऊपरी पर्त पर होती है। इसमें दो मुख्य तत्व होते हैं–धातु और कृमि। धातु तत्व तो पृथ्वी में स्वयं विद्यमान होता है और कृमि तत्व वनस्पति, पशु आदि के नष्ट होने से बनता है। पौधे के विकास के लिए मिट्टी में इन दोनों तत्वों का होना आवश्यक है। इन तत्वों की प्राप्ति में देश की भू-रचना, जलवायु, वनस्पति तथा पशु आदि बड़े सहायक हैं।

कुछ मिट्टियाँ तो अपने मूल स्थान से या तो हटती ही नहीं हैं या बहुत कम हटती हैं। दक्षिण भारत की मिट्टियाँ ऐसी ही हैं। इस प्रकार की मिट्टी को तिलछटी (Residual soil) मिट्टी कहते हैं। परन्तु कुछ मिट्टियाँ अपने जन्म स्थान से बहुत दूर चलकर जमा हो जाती हैं। बहता हुआ जल, आँधी, ग्लेशियर आदि द्वारा इस प्रकार की मिट्टी अन्य स्थान को ले जाई जाती है। इस प्रकार की मिट्टी को कच्छार (Alluvium) कहते हैं। गङ्गा-सिन्धु के मैदान की मिट्टी इसी श्रेणी में आती है। अपने मूल स्थान से बहुत दूर चली जाने के कारण ऐसी मिट्टी को पहचानना कठिन हो जाता है। भारत में मानसूनी वर्षा, उच्च तापक्रम आदि होने के कारण अधिकांश मिट्टियाँ अपने उत्पत्ति स्थान से बहुत दूर जाकर एकत्रित हो गई हैं अतः वे कच्छारी हैं।

हमारे देश की प्राकृतिक दशा, चट्टानों की रचना, जलवायु, वनस्पति आदि के आधार पर यहाँ की मिट्टियों के दो विभाग किये जा सकते हैं—(१) उत्तरी भारत की मिट्टियाँ—जो विशेषतः हिमालय पर्वत से बनी हैं और (२) दक्षिणी भारत की मिट्टियाँ—जो देश के दक्षिणी प्रायद्वीप के पठारी भाग से बनी हैं।

उत्तरी भारत की मिट्टियाँ

मिट्टी के कणों की रचना, उसमें स्थित धातु तथा कृमि तत्वों का परिणाम, मिट्टी का उपजाऊपन आदि की दृष्टि से उत्तरी भारत की मिट्टियाँ भी निम्नलिखित भागों में बाँटी जा सकती हैं—

१. कच्छारः—यह मिट्टी गङ्गा और सिन्धु के मैदान में फैली हुई है। इसका विस्तार लगभग अढ़ाई लाख वर्ग मील है। हिमालय पर्वत से निकलने वाली नदियों द्वारा लाकर यह मिट्टी इस मैदान में बिछा दी गई है। कच्छारी मिट्टी बहुत उपजाऊ होती है और इसकी गहराई भी बहुत होती है। भारत की कृषि पैदावार का अधिकांश इसी मिट्टी से प्राप्त किया जाता है।
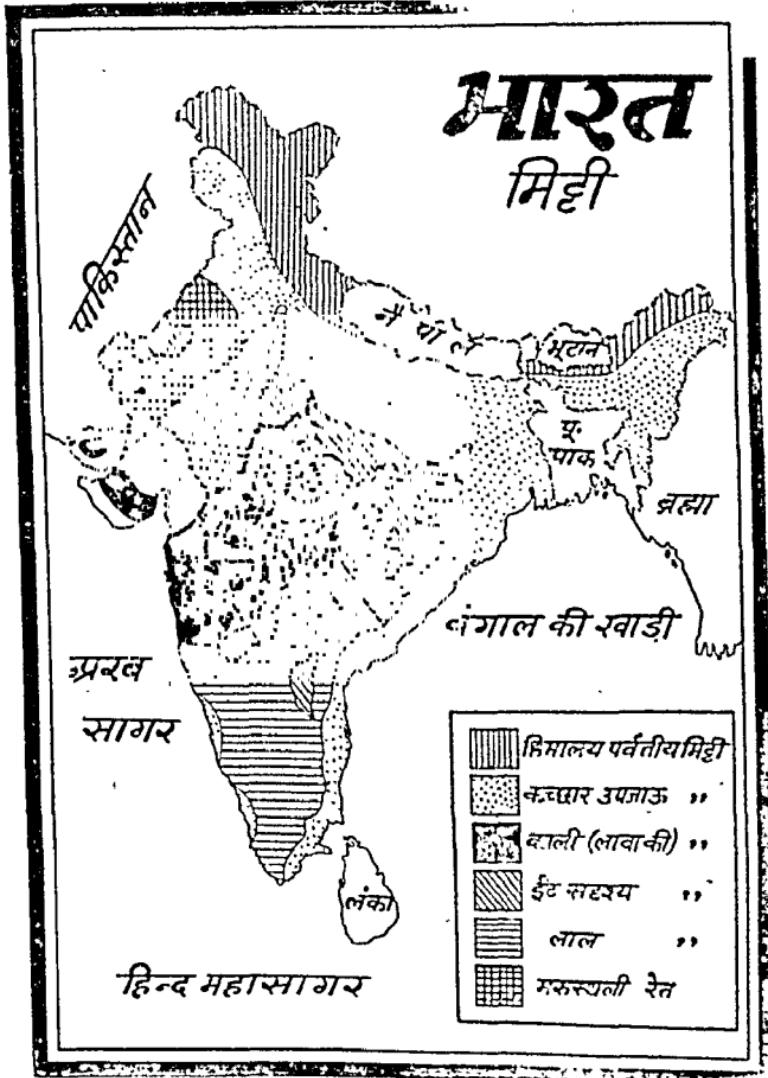
चित्र सं० १८. भारत के विभिन्न भागों की मिट्टियाँ

हिमालय से उतरने पर जब नदियाँ मैदान में प्रवेश करती हैं तो मिट्टी के कण बड़े होते हैं। इसको रेत (Sand) कहते हैं। इसी मिट्टी में छोटे २ कंकड़ के टुकड़े भी मिले होते हैं।

आगे चलने पर ये कण आपस में रगड़ खाकर कुछ छोटे हो जाते हैं। यहाँ तक कि नदी के डेल्टा और समुद्र के किनारे के कण बहुत महीन होने के कारण चिकनी मिट्टी (Clay) में परिणित हो जाते हैं। खेती के लिए न तो बड़े कण ही अधिक उपयोगी होते हैं और न बहुत बारीक ही। दोनों का मिश्रण, जिसे दुमट (Loam) कहते हैं, कृषि के लिए बहुत अच्छा होता है।

इस प्रकार गङ्गा-सिन्धु के मैदान की कच्छारी मिट्टी भी तीन प्रकार की है:—

(अ) मैदान के उत्तरी भाग की मिट्टी:—इस मिट्टी में बड़े बड़े कण होते हैं और कंकड़ पत्थर भी मिले होते हैं। इसका विस्तार तराई के निकट अधिक है। बालू, कंकड़ तथा पत्थर से बनी होने के कारण यह मिट्टी कम उपजाऊ होती है। इस मिट्टी में चूने की मात्रा तो अधिक होती है परन्तु कृमि तत्व कम रहते हैं। पथरीली भूमि होने के कारण यहाँ खेती तो कम होती है परन्तु साल के बड़े बड़े वृक्ष तथा लम्बी लम्बी घास खूब पाई जाती।

(आ) मैदान के मध्य भाग की मिट्टी:—नदी की मध्य घाटी में होने से मिट्टी के कण यहाँ आते आते छोटे हो जाते हैं। नीची भूमि या खड्डों में तो बहुत बारीक मिट्टी भी मिलती है परन्तु ऊँची भूमि में तो रेत ही मिलती है। औसतन यहाँ की मिट्टी दुमट है इसलिए इस भाग में खेती अच्छी होती है। भारत की अधिकांश गन्ना, कपास, गेहूँ आदि की पैदावार इसी मिट्टी में होती है।

मध्य भाग की मिट्टी में चूना, सोडा, मेगनेशिया, पोटाश और फासफोरस की मात्रा पर्याप्त होती है। कृमि तत्व और लोहा भी इसमें मिलता है परन्तु नाइट्रोजन की बहुत कमी होती है। इस भाग में वर्षा की न्यूनता तथा आधिक्य के अनुसार भिन्न-भिन्न स्थानों में इन तत्वों में भी भिन्नता है। जहाँ अधिक वर्षा होती है वहाँ बहुत से तत्व आसानी से पानी में घुलकर (Leaching) बह जाते हैं और मिट्टी बलुई हो जाती है। जहाँ वर्षा कम होती है वहाँ इन तत्वों का बहाव कम होता है अतः वहाँ की मिट्टी उपजाऊ बनी रही जैसे पंजाब में। यही कारण है कि वहाँ भूमि में प्रति एकड़ पैदावार अधिक होती है।

(इ) डेल्टा भाग की मिट्टी:—इसी भाग में नदियों द्वारा लाई हुई मिट्टी एकत्रित होती रहती है। मिट्टी के कण यहाँ आकर बहुत बारीक हो जाते हैं। इसी कारण यह मिट्टी उपजाऊ होती है। नदियों में बाढ़ आने से मिट्टी बहुत दूर तक फैल जाती है। इस प्रकार प्रतिवर्ष मिट्टी जमा होती जाती है। इस मिट्टी में ह्यूमस होने के कारण इसका उपजाऊपन और भी अधिक हो गया है। यहाँ का जलवायु उष्ण तथा नम होने से पाट और धान की अच्छी खेती होती है।

इस प्रकार उत्तरी भारत के मैदान की कच्छारी मिट्टी रचना के अनुसार भिन्न-भिन्न स्थानों में भिन्न भिन्न प्रकार की है। इस मिट्टी में केवल एक ही कमी है और वह है नाइट्रोजन की न्यूनता। इसकी पूर्ति नवीन खाद देने से की जा सकती है। कच्छारी मिट्टी की दो विशे-

षताएँ हैं:—(१) इसमें खाद का मिश्रण आसानी से किया जा सकता है। (२) इस मिट्टी का उपजाऊपन शीघ्र ही नष्ट नहीं होता। यही कारण हैं कि गंगा-सिन्धु के मैदान में बिना खाद के ही बहुत प्राचीन काल से कृषि हो रही है। थोड़ी सी खाद देने पर इस मिट्टी में बहुत अधिक उपज बढ़ सकती है।

उत्तर प्रदेश, बिहार तथा पंजाब के कुछ भागों में मिट्टी, रेत तथा क्षार के मिल जाने से भूमि ऊसर हो गई है। कई भागों में नहरों से सिंचाई अधिक मात्रा में करने के कारण पानी के एकत्रित हो जाने से भी क्षार जम जाती है और भूमि बेकार हो जाती है। इस प्रकार की मिट्टी को क्षारयुक्त मिट्टी (Alkaline Soil) कहते हैं।

इस क्षारयुक्त मिट्टी को चूना देने से यह खेती योग्य हो जाती है। क्षारयुक्त मिट्टी को निम्नलिखित विधियों से चूनामय बनाया जा सकता है:—

(अ) प्रति एकड़ भूमि के पीछे लगभग तीन सौ मन खड़ी (Gypsum) मिलाकर उस पर से पानी बहा दिया जावे। इस प्रकार सोडा घुलकर बह जायगा और उसके स्थान पर चूना रह जायगा जिससे मिट्टी उपजाऊ हो जायगी।

(आ) क्षारमय भूमि में प्रति एकड़ लगभग पन्द्रह मन गंधक मिला देने से मिट्टी में विद्यमान क्षार की मात्रा नष्ट हो जाती है।

(इ) देश के कई भागों में कई स्थानों पर वर्षा की न्यूनता तथा अधिक गर्मी पड़ने के कारण मिट्टी क्षारयुक्त हो जाती है। इस प्रकार की भूमि में घास उगा देनी चाहिए जिससे वाष्प-क्रिया कम होगी और मिट्टी शनैः शनैः उपजाऊ बन जायगी।

(ई) हमारे यहाँ तिलहन की उपज अच्छी होती है। तेल निकालने के पश्चात् बची हुई खली को मिट्टी में मिला देने से भी क्षारयुक्त भूमि उपजाऊ हो जाती है।

(उ) गुड़ के शीरे को क्षारयुक्त भूमि में मिला देने से भी मिट्टी में विद्यमान क्षार की मात्रा नष्ट हो जाती है। क्षार के साथ यदि चूने की मात्रा मिला दी जाय तो कार्य और भी शीघ्र हो जाता है। शीरे में तेजाब का अंश होता है जो क्षार को नष्ट कर देता है।

२. मरुस्थली मिट्टी:—राजस्थान तथा पंजाब के दक्षिणी मरुस्थली भाग में पाकिस्तान वाले सिन्धु नदी के मैदान तथा समुद्र किनारे से मिट्टी आकर एकत्रित होती रहती है। इसी भाग में वर्षा कम होने के कारण मिट्टी उड़ती रहती है। कुछ स्थानों में तो मिट्टी के कण बारीक हैं। परन्तु अधिकांश मिट्टी बालू है। महीन मिट्टी (Loess) बड़ी उपजाऊ होती है। जहाँ सिंचाई की थोड़ी बहुत सुविधा है वहाँ अच्छी पैदावार होती है। मरुस्थल में कहीं कहीं खारे पानी की झीलें आ गई हैं वहाँ पैदावार नहीं होती।

३. हिमालय पर्वतीय मिट्टी:—हिमालय पर्वत बहुत पुराना नहीं है अतः इसमें घिसाई का काम शीघ्र होता है। कुछ भागों में वर्षा कम होती है और कुछ में अधिक। कुछ भाग ऊँचे हैं तो कुछ नीचे। निचले भागों में मिट्टी आसानी से एकत्रित हो जाती है परन्तु

ऊँचाई पर वह नहीं ठहर सकती। इस प्रकार हिमालय प्रदेश की मिट्टियाँ भी भू-रचना, जलवायु, ऊँचाई आदि के अनुसार भिन्न-भिन्न प्रकार की हैं। बहुत अधिक ऊँचाई पर तो मिट्टी बर्फ से ढकी रहती है।

यों तो हिमालय प्रदेश की मिट्टियाँ कई प्रकार की हैं परन्तु उनमें तीन प्रकार की मिट्टियाँ मुख्य हैं:—

(अ) पथरीली मिट्टी:—हिमालय के दक्षिण भाग में पथरीली मिट्टी नदियों द्वारा लाई जाकर एकत्रित करदी गई है। इस मिट्टी का कण बड़ा होता है और इसमें कंकड़ तथा पत्थर के छोटे-छोटे टुकड़े मिले होते हैं। इस मिट्टी में ह्यूमस की मात्रा कम होती है और यहाँ की उपज़ भी बहुत कम होती है। परन्तु जहाँ कहीं घाटियों में चिकनी और महीन मिट्टी मिलती है वहाँ कृषि की कुछ उपज हो जाती है जैसे चाय, चावल, आलू आदि। अधिकांश भूमि घास तथा वृक्षों से आच्छादित रहती है।

(आ) चूने वाली मिट्टी:—हिमालय प्रदेश के कई भागों में चूने की चट्टानें मिलती हैं। नैनीताल, मंसूरी आदि पहाड़ी स्थानों के निकट ऐसे उदाहरण मिलते हैं। वर्षा होने पर चूने की पर्याप्त मात्रा तो बहते हुए पानी के साथ चली जाती है परन्तु कुछ अंश वहीं रह जाता है। चूने के घुल जाने से भूमि में कई खड्ड हो जाते हैं और भूमि ऊबड़-खाबड़ हो जाती है। ऐसी भूमि में प्राकृतिक वनस्पति विशेषतः चीड़, साल आदि के वृक्ष खड़े दिखाई देते हैं। नीची भूमि में थोड़ी बहुत खेती भी होती है।

(इ) काली मिट्टी:—हिमालय के कई भागों में ज्वालामुखी पर्वत का प्रकोप हो चुका है। आग्नेय चट्टानों की मिट्टी लावा से बनी है। पर्वतीय ढालों पर इसकी मिट्टी बड़ी उपजाऊ है जहाँ अच्छी खेती होती है। परन्तु ऐसी मिट्टी का विस्तार कम है।

इस प्रकार उत्तरी भारत के भिन्न २ भागों की मिट्टियाँ पाई जाती हैं। अधिकांश मिट्टियाँ बहते हुए पानी या आंधी द्वारा एक स्थान से ले जाकर दूसरे स्थान पर जमा कर दी जाती हैं। इन मिट्टियों में कच्छार मिट्टी सबसे उत्तम है और इसी मिट्टी की उपज पर देश के अधिकांश निवासियों का जीवन आधारित है।

दक्षिणी भारत की मिट्टियाँ

भारत का प्रायद्वीपी भाग बहुत प्राचीन है। इस कारण वहाँ की मिट्टियाँ भी बहुत पुरानी हैं। वहाँ वर्षा भी कम होती है। मिट्टियाँ अपने उत्पत्ति स्थान से बहुत दूर नहीं गई हैं अतः उनमें मिश्रण भी कम ही हुआ है। रचना, रंग और उपजाऊपन के अनुसार दक्षिणी भारत की मिट्टियों के निम्नलिखित विभाजन किए जा सकते हैं—

१. काली मिट्टी (Black Cotton Soil)—इस मिट्टी को 'रेगर' (Ragur) मिट्टी भी कहते हैं। तेलगू भाषा में काले रंग को 'रेगद' कहते हैं। विद्वानों का मत है कि लावा द्वारा बनी होने के कारण इस मिट्टी का काला रंग है।

इस मिट्टी का क्षेत्र बम्बई, मध्य प्रदेश, आंध्र प्रदेश तथा मद्रास राज्य का कुछ भाग है। अरावली पर्वत श्रेणी के दक्षिणी भाग में भी यह मिट्टी मिलती है। पश्चिमी समुद्र तट पर स्थित लैगूनों में भी यह मिट्टी पाई जाती है जहाँ नदियों द्वारा लाई जाकर यह एकत्रित हो गई।

काली मिट्टी की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह पानी को बहुत अधिक समय तक रोके रख सकती है, अतः इस मिट्टी के लिए सिंचाई की अधिक आवश्यकता नहीं होती। इस मिट्टी में कपास की खेती अधिक होती है। यही कारण है कि इसको कपास वाली काली मिट्टी कहते हैं। अधिक वर्षा हो जाने से यह मिट्टी बेकार हो जाती है क्योंकि उस समय सर्वत्र पानी ही पानी हो जाता है; मिट्टी पानी को सोख नहीं सकती। पानी के सूखने पर यह मिट्टी कड़ी हो जाती है। इसलिए उस समय इस पर हल चलाना कठिन हो जाता है। अधिक गर्मी पड़ने से काली मिट्टी में चौड़ी-चौड़ी दरारें पड़ जाती हैं और तब वह खराब हो जाती है। गहराई के अनुसार काली मिट्टी बड़ी उत्तम है। अपने क्षेत्र के मध्य भाग में इसकी गहराई अधिक है अतः वहाँ खेती अच्छी होती है। परन्तु किनारे पर इसकी गहराई कम है अतः वहाँ पर मूल चट्टानें थोड़ी सी मिट्टी खोदने से स्पष्ट दिखाई पड़ती हैं।

काली मिट्टी में लोहा, चूना, मेगनेशिया और एलूमिना तो पर्याप्त मात्रा में मिलते है परन्तु इसमें पोटाश की बहुत कमी होती है। इसके अतिरिक्त फासफोरस की भी कमी रहती है।

कपास के अतिरिक्त काली मिट्टी में ज्वार तथा तिलहन की खेती भी करते हैं। काली मिट्टी का प्रदेश भारत का उत्तम भाग गिना जाता है और यहाँ की आबादी भी अच्छी है।

२. लाल मिट्टी (Red Soil):—भारत के जिन भागों में लोहे की खानें हैं उनके निकट यह मिट्टी पाई जाती है। वर्षा ऋतु में जब लोहा भीगता है तो उसमें जंग लगने लगती है। वह जंग मिट्टी में मिल जाती है अतः उसका रंग लाल व भूरा हो जाता है। यह मिट्टी मद्रास, मैसूर, दक्षिणी-पूर्वी बम्बई, आंध्र प्रदेश का पूर्वी भाग, मध्य प्रदेश तथा उड़ीसा में अधिक मिलती है। इनके अतिरिक्त राजस्थान के अरावली पर्वत के निकट, उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर, झांसी और हमीरपुर जिले में, बंगाल के वीरभूमि जिले और बिहार के संथाल परगने में भी लाल मिट्टी मिलती है। इस प्रकार लाल मिट्टी का विस्तार बहुत अधिक है। कुछ विद्वानों के अनुसार इसका क्षेत्रफल आठ लाख वर्ग मील से भी अधिक है।

बनावट में लाल मिट्टी हल्की और छिद्रपूर्ण होती है। इसमें कंकड़ भी मिले होते हैं। मिट्टी की गहराई अधिक नहीं होती। इसमें ह्यूमस, नाइट्रोजन और चूने की कमी होने के कारण यह कम उपजाऊ होती है। परन्तु नदियों की घाटियों में जहाँ इसके कण बारीक हैं और जहाँ गहराई भी अधिक है, यह उपजाऊ है और वहाँ चावल की खेती होती है।

३. हल्के लाल रंग की मिट्टी (Laterite Soil):—यह मिट्टी कई प्रकार की चट्टानों से बनी है परन्तु लाल चट्टान से इसका अधिकांश बना होने के कारण इसका रंग

ईंट के समान होता है। भारत की मानसूनी जलवायु इस मिट्टी के बनने का प्रधान कारण है। वर्ष के कुछ महीनों में पर्याप्त वर्षा हो जाती है और अन्य महीनों में वर्षा की कमी के कारण जलवायु शुष्क रहता है। इस प्रकार बारी-बारी से शुष्क और नम जलवायु होने से दक्षिणी-पठार की चट्टानें टूटती रहती हैं और यह मिट्टी बनती रहती है।

ईंट सदृश्य मिट्टी दक्षिणी पठार की उच्च चोटियों, मध्य-प्रदेश, पूर्वी घाट का अधिकांश भाग, उड़ीसा तथा बम्बई के दक्षिणी भाग और मलाबार तट पर पाई जाती है। आसाम के पठारी भाग के कुछ स्थानों में भी यह मिट्टी मिलती है।

यह मिट्टी बहुत कम उपजाऊ होती है। इसमें पोटाश, चूना, फासफोरस और मेगनेशिया की कमी रहती है। ऊँचे भागों में यह मिट्टी बहुत कम गहरी और कंकरीली होती है। परन्तु नदियों की घाटियों और नीची भूमि में यह अन्य मिट्टियों के मिश्रण से तथा गहराई के कारण खेती योग्य बन गई है। इस मिट्टी में विशेषतः चावल की पैदावार की जाती है।

४. कच्छारी मिट्टी (Alluvial Soil):—दक्षिणी प्रायद्वीप के समुद्रतट के मैदानों में विशेषतः पूर्वी तट पर नदियाँ अपना डेल्टा बनाती हैं। महानदी, गोदावरी, कृष्णा, कावेरी आदि नदियों के डेल्टे चौड़े हैं। इन नदियों का उद्गम प्रायः काली मिट्टी के प्रदेश से होने के कारण डेल्टा-प्रदेश में ये उपजाऊ मिट्टी बिछा देती हैं। मानसून से नदियों में बाढ़ आने से भी मिट्टी के बिछने में बहुत सहायता मिलती है।

दक्षिणी-भारत की कच्छारी मिट्टी में पोटाश और चूने की तो प्रचुर मात्रा होती है परन्तु इसमें नाइट्रोजन, ह्यूमस और फासफोरिक एसिड की कमी रहती है। सिंचाई के साधनों द्वारा इस मिट्टी में अच्छी उपज होती है। यहाँ की पैदावार में गन्ना और चावल मुख्य है। आजकल वहाँ पाट की खेती भी खूब होने लगी है क्योंकि बंगाल के पाट उत्पन्न करने वाले भाग का अधिकांश अब पाकिस्तान में चला गया है। इसलिए देश की पाट की माँग की पूर्ति अब इन नदियों की कच्छारी भूमि से ही की जायगी।

भारतीय मिट्टी की कमियाँ

ऊपर के वर्णन से स्पष्ट है कि हमारे देश की मिट्टी में फासफोरिक एसिड और पोटाश का बाहुल्य है परन्तु इसमें नाइट्रोजन की बहुत कमी है। हजारों वर्षों से बोई जाने पर भी यहाँ के खेतों में बिना खाद दिये ही पैदावार हो जाती है। यदि खाद दे दी जाय तो उपज कई गुना अधिक बढ़ सकती है। खाद की कमी के अतिरिक्त सबसे बड़ी हानि जो हमारी मिट्टी को होती है वह है मानसूनी मूसलाधार वर्षा से। बाढ़ आने से मिट्टी के ऊपर के पर्त का उपजाऊ तत्व पानी में घुलकर समुद्र में चला जाता है। इससे मिट्टी बेकार हो जाती है।

हमारी मिट्टी का उपजाऊपन बढ़ाने के उपाय

जैसा कि ऊपर बताया गया है हमारे देश की मिट्टी बहुत उपजाऊ है परन्तु यदि इसमें

और सुधार किया जाय तो कृषि की उपज बहुत बढ़ सकती है। यहाँ की मिट्टी को उपजाऊ बनाने के दो तरीके हैं—(अ) मिट्टी में विभिन्न प्रकार की खाद देना और (आ) मिट्टी के घुलाव (Soil Erosion) को रोकना।

[अ] **मिट्टी में खाद देना:**—खाद दो प्रकार की होती है—साधारण खाद और वैज्ञानिक तरीकों से तैयार की हुई (Chemical Fertilizers) खाद। हमारे देश का किसान बहुत गरीब होने के कारण वैज्ञानिक खाद देने में असमर्थ है, परन्तु साधारण खाद तो थोड़े से परिश्रम करने से ही प्राप्त हो सकती है।

(क) **साधारण खाद:**—क्योंकि भारतीय मिट्टी में नाइट्रोजन की कमी है अतः वे ही खाद काम में लाए जाएँ जिनसे इस तत्त्व की पूर्ति हो सके। साधारण खाद निम्नलिखित तरीकों से तैयार की जा सकती है :—

१. गोबर की खाद:—प्रत्येक भारतीय किसान गाय-बैल रखता है। उसके गोबर को एक खड्डे में एकत्रित करके थोड़े समय के लिए उसको मिट्टी से पाट देने से बहुत उत्तम खाद तैयार हो जाती है। इस प्रकार के सड़े हुए गोबर को खेतों में फैला देने से मिट्टी में से नाइट्रोजन की कमी दूर हो जाती है। गोबर की उपयोगिता को भारतीय किसान भी स्वीकार करता है परन्तु परिस्थितियों-वश उसे लकड़ी के स्थान पर गोबर जलाना पड़ता है। यदि किसान को जलाने के लिए पर्याप्त लकड़ी मिल जाय तो वह गोबर को न जलायेगा। खेतों की सीमा और नहरों के किनारों पर वृक्ष लगा देने से लकड़ी प्राप्त की जा सकती है और गोबर को खाद तैयार करने के काम में लिया जा सकता है। वास्तव में गोबर की खाद किसानों के लिये बहुत लाभप्रद है क्योंकि इसके लिए उन्हें कुछ भी खर्च नहीं करना पड़ता।

२. कूड़ा-करकट तथा मल की खाद:—बड़े-बड़े नगरों की गन्दी नालियों का पानी बाहर मैदान में लेजाकर एकत्रित किया जाता है। इसी प्रकार मल को भी एक स्थान पर एकत्रित करते हैं। इसे सुखा कर नगर के आस-पास के बाग-बगीचों व बाड़ियों में फल तथा तरकारी पैदा करने में काम लेते हैं। हमारे यहाँ लोग मल की खाद को बुरा समझते हैं परन्तु चीन देश के लोगों ने इससे बहुत लाभ उठाया है। इसी प्रकार पाश्चात्य देशों में भी इस खाद का बहुत महत्व है। गाँवों में किसान लोग मल के लिए छोटे छोटे खड्डे खोद कर उन्हें मिट्टी से पाट सकते हैं और इस प्रकार की खाद को अपने खेतों में दे सकते हैं।

३. खली की खाद:—संसार में सबसे अधिक तिलहन की पैदावार हमारे देश में ही होती है। तिलहन का तेल निकाल देने के पश्चात् बचे हुए भाग अर्थात् खली को खाद के स्थान पर खेतों में दे सकते हैं वह खाद बहुत उत्तम कोटि की होती है। देश में इतना अधिक तिलहन होने पर भी अधिकांश विदेशों को निर्यात कर दिया जाता है। इस निर्यात को रोक देना चाहिए जिससे हमारे किसानों को सस्ते भाव से खली प्राप्त हो सके।

४. हड्डी की खाद:—प्रतिवर्ष हमारे यहाँ लाखों पशु मरते हैं। उनका चमड़ा तो काम

में लिया जाता है परन्तु उनकी हड्डियों का प्रयोग अभी तक बहुत कम होता है। पशुओं की हड्डियों को पीसकर बहुत उत्तम कोटि की खाद बनाते हैं। हमारे यहाँ की कुछ मिट्टियों में फासफेट तत्व की कमी भी है। उसमें हड्डी की खाद देने से उपजाऊपन बढ़ जाता है।

मछली की हड्डियाँ भी बहुत उत्तम खाद है। जापान में लोग चाय और चावल के खेतों को मछली की हड्डियों की खाद देते हैं। वह खाद वहाँ इतनी कीमती गिनी जाती है कि इसे खेतों में न बिखेर कर हर एक पौधे को वह खाद दी जाती है।

५. हरी खादः—अरहर, उरद आदि दालें खेतों में उगा देने से खेत को बड़ा लाभ होता है। इन पौधों की जड़ों में हवा द्वारा नाइट्रोजन एकत्रित हो जाता है जो मिट्टी में मिलाने से उसके उपजाऊपन को बढ़ाता है। इसी प्रकार सन के पौधे खेत में छोड़ देते हैं। उनके पत्ते मिट्टी में मिलकर खाद का काम देते हैं।

(ख) वैज्ञानिक खादः—पाश्चात्य देशों में हवा से नाइट्रोजन उत्पन्न करने के लिए बड़े बड़े कारखाने हैं। भारत में भी ऐसे कारखाने स्थापित होने चाहिये परन्तु देश के निवासियों की निर्धनता इस कार्य में बाधक है।

अभी हाल में बिहार राज्य के सिंदरी नामक स्थान में मशीन द्वारा खाद तैयार करने का एक बहुत बड़ा कारखाना स्थापित किया गया है। इस योजना में संयुक्त राष्ट्र अमेरिका तथा ब्रिटेन के वैज्ञानिकों की सहायता ली गई है। इसके द्वारा खड़ी (Gypsum) से प्रति वर्ष लगभग साढ़े तीन लाख टन एमोनियम सल्फेट तैयार किया जाता है।

यह कारखाना एशिया का सबसे बड़ा वैज्ञानिक खाद तैयार करने का कारखाना होगा। हमारे देश के भिन्न भिन्न राज्यों ने भी खाद तैयार करने के लिए छोटे बड़े कई कारखाने खोलने की योजनाएँ बनाई हैं।

[आ] मिट्टी के बहाव (Soil Erosion) को रोकने की रीतियाँः—

जहाँ अधिक वर्षा होती हो वहाँ मिट्टी अधिक घुलकर बहेगी। पानी के तेज प्रवाह के साथ मिट्टी के कणों का बहाव भी अधिक होगा। इस प्रकार पानी द्वारा मिट्टी के ऊपर का उपजाऊ पर्त घुल जायगा और खेतों में काम आने के बजाय समुद्र की तह में पहुँचेगा जहाँ उसका कोई उपयोग नही हो सकता।

इस प्रकार मिट्टी के बहाव को रोकने के लिए निम्नलिखित उपाय करने चाहियेः—

(१) पर्वतों पर से जहाँ नदियाँ निकलती हों वहाँ वृक्ष लगा देने चाहिये। ऐसा करने से नदी के बहाव के प्रवाह में कुछ रुकावट होगी और पानी की धीमी गति हो जाने के कारण मिट्टी का घुलाव कम होगा। वृक्षों की जड़ें पानी को जमीन के भीतर भी खींचेगी इसलिए अधिक वनपति लगाना सबसे उत्तम उपाय है। वास्तव में देखा जाय तो वनस्पति को नष्ट कर देने से ही मिट्टी बहने लगी। मनुष्य धीरे-धीरे खेतों के लिए जमीन को साफ करता गया और इस प्रकार वनस्पति नष्ट हो गई।

(२) नदी के ऊपरी हिस्से में कई स्थानों पर बाँध बना देना चाहिये। ऐसा करने से भी पानी का प्रवाह धीमा पड़ जायगा। इन बाँधों का पानी फिर कई प्रकार से काम में लिया जा सकता है। बाँध बनाने से पानी का बहाव धीमा होगा और वह मिट्टी को बहुत कम हटायेगा।

(३) पहाड़ी ढालों पर जहाँ से पानी बहता हो, क्यारियाँ सी बना लेनी चाहिये। ऐसा करने से भी पानी तेजी से न बह कर धीरे धीरे बहेगा और मिट्टी के बहाव को रोकेगा।

इस प्रकार हर सम्भव उपाय से मिट्टी को बहने से रोकना चाहिये। हमारे यहाँ प्रति वर्ष बहुत अधिक उपजाऊ मिट्टी इस प्रकार बह जाती है। यदि उसको नहीं रोका गया तो यहाँ की मिट्टी बेकार हो जायगी। आजकल देश के बहुत से भागों में विशेषतः बिहार, बंगाल आदि में मिट्टी रोकने के उपाय किये जा रहे हैं। बहु प्रयोजन योजनाओं में इसका विशेष ध्यान रखा गया है।

सारांश

मिट्टी से ही अन्न उत्पन्न होता है। जितनी अधिक उपजाऊ मिट्टी होगी उतना ही अधिक अन्न पैदा होगा। यही कारण है कि कृषि प्रधान देशों में मिट्टी का महत्व अधिक है।

मिट्टी पृथ्वी के ऊपर वाली पर्त से बनती है। कुछ मिट्टियाँ अपने स्थान से बहुत कम हटती हैं उन्हें तिलछटी मिट्टियाँ कहते हैं। परन्तु अधिकांश मिट्टियाँ बहते हुए पानी, आँधी आदि द्वारा अपने उत्पत्ति स्थान से बहुत दूर ले जाकर एकत्रित की जाती हैं। ऐसी मिट्टियों को कच्छारी मिट्टियाँ कहते हैं।

भूमि की बनावट के अनुसार भारतीय मिट्टियों को दो भागों में बाँट सकते हैं:—

(१) **उत्तरी भारत की मिट्टियाँ:**—गंगा-सिन्धु का मैदान उत्तरी भारत की नदियों द्वारा लाई हुई मिट्टी से बना है। मैदान के उत्तरी भाग में मिट्टी के कण बड़े बड़े होते हैं और वहाँ खेती कम होती है। मध्य भाग की मिट्टी दुमट होती है। नीचे वाले भाग अर्थात् नदियों के डेल्टों की मिट्टी में बारीक कण अधिक मात्रा में होने के कारण वह बहुत उपजाऊ होती है। गङ्गा-सिन्धु के मैदान में कई जगह क्षार युक्त मिट्टी भी है जो शुद्ध की जा सकती है।

हिमालय प्रदेश की मिट्टियां:—दलदली, पतली और छिद्रपूर्ण होती हैं, वहाँ खेती न होकर घने जङ्गल हैं।

(२) **दक्षिणी भारत की मिट्टियाँ:**—इनके भी चार प्रकार हैं—(अ) लाल मिट्टी—वह बिहार के संथाल परगने के अधिकांश भाग, बंगाल के वीरभूमि जिले, उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर, झाँसी और हमीरपुर जिलों, मध्य प्रदेश तथा राजस्थान के पूर्वी भाग में पाई जाती है। (आ) काली मिट्टी—यह लावा से बनी है और बम्बई, सौराष्ट्र, मध्य प्रदेश का पश्चिमी भाग, आंध्र प्रदेश तथा मद्रास के कुछ भागों में पाई जाती है। कपास की खेती के लिए यह मिट्टी बहुत उपयोगी सिद्ध हुई है। (इ) लैटेराइट मिट्टी—इसका विस्तार मध्य प्रदेश,

उड़ीसा, मद्रास, बम्बई तथा आसाम के कुछ भागों में है। इस मिट्टी का रंग ईंट जैसा होता है। (ई) नदियों के डेल्टों की मिट्टी—दक्षिण भारत की नदियाँ अपने डेल्टों पर उपजाऊ मिट्टी इकट्ठी करती रहती हैं। वहाँ खेती अच्छी होती है।

हमारे देश की मिट्टी कम उपजाऊ नहीं है परन्तु उसमें खाद न देने के कारण खेती की प्रति एकड़ पैदावार कम होती है। हमारे यहाँ की मिट्टी में पोटाश और फासफोरस की मात्रा तो अधिक होती है परन्तु नाइट्रोजन की कमी है। वैज्ञानिक खादों का प्रयोग करने से इस कमी की पूर्ति की जा सकती है। तेजी से बहते हुए पानी को भी रोकना चाहिए जिससे मिट्टी का घुलाव और बहाव कम हो जाय।

प्रश्न

१. मिट्टी ही किसान का धन क्यों है?
२. उत्तरी भारत और दक्षिणी भारत की मिट्टियों में क्या अन्तर है?
३. कच्छारी मिट्टी की क्या विशेषताएँ हैं?
४. काली मिट्टी में कपास की खेती क्यों होती है?
५. भारतीय मिट्टियों में क्या कमियाँ हैं? उसकी पूर्ति किस प्रकार से की जा सकती है?

अध्याय ६

सिंचाई के साधन

वर्षा के अतिरिक्त खेतों को किसी भी कृत्रिम तरीके से पानी देने को सिंचाई कहते हैं। किसी देश में सिंचाई कितनी होती है यह जानने के लिए दो बातों की आवश्यकता होती है— (अ) उस देश में सिंचाई की आवश्यकता कितनी है और (आ) वहां भूमि पर सिंचाई करने के लिए कितने साधन उपलब्ध हैं।

भारत में विश्व के सभी देशों से अधिक सिंचाई होती है। ऐसा क्यों है—इसकी जाँच हम ऊपर बताई हुई दोनों बातों के आधार पर करते हैं।

भारत में सिंचाई की आवश्यकता क्यों पड़ी ?

भारत देश में निम्नलिखित कारणों से सिंचाई की आवश्यकता हुईः—

(१) हमारे देश के कुछ भागों में वर्षा नहीं के बराबर होती है जैसे राजस्थान का अधिकांश, पश्चिमी पंजाब आदि। यहाँ यदि सिंचाई न की जाय तो पैदावार नहीं हो सकती।

(२) देश में वर्षा का वितरण समान नहीं है। कुछ भागों में अधिक वर्षा हो जाती है, जैसे बङ्गाल, आसाम, पश्चिमी समुद्र तट आदि। वहाँ तो सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती परन्तु अन्य भागों में भूमि तो उपजाऊ है पर पानी की कमी होने से सिंचाई के साधनों का अवलम्बन लेना पड़ा।

(३) भारत की अधिकांश वर्षा मानसूनी है अर्थात् साल के कुछ ही महीनों में होती है। साल के शेष दिनों पानी न मिलने के कारण सिंचाई करनी ही पड़ती है।

(४) चावल, पाट, गन्ना आदि पौधों के लिए अधिक पानी की आवश्यकता होती है। देश के कई भागों में इन पौधों के लिए वर्षा का पानी पर्याप्त नहीं होता अतः सिंचाई करनी पड़ती है।

(५) देश के कुछ भागों की मिट्टी ऐसी है जो अधिक समय तक पानी को नहीं रख सकती जैसे बालू रेत। इस प्रकार की मिट्टी को गीला रखने के लिए उसे बार-बार पानी देने की आवश्यकता होती है।

(६) मानसूनी वर्षा अनिश्चित भी है। कभी-कभी वर्षा नियत समय से देर से होती है। कभी मानसून समाप्त भी शीघ्र ही हो जाते हैं। ऐसी हालत में खेती को कृत्रिम तरीके से पानी देने की आवश्यकता पड़ती है।

(७) हमारा देश कृषि प्रधान है। अधिकांश लोगों का धन्धा-खेती करना है। मिट्टी यहाँ की उपजाऊ है। जलवायु कई प्रकार की पैदावार के लिए उपयुक्त है। कमी केवल वर्षा की रहती है और इसी की पूर्ति करने के लिए यहाँ भिन्न-भिन्न प्रकार के सिंचाई के साधनों की आवश्यकता हुई।
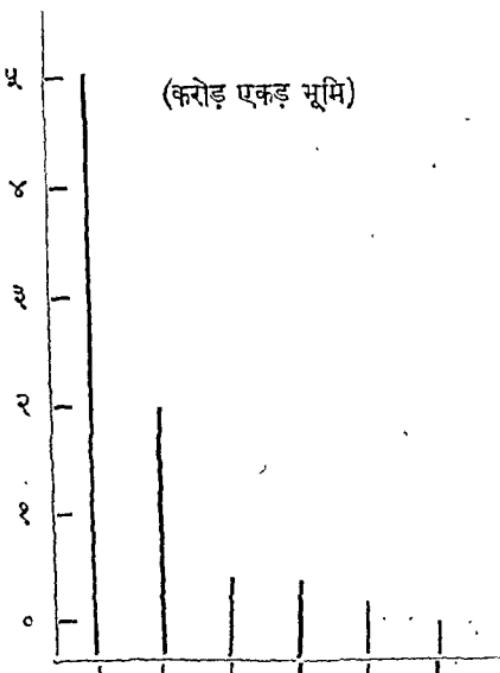
चित्र सं० १६. संसार के सिंचाई करने वाले देश

भारत में सिंचाई करने के लिए सुविधायें

हमारे यहाँ सिंचाई के लिए निम्नलिखित सुविधाएँ प्राप्त हैं:—

(१) उत्तरी भारत की नदियों में साल भर पानी रहता है। गर्मी के दिनों में तो पहाड़ों पर बर्फ पिघलने के कारण पानी आता है और वर्षा ऋतु में पानी रहता ही है। केवल शीत-काल में पानी की कमी हो जाती है। परन्तु उन दिनों ठंड पड़ने के कारण पौधों को अधिक पानी की आवश्यकता नहीं होती और जितना भी पानी चाहिए वह नदियों से बाँध तैयार कर उनमें पहले ही भर लेते हैं वहाँ से नहरों को पानी मिल जाता है।

(२) नदियाँ एक जगह न बहकर मैदान में दूर दूर तक फैली हुई हैं। पंजाब की तो पाँचों नदियाँ हाथ की पाँचों अंगुलियों की भाँति फैली हुई हैं। यही कारण है कि मैदान के हर भाग में एक न एक नदी से नहर निकाल कर पानी पहुँचा दिया जाता है।

(३) गङ्गा-सिन्धु के मैदान का ढाल क्रमशः है। एक स्थान पर ऊँचाई यदि हजार फीट है तो कुछ आगे चलने पर नौ सौ फीट और फिर आठ सौ फीट होगी। ऐसा क्रमशः ढाल नहरों के बनाने में बहुत सहायक हुआ है।

(४) मैदान की मिट्टी बहुत मुलायम है और उसकी गहराई भी अधिक है। यही कारण है कि वहाँ नहरों के खोदने में अधिक परिश्रम नहीं करना पड़ता और व्यय भी कम होता है।

(५) दक्षिणी भारत में नदियों में साल भर पानी नहीं रहता क्योंकि वहाँ की पर्वतीय चोटियाँ बर्फ से ढकी नहीं रहती हैं। परन्तु वहाँ पथरीली भूमि होने से बड़े बाँध बना लिये हैं जिनसे सिंचाई करते हैं।

(६) देश के कई भागों में भूमि ऊँची नीची है। वहाँ नहरें तो नहीं खोदी जा सकती परन्तु जमीन के नीचे पानी पास ही में होने से कुएँ खोदने में सुविधा रहती है। उत्तर प्रदेश के कई भागों में बिजली के कुएँ भी हैं।

(७) हमारे देश की आबादी अधिक होने से मजदूरी सस्ती है। यही कारण है कि यहाँ नहरें, बाँध या कुओं के तैयार करने के लिए सस्ते मजदूर आसानी से मिल जाते हैं। अकाल पीड़ित क्षेत्रों में तो यह कार्य और भी अधिक सहूलियत से होता है।

(८) आजकल देश के कई राज्यों में सरकार की ओर से बहुमुखी योजनायें तैयार हो रही हैं। उनके द्वारा बड़े बड़े बाँध तैयार हो रहे हैं जो जल-विद्युत, बाढ़ को रोकने, वृक्ष लगाने, सिंचाई करने आदि के काम में आवेंगे। इस प्रकार पानी के अनेक उपयोग होने से सिंचाई सस्ती पड़ती है। यही कारण है कि हमारे देश में सिंचाई का क्षेत्र दिन प्रति दिन बढ़ रहा है।

ऊपर बताई गई बातों से स्पष्ट है कि हमारे देश में सिंचाई के साधनों की, अत्यन्त आवश्यकता है और इसके साथ ही साथ इन साधनों को प्राप्त करने में सहूलियत भी बहुत है। हमारे यहाँ विश्व के अन्य देशों से सबसे अधिक भूमि सींची जाती है। इतना होने पर भी जितनी सिंचाई हो रही है वह देश की माँग के लिए पर्याप्त नहीं है। अभी तक हमारी नदियों के पानी का केवल ६ प्रतिशत अंश ही सिंचाई में काम आता है। शेष पानी बहकर समुद्र में चला जाता है। इस पानी के जितने अंश को देश के खेतों को पहुँचाया जाय उतना ही अधिक देश समृद्धिशाली होगा।

भारत में नहरों की कुल लम्बाई लगभग ८० हजार मील है। प्रायः सारी नहरें सरकार की ओर से ही तैयार करवाई गई हैं। इन सबके बनवाने में सरकार को लगभग १५० करोड़ रुपये खर्च करना पड़ा। सिंचाई के सब साधनों से प्रायः पाँच करोड़ एकड़ भूमि सींची जाती है।

पाकिस्तान के अलग हो जाने से पहले भारत में जितनी भूमि में सिंचाई होती थी उसका २०% अब पाकिस्तान में है। आजकल कई नवीन योजनाएँ भारत में और तैयार हो रही हैं अतः आशा है वह कमी शीघ्र ही पूरी हो जायगी।

अविभाजित पंजाब में सबसे अधिक सिंचाई होती है। वहाँ १ करोड़ २० लाख एकड़ भूमि को सींच कर खेती की जाती है। भारत में मद्रास राज्य में सबसे अधिक सिंचाई होती है। वहाँ लगभग ८७ लाख एकड़ भूमि तालाबों और नहरों द्वारा सींची जाती है। मद्रास के बाद उत्तर प्रदेश का स्थान है जहाँ प्रायः ५५ लाख एकड़ भूमि सींची जाती है और वह क्षेत्र दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। इन राज्यों के अतिरिक्त बिहार, बम्बई, राजस्थान, उड़ीसा आदि में भी सिंचाई होती है। केवल बंगाल और आसाम तथा बम्बई के समुद्र तट पर अधिक वर्षा होने से सिंचाई की विशेष आवश्यकता नहीं होती।

सिंचाई के साधन

भारत में सिंचाई के तीन मुख्य साधन हैं:—

(१) कुएँ।

(२) तालाब या बांध।

(३) नदियों से नहरें निकाल कर।

देश की प्राकृतिक बनावट तथा अन्य स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार भारत के भिन्न-भिन्न राज्यों में भिन्न-भिन्न प्रकार के सिंचाई के साधन काम में लाये जाते हैं।

१. कुएँ

सम्पूर्ण भारत में जितनी भूमि में सिंचाई होती है उसका लगभग चौथाई भाग कुओं द्वारा सींचा जाता है। यद्यपि कुएँ से थोड़ी सी भूमि सींची जाती है परन्तु इसके द्वारा सिंचाई करने से किसान को सुविधा रहती है। इसका कारण यह है कि थोड़ा सा धन व्यय करने से कुआँ खोदा जा सकता है। इसीलिए कुओं की खुदाई सरकार की ओर से न होकर व्यक्तिगत किसानों की ओर से ही हो जाती है।

कुआँ खोदने में दो बातों का ध्यान रखा जाता है—एक तो पानी जमीन के नीचे बहुत गहराई पर न हो और दूसरा भूमि पथरीली न हो। जहाँ पर ये सुविधाएँ अधिक मात्रा में प्राप्त हो वहाँ पर कुएँ भी अधिक मिलेंगे। सबसे अधिक कुएँ उत्तर प्रदेश में हैं। वहाँ जिन स्थानों पर ऊँचाई के कारण नहरों से सिंचाई नहीं की जा सकती वहाँ कुएँ खोद लिए जाते हैं। उत्तर प्रदेश के अतिरिक्त पंजाब, मद्रास, बम्बई और दक्षिणी-पूर्वी राजस्थान में भी कुओं से सिंचाई की जाती है। भारत के सब राज्यों में मिलाकर कुओं की कुल संख्या लगभग तीस लाख है।

कुएँ दो प्रकार के हैं—(अ) साधारण कुएँ और (आ) बिजली के कुएँ (Tube-wells)।

(अ) साधारण कुएँ:—ये कुएँ प्रायः सब कहीं मिलते हैं। मनुष्य अपने हाथ से तथा बैलों की सहायता से कुएँ में से पानी खींच लेता है। ढेकली, रहट, चड़स आदि पानी निकालने के भिन्न २ साधन हैं। इन कुओं से सिंचाई करने में दो तीन मनुष्यों की आवश्यकता होती है। भूमि के छोटे-छोटे टुकड़ों को सींचने में ये कुएँ बड़े उपयोगी सिद्ध हुए हैं।

(आ) बिजली के कुएँ:—कुएँ में इञ्जिन लगाकर या बिजली से पानी पम्प द्वारा निकालने में बड़ी सहूलियत रहती है। इस प्रकार थोड़े ही समय में बहुत अधिक पानी कुएँ से निकल सकता है और पर्याप्त भूमि सींच सकता है। देश के कई भागों में जमींदार और रईसों ने ऐसे कुएँ बनवा रखे हैं जिनसे बड़े खेतों तथा बाग-बगीचों की सिंचाई होती है। कुएँ में इञ्जिन लगाने में खर्चा अधिक पड़ता है जिसको एक साधारण किसान बर्दाश्त नहीं कर सकता। सस्ती बिजली मिलने से ही ऐसे कुएँ किसानों के लिए उपयोगी हो सकते हैं।

उत्तर-प्रदेश में गङ्गा की नहर के प्रवाह को कम करने के लिए लगभग दस-दस फीट की ऊँचाई के कुछ प्रपात बनाये गये हैं। बाद में उनसे जल-विद्युत् तैयार की गई जो नहर के आस-पास के गाँवों तथा कस्बों में भी काम आने लगी। धीरे-धीरे अलग-अलग प्रपातों के शक्तिगृह बिजली के तारों द्वारा एक दूसरे से मिला दिये गये। ये सात बड़े शक्तिगृह हैं और

चित्र सं० २०. उत्तर-प्रदेश में ट्यूबवैल द्वारा सिंचित क्षेत्र

इनके नाम इस प्रकार हैं—(१) बहादुराबाद, (२) मीरागजनी, (३) चित्तौरा, (४) सलवा, (५) भोला, (६) पालरा और (७) सुमेरा। इनको मिला देने से जो बिजली की योजना तैयार हुई उसका नाम गङ्गा-नहर जल-विद्युत् योजना (Ganges Canal Grid Scheme) रखा गया।

सन् १६३० तक तो गंगा-नहर से उत्पन्न की हुई बिजली घरों में रोशनी देने तथा

घरेलू उद्योग-धन्धों के विकास में ही काम आती रही। परन्तु बाद में यह सोचा गया कि इस बिजली से यदि कुओं से पानी निकाला जाय तो सिंचाई में बहुत सुविधा होगी। सन् १९३१ में ९ कुएँ तैयार किये गये और उनमें से बिजली की शक्ति से पानी खींचना प्रारम्भ किया गया। धीरे-धीरे इन कुओं की संख्या बढ़ती गई। यहाँ तक कि सन् १९४० में गङ्गा नहर के पूर्वी और पश्चिमी भागों में लगभग डेढ़ हजार ट्यूबवैल तैयार हो गये। जिन भागों में ऊँचाई के कारण नहर का पानी नहीं पहुँच सकता था वहाँ बिजली के इन कुओं से सिंचाई की जाने लगी। आज तो ऐसे कुओं की संख्या बहुत बढ़ गई है।

गङ्गा नदी के पूर्व में उत्तर-प्रदेश के बिजनौर, बदायूँ और मुरादाबाद जिलों में अब पर्याप्त कुएँ हैं। इसी प्रकार नदी के पश्चिमी भाग में मुजफ्फरनगर, मेरठ, बुलन्दशहर, अलीगढ़ और आगरा जिलों तक ट्यूबवैल का क्षेत्र बढ़ गया है। इन कुओं द्वारा लगभग बीस लाख एकड़ भूमि में सिंचाई होती है।

एक ट्यूबवैल से लगभग एक वर्ग मील खेत की सिंचाई हो सकती है। इन कुओं से उत्तर-प्रदेश की उपज बढ़ गई और बेकार पड़ी हुई भूमि काम में आ गई। उत्तर-प्रदेश सरकार ने और अधिक कुएँ बनाने की योजना तैयार की है और आशा की जाती है कि इससे निकट भविष्य में इस राज्य के पश्चिमी शुष्क भाग में गन्ना, कपास, गेहूँ आदि की पैदावार बढ़ जायगी।

उत्तर प्रदेश के अतिरिक्त अन्य राज्यों में भी बिजली के कुएँ तैयार किये जा रहे हैं।

तालाब और बाँध

भारत के जिन भागों में भूमि या तो पथरीली है या जहाँ पर भूमि के नीचे पानी बहुत गहरा है वहाँ तालाबों और बाँधों से सिंचाई की जाती है। तालाब भूमि पर गड्ढे होते हैं उनमें वर्षा ऋतु में पानी एकत्रित हो जाता है। इसी प्रकार पहाड़ी भाग में बहते हुए नाले या नदी को बाँध बनाकर रोक लेते हैं। इसी प्रकार के कृत्रिम तालाब को बाँध कहते हैं।

अधिकतर तालाब दक्षिणी भारत में हैं। इनकी संख्या लगभग ७५ हजार है। इनमें कुछ तो बहुत छोटे हैं जो बहुत कम जमीन को सींचते हैं परन्तु कुछ से हजारों एकड़ भूमि को पानी दिया जाता है। मद्रास राज्य में स्थित अकेला पेरियर बाँध लगभग डेढ़ लाख एकड़ भूमि को सींचता है।

समस्त भारत में जितनी सिंचाई कुओं से होती है लगभग उतनी ही तालाब और बाँधों से होती है। सबसे अधिक तालाब मद्रास राज्य में हैं। देश के कुल तालाबों की आधी संख्या केवल मद्रास राज्य में ही है। वहाँ की पथरीली भूमि तालाबों के लिये उत्तम है। कुएँ खोदने में

वहाँ कठिनाई होती है। नहरें भी डेल्टे के निकट मैदान में ही हैं। इसके अतिरिक्त वहाँ नदियों से अधिक नहरें इसलिए भी नहीं निकाली गई हैं कि उनमें साल भर पानी नहीं रहता।
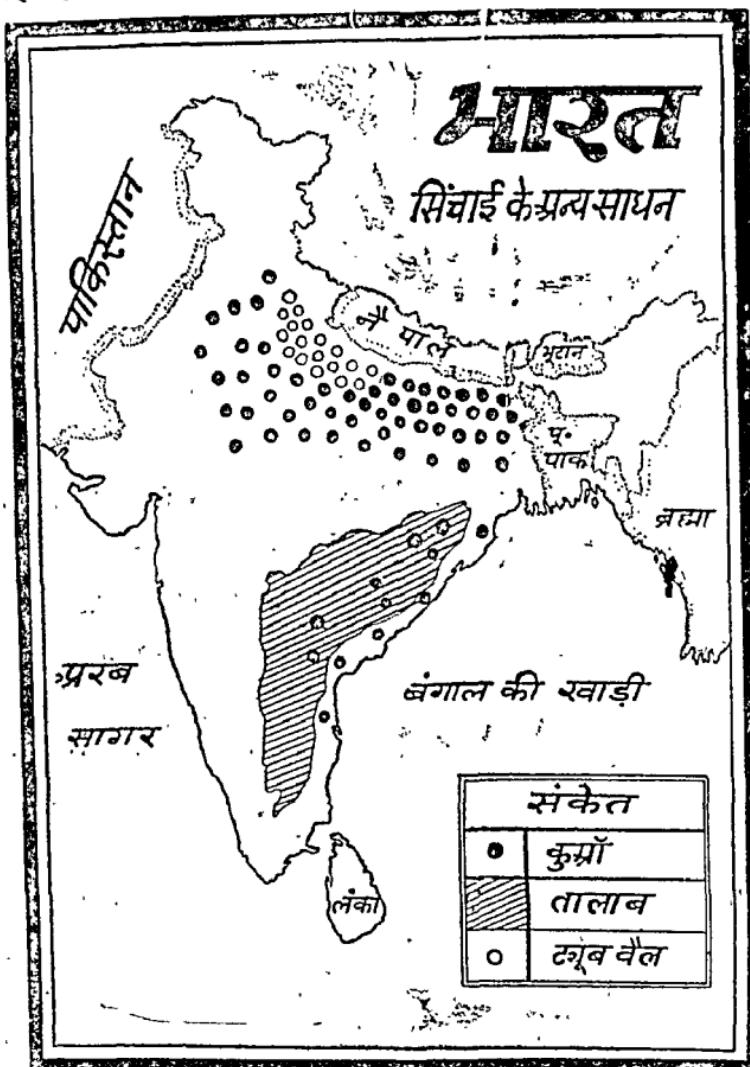
चित्र सं० २१. भारत में तालाब और कुओं से सिंचाई

मद्रास के पश्चात् आंध्र प्रदेश तथा मैसूर राज्य में अधिक तालाब हैं। कुछ तालाब राजस्थान के दक्षिणी-पूर्वी पहाड़ी भाग और मध्य प्रदेश में भी हैं। बिहार के उत्तरी भाग में भी तालाबों से सिंचाई की जाती है।

तालाबों की सिंचाई से लाभ तो अनेक हैं परन्तु दो हानियाँ हैं:—(अ) बहता हुआ पानी जब तालाब में एकत्रित होता रहता है तो उसके साथ लाई हुई मिट्टी भी वहाँ एकत्रित

होती जाती है। बहुत समय बाद अधिक मिट्टी एकत्रित होने से तालाब में पानी कम गहरा हो जाता है। मिट्टी को बाहर निकालते रहना चाहिये। परन्तु इसमें खर्च अधिक पड़ता है। (आ) तालाबों में पानी केवल वर्षा के होने से ही आता है। जिस साल वर्षा कम होती है उस साल तालाबों में पानी की कमी रहती है। कभी कभी तो वर्षा न होने से कई तालाब सूख भी जाते हैं।

३. नहरें

सिंचाई का सबसे उत्तम साधन नहरें हैं। देश में जितनी भूमि की सिंचाई होती है उसका लगभग आधा भाग नहरों द्वारा ही सींचा जाता है। देश के अधिकांश लोग इन नहरों के प्रदेश में ही रहते हैं।

नहरें दो प्रकार की होती हैं—(अ) नदियों से निकलने वाली और (आ) तालाब या बाँध से निकाली जाने वाली। उत्तरी भारत की अधिकांश नहरें नदियों द्वारा ही निकाली गई हैं क्योंकि वहाँ प्रायः साल भर नदियों में पानी रहता है। परन्तु दक्षिणी भारत की अधिकांश नहरें बड़े बड़े बाँध बनाकर उनसे निकाली जाती हैं। इस प्रकार के बाँध बनाने में बहुत सा धन व्यय होता है। यही कारण है कि दक्षिणी भारत में सिंचाई मँहगी पड़ती है।

[अ] नदियों से निकाली गई नहरें

ये नहरें दो प्रकार की होती हैं—(१) अनित्यवाही (Inundation Canals) और (२) नित्यवाही (Perennial Canals)।

(१) अनित्यवाही नहरें:—मुख्यतः ये नहरें नदी की बाढ़ को रोकने के लिए बनाई जाती हैं। जब नदी में बाढ़ का पानी कम हो जाता है तो इन नहरों से पानी जाना भी बन्द हो जाता है। इसलिए ये नहरें केवल वर्षा में ही काम आती हैं। साल के अन्य महीनों में इनमें पानी न रहने से ऐसी नहरों का उपयोग कम होता है। यही कारण है कि आजकल इन नहरों को नित्यवाही नहरों में परिवर्तित किया जा रहा है।

(२) नित्यवाही नहरें:—बहती हुई नदी के किनारे बाँध बनाकर पानी को एकत्रित कर लेते हैं और फिर नदी से उसी स्थान से नहर निकाली जाती है। इस प्रकार की नहर में साल के किसी भी समय पानी की कमी नहीं रहती। आवश्यकतानुसार ऐसी नहर में पानी कम या अधिक भी किया जा सकता है। आजकल की अधिकांश नहरें इसी प्रकार की हैं।

उत्तर प्रदेश की नहरें

पंजाब में पहले सबसे अधिक नहरें थी परन्तु अब नहरों के भाग का अधिकांश पाकिस्तान में चले जाने से उत्तर प्रदेश में नहरों की लम्बाई भारत के अन्य राज्यों से अधिक हो गई है। राज्य के पूर्वी भाग में तो वर्षा अच्छी हो जाने से सिंचाई की विशेष अधिक आवश्यकता नहीं पड़ती परन्तु प्रयाग से पश्चिमी भाग में वर्षा कम होती है। यही कारण है कि उत्तर प्रदेश की अधिकांश नहरें गंगा और यमुना के दोआब में स्थित हैं।

उत्तर प्रदेश की मुख्य नहरें ये हैं:—

(१) गंगा की ऊपरी नहर (Upper Ganges Canal):—हरिद्वार के निकट गंगा नदी से यह नहर निकाली गई है। इस नहर को बने हुए लगभग सौ वर्ष हो गए। शाखाओं सहित नहर की कुल लम्बाई लगभग चार हजार मील है और इसके द्वारा प्रायः दस

चित्र सं० २२. नहरों द्वारा सिंचाई

लाख एकड़ भूमि की सिंचाई की जाती है। राज्य के जिस भाग को यह नहर सींचती है वहाँ पहले अकाल पड़ा करते थे अब वहाँ गेहूँ, गन्ना, कपास आदि की बहुत अच्छी खेती होती है।

मुख्य नहर हरिद्वार से कानपुर तक है। रेलों से पहले यह नहर आवागमन का भी एक उत्तम साधन थी।

आजकल गङ्गा की निचली नहरं और आगरा नहर को भी इस नहर द्वारा पानी दिया जाता है।

(२) गङ्गा की निचली नहर (Lower Ganges Canal):—गङ्गा नदी के मध्य भाग में हिमालय के तराई प्रदेश से कई नदी नाले आकर मिल जाते हैं। इस कारण नदी में पानी अधिक हो जाता है। इसका लाभ उठाने के लिए बुलन्दशहर जिले में नरौरा नामक स्थान पर गंगा नदी से दूसरी नहर निकाली गई है जिसका नाम 'गङ्गा की निचली नहर' है। इसकी कुल लम्बाई लगभग ऊपरी नहर के बराबर ही है और यह प्रायः आठ लाख एकड़ भूमि को सींचती है।

(३) पूर्वी यमुना नहर (East Jumna Canal):—यह नहर बहुत प्राचीन है। इसमें अब नवीन सुधार कर दिये गये हैं। यमुना नदी के बाएँ किनारे से यह फैजाबाद के निकट निकाली गई है। नहर की कुल लम्बाई नौ सौ मील है और इसके द्वारा लगभग चार लाख एकड़ भूमि की सिंचाई होती है। सहारनपुर, मेरठ और मुजफ्फरपुर जिलों के शुष्क भाग को पानी देकर इस नहर ने उन स्थानों की उपयोगिता को बहुत बढ़ा दिया है।

(४) आगरा नहर (Agra Canal):—दिल्ली से ११ मील दक्षिण में यमुना नदी के दाहिने किनारे से ओखला नामक स्थान पर यह नहर निकाली गई है। अपनी शाखाओं सहित इस नहर की लम्बाई लगभग एक हजार मील है और यह दिल्ली, मथुरा, आगरा आदि जिलों की लगभग चार लाख एकड़ भूमि को सींचती है।

(५) शारदा नहर (Sarda Canal):—शारदा नदी नैपाल से निकल कर उत्तर-प्रदेश में प्रवेश करती है। नैपाल और उत्तर प्रदेश की सीमा पर बनवासा नामक स्थान पर इससे यह नहर निकाली गई है। इसके बनाने में अधिक खर्च पड़ा क्योंकि निकास स्थान के वन को साफ करना पड़ा और पथरीली भूमि में खुदाई करनी पड़ी। आगे मैदान में चल कर सहूलियत हो गई। अपनी शाखाओं सहित नहर की कुल लम्बाई साढ़े पाँच हजार मील है। यह नहर संसार की बड़ी नहरों में गिनी जाती है। इसके द्वारा रुहेलखण्ड और अवध की लगभग साठ लाख एकड़ भूमि सींची जाती है। १९२८ में यह नहर बनी थी। तब से उत्तर प्रदेश में गेहूँ और गन्ने आदि की पैदावार में बहुत वृद्धि हो गई है।

(६) बेतवा नहर (Betwa Canal):—बेतवा नदी यमुना की ही शाखा है। झाँसी से १५ मील दूर परिछा नामक स्थान पर नदी से यह नहर निकाली गई है जो उत्तर प्रदेश के झाँसी, जालौन और हमीरपुर जिलों की प्रायः दो लाख एकड़ भूमि की सिंचाई करती है।

(७) अन्य नहरें:—केन, धाँसना आदि नदियों से भी नहरें निकाली गई हैं जो राज्य के कई भागों को सींच कर खेती की उपज बढ़ाती हैं। सोन नदी की सहायक घग्घर नदी से भी एक नहर निकाली गई है जिसे घग्घर नहर कहते हैं। मिर्जापुर जिले में इसके द्वारा सिंचाई होती है।

इन नहरों के अतिरिक्त रिहन्द, नैयर, राम-गङ्गा आदि कई योजनाएँ तैयार की जा चुकी
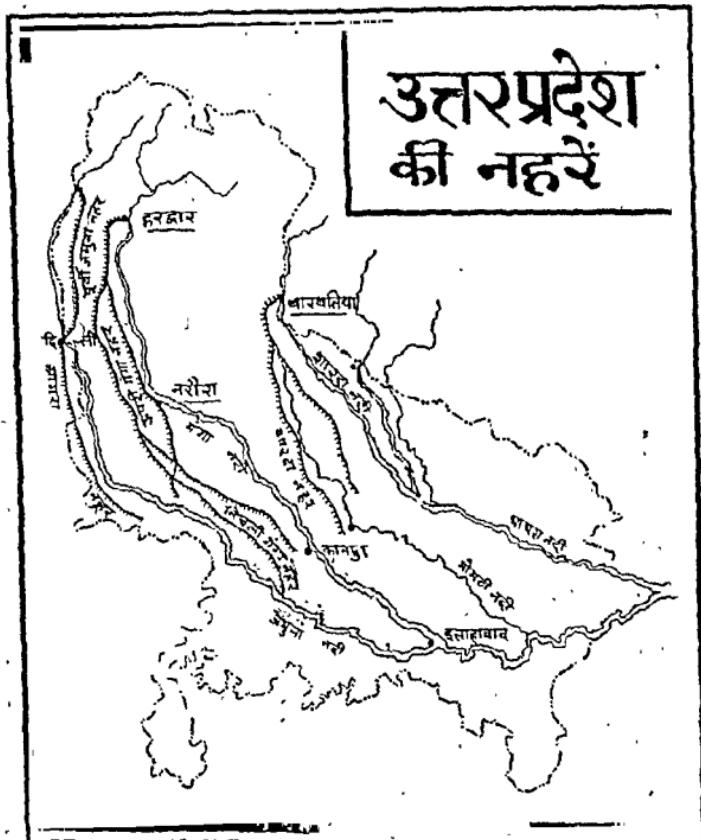
चित्र सं० २३. उत्तर प्रदेश की नहरें

हैं। यहाँ बड़े-बड़े बांध तैयार किये जाएँगे और इनसे नहरें निकाल कर सिंचाई की जायगी। इनमें बिजली भी तैयार की जायगी जिसका प्रयोग कारखानों में होगा।

पंजाब की नहरें

सिंचाई की नहरों के लिए पंजाब संसार भर में प्रसिद्ध है। यहाँ की समतल और मुलायम मिट्टी, मैदान का क्रमशः ढाल, नदियों में साल भर पानी रहना, वर्षा का अभाव, सिंचाई के अन्य साधनों के लिए असुविधा होना आदि कई कारण हैं जिन्होंने पंजाब को नदियों की नहरों के लिए इतना विख्यात कर दिया है।

पंजाब की नहरें सिंधु नदी की सहायक झेलम, चेनाव, रावी, व्यास और सतलज तथा यमुना नदी से निकाली गई हैं। पंजाब की मुख्य नहरें इस प्रकार हैं:—

(१) पश्चिमी यमुना नहर (West Jumna Canal):—यह नहर पुरानी है। यह यमुना नदी के दाहिने किनारे पर ताजवाला स्थान से निकाली गई है। इसकी तीन मुख्य शाखाएँ हैं—दिल्ली शाखा, हंसी शाखा और सिरसा शाखा। कुल लम्बाई प्रायः दो हजार मील है और इसके द्वारा दिल्ली, पंजाब राज्य के करनाल, रोहतक, हिसार, अम्बाला और पटियाला जिलों में सिंचाई होती है। अनुमानतः यह नहर आठ लाख एकड़ भूमि को सींचती है।
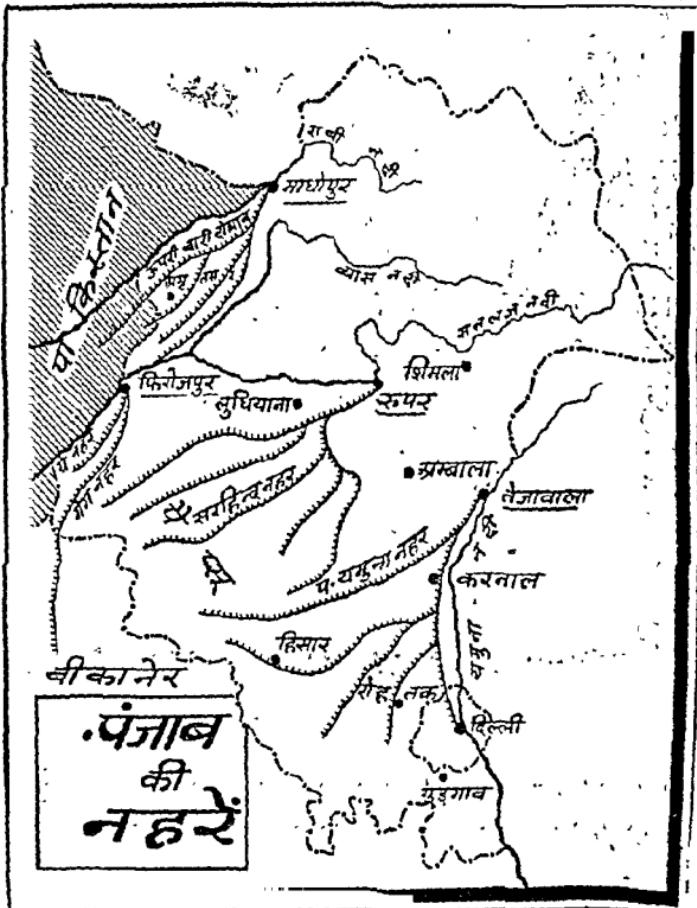
चित्र सं० २४. पंजाब की नहरें

(२) सरहिन्द नहर (Sirhind Canal):—सन् १८८१ ई० में यह नहर बनाई गई थी। सतलज नदी के किनारे रूपर नामक स्थान से यह निकली है। अपनी शाखाओं सहित नहर की कुल लम्बाई प्रायः ३८०० मील है और इसके द्वारा लुधियाना, फिरोजपुर, हिसार, पटियाला, नाभा, जिंध आदि में कुल मिलाकर लगभग १८ लाख एकड़ भूमि की सिंचाई होती है।

(३) ऊपरी बारी दोआब नहर (Upper Bari Doab Canal):—पहले इसको केवल बारी दोआब नहर ही कहते थे। पठानकोट के निकट रावी नदी पहाड़ों से उतर कर मैदान में प्रवेश करती है। वहीं माधोपुर नामक स्थान पर उस नदी से यह नहर निकाली गई है। सन् १८५६ ई० में यह नहर तैयार हुई। शाखाओं सहित इसकी कुल लम्बाई लगभग एक हजार आठ सौ मील है और इसके द्वारा पंजाब राज्य के अमृतसर और गुरुदासपुर जिलों में लगभग दस लाख एकड़ भूमि की सिंचाई होती है। आगे चल कर यह नहर पाकिस्तान में प्रवेश करती है जहाँ इसके द्वारा लाहौर जिले में सिंचाई होती है।

(४) सतलज योजना (Sutlej Valley Project):—इस योजना को तैयार करने में मुख्य उद्देश्य यह रखा गया कि व्यास नदी तथा पंजाब की अन्य नदियों का वह पानी जो भिन्न-भिन्न नहरों के निकालने के पश्चात् बच रहता है, वह किस प्रकार काम में लिया जाय। सन् १९३३ में इसका कार्य पूर्ण हो गया। सतलज नदी पर तीन बाँध बना कर फिरोजपुर, सुलेमान और इस्लाम नामक स्थानों पर तथा पंचनद पर एक बाँध बनाकर कुल ११ नहरें निकाली गईं। सम्पूर्ण कार्य में लगभग २४ करोड़ रुपया खर्च हुआ। अब पंजाब के फिरोजपुर जिले की नहरों को छोड़ कर अन्य भाग पाकिस्तान में है। हाँ, राजस्थान के गंगानगर जिले में भी इस नहर द्वारा लगभग साढ़े तीन लाख एकड़ भूमि की सिंचाई की जाती है। इस नहर के कारण वहाँ का मरुस्थली प्रदेश हरी-भरी भूमि में परिणित हो गया है।

बिहार की नहरें

इस राज्य में भी वर्षा की अनियमितता के कारण कभी-कभी अकाल का प्रकोप होता है। पानी की कमी की पूर्ति करने के लिये गंडक और सोन नदियों से नहरें निकाली गई हैं।

बिहार में मुख्य तीन नहरें हैं:—

(१) पूर्वी सोन नहर (Eastern Son Canal):—सोन नदी के दाहिने किनारे से बारुन नामक स्थान से यह नहर निकाली गई है और पटना नगर के समीप यह गंगा नदी में मिला दी गई है। इसी कारण इसको पटना नहर भी कहते हैं। इस नहर द्वारा बिहार के पटना और गया जिलों में सिंचाई होती है।

(२) पश्चिमी सोन नहर (Western Son Canal):—सोन के बाएँ किनारे पर डेहरी नामक स्थान से यह नहर निकली है। इसका उद्गम पूर्वी सोन नहर के निकट ही है। कुछ दूर चल कर इसकी दो शाखाएँ बनती हैं—एक तो बक्सर के निकट गंगा नदी में मिलती है और दूसरी शाखा आगे चलकर फिर दो भागों में बँट जाती है—एक शाखा डुमराव नहर कहलाती है और उत्तर की ओर जाती है। दूसरी शाखा का नाम आरा नहर है जो उत्तर पूर्व की ओर चलकर गंगा में मिल जाती है। यह नहर शाहाबाद जिले की सिंचाई करती है।

(३) त्रिवेणी नहर (Triveni Canal):—गंडक नदी से त्रिवेणी नामक स्थान

के निकट से निकलने के कारण इसका यह नाम पड़ा। उत्तरी विहार के चम्पारन जिले में लगभग छः लाख एकड़ भूमि की सिंचाई इस नहर द्वारा होती है।

मध्य प्रदेश

राज्य में कई भागों में वर्षा की अनियमितता और न्यूनता के कारण कुछ नहरें बनाई गई है, जिनमें से मुख्य ये हैं:—

(१) **महानदी नहर** (Mahanadi Canal):—महानदी से रुद्री नामक स्थान से यह नहर निकाली गई है। शाखाओं सहित नहर की कुल लम्बाई लगभग साढ़े नौ सौ मील है। इसके बनाने में लगभग डेढ़ करोड़ रुपया खर्च हुआ। इस नहर द्वारा लगभग तीन लाख एकड़ भूमि की सिंचाई होती है जिसका अधिकांश भाग रांची जिले में है।

(२) **वैन गङ्गा नहर** (Wain Ganga Canal):—यह नहर वैनगंगा से ली गई है और इसके द्वारा बालाघाट और भण्डारा जिलों में लगभग दस हजार एकड़ भूमि की सिंचाई होती है।

(३) **तन्दुला नहर** (Tandula Canal):—तन्दुला और सुखा नदियों के संगम पर दो बाँध बनाकर वहाँ से यह नहर निकाली गई है। इस नहर द्वारा रायपुर और द्रुग जिलों में सिंचाई होती है।

बङ्गाल

इस राज्य में वर्षा पर्याप्त होने के कारण सिंचाई की नहरों की विशेष आवश्यकता नहीं पड़ी। केवल पश्चिमी कम वर्षा वाले भागों में दामोदर नदी से एक नहर निकाली गई है, जिसका नाम दामोदर नहर (Damodar Canal) है। इस नहर के द्वारा बंगाल के बर्दमान और हुगली जिलों में सिंचाई होती है।

दक्षिणी भारत की नहरें

दक्षिणी भारत में पथरीली भूमि होने से तालाबों द्वारा अधिक सिंचाई होती है, परन्तु महानदी, गोदावरी, कृष्णा और कावेरी नदियों के डेल्टे के मैदान में नदियों की शाखाओं से नहरें निकाल कर सिंचाई की जाती है। इस प्रकार उड़ीसा और मद्रास के शुष्क भागों में सिंचाई होने से चावल की पैदावार बढ़ गई है। ये नहरें आवागमन के साधन भी हैं। अकेले मद्रास में जितनी भूमि की सिंचाई होती है, उसका तीसरा भाग ऐसी नहरों द्वारा सींचा जाता है।

[आ] बड़े तालाबों और बाँधों की नहरें

बड़े बड़े तालाब या पहाड़ी भाग में नदियों पर बाँध बनाकर उनका पानी नहरों द्वारा मैदान में पहुँचाकर भारत के दक्षिणी भाग में सिंचाई की जाती है। ऐसी योजनायें मद्रास राज्य में अधिक हैं।

(१) पेरियर योजना (Periyar Project):—केरेला में पश्चिमी घाट से एक नदी निकलती थी जो अरब सागर में गिरती थी। वहाँ उसको रोककर समुद्र की सतह से तीन हजार फीट की ऊँचाई पर एक बाँध तैयार किया गया जो पेरियर झील के नाम से विख्यात है। पश्चिमी घाट में लगभग पौने दो मील लम्बी सुरंग काटकर उस झील का पानी पूर्व की ओर लाया गया और एक नहर तैयार की गई है। यह नहर मद्रास के मदुरा जिले को, जिसमें कम वर्षा होती थी, सींचती है। मदुरा जिले की उन्नति इस नहर के फलस्वरूप है।

(२) मैट्टूर योजना:—कावेरी नदी के उद्गम स्थान से लगभग अढ़ाई सौ मील की दूरी पर मैट्टूर नामक स्थान पर पहाड़ी भाग में ही एक बाँध बनाकर पानी एकत्रित किया गया
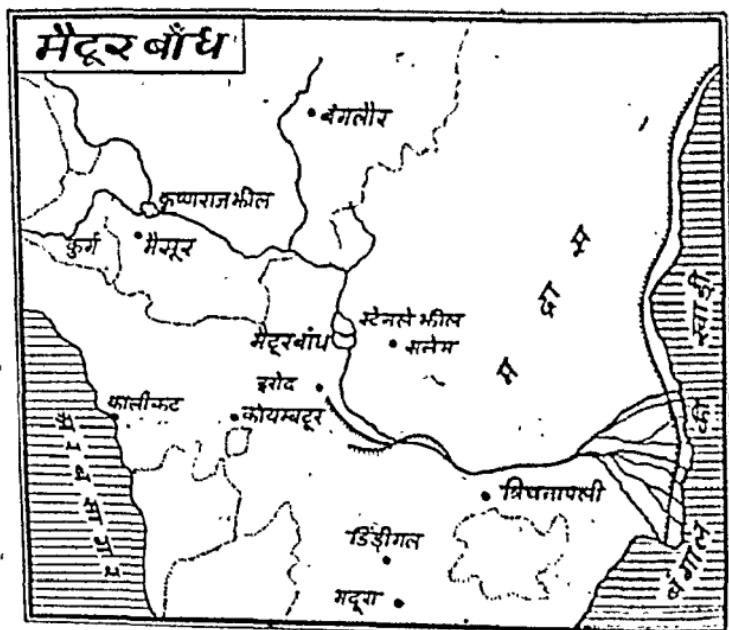
चित्र सं० २५. दक्षिण भारत में मैट्टूर योजना

है। वहाँ से १२५ मील लम्बी नहर द्वारा पानी कावेरी के डेल्टे के मैदान में पहुँचाया गया है, जहाँ लगभग दस लाख एकड़ भूमि की सिंचाई होती है। इस योजना द्वारा मद्रास की कपास, चावल और मूँगफली की पैदावार बहुत बढ़ गई है।

(३) कृष्ण-सागर:—इसके बन जाने से बेकार पड़ी हुई भूमि काम में आ गई है और गन्ने की पैदावार अच्छी होने लगी है। इस योजना से जल-विद्युत् भी तैयार की जाती है जिसके द्वारा अब शक्कर बनाने के कारखाने खुलने लगे हैं।

(४) भण्डारदारा योजना (Bhandardara Dam):—बम्बई राज्य में गोदावरी नदी की सहायक परवरा नदी पर बाँध बनाकर नहरें निकाली गई हैं। सन् १९२५ में यह योजना बनी थी। इसके द्वारा अहमदनगर जिले की सिंचाई होती है।

(५) भटगर योजना (Bhatgar Dam):—यह भी बम्बई राज्य में है और सन् १६२६ में यह बनी थी। कृष्णा नदी की सहायक नीरा नदी पर भटगर नामक स्थान पर बाँध बनाकर नहरें निकाली गई हैं। इस योजना द्वारा बम्बई के पूना और शोलापुर जिलों में सिंचाई होती है।

इन बड़े बाँधों के अतिरिक्त पंजाब में भाकरा, उत्तर प्रदेश में नांगल और रिहिन्द, बिहार में कोसी योजना, बिहार और बंगाल के लिए दामोदर योजना, उड़ीसा में महानदी योजना मद्रास में रामपद-सागर योजना आदि बन चुकी हैं। कुछ का काम तो प्रारम्भ हो गया है और कुछ का निकट भविष्य में होने वाला है। इन योजनाओं से सिंचाई के अतिरिक्त और भी कई काम लिए जायँगे—जैसे बाढ़ रोकना, बिजली पैदा करना, वन लगाना, मछली पालना, नावें चलाना आदि। इस प्रकार बहु-प्रयोग होने के कारण इन बाँधों से की गई सिंचाई में कम खर्च पड़ेगा। इन योजनाओं का वर्णन आगे एक अलग अध्याय में दिया गया है।

सिंचाई से लाभ

सिंचाई के साधनों से हमारे देश को कई लाभ हैं:—

(१) अकाल पीड़ित क्षेत्रों में कृषि होने लगी है और लोग सुख से रहने लगे हैं। पंजाब जैसी उजाड़ भूमि आज बहुत आबाद हो गई है।

(२) हमारे देश में जितना गन्ना होता है उसका लगभग ७०% नहरों द्वारा सींचित भूमि में ही होता है। पहले हम शकर विदेशों से मंगवाते थे। परन्तु अब अधिक गन्ना होने के कारण यह देश में ही बनने लगी है। इसके अतिरिक्त जितना गेहूँ यहाँ होता है उसका ४०% सिंचाई पर ही निर्भर है। चावल और कपास की पैदावार भी सिंचाई के कारण बढ़ गई है।

(३) सिंचाई के कारण किसान लोग अनियमितता से होने वाली हानियों से बच गये हैं।

(४) प्रति एकड़ भूमि की उपज भी सिंचाई के कारण बढ़ गई है।

(५) सिंचाई के कारण साल भर खेती होती रहती है और इस कारण कई प्रकार की पैदावार होती है।

(६) सिंचाई द्वारा सरकार को भी अच्छी आमदनी होने लगी है।

सिंचाई से हानियाँ

सिंचाई से कुछ हानियाँ भी होती हैः—

(१) अधिक सिंचाई के कारण भूमि पर क्षार (Alkaline) फैल जाता है और भूमि खेती के अयोग्य हो जाती है।

(२) नहरों द्वारा सींचित क्षेत्र में भूमि इतनी संतृप्त रहती है कि उसमें पानी हर समय रहता है। पानी के एकत्रित होने से गन्दगी फैलती है और बीमारियाँ भी उत्पन्न होने लगती हैं।

(३) नहरों से जब पानी खेतों को देते हैं तो सभी खेतों को पानी की आवश्यकता एक साथ होती है परन्तु सारे खेतों को एक ही समय पानी नहीं दिया जा सकता। समय निकलने पर पानी देना अधिक लाभदायक नहीं होता।

(४) नदी द्वारा ले जाकर जो उपजाऊ मिट्टी मैदान में खेतों में बिछा देनी चाहिये थी वह नहरों या बाँधों में ही एकत्रित हो जाती है। उसको निकालने में बहुत अधिक खर्च करना पड़ता है।

सिंचाई से हानियों की तुलना में लाभ ही अधिक होते हैं अतः इन हानियों को अधिक महत्व नहीं दिया जाता।

सारांश

किसी भी देश में सिंचाई कितनी होती है यह जानने के लिए दो बातों पर ध्यान देना आवश्यक है—(अ) उस देश में सिंचाई की कितनी आवश्यकता है और (आ) वहाँ पर सिंचाई के साधन उपस्थित करने के लिए कितने साधन उपलब्ध हैं। इन दोनों बातों को ध्यान से देखने से पता चलता है कि हमारे देश भारत में वर्षा की अनिश्चितता और असमान वितरण के कारण सिंचाई की आवश्यकता बहुत है और उत्तरी भारत के मैदान में नदियों द्वारा नहरें निकलने के साधन भी सुगम हैं। यही कारण है कि भारत में संसार के अन्य देशों से सबसे अधिक सिंचाई होती है।

स्थानीय सुविधाओं के अनुसार भारत के भिन्न भिन्न भागों में सिंचाई के साधन भी भिन्न हैं। मुख्यतः हमारे देश में सिंचाई के साधन तीन हैं:—

(अ) कुएँ:— इनके द्वारा लगभग अढ़ाई करोड़ एकड़ भूमि की सिंचाई की जाती है। उत्तर प्रदेश, पंजाब, मद्रास, बम्बई और राजस्थान में इनका प्रयोग अधिक होता है। उत्तर प्रदेश में बिजली के कुएँ भी हैं।

(आ) तालाब:— इनके द्वारा दक्षिणी भारत में विशेषतः मद्रास, मैसूर और आंध्र प्रदेश में सिंचाई होती है। पथरीली भूमि होने से इन राज्यों में बाँध बनाने में सुविधा होती है। वर्षा के पानी से ये बाँध और तालाब भर जाते हैं और फिर साल भर पानी सिंचाई के काम आता है।

(इ) नहरें:— उत्तरी भारत के विशाल मैदान में नदियों से नहरें निकाल कर सिंचाई करते हैं। पहले पंजाब में बहुत नहरें थीं परन्तु अब उस राज्य का पर्याप्त भाग, जिसमें नहरों से सिंचाई होती है पाकिस्तान में चला गया है। भारत में स्थित पंजाब की नहरों के नाम ये हैं:—

पश्चिमी यमुना नहर, सरहिन्द नहर, ऊपरी बारी दोआब नहर और सतलज नहर।

उत्तर प्रदेश की नहरों में मुख्य ये हैं—गङ्गा की ऊपरी नहर, गंगा की निचली नहर, पूर्वी यमुना नहर, आगरा नहर, शारदा नहर आदि।

पंजाब और उत्तर प्रदेश के अतिरिक्त बिहार, उड़ीसा और मद्रास में भी कुछ नहरें हैं।

सिंचाई से कुछ हानियाँ भी होती हैं परन्तु लाभ अधिक होते हैं। सिंचाई पर ही हमारे यहाँ खेती की अधिकांश पैदावार निर्भर रहती है।

प्रश्न

१. क्या कारण है कि भारत में अन्य देशों से अधिक सिंचाई होती है ?

२. देश के विभाजन से सिंचाई के साधनों पर क्या असर पड़ा ?

३. उत्तरी भारत में नदियों से अधिक सिंचाई क्यों होती है ?

४. दक्षिणी भारत में कई नदियाँ हैं, फिर भी यहाँ तालाबों से सिंचाई होती है। ऐसा क्यों है ?

५. देश के किन-किन भागों में सिंचाई के साधनों की कमी है ? वहाँ सिंचाई के कौन-कौन से साधन काम में लिये जा सकते हैं ?

अध्याय १०

भारतीय कृषि की समस्याएँ

भारत में कृषि का बड़ा महत्वपूर्ण स्थान है। यहाँ के प्रायः तीन-चौथाई लोगों का धंधा खेती करना है। देश की बढ़ती हुई आबादी के लिये अन्न उत्पन्न करना उचित ही है। इसके अतिरिक्त बहुत से बड़े-बड़े कारखानों के लिये कच्चा माल भी खेतों से ही प्राप्त होता है। यही कारण है कि भविष्य में देश में कला-कौशल की विशेष उन्नति हो जाने पर भी भारत के लोगों का प्रमुख धन्धा खेती करना ही बना रहेगा। विदेशों के बड़े-बड़े कारखानों को भी कच्चा माल पहुँचाने में भारत का विशेष स्थान रहा है। हमारे यहाँ विश्व में सबसे अधिक गन्ना और तिलहन होता है। कपास, चाय, चावल और तम्बाकू पैदा करने में हमारा स्थान दूसरा है। पाट का उत्पादन भी हमारे यहाँ पर्याप्त होता है।

हमारी खेती की कुछ विशेषताएँ

भारतीय कृषि की कई विशेषताएँ हैं जिनमें मुख्य ये हैं:—

(१) अधिकांश भूमि में खाद्यान्न उत्पन्न होते हैं। जितनी भूमि में खेती होती है उसके लगभग ८०% भाग में खाद्यान्न बोये जाते हैं। कुल भूमि के ६०% भाग में केवल तीन अन्न चावल, गेहूँ और ज्वार-बाजरा पैदा होता है।

(२) भारत में एक ही खेत में वर्ष के भिन्न-भिन्न महीनों में अलग-अलग फसलें होती हैं। पाश्चात्य देशों में इसके विपरीत एक ही खेत में साल में केवल एक ही फसल होती है।

(३) खेती करने के तरीके पुराने हैं और मशीनों का प्रयोग नहीं होता। एक छोटा सा साधारण हल और दुर्बल बैलों की जोड़ी ही किसान का धन है। उन्हीं की सहायता से खेती की जाती है।

(४) किसान निर्धन होने के कारण खेतों में खाद का प्रयोग बहुत ही कम करता है। वैज्ञानिक ढंग से तैयार की हुई खाद तो उसे प्राप्त ही नहीं होती। सबसे सस्ती और आसानी से प्राप्त गोबर की खाद को किसान लकड़ी के बजाय जला देता है। फिर भी बिना खाद दिये उपज हो ही जाती है।

(५) खाद की कमी और पुराने ढङ्ग से खेती करने के कारण खेतों की प्रति एकड़ पैदावार बहुत कम है। निम्नलिखित अङ्कों से यह बात स्पष्ट हो जायगी कि अन्य देशों की ...रत में प्रति एकड़ पैदावार बहुत कम होती है:—

(वजन पौण्ड में)

देश का नाम—	गेहूँ	चावल	गन्ना	कपास
१. मिस्र..................	१,६१८	२,६६८	७०,३०२	५३५
२. जापान..............	१,७१३	३,४४४	४७,५३४	१६६
३. सं० रा० अमेरिका....	८१२	२,१८५	४३,२७०	२६८
४. चीन....................	६८६	२,४३३	—	२०४
५. भारत..................	६६०	१,२४०	३४,६४४	८६

(६) भारतीय किसान का पूर्ण सहारा पशु ही है। परन्तु फिर भी पशुओं के लिए खेतों में अलग चारा उत्पन्न नहीं किया जाता। गेहूँ, जौ, बाजरा आदि के पौधों के डण्ठल ही पशुओं का भोजन है।

(७) वर्षा के असमान वितरण और मानसून की अनियमितता के कारण देश के भिन्न भिन्न भागों में सिंचाई के साधनों का बहुत प्रयोग होता है।

(८) हमारे यहाँ के खेत बहुत छोटे-छोटे हैं। औसतन एक खेत तीन एकड़ से अधिक बड़ा नहीं होता जब कि अमेरिका का औसतन खेत १४५ एकड़, डेनमार्क का ४० एकड़, जर्मनी का २२ एकड़ और इंगलैंड का २० एकड़ होता है।

(९) भारत के कुल क्षेत्रफल के लगभग ४६% भाग में कृषि होती है। खेती किये जाने वाली भूमि का भी प्रायः आधा भाग केवल गंगा-सिंधु के मैदान में है।

(१०) देश के भिन्न-भिन्न भागों में जलवायु की विषमता होने से कृषि की उपज में भिन्नता है। देश के एक भाग में उष्ण कटिबन्ध की उपज चावल होती है तो दूसरे भाग में शीतोष्ण जलवायु की पैदावार गेहूँ होता है।

कृषि के प्रकार

देश की प्राकृतिक दशा, जलवायु, मिट्टी आदि में भिन्नता होने के कारण भारत के विभिन्न भागों में चार प्रकार की खेती होती है:—

१. आर्द्र खेती (Humid Farming):—जिन देशों में अधिक वर्षा होती है वहाँ बिना सिंचाई के ही वर्षा के पानी से खेती होती है। उत्तरी-पश्चिमी यूरोप, उत्तरी-पूर्वी दक्षिणी अमेरिका और दक्षिणी-पूर्वी एशिया में अधिक वर्षा होने के कारण खेतों में पानी की कमी नहीं रहती और इस प्रकार थोड़ा सा परिश्रम करने से खेती हो जाती है।

भारत के मलाबार तट, दक्षिणी बंगाल, गङ्गा का मध्यवर्ती मैदान और मध्य प्रदेश में वर्षा की मात्रा पर्याप्त होने से आर्द्र खेती होती है। वहाँ की मुख्य उपज पाट और चावल है। इस प्रकार की खेती के लिए किसान को पानी की चिन्ता तो नहीं होती परन्तु उसको मिट्टी का उपजाऊपन स्थायी रखना पड़ता है। जितना पैसा उनको पानी एकत्रित करने

अध्याय १०

भारतीय कृषि की समस्याएँ

भारत में कृषि का बड़ा महत्वपूर्ण स्थान है। यहाँ के प्रायः तीन-चौथाई लोगों का धंधा खेती करना है। देश की बढ़ती हुई आबादी के लिये अन्न उत्पन्न करना उचित ही है। इसके अतिरिक्त बहुत से बड़े-बड़े कारखानों के लिये कच्चा माल भी खेतों से ही प्राप्त होता है। यही कारण है कि भविष्य में देश में कला-कौशल की विशेष उन्नति हो जाने पर भी भारत के लोगों का प्रमुख धन्धा खेती करना ही बना रहेगा। विदेशों के बड़े-बड़े कारखानों को भी कच्चा माल पहुँचाने में भारत का विशेष स्थान रहा है। हमारे यहाँ विश्व में सबसे अधिक गन्ना और तिलहन होता है। कपास, चाय, चावल और तम्बाकू पैदा करने में हमारा स्थान दूसरा है। पाट का उत्पादन भी हमारे यहाँ पर्याप्त होता है।

हमारी खेती की कुछ विशेषताएँ

भारतीय कृषि की कई विशेषताएँ हैं जिनमें मुख्य ये हैं:—

(१) अधिकांश भूमि में खाद्यान्न उत्पन्न होते हैं। जितनी भूमि में खेती होती है उसके लगभग ८०% भाग में खाद्यान्न बोये जाते हैं। कुल भूमि के ६०% भाग में केवल तीन अन्न चावल, गेहूँ और ज्वार-बाजरा पैदा होता है।

(२) भारत में एक ही खेत में वर्ष के भिन्न-भिन्न महीनों में अलग-अलग फसलें होती हैं। पाश्चात्य देशों में इसके विपरीत एक ही खेत में साल में केवल एक ही फसल होती है।

(३) खेती करने के तरीके पुराने हैं और मशीनों का प्रयोग नहीं होता। एक छोटा सा साधारण हल और दुर्बल बैलों की जोड़ी ही किसान का धन है। उन्हीं की सहायता से खेती की जाती है।

(४) किसान निर्धन होने के कारण खेतों में खाद का प्रयोग बहुत ही कम करता है। वैज्ञानिक ढंग से तैयार की हुई खाद तो उसे प्राप्त ही नहीं होती। सबसे सस्ती और आसानी से प्राप्त गोबर की खाद को किसान लकड़ी के बजाय जला देता है। फिर भी बिना खाद दिये उपज हो ही जाती है।

(५) खाद की कमी और पुराने ढङ्ग से खेती करने के कारण खेतों की प्रति एकड़ पैदावार बहुत कम है। निम्नलिखित अङ्कों से यह बात स्पष्ट हो जायगी कि अन्य देशों की तुलना में भारत में प्रति एकड़ पैदावार बहुत कम होती है:—

(वजन पौण्ड में)

देश का नाम—	गेहूँ	चावल	गन्ना	कपास
१. मिस्र	१,९१८	२,६६८	७०,३०२	५३५
२. जापान	१,७१३	३,४४४	४७,५३४	१६६
३. सं० रा० अमेरिका	८१२	२,१८५	४३,२७०	२६८
४. चीन	९८९	२,४३३	—	२०४
५. भारत	६६०	१,२४०	३४,६४४	८९

(६) भारतीय किसान का पूर्ण सहारा पशु ही है। परन्तु फिर भी पशुओं के लिए खेतों में अलग चारा उत्पन्न नहीं किया जाता। गेहूँ, जौ, बाजरा आदि के पौधों के डण्ठल ही पशुओं का भोजन है।

(७) वर्षा के असमान वितरण और मानसून की अनियमितता के कारण देश के भिन्न भिन्न भागों में सिंचाई के साधनों का बहुत प्रयोग होता है।

(८) हमारे यहाँ के खेत बहुत छोटे-छोटे हैं। औसतन एक खेत तीन एकड़ से अधिक बड़ा नहीं होता जब कि अमेरिका का औसतन खेत १४५ एकड़, डेनमार्क का ४० एकड़, जर्मनी का २२ एकड़ और इंगलैंड का २० एकड़ होता है।

(९) भारत के कुल क्षेत्रफल के लगभग ४६% भाग में कृषि होती है। खेती किये जाने वाली भूमि का भी प्रायः आधा भाग केवल गंगा-सिंधु के मैदान में है।

(१०) देश के भिन्न-भिन्न भागों में जलवायु की विषमता होने से कृषि की उपज में भिन्नता है। देश के एक भाग में उष्ण कटिबन्ध की उपज चावल होती है तो दूसरे भाग में शीतोष्ण जलवायु की पैदावार गेहूँ होता है।

कृषि के प्रकार

देश की प्राकृतिक दशा, जलवायु, मिट्टी आदि में भिन्नता होने के कारण भारत के विभिन्न भागों में चार प्रकार की खेती होती है:—

१. आर्द्र खेती (Humid Farming):—जिन देशों में अधिक वर्षा होती है वहाँ बिना सिंचाई के ही वर्षा के पानी से खेती होती है। उत्तरी-पश्चिमी यूरोप, उत्तरी-पूर्वी दक्षिणी अमेरिका और दक्षिणी-पूर्वी एशिया में अधिक वर्षा होने के कारण खेतों में पानी की कमी नहीं रहती और इस प्रकार थोड़ा सा परिश्रम करने से खेती हो जाती है।

भारत के मलाबार तट, दक्षिणी बंगाल, गङ्गा का मध्यवर्ती मैदान और मध्य प्रदेश में वर्षा की मात्रा पर्याप्त होने से आर्द्र खेती होती है। वहाँ की मुख्य उपज पाट और चावल है। इस प्रकार की खेती के लिए किसान को पानी की चिन्ता तो नहीं होती परन्तु उसको मिट्टी का उपजाऊपन स्थायी रखना पड़ता है। जितना पैसा उनको पानी एकत्रित करने

में खर्च करना पड़ता है उतना ही उसको खेत में खाद देने में व्यय करना चाहिए। परन्तु भारतीय किसान निर्धन होने के कारण ऐसा नहीं कर सकता और इसी कारण यहाँ आर्द्र खेती द्वारा कम ही उपज होती है।

आर्द्र खेती में एक कठिनाई भी है। वह यह है कि अधिक वर्षा होने से खेतों में घास फांस आदि उग जाते हैं। उनको काटकर खेत को साफ करने में किसान को बहुत परिश्रम करना पड़ता है।

२. सिंचाई द्वारा खेती (Irrigation Farming):—जिन देशों में वर्षा कम हो (प्रायः ४० इंच से कम) परन्तु जहाँ पर नदियों, तालाबों, कुओं आदि के पानी को काम में लेने में सहूलियत हो वहाँ सिंचाई द्वारा खेती की जाती है। विश्व के प्राचीन देश मिस्र, भारत, चीन, ईराक, यूनान आदि में सिंचाई द्वारा अच्छी खेती होती थी और अब भी हो रही है।

जिन देशों में मानसून से वर्षा होती है वहाँ सिंचाई की और भी अधिक आवश्यकता होती है। यहाँ वर्षा साल के कुछ ही महीनों में होती है और अन्य महीनों में तापक्रम की अवस्था कई प्रकार के पौधे उत्पन्न करने के लिए उपयुक्त होती है। यही कारण है कि भारत में विश्व के सब देशों से अधिक सिंचाई होती है। गंगा का पश्चिमी मैदान, सिन्धु का सम्पूर्ण मैदान तथा दक्षिणी भारत की नदियों के डेल्टा प्रदेश में खूब सिंचाई होती है। भारत का अधिकांश गेहूँ, गन्ना, कपास और चावल की उपज सिंचाई करके ही की जाती है। इन्हीं भागों में देश के अधिकांश लोग रहते हैं।

सिंचाई द्वारा खेती करने से खर्च तो अधिक करना पड़ता है परन्तु इसमें सबसे बड़ी सुविधा यह होती है कि खेतों में पानी वितरण करना किसान के हाथ में रहता है। उसको वर्षा की प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती और जिस समय खेत को पानी की आवश्यकता हुई उसी समय पानी दे दिया जाता है। यही कारण है कि सिंचाई द्वारा खेती करने से खेती की प्रति एकड़ उपज अधिक होती है। वहाँ पैदावार भी साल भर होती रहती है।

३. शुष्क खेती (Dry Farming):—विश्व के जिन भागों में वर्षा कम होती है (प्रायः २० इंच या इससे भी कम) वहाँ इस प्रकार की खेती होती है। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका का उत्तरी-पश्चिमी भाग, आस्ट्रेलिया, दक्षिणी अफ्रीका तथा पश्चिमी एशिया में शुष्क खेती अधिक होती है।

भारत के कम वर्षा के भागों में भी जैसे पश्चिमी उत्तर प्रदेश, पंजाब, राजस्थान, सौराष्ट्र आदि में इस प्रकार की खेती होती है। इस खेती को करने में किसान को कठिन परिश्रम करना पड़ता है। शुष्क खेती के लिए कई साधन होने चाहिये जैसे मिट्टी उपजाऊ हो, मिट्टी में नमी ठहर सके, खेत बोने से पहले कुछ वर्षा अवश्य हो जाय, तापक्रम अधिक हो जिससे अनाज शीघ्र ही पक जाय आदि। खेती के इस तरीके में किसान खेत को हल से जोत कर तैयार रखता है। जब वर्षा होती है तो पानी जमीन के भीतर प्रवेश करता है। फिर मिट्टी

पर पटेला फेर दिया जाता है। ऐसा करने से भूमि में नमी बनी रहती है। तापक्रम की अवस्था देखकर खेत में बीज बो दिया जाता है। कुछ गेहूँ, बाजरा, जौ आदि इस प्रकार उत्पन्न किया जाता है।

शुष्क खेती यद्यपि बहुत कम भूमि में होती है परन्तु फिर भी इसके द्वारा बेकार पड़ी हुई भूमि काम में ली जा सकती है। अभी हाल ही में बम्बई राज्य में इस तरीके से खेती करके अच्छी पैदावार की जाने लगी है।

४. **पहाड़ी खेती (Terrace Cultivation):**—पहाड़ी भागों में रहने वाले लोगों का जीवन बड़ा कठिन होता है। खेती करने के लिए वहाँ पर मैदान नहीं होता। फिर वहाँ के निवासी परिश्रम करके पहाड़ी ढालों पर सिढ़ीनुमा (Terraces) खेत तैयार कर लेते हैं। ये खेत बहुत छोटे-छोटे होते हैं। वर्षा होने पर पहाड़ी ढाल पर बहता हुआ पानी इन खेतों में होकर निकलता है। अतः पौधों की सिंचाई हो जाती है। सबसे बड़ी कठिनाई इन खेतों में यह है कि बहते हुये पानी के साथ कंकड़ पत्थर आकर इन खेतों में एकत्रित हो जाते हैं जिन्हें दूर करने में बहुत परिश्रम करना पड़ता है। दूसरी कठिनाई यह है कि ढालू होने से मिट्टी का उपजाऊ तत्व पानी के साथ बहता रहता है। उसकी पूर्ति के लिए खेतों को बहुत कीमती खाद देनी पड़ती है।

आसाम में चाय की उपज पहाड़ी खेतों से ही मिलती है। इसी प्रकार हिमालय के निचले ढालों पर चावल तथा आलू की खेती की जाती है। जापान, चीन तथा इन्डोनेशिया में भी इस प्रकार की खेती प्रचलित है।

फसलें

कुछ पौधों के लिए अधिक तापक्रम की आवश्यकता होती है और कुछ के लिए कम। कुछ पौधे अधिक पानी माँगते हैं। कई पौधे अधिक वर्षा के कारण गल कर नष्ट हो जाते हैं। क्योंकि हमारे देश में साल भर के सभी महीनों का जलवायु एकसा नहीं है अतः यहाँ साल भर पैदावार एकसी नहीं होती। जलवायु पर आधारित होने के कारण हमारे यहाँ की फसलों को हम निम्नलिखित भागों में बाँट सकते हैं:—

(१) **खरीफ की फसलः**—इसको गर्मी की फसल भी कहते हैं। इसकी बुआई जून से अगस्त तक होती है। गर्मी का मानसून प्रारम्भ होने के पूर्व ही किसान अपने खेतों को तैयार रखते हैं और वर्षा प्रारम्भ होते ही बीज बो देते हैं। शरद ऋतु के प्रारम्भ होने से पूर्व इस फसल की कटाई हो जाती है। अच्छी वर्षा होने से इस फसल के लिए सिंचाई की कम आवश्यकता रहती है। खरीफ की फसल की मुख्य पैदावार चावल मकई, ज्वार, बाजरा, पाट, सन, कपास, गन्ना, तम्बाकू और तिलहन में तिल और मूँगफली है।

(२) **रबी की फसलः**—इसको शरद ऋतु की फसल भी कहते हैं। यह शरद ऋतु के प्रारम्भ में बोई जाती है और ग्रीष्म काल के प्रारम्भ में काट ली जाती है। प्रायः दीपावली

और होली के बीच का समय रबी की फसल में गिना जाता है। इन दिनों मद्रास राज्य में सर्दी की मानसून से वर्षा होती है परन्तु शेष भागों में वर्षा की कमी रहती है। यही कारण है कि रबी की फसल में सिंचाई की बहुत आवश्यकता होती है। रबी की फसल की मुख्य पैदावार गेहूँ, जौ, चना, आलू, अलसी और राई होती है।

इन दोनों फसलों के बीच में भी कई प्रकार की शाक-सब्जी, फल आदि की पैदावार होती है। इसको जायद की फसल कहते हैं परन्तु खरीफ और रबी की फसलों की पैदावार की तुलना में इसकी उपज नगण्य है।

भारत में जितनी भी खेती की उपज होती है उसका प्रायः दो-तिहाई तो खरीफ की फसल और एक-तिहाई रबी की फसल में गिना जाता है।

देश के सभी भागों में खेती की पैदावार एक सी नहीं होती। इसका कारण यह है कि किसी भाग की भूमि अधिक उपजाऊ है और किसी की कम। कहीं पर कम वर्षा होती है और कहीं पर अधिक। कहीं पर मैदान हैं और कहीं पर पर्वत और वन। इसलिए भारत के कुछ भागों में खेती अच्छी होती है और कुछ में बहुत ही कम।

भारत के उत्तम पैदावार के राज्य

(१) **उत्तर प्रदेशः**—इस राज्य में उपजाऊ भूमि तथा सिंचाई के उत्तम साधनों के कारण अच्छी पैदावार होती है। पश्चिमी भाग में कम वर्षा होने से नदियों से कई नहरें निकालकर खेतों में पानी पहुँचाया जाता है। इस राज्य में गेहूँ, कपास, गन्ना और तिलहन की खेती होती है।

(२) **बिहार राज्यः**—गङ्गा नदी के मध्य की घाटी में स्थित है और यहाँ की मिट्टी उपजाऊ है। यहाँ मुख्य पैदावार चावल, गन्ना और तम्बाकू है।

(३) **पश्चिमी बंगालः**—वर्षा की यहाँ कमी नहीं है और भूमि नदियों द्वारा लाई हुई महीन उपजाऊ मिट्टी से बनी है। यहाँ की मुख्य उपज चावल और पाट है।

(४) **पंजाबः**—इस राज्य में पहले बहुत ही कम खेती होती थी क्योंकि वर्षा की यहाँ कमी है। परन्तु सिंचाई की नहरों के बन जाने से अब यहाँ बहुत अधिक खेती होने लगी है। अब तो पंजाब भारत का 'अन्न भण्डार' कहलाता है। पंजाब में गेहूँ, कपास और गन्ने की अच्छी खेती होती है।

(५) **बम्बईः**—इस राज्य के काली मिट्टी के प्रदेश में कपास की उपज अच्छी होती है। इस मिट्टी की विशेषता के कारण सिंचाई की आवश्यकता नहीं रहती। कपास की उपज के कारण ही बम्बई और अहमदाबाद में कपड़े की मिलें चलती हैं। मध्य प्रदेश का कपास पैदा करने वाला भाग भी इस प्रदेश से मिलता हुआ है।

(६) मद्रासः—इस राज्य के पूर्वी समुद्र किनारे का मैदान बहुत उपजाऊ है। वहाँ सर्दी के दिनों में वर्षा भी हो जाती है। नदियों के डेल्टों में सिंचाई करके खेती की जाती है। मद्रास में चावल, कपास और मूंगफली की खेती अच्छी होती है। आजकल वहाँ गन्ना और पाट भी होने लगा है। पहाड़ी ढालों पर चाय के बगीचे हैं। वहाँ कहवा और रबर भी होता है। मद्रास में गर्म मशाले की उपज भी अच्छी होती है।

(७) केरल राज्य—भारत के पश्चिमी समुद्र किनारे का मैदान इस राज्य में अधिक चौड़ा है। भूमि यहाँ की उपजाऊ है और वर्षा अच्छी होती है। यहाँ चावल, नारियल आदि की अच्छी पैदावार होती है। उच्चकोटि की खेती होने से ही राज्य में प्रतिवर्ग मील आबादी अधिक है।

भारत के निम्नलिखित राज्यों में कठिनाई से खेती होती है:—

(१) आसामः—पहाड़ी भूमि होने से इस राज्य में खेती करने योग्य भूमि कम है। अधिक वर्षा होने से यहाँ की जलवायु भी स्वास्थ्य के लिए हानिप्रद है। भूमि भी वनों से आच्छादित है और उसको साफ करना कठिन है। पहाड़ी भागों में चाय होती है। ब्रह्मपुत्र की घाटी में चावल पैदा होता है परन्तु पहाड़ी भागों में आदिवासी कहीं कहीं वनों को जला कर खेती करते हैं।

(२) मध्य प्रदेशः—राज्य की भूमि पठारी है। छोटा नागपुर के पटारी भाग में वर्षा तो अच्छी हो जाती है परन्तु ऊँची-नीची भूमि होने के कारण खेती करने में कठिनाई होती है। वनों को साफ करने में भी कठिनाई होती है और खर्च अधिक पड़ता है। इस राज्य के काली मिट्टी के भाग को छोड़कर अन्य स्थानों की मिट्टी भी अधिक उपजाऊ नहीं है। यदि भूमि को ट्रैक्टरों से समतल कर दिया जाय तो इस राज्य में खेती अच्छी हो सकती है।

(३) उड़ीसाः—समुद्र तट के मैदान में अच्छी खेती हो जाती है परन्तु राज्य के शेष भाग में पहाड़ी भूमि होने के कारण खेती नहीं होती। इसके अतिरिक्त इस राज्य में अनियमित वर्षा होने से अकाल पड़ते रहते हैं। आजकल अकाल पीड़ित क्षेत्रों में सिंचाई की योजनाएँ तैयार की जा रही हैं। परन्तु इस राज्य में लोहा अधिक मिलने के कारण भविष्य में खेती की अपेक्षा कला-कौशल की उन्नति अधिक होने की सम्भावना है।

(४) राजस्थान.—राज्य का उत्तरी पश्चिमी भाग मरुस्थल है। कम वर्षा होने से वहाँ बाजरा के अतिरिक्त कोई अन्य उपज नहीं होती। दक्षिणी-पूर्वी भाग में अरावली पर्वत की शाखायें फैली हुई हैं। वहाँ वर्षा ठीक हो जाती है परन्तु पहाड़ी भूमि होने के कारण खेती करने में कठिनाई होती है। केवल पूर्वी भाग में मैदान होने से कुछ उपज हो जाती है।

(५) आंध्र प्रदेश:—केवल आंध्र ही नहीं परन्तु दक्षिण के पटार के सभी राज्यों में जो कि पूर्वी घाट और पश्चिमी घाट के बीच में स्थित हैं, खेती कठिनाई से होती है। इसके दो कारण हैं—प्रथम तो वहाँ की भूमि पथरीली होने के कारण खेती करने योग्य कम है। द्वितीय

वहाँ वर्षा कम होती है। फिर भी तालाबों से सिंचाई करके कपास, ज्वार, मूंगफली आदि की पैदावार की जाती है।

भारतीय कृषि की अवनति के कारण और उसके निवारण के उपाय

भारत कृषि-प्रधान देश है। यहाँ के किसान परिश्रम भी रात दिन करते हैं। फिर भी यहाँ खेती की पैदावार पाश्चात्य देशों की तुलना में बहुत कम होती है। इसके कई कारण हैं:—

(१) निर्धनता (Poverty):—भारत का किसान गरीब है उसकी कुल सम्पत्ति कुछ ही रुपयों की होती है। गरीबी के कारण खेती करने में कई कमियाँ रह जाती हैं जैसे—

(अ) खेती का सम्पूर्ण बोझ बैलों पर होता है। यह जानते हुए भी भारतीय किसान अपने बैलों को खाने के लिए अच्छा चारा नहीं दे सकता। यही कारण है कि वे दुबले-पतले होते हैं और दिन भर में बहुत थोड़ा काम करते हैं।

(आ) किसान जलाने के लिए लकड़ी नहीं खरीद सकता और अपने घर में प्राप्त की हुई गोबर की खाद चूल्हे में जलाता है। दूसरी खाद खरीदने की सामर्थ्य भी उसमें नहीं है। यही कारण है कि खेती में कम उपज होती है।

(इ) खेत को जोतने के लिए यहाँ बहुत ही मामूली हल होते हैं क्योंकि उत्तम हल कीमती होते हैं। इन हलों से जमीन की खुदाई कम होती है और पौधे अच्छी तरह से नहीं पनपते।

(ई) निर्धन होने के कारण किसान को बोने के लिए अच्छा बीज नहीं मिलता। साधारण बीज भी समय पर नहीं मिलता क्योंकि साहूकार लोग किसान को देर से बीज देते हैं।

(उ) गरीब होने से किसान को पोषक भोजन नहीं मिलता और उसका शरीर दुबला-पतला रहता है। उसमें कार्य करने की क्षमता कम रह जाती है।

निर्धनता निवारण के लिए ऐसा उपाय किया जाय कि किसान अपने अवकाश के समय में कोई ग्रामोद्योग का कार्य करे। उससे उसकी कुछ आमदनी हो जायगी। औजार, बीज आदि अच्छे हों और बीज समय पर मिले—इसके लिए सहकारी संस्थाएँ स्थापित की जाएँ। ऐसा होने से किसान साहूकार के पंजे से छूट जायगा।

(२) अशिक्षा (Illiteracy):—किसान को कृषि सुधार-सम्बन्धी चाहे कितना ही उपदेश दिया जाय, यदि वह शिक्षित नहीं है तो उसके समझ में कुछ भी नहीं आएगा। उत्तम प्रकार का खाद खेत में किस प्रकार से दिया जाता है, बाजार में किस उपज की अधिक मांग है, खेती को नष्ट करने वाले कीटाणुओं का किस प्रकार मुकाबिला किया जाय आदि बातें शिक्षित किसानों के ही समझ में आ सकती हैं।

अशिक्षा निवारण के लिए सरकार की ओर से प्रारंभिक शिक्षा अनिवार्य कर देनी चाहिए। इसके अतिरिक्त प्रत्येक गाँव में एक छोटा पुस्तकालय हो जिसमें विशेषतः कृषि-सम्बन्धी पुस्तकें

और समाचार पत्र हों। नवीन तरीकों से खेती करने की शिक्षा देने के लिए प्रत्येक गाँव में एक शिक्षक भी नियुक्त करना चाहिए। आजकल सामुदायिक-विकास-क्षेत्रों में ऐसा किया जा रहा है।

(३) सामाजिक कुरीतियाँ (Social Evils):—हमारे भारतीय किसानों में कई सामाजिक कुरीतियाँ हैं। बाल-विवाह का अधिक प्रचार है। इससे सन्तान दुर्बल होती है और उम्र भी कम होती है। इसी प्रकार वृद्ध-विवाह भी कुरीति है। मृत्युभोज की प्रथा भी बहुत बुरी है। इन सामाजिक कुरीतियों के कारण किसान बहुत सा धन व्यर्थ में ही खर्च करता है। समाज में अपनी स्थिति रखने के लिए उसको ऐसा करना पड़ता है। वह कर्ज लेता है और फिर अपने जीवन भर उससे पीछा नहीं छुड़ा सकता। इसीलिए तो कहा गया है कि भारतीय किसान ऋण में ही उत्पन्न होता है और ऋण में ही उसकी मृत्यु हो जाती है।

सामाजिक कुरीतियों के निवारण के लिए किसानों को शिक्षित किया जाय और बुरी प्रथाओं को रोकने के लिए सरकार की ओर से नियम बनायें जायँ। उन नियमों को उल्लंघन करने वालों को दण्ड दिया जाय।

(४) रूढ़िवादिता (Conservatism):—हमारे किसानों के मस्तिष्क में रूढ़िवाद जड़ जमाये रखता है। किसान लकीर का फकीर होता है और पुराने रीतिरिवाजों को छोड़ने में बहुत संकोच करता है। खेती में नये सुधार करना वह उचित नहीं समझता। अपने पूर्वजों के पथ पर चलना उसका धर्म है। हां, यदि वह सही मार्ग पर चले तो यह बहुत उत्तम बात है। अच्छी बातों को तो अवश्य ग्रहण करना चाहिए। परन्तु भारतीय किसान का पुराना तरीका हानिप्रद होने पर भी उसे वह न त्यागेगा। वह बड़ा अन्धविश्वासी होता है। आधुनिक ढंग से खेती करने में उसको एतराज होता है।

रूढ़िवादिता को मिटाने का सबसे बड़ा उपाय शिक्षा का प्रचार करना ही है।

(५) भूमि के छोटे छोटे टुकड़े (Sub-division and Fragmentation of Holdings):—भारत में खेत बहुत छोटे छोटे हैं। यही कारण है कि यहां पर खेती बड़े पैमाने पर नहीं हो सकती। छोटे खेतों में मशीनों का प्रयोग नहीं हो सकता। कई खेत तो दो दो तीन-तीन एकड़ के ही होते हैं। इन छोटे खेतों के भी दिन प्रतिदिन और टुकड़े हो रहे हैं और किसान की सन्तानें उनका बँटवारा कर लेती हैं। देश की बढ़ती हुई आबादी खेत के छोटे-छोटे टुकड़े करने का प्रमुख कारण है।

छोटे खेतों को मिलाकर बड़े बड़े खेत बना देने चाहिए। सरकार की ओर से ऐसे नियम बनें कि छोटे से छोटा खेत अमुक क्षेत्रफल का हो। पंजाब में कुछ संस्थाओं ने खेतों के छोटे छोटे टुकड़ों को मिलाने में अच्छा योग दिया है। देश के अन्य राज्यों तथा गांवों में पंचायतों द्वारा भी यह काम अच्छी तरह से हो सकता है।

(६) कर वसूली का दोषपूर्ण तरीका (Defective system of Land Tenure):—भारत के अधिकांश भागों में खेती करने वाला किसान खेत का मालिक नहीं

होता था। खेत के बोने के बदले में वह भूमि के स्वामी को कुछ कर देता था। कर वसूल करने के देश के भिन्न-भिन्न भागों में अलग-अलग तरीके थे। किसान कर तो देता रहता परन्तु उसको यह पता नहीं रहता कि वह खेत को कितने दिन और बोएगा। जमीनदार जब चाहे उससे खेत छीन लेते थे। यही कारण है कि किसान अपने खेत को सदा दूसरों का ही समझता रहा और उसमें कोई सुधार नहीं करता। खेत में वृक्ष लगाना, खाद देना आदि की ओर उसकी विशेष रुचि नहीं रहती।

अब जमींदारी प्रथा समाप्त हो गई है अतः किसान को अपने खेत को सुधारने में पूर्ण स्वतन्त्रता है।

(७) कारखानों की कमी (Lack of industrialization):—भारत में कारखानों की संख्या कम है इसलिए लोगों को विवश होकर खेती पर ही निर्वाह करना पड़ता है। ज्यों ज्यों आबादी बढ़ती जाती है, यहां के खेतों का बँटवारा होता जाता है और खेत छोटे होते जाते हैं।

देश में और अधिक कारखाने खोलने चाहिए जिससे खेती करने वाले कई लोग उनमें काम करने लग जायेंगे और खेतों पर कम लोग होने से आराम से रहेंगे। कारखानों के खुलने से उनके लिए कच्चे माल की आवश्यकता होगी जिसकी पूर्ति करने के लिए खेती में वृद्धि होगी।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना में इस कमी की पूर्ति की जा रही है अर्थात् उद्योग धन्धों को प्रोत्साहन दिया जा रहा है।

(८) विदेशी सत्ता (Foreign Government):—देश को स्वतन्त्रता मिलने से पहले यहां अंग्रेजों का राज्य था। उनकी विदेशी नीति के कारण देश में कृषि उन्नति न हो सकी। अधिकतर खेती कच्चे माल की उत्पत्ति के लिए होती थी। कच्चा माल विदेशों को भेज दिया जाता था जिससे वहां के कारखाने चलते थे। उन्होंने अपने ही दृष्टिकोण से खेती को देखा।

परन्तु अब देश को पूर्ण स्वतन्त्रता मिल गई है। अब हम विदेशियों को दोष नहीं दे सकते। यदि खेती की उन्नति अब न हो सकी तो यह हमारा ही दोष होगा—इसमें विदेशियों की कोई रुकावट नहीं है।

स्वतंत्रता मिलने के पश्चात् प्रथम पंचवर्षीय-योजना-काल में खेती में पर्याप्त सुधार हुआ।

(९) जलवायु के दोष (Climatic Drawbacks):—हमारे यहां गर्मी बहुत पड़ती है इसलिए खेतों में साल भर एक सी गति के साथ काम नहीं हो सकता। अधिक गर्मी पड़ने से कभी कभी अनाज का दाना नियत समय से पहले ही पक जाता है और कण पतला हो जाता है। इसी प्रकार कभी कभी पाला भी पड़ता है जिससे फसल नष्ट हो जाती है। मानसून की वर्षा भी कभी-कभी खेती में बाधक होती है। वर्षा अनिश्चित होने से या तो

खेतों को ठीक समय पर पानी मिलता ही नहीं या आवश्यकता न होने पर भी पानी बरसने लगता है। कभी-कभी जोर से आँधियाँ चलने लगती हैं जिनसे पौधे भूमि पर गिर जाते हैं।

जलवायु के दोषों का निवारण करना मनुष्य की शक्ति से बाहर है। हाँ, वर्षा की अनियमितता से बचने के लिए सिंचाई के साधनों का प्रयोग किया जा सकता है जिनके कारण खेतों को समय पर पानी मिल जाये।

(१०) **अन्य कारण (Other Causes)**:—देश के सभी भागों में भूमि एक सी नहीं है। हिमालय प्रदेश तथा दक्षिणी भारत की भूमि पथरीली है। इसीलिए वहाँ खेती करने में कठिनाई होती है। कई जगह भूमि ऊबड़-खाबड़ है। वहाँ हल जोतने में बाधा उपस्थित होती है। कई स्थानों की भूमि उपजाऊ है परन्तु वहाँ सिंचाई के साधन न होने से खेती होती ही नहीं। मिट्टी का घुलाव (Soil Erosion) भी मिट्टी के उपजाऊपन को कम करता है।

पथरीली भूमि में खाद का मिश्रण करने से उपज बढ़ सकती है। ऊबड़-खाबड़ भूमि ट्रैक्टरों की सहायता से समतल बनाई जा सकती है। सिंचाई के साधन भी बढ़ाये जा सकते हैं और सरकार की ओर से बढ़ाये जा रहे हैं। मिट्टी के घुलाव और बहाव को रोकने के लिए नदियों पर बाँध बनाकर पानी के बहाव को कम किया जा सकता है। ऊसर भूमि खाद देकर तैयार की जा सकती है।

वास्तव में कृषि की उन्नति ही सम्पूर्ण भारत की उन्नति है। इसी पर देश की समृद्धि निर्भर है।

सारांश

(१) **खेती की विशेषताएँ**:—भारतीय कृषि की कई विशेषताएँ हैं जैसे—अधिकांश भूमि में खाद्यान्न उत्पन्न किया जाता है, साल में कई फ़सलें होती हैं, खेती करने के तरीके पुराने हैं, खाद का प्रयोग कम होता है, मशीनों के स्थान पर पशुओं की सहायता से खेती होती है, खेत छोटे-छोटे होते हैं आदि-आदि।

(२) **कृषि के प्रकार**:—हमारे यहाँ की खेती के चार प्रकार हैं-(अ) आर्द्र खेती वहाँ होती है जहाँ अधिक वर्षा होती हो, (आ) कम वर्षा वाले भागों में सिंचाई करके खेती की जाती है, (इ) कहीं-कहीं पर वर्षा का पानी खड्डों में एकत्रित कर लिया जाता है और उसके सूख जाने पर वहाँ खेती कर लेते हैं। इसे शुष्क खेती कहते हैं और (ई) पहाड़ी ढाल पर सिड्ढीनुमा खेत तैयार कर खेती करते हैं।

(३) **फसलें**:—भारत में दो प्रकार की फसलें होती हैं—(अ) खरीफ की फसल—यह मानसून के दिनों में होती है। इसकी उपज चावल, मक्का, ज्वार, बाजरा, पाट, कपास, गन्ना आदि है। (आ) रबी की फसल—यह सर्दी के दिनों में होती है और इसके लिए सिंचाई की आवश्यकता होती है। इसकी मुख्य उपज गेहूँ, जौ, चना, आलू आदि हैं।

(४) **खेती के अनुसार भारतीय राज्यों का विभाजनः**—(अ) अच्छी पैदावार के राज्य ये हैं—बिहार, पश्चिमी बंगाल, पंजाब, बम्बई, मद्रास और केरल। यहाँ की भूमि उपजाऊ है, वर्षा अच्छी होती है या सिंचाई के उत्तम साधन हैं। (आ) कठिनाई से खेती करने वाले राज्य—आसाम, मध्य प्रदेश, उड़ीसा, राजस्थान और आंध्र प्रदेश हैं। वहाँ या तो पथरीली भूमि है या सिंचाई के साधन कम उपलब्ध हैं।

(५) **भारतीय कृषि की अवनति के कारणः**—(अ) किसान की निर्धनता, (आ) अशिक्षा, (इ) सामाजिक कुरीतियाँ, (ई) रूढ़िवादिता, (उ) भूमि के छोटे टुकड़े, (ऊ) कर वसूली के दोषपूर्ण तरीके, (ए) कारखानों की कमी, (ऐ) विदेशी सत्ता, (ओ) जलवायु के दोष और (औ) अन्य कारण जिनमें पथरीली भूमि, मिट्टी का घुलाव आदि हैं।

पंचवर्षीय योजना-काल में खेती में पर्याप्त सुधार किया जा रहा है।

प्रश्न

१. हमारे देश की खेती की क्या-क्या विशेषताएँ हैं ?
२. भारत में कितने प्रकार की खेती होती है ?
३. साल में कितनी फसलें होती हैं ? कौन-कौन सी ?
४. भारत के किन भागों में खेती करने में सहूलियत रहती है ? किन भागों में खेती करने में कठिनाई होती है ?
५. भारतीय खेती की अवनति के कौन-कौन से कारण हैं ? यहाँ की खेती की उन्नति किस प्रकार से की जा सकती है ?

अध्याय ११

कृषि की मुख्य उपज

हमारे यहाँ उत्तर में हिमालय से लेकर दक्षिण में कुमारी अन्तरीप तक कई प्रकार का जलवायु पाया जाता है। देश की मिट्टी भी कई प्रकार की है। यही कारण है कि हमारे यहाँ कई प्रकार की खेती की उपज होती है।

विभिन्न उपयोगों के आधार पर भारत की खेती की पैदावार निम्नलिखित भागों में बाँटी जा सकती है:—

[अ] खाद्यान्नः—जैसे चावल, गेहूँ आदि।

[आ] पेय पदार्थः—चाय, कहवा आदि।

[इ] रेशे वाली उपजः—कपास, पाट आदि।

[ई] व्यापारिक उपजः—तिलहन, तम्बाकू आदि।

[उ] फलः—आम, नारंगी, केला आदि।

प्रायः खाद्यान्न देश में काम में ले लिए जाते हैं। पेय पदार्थों का अधिकांश विदेशों को निर्यात किया जाता है। देश में कपड़े की मिलें खुल जाने से कपास अब यहीं काम आने लगी है। पाट बोरियाँ बनाने के काम में ली जाती है। तिलहन का अधिकांश बाहर भेजा जाता है। फलों की पैदावार की अभी यहाँ विशेष उन्नति नहीं हुई है।

यहाँ प्रत्येक पैदावार का संक्षिप्त वर्णन दिया जाता है।

[अ] खाद्यान्न

१—चावल

१. **साधारण परिचयः**—चावल की खेती भारत में बहुत प्राचीन काल से की जा रही है। एशिया के दक्षिणी-पूर्वी भाग अथवा मानसून प्रदेश में ही विश्व का अधिकांश चावल होता है। वहाँ की आबादी भी घनी है। इसी कारण से यह कहावत प्रचलित हो गई है कि विश्व की घनी आबादी और अधिक चावल पैदा करने वाले प्रदेश एक ही हैं। हमारे देश भारत में तो चावल बहुत ही पवित्र अन्न माना गया है। प्रायः प्रत्येक शुभ पर्व—विवाह, पूजन आदि—पर चावल का प्रयोग भारत के सभी भागों में किया जाता है।

२. **खेती की आवश्यकताएँ:**—(अ) जलवायुः—चावल उष्ण कटिबन्ध की उपज है अतः इसके लिए उष्ण तापक्रम की आवश्यकता होती है। साल का औसत तापमान

लगभग ८०° (फा०) होना चाहिये। इस पौधे के लिए पानी की आवश्यकता भी अधिक होती है। वर्षा का औसत ५० इंच से कम न हो। ८० और ५० इंच के बीच की वर्षा ठीक रहती है। जिन भागों में वर्षा कम होती हो परन्तु जहाँ सिंचाई के साधन उत्तम हों, वहाँ भी चावल होता है। मानसूनी वर्षा का चावल की खेती पर बहुत प्रभाव पड़ता है। जिस वर्ष मानसून कमजोर हो उस वर्ष चावल की खेती भी कम होती है।

(आ) मिट्टी:—चावल के लिए उपजाऊ मिट्टी चाहिये। नदियों द्वारा लाकर एकत्रित की हुई कच्छारी मिट्टी के इसके लिए बहुत उत्तम होती है। रेतीली मिट्टी चावल के लिए अच्छी नहीं होती। अधिकांश चावल मैदान में ही होता है परन्तु जिन पहाड़ी भागों में वर्षा और तापमान ठीक हो वहाँ पहाड़ी ढालों पर ऐसे बहुत से खेत हैं। मिट्टी में खाद देने से चावल की पैदावार बढ़ जाती है।

(इ) सस्ती मजदूरी:—चावल बोने के लिए मशीनों का प्रयोग नहीं किया जा सकता है। प्रारम्भ से अन्त तक सारा कार्य हाथों से ही किया जाता है। इसलिये चावल की खेती वहीं होगी जहाँ आबादी घनी हो।

चावल की फसल लगभग चार-पाँच महीनों में तैयार हो जाती है। जहाँ पानी की कमी नहीं है वहाँ साल में २-३ फसलें आसानी से हो जाती हैं।

३. खेती करने के तरीके:—चावल की खेती करने के भारत में तीन तरीके प्रचलित हैं:—

(अ) पौधा लगाकर (Transplantation):—यह तरीका बहुत प्रचलित है। पहले चावल को क्यारियों में बो देते हैं। जब पौधे की ऊँचाई १०-१२ इञ्च हो जाती है तो उसे जड़ समेत उखाड़ कर तैयार किए हुए दूसरे खेत में लगा देते हैं। एक पौधे और दूसरे पौधे के बीच में लगभग ६ इंच का अन्तर रखते हैं। इस प्रकार से खेती के लिए बहुत पानी चाहिए और मजदूरी सस्ती होनी चाहिए क्योंकि एक-एक पौधे को उखाड़ कर दूसरी जगह लगाने में समय लगता है और बहुत परिश्रम करना पड़ता है।

(आ) दाने को बिखेर कर (Broad-casting):—जिस स्थानों की भूमि अधिक उपजाऊ नहीं होती और जहाँ आबादी भी कम होती है वहाँ चावल को यों ही बिखेर देते हैं। वर्षा होने पर पौधा उग जाता है और पकने पर काट लिया जाता है। इस तरीके से खेती करना है तो आसान परन्तु इससे उपज कम होती है।

(इ) हल चलाकर (Drilling):—खेत को जोत कर हल चलाते समय दाना बोते जाते हैं। गेहूँ की खेती भी इसी भाँति होती है। दक्षिणी भारत में यह तरीका अधिक प्रचलित है।

४. चावल की फसलें:—हमारे यहाँ चावल की तीन मुख्य फसलें होती हैं:—

(अ) औस:—इसकी बुआई अप्रैल या मई में होती है और कटाई का समय अगस्त-सितम्बर है। इसकी खेती ऊँची भूमि पर होती है क्योंकि पौधा अपनी जड़ों में अधिक पानी को अधिक
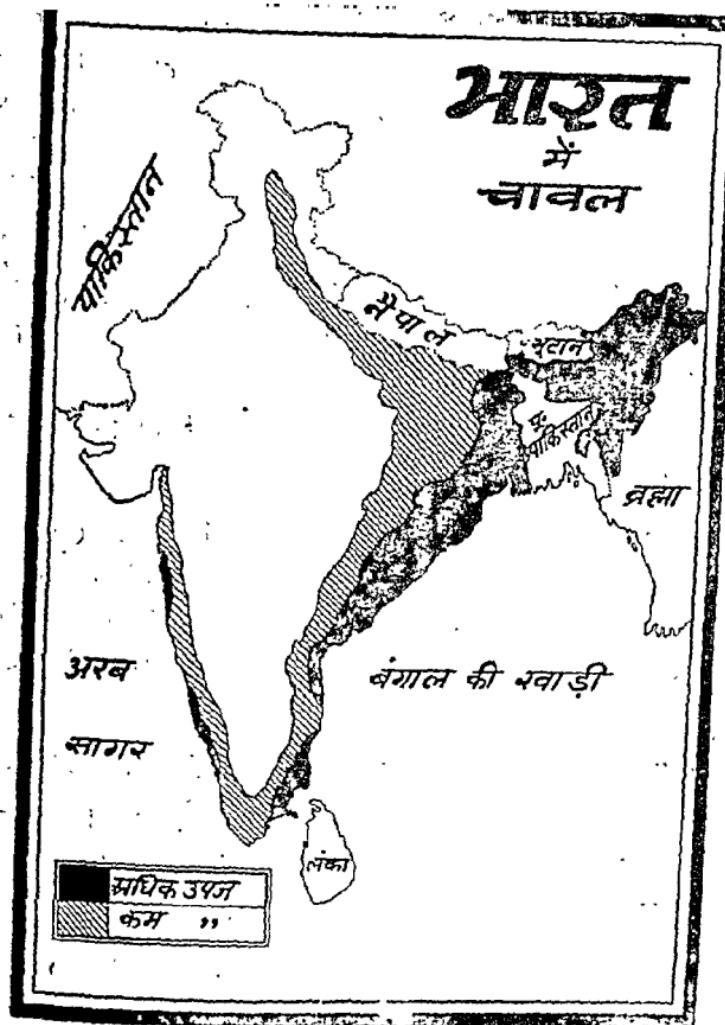
चित्र सं० २६. चावल की उत्पत्ति वाले क्षेत्र

समय तक सहन नहीं कर सकता। ऊँचाई के कारण मिट्टी अधिक उपजाऊ नहीं होती और चावल की किस्म भी ठीक ठीक नहीं होती।

(आ) अमन:—इसको सर्दी की फसल भी कहते हैं। इसको मई-जून में बो देते हैं और नवम्बर, दिसम्बर या जनवरी में काट लेते हैं। इस फसल के समय पौधों की जड़ों

में पानी रखते हैं। इसकी खेती मैदान में होती है। बंगाल में अधिकांश चावल इसी फसल का होता है। सम्पूर्ण भारत में जितना चावल पैदा होता है उसका तीन-चौथाई अमन का होता है।

(इ) बोरोः—इसको गर्मी की फसल भी कहते हैं। गर्मी के मानसून में खड्डों में पानी भरा रहता है परन्तु मानसून समाप्त होने पर जब पानी सूख जाता है तो वहाँ चावल बो देते हैं। इसकी बुआई प्रायः अक्टूबर मास में होती है और कटाई मार्च में। इस फसल के समय पानी की कमी रहती है। बोरो का चावल उत्तम कोटि का गिना जाता है और इसकी औसत प्रति एकड़ उपज भी बहुत होती है। परन्तु इसकी कुल पैदावार बहुत ही कम होती है।

५. कुल पैदावारः—विभाजन के पूर्व भारत में लगभग सात करोड़ तीस लाख एकड़ भूमि में चावल की खेती होती थी और अढ़ाई करोड़ टन चावल पैदा होता था। परन्तु अब चावल उत्पन्न करने वाले भाग का लगभग एक तिहाई अंश पाकिस्तान में चला गया है। सन् १९५७ में भारत में ७८,१७४ हजार एकड़ भूमि में चावल बोया गया और २८,१४२ हजार टन कुल उपज हुई। इस प्रकार देश के विभाजन के पश्चात भारत में चावल का उत्पादन बढ़ा दिया गया है।

६. उपज का वितरणः—समूचे देश में चावल बंगाल में अधिक होता है। दूसरा स्थान मद्रास का है। इनके अतिरिक्त बिहार, उत्तर प्रदेश, आसाम, मध्य प्रदेश, उड़ीसा और बम्बई में भी चावल की खेती होती है। भारत के केवल दो ही क्षेत्र ऐसे हैं जहाँ चावल बहुत कम होता है। वे हैं:—राजस्थान और काली मिट्टी का प्रदेश। वहाँ का जलवायु और मिट्टी चावल की उत्पत्ति के लिए अनुकूल नहीं है।

चावल की पैदावार के अनुसार भारत के विभिन्न राज्यों का क्रम इस प्रकार है:—

नाम राज्य—	देश की पैदावार का प्रतिशत—
बङ्गाल	३०%
मद्रास	२०%
बिहार	१२%
उत्तर प्रदेश	८%
आसाम	७%
मध्य प्रदेश	६%
उड़ीसा	५%
बम्बई	५%
	७%
	१००%

आसाम और उड़ीसा में चावल का महत्व इसलिए अधिक है कि वहाँ जितनी भूमि में खेती होती है उसके लगभग ८०% में केवल चावल बोया जाता है। बंगाल में खेती की जाने वाली भूमि के ६०% में चावल होता है।
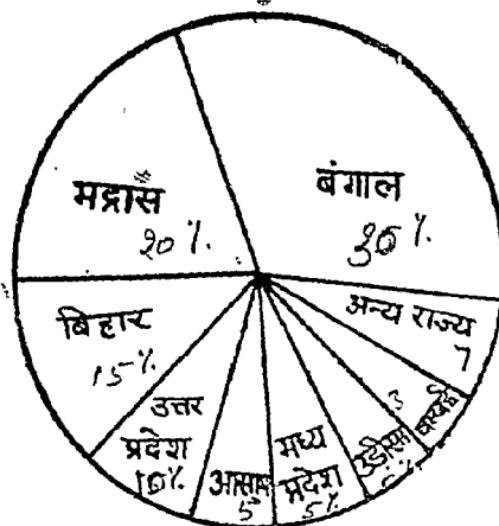
चित्र सं० २७. चावल उत्पन्न करने वाले राज्य

बङ्गाल में चावल की उपज अधिक होने पर भी वहाँ इसकी कमी रहती है। इसका कारण यह है कि यहाँ आबादी अधिक है। मध्य प्रदेश में आवश्यकता से अधिक चावल होता है जो अन्य राज्यों को भेज दिया जाता है। उत्तर प्रदेश, बिहार और बम्बई में चावल की कमी अधिक नहीं अखरती क्योंकि वहाँ गेहूँ की फसल होने से चावल पर ही निर्भर रहने की आवश्यकता नहीं।

७. व्यापार:—सन् १९३७ से पहले ब्रह्मा भी भारत का राजनैतिक विभाग था। उस समय देश में चावल की कमी नहीं थी और भारत से चावल निर्यात किया जाता था। ब्रह्मा के अलग होने पर चावल पैदा करने वाले क्षेत्र में कमी हो गई। तब से चावल बाहर से मंगवाना पड़ने लगा। सन् १९४७ में पाकिस्तान के अलग हो जाने से जो भूमि हमारे हाथ से चली गई उसमें ८० लाख टन चावल पैदा होता था। यद्यपि पूर्वी बंगाल की चावल खाने वाली आबादी भी पाकिस्तान में ही है परन्तु पश्चिमी पाकिस्तान में गेहूँ पैदा होने के कारण लोगों को चावल की विशेष आवश्यकता नहीं रहती। अकेले सिंध प्रान्त में पाँच लाख टन चावल होता है जिसमें से दो लाख टन खाने के बाद भी बच रहता है। भारत में चावल की कमी हो गई। बाहर भेजने के बजाय हम चावल बाहर से मँगाने लगे। परन्तु अब स्थिति ऐसी नहीं है। हमारे यहाँ चावल अधिक उत्पन्न होने लगा है और चावल का आयात बहुत कम हो गया है।

८. चावल की उपज में वृद्धि करने के उपाय:—भारत में अधिकांश व्यक्तियों का मुख्य भोजन चावल होने तथा इसकी देश में कमी होने के कारण चावल की उपज में वृद्धि करना अनिवार्य हो जाता है। हमारे देश में निम्नलिखित उपायों से चावल की पैदावार बढ़ाई जा सकती है:—

(अ) खेती में सुधार:—जिन राज्यों में अभी खेती होती है उनमें उत्तम कोटि के बीज तथा बढ़िया खाद देने से प्रति एकड़ चावल की उपज बढ़ाई जा सकती है। एक विद्वान का तो यहाँ तक कहना है कि ऐसा करने से भारत में चावल की उपज में ३०% वृद्धि की जा सकती है। इसमें उत्तम बीज बोने से प्रायः ५% की वृद्धि होती है। उत्तम खाद देने से २०% की वृद्धि होगी और बीमारी तथा कीटाणुओं से पौधे की रक्षा करने पर शेष ५% की वृद्धि हो जायगी। इस प्रकार से उपज में वृद्धि करने पर खर्च करना पड़ेगा। परन्तु चावल की समस्या को सुलझाना भी तो जरूरी है।

(आ) नई भूमि में खेती करना:—आसाम, उत्तरी बिहार तथा उत्तरी उत्तर प्रदेश और पश्चिमी समुद्र तट पर ऐसे कई स्थान हैं जहाँ का जलवायु तो चावल की फसल के अनुकूल है परन्तु वहाँ की भूमि पहाड़ी है। वहाँ पहाड़ी ढालों पर छोटे छोटे सिड्ढीनुमा खेत और अधिक संख्या में तैयार किये जा सकते हैं। परिश्रम करने से यह काम विशेष कठिन नहीं है।

(इ) आजकल जापानी तरीके से खेती करके चावल का उत्पादन बढ़ाया जा रहा है। देश के कई राज्यों में यह प्रयोग बहुत सफल हुआ है।

(ई) मछली पकड़ने का व्यवसाय बढ़ाया जाय। चीन, जापान आदि अन्य मानसूनी देशों के निवासियों का मुख्य भोजन चावल और मछली का मिश्रण है। भारत में भी लगभग ४०% लोग मछली खाते हैं। सौभाग्य से चावल भी मछली पकड़ने के क्षेत्रों के निकट ही होता है। मछली अधिक संख्या में पकड़ी जाने से चावल की बचत हो जायगी। मछली की खाद भी चावल की पैदावार में वृद्धि करेगी।

(उ) भूसा सहित चावल को धान कहते हैं। धान से दाना निकालने के बाद बचे हुए भाग का सदुपयोग करना चाहिए। अभी तक डंठल का विशेष उपयोग नहीं किया जाता। वह केवल झोंपड़ों पर डाल दिया जाता है। उससे कागज के पुट्ठे, प्लास्टिक की वस्तुएँ आदि तैयार की जा सकती हैं। इनके उपयोग से चावल के अतिरिक्त इन बचे हुये डंठल, भूसे आदि से भी किसान को कुछ आमदनी हो जायगी जिससे वह अपने खेती को कुछ खाद दे सकेगा।

२. गेहूँ

१. साधारण परिचय:—विश्व के अधिकांश मनुष्यों का भोजन गेहूँ ही है। उत्तरी भारत के लोग गेहूँ ही खाते हैं। हमारे देश में चावल के पश्चात् गेहूँ का ही स्थान है। चावल

की भाँति गेहूँ की खेती भी यहाँ बहुत ही प्राचीन काल से होती आ रही है। हमारे यहाँ अधिकांश गेहूँ सिंचाई करके पैदा किया जाता है। ठंडे देशों में तो गेहूँ की खेती गर्मी की ऋतु में होती है परन्तु हमारे यहाँ यह शीतकाल में होता है।
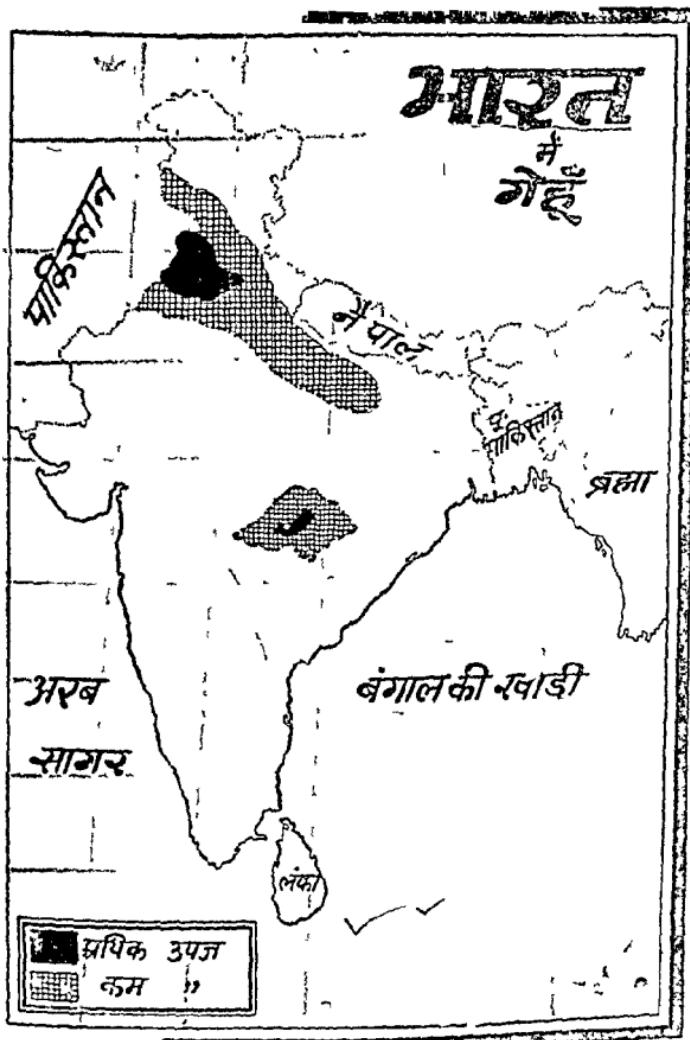
चित्र सं० २८. भारत में गेहूँ की खेती

२. आवश्यकताएँ:—गेहूँ शीतोष्ण कटिबन्ध का पौधा है। यही कारण है कि हमारे यहाँ यह रबी की फसल है।

[अ] जलवायु—तापक्रम:—गेहूँ के लिये ६०° फ० और ८०° फ० तापक्रम की आवश्यकता होती है। बोते समय कुछ ठण्ड होनी चाहिये और हवा में नमी हो तो और भी

उत्तम है। इसी कारण उस समय ६०° का तापमान आवश्यक है। हमारे यहाँ इसकी बुआई मानसून के समाप्त होने पर पहले से ही तैयार किए हुए खेतों में अक्टूबर में (दीपावली के आसपास) हो जाती है। पकते समय का जलवायु भिन्न होता है। उस समय कुछ गर्मी हो और वायु में शुष्कता हो। यही कारण है कि उस समय प्रायः ८०° फ० तापमान उत्तम होता है। हमारे देश में मार्च-अप्रेल (होली के निकट) का तापक्रम ऐसा ही होता है। उस समय गेहूँ की फसल तैयार हो जाती है।

[आ] पानी:—गेहूँ के लिए अधिक पानी की आवश्यकता नहीं होती। ४० इन्च से अधिक वर्षा के प्रदेशों में यह नहीं पनप सकता। जहाँ चावल की खेती होती है वहाँ गेहूँ बहुत ही कम होता है। परन्तु जिन भागों में गेहूँ की खेती होती है वहाँ वर्षा आवश्यकता से भी कम होती है। यही कारण है कि गेहूँ के लिए सिंचाई की अधिक आवश्यकता पड़ती है। प्रायः तीस-चालीस दिन के अन्तर पर पौधे को पानी देना पर्याप्त होता है। सर्दी के दिनों में उत्तरी पश्चिमी भारत में जो थोड़ी सी वर्षा हो जाती है वह गेहूँ की फसल के लिए बहुत ही उत्तम होती है।
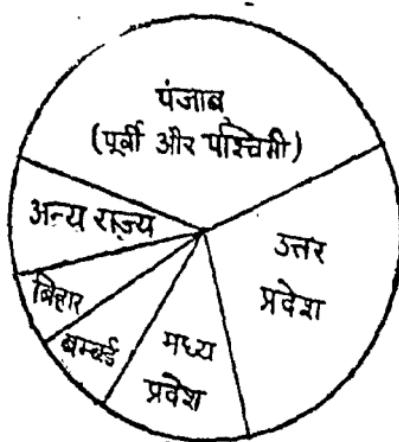
चित्र सं० २६. गेहूँ उत्पन्न करने वाले राज्य

[इ] मिट्टी:—गेहूँ की खेती के लिए उत्तम कोटि की दुमट मिट्टी चाहिये। गङ्गा-सिंधु के मैदान की मिट्टी गेहूँ के लिये अच्छी गिनी जाती है। अधिक कड़ी या अधिक नर्म मिट्टी गेहूँ के लिये ठीक नहीं होती। मिट्टी का नम होना पौधे के लिए हानिकारक है। गेहूँ की खेती के लिये मिट्टी में खाद देना आवश्यक है परन्तु भारतीय किसान निर्धन होने के कारण ऐसा करने में असमर्थ है।

३. कुल पैदावार:—विभाजन से पूर्व भारत का स्थान विश्व के गेहूँ उत्पन्न करने वाले देशों में चौथा था। यहाँ की कुल पैदावार लगभग एक करोड़ दस लाख टन थी और

प्रायः ३ करोड़ ४० लाख एकड़ भूमि में गेहूँ की खेती होती थी। परन्तु पाकिस्तान के बन जाने से गेहूँ पैदा करने वाली भूमि का पर्याप्त अंश भारत से अलग हो गया है। सन् १९५७ में भारत में ३२,८६१ हजार एकड़ भूमि में गेहूँ बोया गया और उस साल का उत्पादन ९,०६८ हजार टन हुआ।

४. उत्पत्ति के क्षेत्रः—क्योंकि शीतोष्ण कटिबन्ध की उपज है इसलिए इसकी ९०% पैदावार कर्क रेखा के उत्तर में अर्थात् उत्तरी भारत में होती है। पहले पंजाब में सब प्रान्तों से अधिक गेहूँ होता था क्योंकि वहाँ की उपजाऊ भूमि, आदर्श जलवायु और सिंचाई के उत्तम साधन गेहूँ के लिए अनुकूल हैं। परन्तु अब पंजाब में गेहूँ पैदा करने वाले क्षेत्र का बहुत बड़ा भाग पाकिस्तान में हैं। लायलपुर, मांटगुमरी, मुलतान आदि जिले, जहाँ गेहूँ बहुत होता है, पाकिस्तान वाले पंजाब में हैं। विभाजन के पश्चात् उत्तर-प्रदेश भारत में गेहूँ पैदा करने वाले स्थानों में प्रथम है। पंजाब का अब दूसरा स्थान है। उत्तर प्रदेश और पंजाब के अतिरिक्त बिहार, मध्य प्रदेश, बम्बई, राजस्थान आदि राज्यों में भी गेहूँ होता है।

पैदावार के अनुसार गेहूँ उत्पन्न करने वाले राज्यों का क्रम इस प्रकार है:—

नाम राज्य	देश की कुल उत्पत्ति का प्रतिशत
उत्तर प्रदेश	४९%
पंजाब (भारत)	२१%
मध्य प्रदेश	१०%
बम्बई	७%
बिहार	६%
राजस्थान	५%
अन्य राज्य	२%
	१००%

इस प्रकार उत्तर प्रदेश ही सबसे अधिक गेहूँ पैदा करता है। राज्य के पश्चिमी भाग (प्रयाग से पश्चिम में) में भूमि, जलवायु आदि गेहूँ के लिए अनुकूल हैं। पूर्वी भाग में अधिक वर्षा हो जाने के कारण गेहूँ नहीं पनप सकता अतः वहाँ चावल की खेती होने लगी है। उत्तर-प्रदेश के देहरादून, सहारनपुर, मुजफ्फरनगर, मेरठ, मुरादाबाद, इटावा, शाहजहाँपुर, बदायूँ आदि जिले गेहूँ की उपज के लिए प्रसिद्ध हैं।

५. भारत में गेहूँ की खेती के दोषः—विश्व के अन्य देशों को देखते हुए भारत में गेहूँ की प्रति एकड़ उपज बहुत ही कम है। निम्नलिखित अंकों से यह स्पष्ट हो जायगा:—

नाम देश	औसत प्रति एकड़ उपज [पौंड में]
यूरोप	१,१५०
कनाडा	९७५
संयुक्त राष्ट्र अमेरिका....	८५०
अर्जेन्टाइना	७८०
आस्ट्रेलिया	७२०
भारत	६५०

हमारे देश में गेहूँ के लिए भूमि बहुत ही उत्तम है और सिंचाई भी विश्व के अन्य देशों से सबसे अधिक होती है। फिर भी कम उपज क्यों होती है इसके कई कारण हैं:—

(अ) खेती करने का तरीका बहुत पुराना है। उसमें सुधार की आवश्यकता है।

(आ) खेतों में खाद नहीं दिया जाता। यदि खाद देते हैं तो वह कम होता है और उच्च कोटि का नहीं होता।

(इ) खेत बहुत छोटे छोटे हैं और एक स्थान पर न होकर अलग अलग फैले हुए हैं।

(ई) उत्तम कोटि का बीज बहुत कम बोया जाता है।

(उ) देश में खेती करने योग्य भूमि की कमी होने से खेत को विश्राम नहीं मिलता।

(ऊ) पकते समय कभी कभी पाला पड़ जाता है। इससे पौधा नष्ट हो जाता है।

(ए) गेहूँ काटने से पूर्व आंधियाँ चलने लगती हैं। हवा शुष्क होने से गेहूँ के दाने का रस सोख लेती है और दाना पतला हो जाता है।

(ऐ) टिड्डी तथा अन्य कीटाणु भी पौधों को हानि पहुँचाते हैं।

६. गेहूँ की उपज बढ़ाने के तरीके:—देश की बढ़ती हुई जन संख्या के लिए तथा गेहूँ पैदा करने वाले प्रदेश का पर्याप्त भाग पाकिस्तान में चले जाने के कारण गेहूँ की खेती में सुधार कर अधिक उत्पत्ति करना बहुत आवश्यक है। ऊपर बताई हुई जलवायु सम्बन्धी प्राकृतिक बाधाओं को तो हम नहीं रोक सकते परन्तु अन्य दोषों का निवारण तो अवश्य किया जा सकता है।

गेहूँ की पैदावार निम्नलिखित तरीकों से बढ़ाई जा सकती है:—

(अ) उत्तम कोटि का बीज बोना चाहिए। आजकल देश में जितना बीज बोया जाता है उसका लगभग २०% उत्तम कोटि का प्रयोग में लिया जाने लगा है। पंजाब और बम्बई में उत्तम कोटि के बीज के प्रयोग से पैदावार में अच्छी वृद्धि हुई है।

(आ) बहुत वर्षों से खेती करते रहने के कारण मिट्टी का उपजाऊपन घट गया है। अब खाद देना अनिवार्य ही समझना चाहिये। गोबर की खाद खेतों को आसानी से दी जा सकती है।

(इ) राजस्थान, पंजाब और मध्य प्रदेश में अब भी पर्याप्त जमीन पड़ी हुई है जहाँ गेहूँ की खेती हो सकती है। कमी केवल सिंचाई की है। उन राज्यों में चम्बल, जवाई, भाकरा आदि योजनाएँ तैयार हो रही हैं। उनके द्वारा सिंचाई करने से गेहूँ की पैदावार अवश्य बढ़ेगी।

(ई) जिन भागों में सिंचाई करना असम्भव हो वहाँ शुष्क खेती की जा सकती है। बम्बई राज्य में इस प्रकार की खेती का अनुभव किया गया जिससे गेहूँ की पैदावार में अच्छी वृद्धि हुई।

(उ) मध्य प्रदेश तथा राजस्थान के कई भागों में भूमि ऊँची नीची हैं। वहाँ खेती नहीं हो सकती। ट्रैक्टरों द्वारा ऐसी भूमि को समतल बनाया जा सकता है और उसमें खेती करके गेहूँ की पैदावार बढ़ाई जा सकती है।

७. व्यापारः—किसी समय भारत से यूरोप को पर्याप्त गेहूँ भेजा जाता था। करांची के बन्दरगाह की वृद्धि तो गेहूँ के निर्यात् के कारण ही हुई। यूरोप के गेहूँ का दाना कड़ा होता है और भारत के गेहूँ का दाना नर्म। दोनों के आटे को मिलाने से बड़ी स्वादिष्ट रोटी होती है। सन् १९२० से पूर्व हम विदेशों को बराबर गेहूँ भेजते रहे। इसके बाद भारत का गेहूँ विदेशों में मँहगा पड़ने लगा क्योंकि आस्ट्रेलिया, अर्जेंटाइना, कनाडा आदि देशों में आवश्यकता से अधिक गेहूँ होने के कारण उसका निर्यात खूब होने लगा और वह यूरोप के बाजारों में सस्ता पड़ने लगा। तब से भारत के किसान गेहूँ की अपेक्षा कपास और गन्ने की खेती अधिक करने लगे। इस प्रकार गेहूँ की उपज तो कम होने लगी और धीरे-धीरे आबादी बढ़ने लगी। अन्त में एक समय तो वह आया कि हम गेहूँ के लिए विदेशों की ओर ताकने लगे।

गत महायुद्ध के समय गेहूँ मँगाने की स्थिति बड़ी खराब हो गई। विदेशों से गेहूँ मँगाने में बड़ी कठिनाई हुई। देश के विभाजन से तो स्थिति और भी खराब हो गई। आस्ट्रेलिया तथा संयुक्त राज्य अमेरिका से हमें गेहूँ मँगवाना पड़ा और उसके बदले में हमारे यहाँ से उन देशों को कई वस्तुएँ भेजी गईं।

अब स्थिति सुधर गई है। बाहर से हम बहुत कम गेहूँ मँगाते हैं। भविष्य में सिंचाई के बड़े-बड़े बाँध बन जाने से इतना गेहूं पैदा होगा कि हमें बाहर से मँगाने की आवश्यकता न होगी।

देश में गेहूँ के लिए भीतरी व्यापार अवश्य होता है। जिन स्थानों में गेहूँ होता है वहीं पर कुल पैदावार का लगभग ५०% तो किसानों के खाने में ही काम आ जाता है। शेष आधा गेहूँ उन स्थानों को भेज देते हैं जहाँ इसकी कमी हो। उत्तर प्रदेश, पंजाब और मध्य प्रदेश में आवश्यकता से अधिक गेहूँ होता है अतः वहाँ से वह बंगाल, आसाम, मद्रास आदि राज्यों को जहाँ इसकी आवश्यकता पड़ती है, भेज दिया जाता है। कलकत्ता, बम्बई, मद्रास आदि व्यापारिक

तथा व्यावसायिक नगरों में जहाँ उत्तरी भारत के गांवों से गेहूँ खाने वाले आदमी धन्धा करने चले गए हैं, गेहूँ का आयात बहुत होता है।

३. जौ

गेहूँ की भाँति जौ भी रबी की फसल है। भारत में यह गरीब किसानों का भोजन है। इसमें चना मिला कर 'बेझड़' बना लेते हैं और उसकी रोटी उत्तरी भारत के बहुत से किसान
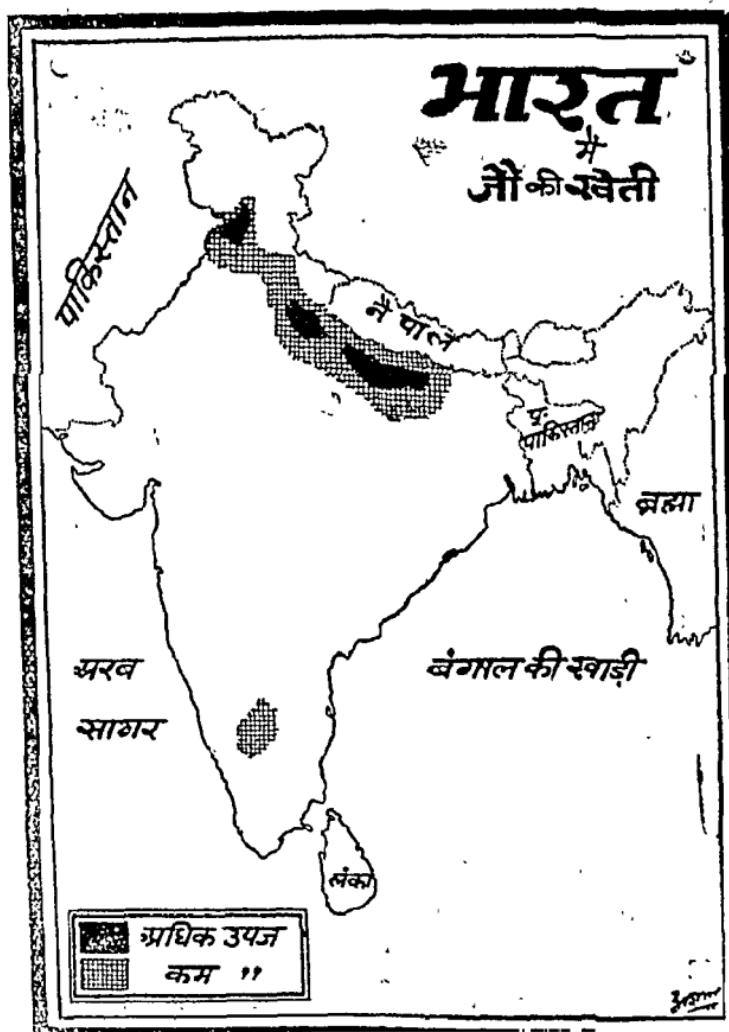
चित्र सं० ३०. भारत में जौ की उत्पत्ति

खाते हैं। भारत अधिक जौ पैदा नहीं करता। यहाँ विश्व का लगभग ५% जौ पैदा होता है।

१. आवश्यकता:—देश के जिन भागों में गेहूँ पैदा होता है वहाँ जौ भी होता है।

गेहूँ और जौ की आवश्यकताओं में अन्तर केवल इतना ही है कि जौ कुछ कम उपजाऊ भूमि में भी हो सकता है और इसके लिए पानी भी कम हो तो भी काम चल सकता है। यही कारण है कि किसान पहले तो खेत में गेहूँ बोते हैं परन्तु उसकी कम पैदावार होने पर फिर दूसरे साल जौ की खेती कर लेते हैं।

गेहूँ की भाँति जौ भी अक्टूबर में बोया जाता है परन्तु इसकी फसल गेहूँ की अपेक्षा शीघ्र पकती है। मार्च में जौ की कटाई कर लेते हैं।

२. पैदावार:—गेहूँ की तुलना में जौ का उत्पादन हमारे यहां कम होता है। सन् १६५७ में ८,५६४ हजार एकड़ में गेहूँ बोया गया और कुल उत्पादन २,७८४ हजार टन हुआ।

३. उत्पत्ति के क्षेत्र:—सबसे अधिक जौ उत्तर-प्रदेश में होता है। इस राज्य में सम्पूर्ण भारत के जौ का लगभग दो-तिहाई अंश होता है। वहाँ के जौनपुर, बनारस, बलिया, प्रतापगढ़, गढ़वाल आदि जिले जौ की खेती के लिये प्रसिद्ध हैं। दूसरा राज्य बिहार है जहाँ जौ अधिक होता है। वहाँ मुजफ्फरपुर जिले में उसकी खेती अच्छी होती है। पहले पंजाब में भी जौ की पैदावार अच्छी होती थी, परन्तु नहरों के बन जाने से जिन भागों में जौ होता था वहाँ अब गेहूँ होने लगा है।

पाश्चात्य देशों में जौ शराब (Beer) बनाने के काम आता है। लेकिन हमारे यहाँ तो यह खाने में ही प्रयुक्त होता है। इसके भूसे को जानवरों को खिलाते हैं।

पहले कुछ जौ ग्रेट ब्रिटेन को निर्यात किया जाता था परन्तु अब तो सब देश में ही काम ले लिया जाता है। यहाँ पैदा किये हुये जौ का अधिकांश उत्पत्ति के क्षेत्रों में ही काम आ जाता है अतः इसका आन्तरिक व्यापार भी कम है।

४. मकई

मकई का जन्म स्थान उत्तरी अमेरिका है। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका आज भी संसार में सबसे अधिक मकई पैदा करता है। भारत में पुर्तगाल वाले इसको लाये थे।

१. आवश्यकताएँ:—मकई के लिए उपजाऊ मिट्टी चाहिए। दुमट मिट्टी इसके लिये अधिक उपयोगी होती है। इसके लिए पानी भी अधिक चाहिये। ३० इंच के कम वर्षा के भागों में इसकी उपज नहीं हो सकती। पकने के लिए इसको तेज धूप चाहिये। हमारे यहाँ यह खरीफ की पैदावार है। वर्षा प्रारम्भ होते ही यह बो दी जाती है और मानसून समाप्त होते समय काट ली जाती है। लगातार वर्षा और नम भूमि मकई के पनपने में बाधक होती है।

२. कुल पैदावार और क्षेत्र:—भारत में सन् १६५७ में ६,२४४ हजार एकड़ भूमि में मकई की खेती की गई और ३,०२० हजार टन पैदावार हुई। देश की कुल पैदावार का आधा भाग अकेले उत्तर प्रदेश में होता है। शेष का अधिकांश बिहार और पंजाब में होता है। कुछ मकई काश्मीर, मध्य प्रदेश और बम्बई में भी होती है।

३. मकई का प्रयोग:—अमेरिका में मकई को जानवरों को खिलाते हैं। इसके

खिलाने से पशु की चर्बी बढ़ती है। परन्तु हमारे यहाँ यह मनुष्यों के खाने के काम आती है। मकई यहाँ के गरीब किसानों का भोजन है। थोड़ी सी मकई बम्बई से विदेश को भी भेजी जाती

चित्र सं० ३१. भारत में मकई उत्पन्न करने वाले क्षेत्र

थी परन्तु आजकल हमारे देश में इससे स्टार्च और ग्लूकोज बनने लगा है अतः निर्यात की संभावना कम होती जा रही है।

५. ज्वार

इसको यूरोप और अमेरिका में 'सोरघम' अनाज कहते हैं। यह शुष्क जलवायु में पनपती है अतः चावल को छोड़कर यह भारत में सबसे अधिक भूमि में बोई जाती है। जहाँ चावल के

लिये पर्याप्त पानी न हो तथा जहां गेहूँ के लिये तापक्रम अधिक हो उन स्थानों की मुख्य उपज ज्वार ही है। वैसे तो यह भारत में खरीफ की फसल है लेकिन कुछ भागों में विशेषतः दक्षिण में यह रबी की फसल में भी गिनी जाती है। बाजरा और रागी भी ज्वार के साथ ही बोए जाते हैं। जहां भूमि दुमट हो वहां ज्वार होती है और कमजोर भूमि में बाजरा होता है।

चित्र सं० ३२. ज्वार उत्पन्न करने वाले क्षेत्र

जैसा कि ऊपर बताया गया है ज्वार की खेती भारत के कई भागों में होती है परन्तु दक्षिण भारत में यह बहुत प्रचलित है। देश की जितनी भूमि में ज्वार बोई जाती है उसकी आधी भूमि बम्बई, मद्रास, आँध्र प्रदेश और मध्य प्रदेश में है। बम्बई से शोलापुर, पूना और बेलगाँव जिले ज्वार की खेती के लिए प्रसिद्ध हैं। इन राज्यों के अतिरिक्त पंजाब और राजस्थान में भी ज्वार की अच्छी खेती होती है।

सन् १९५७ में हमारे यहाँ ४१,३१४ हजार एकड़ भूमि में ज्वार बोई गई और कुल उत्पादन ७,४२७ हजार टन हुआ।

ज्वार दक्षिणी भारत के किसानों का मुख्य भोजन है। उत्तरी भारत में यह जानवरों के लिये अच्छा चारा है। इसकी खेती में थोड़ा सा सुधार कर देने से २०% पैदावार बढ़ सकती है। ज्वार के आटे से एरारूट तैयार किया जाता है जो कपड़े के कलप देने के काम आता है।
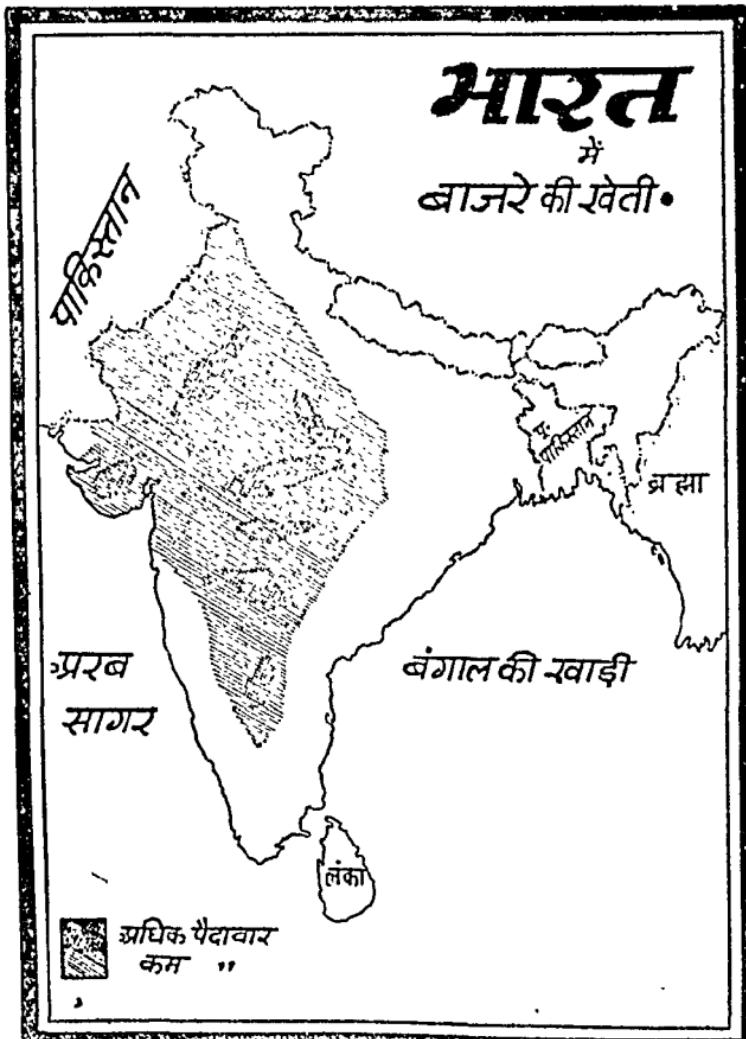
चित्र सं० २२. भारत में बाजरा पैदा करने वाले क्षेत्र

हमारे देश में सूती कपड़े के कारखानों में वृद्धि होने से एरारूट की माँग दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। अतः ज्वार की उपज को बढ़ाना बहुत जरूरी है।

६. बाजरा

बाजरे की खेती कम उपजाऊ मिट्टी में भी हो सकती है। रेतीली मिट्टी इसके लिये अच्छी

मानी जाती है। इसकी खेती बिना सिंचाई के भी हो जाती है। जुलाई में वर्षा होते ही बाजरे को बो देते हैं और सितम्बर के अन्त में या अक्टूबर के प्रारम्भ में इसकी फसल तैयार हो जाती है।

ज्वार की भाँति बाजरा भी दक्षिणी भारत में अधिक होता है। वहाँ के गरीब किसानों का यह भोजन है। उत्तरी भारत के मैदान के पश्चिमी भाग में वर्षा ऋतु में जब खेत खाली होते हैं तो बाजरा बो दिया जाता है। यहाँ इसका प्रयोग प्रायः पशुओं की चरी के लिए होता है।

भारत का ७०% बाजरा बम्बई, मद्रास, उत्तर प्रदेश और पंजाब राज्य में होता है। शेष खेती राजस्थान और आंध्र प्रदेश के कम वर्षा के भागों में होती है।

सन् १९५७ में भारत में २७,५४२ हजार एकड़ भूमि में बाजरा बोया गया और उस साल इसका कुल उत्पादन २,९२६ हजार टन हुआ।

देश में उत्पन्न होने वाले बाजरे का अधिकांश उत्पत्ति के क्षेत्रों में ही काम में ले लिया जाता है। केवल एक चौथाई से कम पैदावार बाहर भेजी जाती है। अरब, सूडान, हालैंड तथा जर्मनी को पहले बम्बई द्वारा बाजरा भेजा जाता था परन्तु देश में खाद्यान्नों की कमी के कारण इस निर्यात में दिन प्रतिदिन कमी होती जा रही है।

बाजरे की खेती अन्य अनाजों की खेती से आसान है। थोड़ा सा परिश्रम करने से इसकी पैदावार हो जाती है। यदि इसकी खेती में सुधार किया जाय तो देश की कुल पैदावार में एक चौथाई भाग की वृद्धि हो सकती है।

७. दालें

भारत की खेती में दालों का प्रमुख स्थान है। यहाँ कई प्रकार की दालें होती हैं जैसे— चना, अरहर, मसूर, मूँग आदि। देश के भिन्न-भिन्न भागों में इन दालों की खेती होती है। सम्पूर्ण भारत की लगभग पाँच करोड़ एकड़ भूमि में दालें बोई जाती हैं।

हमारे यहाँ दालों के तीन प्रयोग हैं:—

(१) भोजन की उपयोगिता:—दाल में प्रोटीन की मात्रा अधिक होती है। यही कारण है कि शाकाहारी लोग दालों का अधिक प्रयोग करते हैं।

(२) पशु भोजन:—दालें पशुओं को खिलाने में भी काम आती हैं। चने की दाल घोड़े, बैल आदि को खिलाते हैं।

(३) मिट्टी का उपजाऊपन बढ़ाना:—दालें तथा अन्य अनाजों को खेती में बारी-बारी से बोने से खेतों को विश्राम मिल जाता है और उपज बढ़ जाती है। हमारी मिट्टी में नाइट्रोजन की कमी है। दालों के पौधे अपनी जड़ों में नाइट्रोजन एकत्रित करते हैं। यही कारण है कि दालें बोने के बाद खेत उपजाऊ हो जाता है।

चना:—यह सबसे अधिक उपयोगी दाल है। गरीब किसान चने को गेहूँ तथा जौ में मिला कर भी खाते हैं। भारत में लगभग दो करोड़ एकड़ भूमि में चने की खेती होती है और

इसकी वार्षिक पैदावार लगभग ५० लाख टन है। इसकी खेती प्रायः गेहूँ के साथ ही की जाती है। पहले इसकी अधिक खेती पंजाब में होती थी परन्तु उसका पर्याप्त भाग पाकिस्तान में चले जाने से इसकी उपज के लिए उत्तर प्रदेश का प्रथम स्थान है। इनके अतिरिक्त बिहार और मध्य प्रदेश में भी चने की खेती होती है।

थोड़ा सा चना विदेश को भी भेजा जाता है। बम्बई निर्यात का मुख्य बन्दरगाह है।

अरहरः—यह भी उत्तम दाल गिनी जाती है। इसको अन्य दालों के साथ जुलाई व अगस्त में बो देते हैं। अन्य दालें तो पहले ही तैयार हो जाती हैं परन्तु अरहर अप्रैल में तैयार हो पाती है। इस प्रकार फसल को पर्याप्त समय लगता है। अरहर की खेती उत्तर प्रदेश, बिहार, बंगाल, आसाम, मध्य प्रदेश, मद्रास तथा बम्बई राज्यों में होती है। अधिकांश खेती उत्तरी भारत में होती है। अरहर की जड़ों में एक प्रकार का बैक्टेरिया होता है जिससे भूमि उपजाऊ होती है।

मसूरः—इस दाल की खेती भी देश के कई भागों में होती है परन्तु उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, मद्रास और बिहार में यह बहुत प्रचलित है। बंगाल और आसाम में भी इसकी थोड़ी बहुत पैदावार होती है।

मूँगः—मूँग के साथ मोठ भी बोते हैं। इसके लिए रेतीली मिट्टी अच्छी रहती है। यही कारण है कि इसकी खेती बाजरे के साथ होती है। इसकी अधिकांश पैदावार राजस्थान में होती है।

यद्यपि भारत में दालों की पैदावार पर्याप्त होती है फिर भी इनका निर्यात बहुत कम होता है। अधिकांश दालें अपने उत्पत्ति के क्षेत्र में ही खप जाती हैं। गत महायुद्ध से पूर्व कुछ दालें ग्रेट ब्रिटेन, फ्रांस, लंका, ब्रह्मा आदि देशों को भेजी जाती थीं। अधिकांश निर्यात बम्बई बन्दरगाह द्वारा होता था।

८. गन्ना

१. साधारण परिचयः—हमारा देश भारत गन्ने का जन्मस्थान है और विश्व का सबसे अधिक गन्ना भी यहीं होता है। जब से हमारे यहाँ शक्कर बनाने के कारखाने खुले हैं, गन्ने की पैदावार में दिनों दिन वृद्धि होती गई। गन्ने से शक्कर और गुड़ तैयार होते हैं और ये वस्तुएँ हमारे खाने में काम आती हैं। इसलिए गन्ने को यहाँ खाद्यान्नों में गिना गया है।

२. आवश्यकताएँः—(अ) जलवायुः— गन्ने के लिए उष्ण कटिबन्ध का जलवायु अनुकूल होता है। यही कारण है कि आजकल इसकी खेती पूर्वी द्वीप समूह और पश्चिमी-द्वीप समूह में अधिक होने लगी है। साल का औसत तापक्रम ७५° फा० होने से गन्ने की खेती अच्छी हो सकती है। फसल को काटते समय जलवायु शुष्क हो, धूप तेज पड़े और कोहरा न पड़े।

पानी की भी गन्ने को बहुत आवश्यकता होती है। औसतन ६० इंच की वार्षिक वर्षा होने पर गन्ने की पैदावार हो जाती है। इससे कम वर्षा होने पर सिंचाई की आवश्यकता होती

है। भारत में अधिकांश गन्ना सिंचाई से ही किया जाता है। गन्ने की जड़ों में पानी अधिक समय तक रहने से पौधा नष्ट हो जाता है। इस प्रकार गन्ने के लिए गर्म और नम जलवायु की आवश्यकता होती है।

चित्र सं० ३८. भारत में गन्ने की उपज

(आ) मिट्टी:—गन्ने के लिए बहुत उपजाऊ मिट्टी चाहिये। हल्की दुमट मिट्टी में इसकी जड़ें अच्छी फैलती हैं। खेत में बार-बार खाद देनी पड़ती है।

गन्ना बोने का तरीका विचित्र है। गन्ने में थोड़ी थोड़ी दूर पर गाँठें होती है। हर गाँठ से एक अंखुआ निकलता है। गन्ना बोते समय अँखुएदार गाँठों को एक एक फुट की दूरी पर

जमीन में गाड़ देते हैं। इन गाँठों से नए पौधे निकलते हैं। ऊपर से पौधों को काट लिया जाता है। दूसरे साल गन्ना बोने की आवश्यकता नहीं होती। इस प्रकार एक बार बोया हुआ गन्ना ५-६ वर्ष तक काम दे देता है। परन्तु हर तीसरे साल नया पौधा बो दिया जाता है क्योंकि इस समय के बाद गन्ने में 'लाल जड़' (Red Root) की बीमारी हो जाती है।

गन्ना मार्च के महीने में बोया जाता है और फरवरी में काट लिया जाता है। इस प्रकार इसकी फसल को लगभग साल भर लग जाता है। परन्तु आजकल देश में गन्ने की अधिक माँग होने के कारण गन्ने की शीघ्र तैयार होने वाली किस्म भी बोई जाती है। वह मार्च में बोकर नवम्बर या दिसम्बर में काट ली जाती है और वह गन्ना सर्दी के दिनों में शक्कर और गुड़ बनाने के काम में लिया जाता है।

३. कुल पैदावार:—सन् १६५७ में भारत में ५,०१६ हजार एकड़ भूमि में गन्ने की खेती हुई और कुल पैदावार ६६,८६० हजार टन हुई।

४. उपज के क्षेत्र:—देश का आधे से कुछ अधिक गन्ना अकेले उत्तर प्रदेश में पैदा होता है। इसके पश्चात् बिहार और पंजाब का स्थान है। ये तीनों प्रांत सम्पूर्ण देश की पैदावार का लगभग तीन चौथाई भाग उत्पन्न करते हैं। इस प्रकार देश का अधिकांश गन्ना गंगा-सिंधु के मैदान में बोया जाता है। भारत के इस प्रदेश में गन्ने की अच्छी उपज होने के कई कारण हैं:—
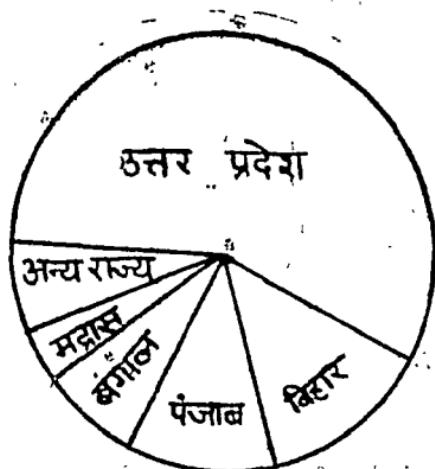
चित्र सं० ३५. भारत में गन्ना उत्पन्न करने वाले राज्य

(अ) यहाँ की कछार मिट्टी नदियों द्वारा लाकर एकत्रित की गई है और बहुत उपजाऊ है।
(आ) समतल मैदान होने से हल चलाने में कोई कठिनाई नहीं होती।
(इ) यहाँ सिंचाई के उत्तम साधन हैं।
(ई) तापक्रम गन्ने की खेती के लिए उपयुक्त है।
(उ) यहाँ कोहरा नहीं पड़ने से पौधा नष्ट नहीं होता।

उत्तर प्रदेश के कुछ जिले गन्ने की खेती के लिए प्रसिद्ध हैं। ये गोरखपुर, सहारनपुर, फैदाबाद, बनारस, बुलन्दशहर और शाहजहाँपुर हैं। बिहार के चार जिलों में गन्ने की खेती अच्छी होती है—चम्पारन, सारन, दरभंगा और मुजफ्फरपुर। पंजाब के जालंधर, अमृतसर और रोहतक जिलों में गन्ना बोया जाता है।

इन तीनों राज्यों के अतिरिक्त बङ्गाल, बम्बई और मद्रास राज्य की नदियों के डेल्टों में गन्ने की खेती होती है।

गन्ना पैदा करने वाले राज्यों का क्रम इस प्रकार है:—

देश की कुल उपज का प्रतिशत—

(१) उत्तर प्रदेश	५५%
(२) बिहार	१५%
(३) पंजाब	१०%
(४) बङ्गाल	७%
(५) मद्रास	५%
(६) अन्य राज्य	८%
	१००%

५. गन्ने की कम उपज के कारण और उनके निवारण के उपाय:—यद्यपि भारत विश्व में सबसे अधिक गन्ना पैदा करता है परन्तु फिर भी यहां इसकी प्रति एकड़ उपज बहुत कम है।

भारत में गन्ने की कम उपज के कई कारण हैं:—

(अ) यहाँ के खेतों में खाद बहुत कम दिया जाता है।

(आ) उत्तम कोटि का गन्ना नहीं बोया जाता।

(इ) अवैज्ञानिक तरीके से खेती करना।

(ई) भूमि के स्वामियों के पास छोटे-छोटे खेत हैं।

(उ) जलवायु का अनुकूल न होना।

इन दोनों का निवारण किया जा सकता है। भारत सरकार ने गन्ने की खेती में वृद्धि करने के लिए एक पंचवर्षीय योजना तैयार की है। इसके द्वारा केन्द्रीय गन्ना समिति ने आसाम, बिहार, उत्तर प्रदेश, बम्बई, उड़ीसा, मद्रास आदि राज्यों में गन्ने की खेती में सुधार किया। कुछ नवीन भूमि में भी गन्ना बोया जायगा। हमारे खेतों को उत्तम कोटि की खाद देने से गन्ने की पैदावार में बहुत वृद्धि हो सकती है। दक्षिणी भारत का जलवायु अधिक गर्म होने के कारण गन्ने के लिए बड़ा अच्छा है। इसलिए वहाँ गन्ने की खेती खूब होनी चाहिये। वैज्ञानिक रूप से गन्ने की जाँच करने के लिए दक्षिणी भारत के कोयम्बटूर नामक स्थान पर गन्ने का बीज सुधारने के लिए एक गन्ना सुधारक केन्द्र खोला गया है। यहाँ पर जाँच किये हुए गन्ने को भारत के

सब राज्यों के खेतों में बोने के लिए भेज देते हैं। प्रायः ४१६ और ४२१ नम्बर के गन्ने उत्तम गिने जाते हैं। उत्तरी भारत में भी जाँच के लिए ऐसे स्थान नियुक्त कर देने चाहिये।

भारत की खाद्य समस्या

गत शताब्दी में भारत अन्न बाहुल्य देश था। यहाँ से अन्न पर्याप्त मात्रा में विदेशों को निर्यात किया जाता था। धीरे-धीरे हमारी खाद्य स्थिति खराब होती गई। इसके कई कारण हैं:-

१. **जन संख्या में वृद्धि:**—हमारे यहाँ जन संख्या तो प्रतिवर्ष बढ़ती जा रही है परन्तु लोगों को खाने के लिए उसके अनुसार भोजन की वृद्धि नहीं हो रही है।

२. **भूमि के उपजाऊपन में कमी होना:**—किसान लगातार खेती करता रहता है। वह न तो खेत को विश्राम देता है और न उसमें खाद ही। इस प्रकार मिट्टी का उपजाऊपन दिन प्रतिदिन घटता जा रहा है।

३. **प्रकृति का प्रकोप:**—कभी कभी वर्षा इतनी अधिक हो जाती है कि नदियों में बाढ़ आ जाती है और कभी वर्षा होती ही नहीं। बाढ़ से भी खेती नष्ट हो जाती है और वर्षा की कमी से भी खेत बर्बाद हो जाता है। कभी कभी अधिक ठंड पड़ने से भी फसल खराब हो जाती है।

४. **भोजन का अपव्यय:**—पहले भारत में अन्न की कमी न होने से लोगों में भोजन में बचत करने की आदत नहीं पड़ी। प्रतिदिन सैकड़ों मन भोजन यों ही नष्ट कर दिया जाता है।

५. **गत महायुद्ध का प्रभाव:**—गत महायुद्ध के कारण बहुत से किसान खेती का काम छोड़ कर फौज में भर्ती हो गये। युद्ध बन्द हो जाने पर वे नौकरियाँ करना ही ठीक समझने लगे और इस प्रकार खेती करने वालों की संख्या कम होती गई। युद्ध के समय विदेशों से भी अन्न आना बन्द हो गया।

६. **ब्रह्मा का भारत से अलग होना:**—पहले हम चावल निर्यात करते थे परन्तु सन् १९३७ से ब्रह्मा के अलग हो जाने से देश में चावल की कमी हो गई। अब हमें बाहर से चावल मँगाना पड़ता है।

७. **देश में विभाजन का प्रभाव:**—देश के विभाजन का हमारी खाद्य स्थिति पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ा। पंजाब के गेहूँ पैदा करने वाले भाग का अधिकांश अब पाकिस्तान में है। सिन्ध में आवश्यकता से अधिक गेहूँ और चावल होता था। वह भाग भी अब पाकिस्तान में ही है।

८. **खाद्यान्नों के स्थान पर अन्य पैदावार करना:**—अधिक धन कमाने के लालच में आकर भारतीय किसान अपने खेतों में गेहूँ और चावल कम पैदा करने लगे और

तैयार होगी जो हमारे देश के खेतों को उपजाऊ बनायेगी। इसी प्रकार फौलाद तैयार होने पर लोहे के कूड़े-करकट से भी उत्तम खाद तैयार हो सकती है। गोबर का कम्पोस्ट खाद हमारे देश में बहुत आसानी से और कम खर्चे से तैयार हो सकता है, क्योंकि हमारे यहाँ पशुओं की कमी नहीं है। गावों में पशुशालाएँ बना देनी चाहिये, जहां से गोबर को खड्डे में डालकर मिट्टी डालते रहें। इसी प्रकार पशुओं का मूत्र भी एकत्रित कर लेना चाहिये, क्योंकि यह भी एक प्रकार की खाद है। बड़े बड़े नगरों में जहां मांस के लिए पशु काटे जाते हैं वहां मृत पशुओं का रक्त एकत्रित कर लिया जाय। उसको खेतों में देने से उपज कई गुना बढ़ सकती है। मछली की हड्डियों से भी उत्तम खाद तैयार की जाती है। कुछ खाद विदेशों से मँगाई जा सकती है—जैसे चिली की नाइट्रोजन खाद आदि।

४. सिंचाई के साधनों में वृद्धि करना:—मानसूनी वर्षा होने के कारण हमारे देश में खेतों को साल भर पानी नहीं मिलता। भौगोलिक अवस्थानुसार देश के भिन्न भिन्न भागों में भिन्न भिन्न प्रकार के सिंचाई के साधनों का प्रबन्ध किया जाय। ऐसा करने से बहुत सी बेकार पड़ी हुई भूमि में खेती होने लगेगी। सरकार की ओर से इस प्रकार की योजनायें तैयार हो चुकी हैं—जैसे दामोदर घाटी योजना, भाँकरा बांध, महानदी योजना आदि।

५. अन्न के अतिरिक्त अन्य पोषक पदार्थों की उत्पत्ति करना:—भोजन के साथ दूध, फल, अण्डे तथा मछली का प्रयोग होना जरूरी है। इससे शरीर का पोषण होता है। मांसाहारी लोग मछली, अण्डे और मांस का प्रयोग करते हैं और शाकाहारी दुग्ध, दही और फलों का। यत्न करने पर हमारे देश में इन सभी की प्राप्ति की जा सकती है। पशुओं के लिए चारे का समुचित प्रबन्ध कर देने से दूध में वृद्धि होगी। मछली व्यवसाय की वृद्धि के लिए तो यहाँ बहुत सुविधा है। फल हमारे यहाँ कई प्रकार के होते हैं। अपने घरों के आस पास बगीचे लगा कर कई प्रकार के फल और शाक सब्जी पैदा की जा सकती है। फलों को सुरक्षित रखने की आवश्यकता है जिससे वे शीघ्र ही खराब न हो जायँ और देश के दूरस्थ भागों को भी भेजे जा सकें।

[आ] पेय पदार्थ

भोजन के साथ पेय पदार्थों का भी बहुत महत्व है। पाश्चात्य देशों में पेय पदार्थों को बहुत उत्तम गिना जाता है। शराब का प्रयोग वहाँ काफी होता है। चाय और कॉफी तो दिन में कई बार पिये जाते हैं। परन्तु भारत के जलवायु में इन पदार्थों के सेवन की आवश्यकता नहीं है। यहाँ तो शर्बत, फलों के रस आदि ही उपयुक्त हो सकते हैं। इनकी ओर अभी तक लोगों का ध्यान बहुत कम गया है।

यह आश्चर्य की बात है कि जिन पेय पदार्थों की आवश्यकता शीतोष्ण कटिबन्ध के

देशों को है उनकी उत्पत्ति उष्ण कटिबन्ध में होती है। चीन, भारत, इंडोनेशिया, लंका आदि में चाय की अच्छी पैदावार होती है। ब्राजील में कहवा बहुत होता है। ये वस्तुएँ उष्ण देशों से शीतोष्ण जलवायु के देशों को भेज दी जाती हैं। उनकी पैदावार से इन देशों को पर्याप्त धन मिलता है।

१. चाय

१. साधारण परिचयः—चाय एक प्रकार की झाड़ी होती है उसका जन्म एशिया के दक्षिणी-पूर्वी मानसूनी देशों में हुआ और यह पनपती भी वहीं है। अन्य जगह इसकी खेती करने में सफलता भी कम मिलती है। मानसून की वर्षा के साथ चाय की पत्तियाँ भी बढ़ने लगती हैं। इन पत्तियों को काटकर सुखा लेते हैं। फिर पेटियों में बन्द करके बाहर भेज देते हैं। जो पत्तियाँ अपने आप सुखाई जाती हैं, उनका रंग हरा हो जाता है। भारत की अधिकांश चाय काले रंग की ही है।

हमारे देश में प्रायः पिछले सौ वर्षों से चाय की खेती की जा रही है। चाय की खेती से देश को बहुत लाभ हुआ है। पहाड़ी भागों की बेकार पड़ी हुई भूमि काम में आ गई और बहुत से मजदूर धन्धे लग गये।

२. आवश्यकताएँ:—(अ) जलवायुः—चाय के लिए उष्ण और तर जलवायु चाहिये। औसत तापक्रम ७०° फ० और ८०° फ० के बीच में होना आवश्यक है। इसके लिए पानी भी खूब चाहिए। परन्तु बहता हुआ होना चाहिये, नहीं तो जड़ों को गला देगा। यही कारण है कि अधिकांश चाय पहाड़ी ढालों पर ही होती है, जहाँ पानी एक जगह एकत्रित न हो सके। वर्षा साल भर होती रहे। जलवायु में अधिक समय तक शुष्की रहना चाय के लिए हानिप्रद है। अनुमानतः साल भर में ६० इंच वर्षा चाय की खेती के लिए पर्याप्त होती है।

(आ) मिट्टीः—चाय की मिट्टी का उपजाऊ होना बहुत आवश्यक है। पहाड़ी ढालों की मिट्टी पानी के साथ बह कर चली जाती है। इसलिए वहाँ प्रतिवर्ष खाद देना जरूरी है। मिट्टी कुछ ढीली हो, जिससे पौधों की जड़ों में पानी पहुँच सके। इसके अतिरिक्त मिट्टी में ह्यूमस तत्व का भी अधिक अंश होना जरूरी है।

(इ) सस्ती मजदूरीः—चाय की पत्तियां काटने के लिए सस्ते मजदूरों का मिलना आवश्यक है। चाय की खेती में इस बात की कठिनाई ही रहती है क्योंकि यह पहाड़ी भागों में होती है, जहाँ कम लोग रहते हैं। यही कारण है कि चाय के खेतों में काम करने के लिए मजदूर दूर-दूर से आते हैं। अच्छी फसल होने पर वे अपने घर चले जाते हैं और तब चाय की खेती को हानि होती है। आजकल तो मजदूर इसी शर्त पर रखे जाते हैं कि वे निश्चित समय तक वहाँ ठहरे रहें।

नवम्बर माह के प्रारम्भ में चाय बो दी जाती है। छः महीने बाद इसके पौधे लगाते हैं। तीन साल पश्चात पौधा पत्ती चुनने योग्य हो जाता है। चाय का पौधा बहुत बढ़ने नहीं दिया जाता। हर साल इसको छांट लेते हैं। जिससे पत्तियां कोमल बनी रहें और उनके तोड़ने में सुगमता रहे।

चित्र सं० ३६. भारत में चाय की पैदावार

३. कुल पैदावारः—भारत में लगभग पांच सौ चाय के बगीचे हैं। जिनका क्षेत्रफल प्रायः आठ लाख एकड़ है। इन बगीचों से सन् १९५५ में ५८.८७ करोड़ पौंड चाय पैदा हुई है। यह चाय विश्व की कुल पैदावार का प्रायः ४५% है। चाय की उत्पत्ति में चीन के बाद हमारा ही स्थान है।

४. उपज के क्षेत्रः—भारत में चाय तीन प्रकार के जलवायु में पायी जाती हैः—

(अ) कुछ ठंडे जलवायु मेंः—नीलगिरी और दार्जिलिंग पर ऊँचाई के कारण ठण्ड पड़ती है। वहाँ उत्तम कोटि की चाय होती है परन्तु उसकी कुल पैदावार कम होने से व्यापारिक दृष्टि से यह लाभप्रद नहीं हो सकती।

(आ) गर्म जलवायु मेंः—जैसे आसाम के निचले पहाड़ी भाग में। यहाँ चाय तो बहुत अधिक हो सकती है, परन्तु वह अच्छी नहीं गिनी जाती।

(इ) मध्यम जलवायुः—जो न अधिक गर्म हो और न ठंडा हो जैसे उत्तरी आसाम में। व्यापारिक दृष्टि से यह चाय सर्वोत्तम मानी जाती है क्योंकि यह मँहगी भी नहीं पड़ती और अच्छी भी होती है।
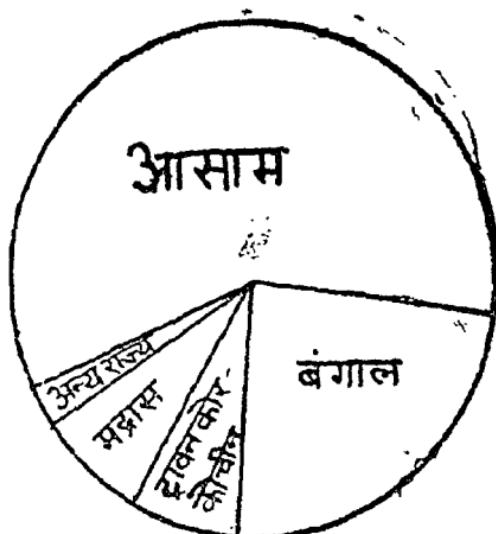
चित्र सं० २७. चाय उत्पन्न करने वाले राज्य

५. देश के चाय उत्पादक राज्यः—

(अ) उत्तरी भारतः—भारत में सबसे अधिक चाय आसाम राज्य में होती है। यहाँ की उपज सम्पूर्ण देश के आधे से भी कुछ अधिक है। आसाम में भी चाय पैदा करने वाले दो प्रमुख क्षेत्र हैंः—(क) ब्रह्मपुत्र नदी की घाटी—इसमें राज्य के धरांग, शिवसागर और लखीमपुर जिले चाय की खेती के लिए विख्यात हैं। (ख) सुरमा नदी की घाटी—यह आसाम के दक्षिण में है और इसमें सिलहट और कच्छार जिले मुख्य हैं। इस भाग का अधिकांश अब पाकिस्तान में है।

बंगाल राज्य में भारत की प्रायः २३% चाय पैदा होती है। यहाँ चाय की उपज उत्तरी बंगाल के दार्जिलिंग और जलपाइगुड़ी जिलों में होती है।

आसाम और बङ्गाल के अतिरिक्त उत्तरी भारत में बिहार (पूर्णिया, राँची और हजारी-बाग जिले), उत्तर प्रदेश (अलमोड़ा) और पंजाब (कांगड़ा घाटी में) चाय की खेती होती है। परन्तु इन राज्यों की कुल पैदावार मिल कर देश की सम्पूर्ण उपज का केवल ७% ही है।

(आ) दक्षिणी भारतः—यहाँ मद्रास (नीलगिरी), केरल और मैसूर राज्यों में चाय होती है। यह चाय अच्छी गिनी जाती है। आजकल वहाँ चाय की खेती बढ़ाई जा रही है। इन तीनों राज्यों में राज्य की लगभग २०% चाय होती है।

६. विदेशी व्यापारः—चाय की पैदावार में तो भारत का दूसरा स्थान है (चीन प्रथम गिना जाता है) परन्तु निर्यात के अनुसार भारत प्रथम है। हमारे यहाँ चाय कम पीते हैं। कुल पैदावार का तीन-चौथाई भाग निर्यात कर दिया जाता है। विश्व में चाय का जितना विदेशी व्यापार होता है, उसका लगभग ४०% भारत के हिस्से में आता है।

निर्यात की हुई चाय का लगभग तीन-चौथाई भाग अकेले ग्रेट ब्रिटेन को भेजते हैं। वहाँ से फिर वह यूरोप के अन्य देशों तथा कनाडा और संयुक्त राष्ट्र अमेरिका को भेज दी जाती है।

पहले रूस और टर्की को भी हमारी चाय भेजी जाती थी परन्तु आजकल उन देशों में कुछ चाय पैदा की जाने लगी है और इसलिए वहाँ इसका आयात घट रहा है।

भारत के निर्यात में अब चाय का स्थान प्रमुख है क्योंकि पाट तथा कपास पैदा करने वाले भाग का काफी हिस्सा अब पाकिस्तान में चला गया है। चाय की उत्पत्ति पर विभाजन का बहुत अधिक प्रभाव नहीं पड़ा क्योंकि इसको पैदा करने वाली अधिकांश भूमि भारत में ही रह गई है।

चाय के निर्यात से हमें प्रतिवर्ष लगभग चालीस करोड़ रुपये मिलते हैं जिनको अन्य देशों से सामान खरीदने के काम में लेते हैं।

हमारी चाय के निर्यात का अधिकांश कलकत्ते के बन्दरगाह द्वारा जाता है। चटगाँव का बन्दरगाह अब पाकिस्तान में है अतः कलकत्ते के बाद चाय के निर्यात के लिए मद्रास का दूसरा स्थान है।

२. कहवा

१. साधारण परिचयः—कहवे का जन्म स्थान अफ्रीका में एबिसीनिया राज्य गिना जाता है। वहाँ से इसका बीज मक्का ले जाया गया। मक्का से यह भारत आया। फिर यहाँ से दक्षिणी अमेरिका के ब्राज़ील देश को गया। आज वहाँ संसार में सबसे अधिक कहवा पैदा होता है।

चाय की भाँति कहवे को भी पीते हैं। इसका दाना भूनकर पीस लिया जाता है और फिर चाय की भाँति ही गर्म पानी में डाल कर पीने के लिए तैयार कर लिया जाता है। कहवा

भी शीतोष्ण देशों में ही पिया जाता है। इसमें और चाय में यह अन्तर है कि जिन-जिन देशों में अंग्रेज लोग रहते हैं अथवा जहाँ-जहाँ का रहन-सहन अंग्रेजों से मिलता हुआ है वहाँ के लोग तो चाय पीते हैं और अन्य देशवासी प्रायः कॉफी पीते हैं। यही कारण है कि उत्तरी अमेरिका में कैनेडा के लोग चाय पीते हैं और संयुक्तराष्ट्र के अधिकांश लोगों में कहवा पीने की प्रथा है। इसी भाँति यूरोप में इंग्लैंड निवासी चाय पीते हैं और फ्रांस और हालैंड वाले कॉफी का प्रयोग करते हैं।

२. आवश्यकताः—कहवे के लिये भी चाय की भाँति गर्म और तर जलवायु चाहिये। परन्तु यह समुद्र की सतह से तीन हजार फीट से अधिक ऊँचाई पर नहीं बोया जाता क्योंकि वहाँ पाला पड़ने से इसका वृक्ष नष्ट हो जाता है। इसी तरह यह कोमल पेड़ अधिक धूप को भी नहीं सह सकता। यही कारण है कि कहवे के पेड़ के पास ही केले अथवा रबर के छायादार वृक्ष लगा देते हैं, जिनके पत्ते इसको धूप से बचा देते हैं। चाय की भाँति कहवे के लिये भी उपजाऊ भूमि का होना जरूरी है।

कहवा वर्षा ऋतु में बो दिया जाता है। लगभग तीन-चार साल में वृक्ष तैयार हो जाता है और इसके बीज लगने लगते हैं। अक्टूबर महीने में ये दाने पक जाते हैं तब उन्हें एकत्रित कर लेते हैं। एक बार कहवे का वृक्ष लगा देने से वह लगभग तीस साल तक लगातार काम देता रहता है।

३. उपजः—भारत में लगभग सवा दो लाख एकड़ भूमि में कहवा बोया जाता है और सन् १९५५ में इसकी उपज लगभग ५.५६ करोड़ पौंड हुई है। ब्राजील देश को देखते हुए यह उपज बहुत ही कम है।

४. उत्पत्ति का क्षेत्रः—कहवे की सम्पूर्ण पैदावार दक्षिणी भारत में होती है। भारत में लगभग सात हजार कॉफी के बाग हैं। अकेले मैसूर राज्य में भारत की कुल उत्पत्ति का आधा भाग होता है। इस राज्य का दक्षिणी और पश्चिमी भाग कॉफी की पैदावार के लिए प्रसिद्ध है। मुख्य जिले ये हैं:—शिमोगा, कदूर, मैसूर और हसन। मद्रास राज्य के दक्षिणी-पश्चिमी भाग में कहवे की पैदावार होती है। वहाँ नीलगिरी इसके लिये प्रसिद्ध है। मद्रास में मैसूर की आधी कॉफी होती है। इन दोनों राज्यों के अतिरिक्त शेष कहवा केरल राज्य में होता है। बम्बई के सतारा जिले में भी थोड़ा सा कहवा होता है।

५. व्यापारः—जितना कहवा भारत में होता है उसका आधा भाग देश में ही पीने के काम में ले लिया जाता है और शेष को विदेशों में भेज देते हैं। हमारा कहवा ग्रेट ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी, हालैंड, बेलजियम आदि यूरोपीय देशों को जाता है। कुल निर्यात का तीन-चौथाई भाग अकेले मंगलौर से भेजते हैं। इसके अतिरिक्त मद्रास और कालीकट से भी कहवा बाहर जाता है।

आजकल ब्राजील का कहवा सस्ता मिलने के कारण भारत का कहवा दूर देशों में मँहगा पड़ता है अतः इसका निर्यात दिन-प्रतिदिन घट रहा है परन्तु देश का भीतरी बाजार बढ़ने के कारण निराश होने की आवश्यकता नहीं है।

(इ) रेशे वाले पौधे

भारत का जलवायु उष्ण होने से यहाँ के लोग सूती वस्त्र ही पहनते हैं। सूती वस्त्र तैयार करने के लिये कपास की आवश्यकता होती है। इस बात में हमारा देश सौभाग्यशाली है क्योंकि यहाँ कपास की उपज अच्छी होती है। इसी प्रकार टाट की बोरियाँ बनाने के लिए हमारे यहाँ पाट की बहुत पैदावार होती है। इन रेशे वाले पौधों से हमारे किसानों को अच्छी आमदनी होती है।

१. कपास

१. साधारण परिचयः—भारतीय किसान के लिये कपास धन-प्राप्ति का अच्छा साधन है। हमारे देश में दिन-प्रतिदिन सूती-वस्त्रों के कारखानों के खुलने से कपास की माँग बहुत बढ़ रही है। इस प्रकार कपास की उपज के लिए हमारे घर में ही बड़ा भारी बाजार है।

२. आवश्यकताएँः—(अ) जलवायुः—भारत में कपास कई प्रकार के जलवायु में बोई जाती है। वास्तव में कपास के लिये कुछ गर्म जलवायु चाहिये। कुछ अधिक गर्मी हो तो जलवायु अच्छा रहता है। उस समय का तापक्रम ८०° फ० ठीक रहता है। उगते समय वायु में आर्द्रता का होना भी आवश्यक है। भारत के जिन भागों में वार्षिक वर्षा ३० इंच और ५० इंच के बीच होती हो वहाँ कपास की खेती आसानी से हो सकती है। इससे कम वर्षा वाले प्रदेशों में सिंचाई की जाती है। पंजाब और उत्तर-प्रदेश में सिंचाई द्वारा ही कपास की खेती होती है। बोते समय वर्षा का वितरण सारी भूमि में एकसा होना चाहिए। यही कारण है कि कपास की बुआई जुलाई और सितम्बर के बीच होती है। कपास चुनने का समय तेज धूप का हो। उस समय कुहरा पड़ना हानिकारक होता है। हमारे यहाँ फरवरी-मार्च में कपास की फसल तैयार हो जाती है।

(आ) मिट्टीः—कपास की फसल मिट्टी पर बहुत कुछ आधारित है। भारत में कपास तीन प्रकार की मिट्टी में होती हैः—

(क) काली मिट्टीः—भारत की कपास का अधिकांश उत्पादन बम्बई और मध्य प्रदेश की काली मिट्टी में होता है। इस मिट्टी में नमी बनी रहती है अतः इसके लिए सिंचाई की विशेष आवश्यकता नहीं होती।

(ख) कच्छारी मिट्टीः—गंगा-सिन्धु के मैदान की रेतीली कच्छारी भूमि में भी कपास होती है। यहाँ कम वर्षा होने से सिंचाई का प्रयोग होता है। इस मिट्टी में पैदा की हुई कपास उत्तम कोटि की गिनी जाती है।

(ग) लाल और पथरीली काली मिट्टी का मिश्रण:—इस प्रकार की मिट्टी मध्य प्रदेश, आंध्र प्रदेश और मद्रास राज्यों में मिलती है। मिट्टी कम उपजाऊ होने के कारण यहाँ की कपास भी अच्छी नहीं होती।
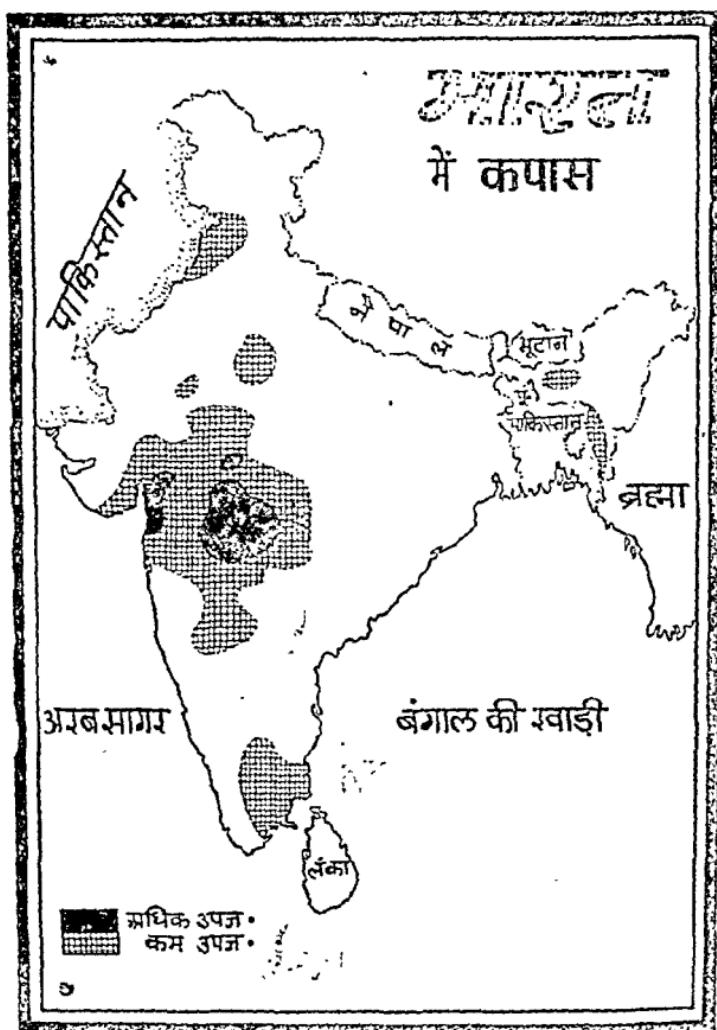
चित्र सं० ३८. भारत में कपास की उत्पत्ति

(घ) सस्ती मजदूरी:—कपास चुनने का काम हाथ से ही किया जाता है। इसमें मशीनें सहायक नहीं हो सकतीं। इसीलिए कपास के लिए सस्ते मजदूरों का मिलना आवश्यक है।

३. कुल पैदावार:—सन् १९५७ में भारत में १९,८४३ हजार एकड़ भूमि में कपास की खेती हुई और कुल उत्पत्ति ४,७२३ हजार गाँठें हुईं।

देश के विभाजन से कपास की उपज पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ा। कपास पैदा करने वाले भाग का पर्याप्त अंश पाकिस्तान में चला गया है और वहाँ होने वाली कपास भी उत्तम कोटि की है।

विश्व के कपास पैदा करने वाले देशों में अमेरिका के पश्चात् भारत का ही स्थान है। परन्तु अन्य खेती की पैदावार की भाँति यहाँ कपास की भी प्रति एकड़ उपज बहुत कम है। निम्नलिखित अङ्कों से यह स्पष्ट होता है—

नाम देश	पैदावार प्रति एकड़ (पौंड में)—
मिस्र	५३०
रूस	३२०
सूडान	२७५
संयुक्त राष्ट्र अमेरिका	२७०
भारत	९०
यूगेण्डा (अफ्रीका)	८५
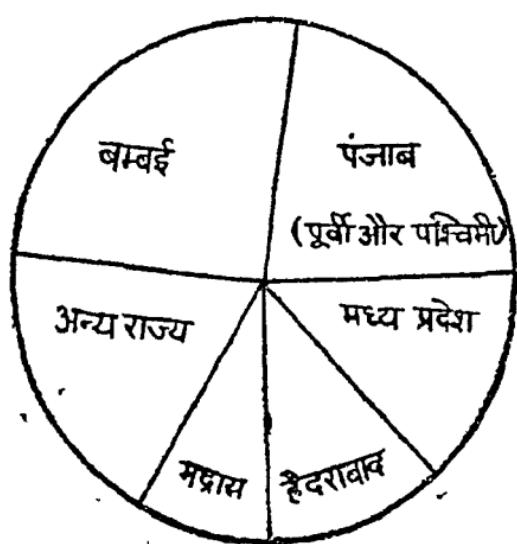
चित्र सं० ३९. भारत के कपास पैदा करने वाले क्षेत्र

भूमि को उत्तम खाद देने, वैज्ञानिक तरीकों से खेती करने, उत्तम बीज के प्रयोग तथा पौधे की बीमारी और कीटाणुओं से रक्षा करने से हमारे यहाँ कपास की उत्पत्ति बढ़ाई जा सकती है।

४. उत्पत्ति के क्षेत्र:—जैसा कि पहले बताया जा चुका है कपास की खेती दक्षिणी भारत में भी होती है और उत्तरी भारत में भी।

देश की कुल उपज का लगभग आधा भाग दक्षिणी भारत के बम्बई और मध्य प्रदेश राज्यों में होता है। बम्बई का काली मिट्टी का प्रदेश कपास की खेती के लिए बहुत विख्यात है। इस राज्य के अहमदाबाद, सूरत, भड़ौंच, धारवार तथा खानदेश में पर्याप्त कपास होती है। भड़ौंच की कपास उत्तम कोटि की गिनी जाती है।

बम्बई और मध्य प्रदेश के अतिरिक्त दक्षिणी भारत में आंध्र प्रदेश और मद्रास में भी कपास की अच्छी पैदावार होती है।

उत्तरी भारत में कपास उत्पन्न करने वाले दो राज्य मुख्य हैं–पंजाब और उत्तर प्रदेश। उन दोनों में अमेरिकन कपास बोई जाती है जो उत्तम कोटि की गिनी जाती है। वहाँ कपास की खेती सिचाई से होती है। उन राज्यों में भूमि का अधिकांश गेहूँ, गन्ना आदि के बोने में काम आने से कपास के लिए कम भूमि रह जाती है।

५. व्यापारः—युद्ध से पूर्व हमारे यहाँ से कपास निर्यात की जाती थी। जितनी कपास हमारे यहां से बाहर जाती थी, उसका लगभग ६०% अकेले जापान को जाता था। इसका कारण यह था कि जापान में भारत की घटिया कपास को अमेरिका की उच्चकोटि की कपास में मिलाकर अच्छा कपड़ा बुन लेते हैं। वहाँ की मिलें ऐसा कपड़ा बनाने में समर्थ हैं। जापान के बाद ग्रेट ब्रिटेन का स्थान था। प्रत्येक में कुल निर्यात का १५% जाता था। इसके पश्चात् इटली और जर्मनी का स्थान था। प्रत्येक में कुल निर्यात की ६% कपास जाती थी।

युद्ध के समय हमारे यहाँ की मिलों में सूती वस्त्र बहुत बुनने लगा। यहाँ कपास के लिए हमारे देश में ही बहुत मांग बढ़ गई है। अतः निर्यात बहुत कम हो गया है।

देश का विभाजन हो जाने पर कपास की कमी हो गई। पश्चिमी पंजाब और सिंध में उत्तम कोटि की कपास होती थी। ये दोनों प्रान्त पाकिस्तान में चले जाने से हमारी मिलों में कपास की कमी हो गई। अब हम मिस्र और अमेरिका से कपास मँगवाते हैं। देश के लिए ऐसा करना लाभप्रद नहीं है। यही कारण है कि देश में कपास की खेती में वृद्धि की जा रही है। सरकार की ओर से इस दशा में बहुत प्रयत्न किया जा रहा है। साधारण कपास पैदा करने वाले क्षेत्रों में उत्तम कोटि की कपास बोई जा रही है। बेकार पड़ी हुई भूमि में भी सिंचाई के साधनों का प्रबन्ध करके कपास बोई जाती है।

२. पाट

विभाजन से पूर्व भारत में पाट की खेती का एकाधिकार था। इसके निर्यात से देश को पर्याप्त धन प्राप्त होता था।

पाट का पौधा ८-१० फीट ऊँचा होता है। इसकी छाल को डंठल से अलग कर लेते हैं। इसी को पाट कहते हैं। पाट से बोरियाँ, तिपाल, पर्दे तथा पैकिंग का सामान तैयार करते हैं।

१. आवश्यकताएँः—(अ) जलवायुः—पाट उष्ण कटिबन्ध की उपज है। इसके लिए उच्च तापक्रम और भारी वर्षा की आवश्यकता होती है। साल का औसत तापमान ८०°

और १००° फ० के बीच हो और वार्षिक वर्षा भी ८० इंच से १०० इंच होना जरूरी है। पौधे को नमी की बहुत आवश्यकता रहती है। पानी के बन्द खड्डों में पाट की खेती अच्छी होती होती है, जब कि दूसरे पौधे वहाँ गल जाते हैं।

(आ) मिट्टी:—पाट के लिए सब पौधों से अधिक उपजाऊ मिट्टी की आवश्यकता होती है। पौधों की जड़ें मिट्टी के उपजाऊपन को बहुत शीघ्र नष्ट कर देती हैं। इसके लिये प्रतिवर्ष नई मिट्टी मिलती रहे तो अच्छा रहता है। पाट की खेती गंगा और ब्रह्मपुत्र नदियों के डेल्टों में अधिक होती है, क्योंकि वहाँ प्रतिवर्ष पहाड़ों से नई मिट्टी आकर एकत्रित होती रहती है। नदियों में बाढ़ आने से पाट की खेती को बहुत लाभ होता है, क्योंकि बाढ़ के कारण उपजाऊ मिट्टी सब जगह फैल जाती है। देश के जिन भागों में ऐसी उपजाऊ भूमि नहीं मिलती, वहाँ अच्छी खाद देने की आवश्यकता है।

पाट की बुआई मार्च और मई के बीच होती है और इसकी कटाई अगस्त से सितम्बर तक होती है। पौधों को काटकर गट्टों में बाँध देते हैं और फिर सुखा लेते हैं। लगभग दो हफ्ते बाद उन गट्टों को पानी से बाहर निकाल लेते हैं। फिर डंठल से छिलका अलग कर लेते हैं। छिलके को एक बार फिर पानी में धो लेते है और फिर सुखा लेते हैं। इस प्रकार पाट की धुलाई (Retting) में परिश्रम करना पड़ता है।

२. कुल पैदावार:—विभाजन से पूर्व भारत में लगभग २८ लाख एकड़ भूमि में पाट बोया जाता था और कुल उत्पत्ति लगभग सवा करोड़ गांठें (एक गांठ ४०० पौंड की) थी। विभाजन के पश्चात् परिस्थिति बदल गई। पाट पैदा करने वाली भूमि का अधिकांश अब पकिस्तान में चला गया है। पहले जितनी भूमि में पाट होती थी, उसका केवल २६% भारत में रहा है और उत्पत्ति का भी २८% ही हमारे यहाँ रह गया है। भारत सरकार द्वारा देश के अन्य भागों में जहाँ पहले पाट की खेती होती ही नहीं थी, पाट की बुआई हो रही है और उसकी पैदावार दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है।

सन् १६५७ में भारत में १,८८२ हजार एकड़ भूमि में पाट बोई गई और उत्पादन ४,२२१ हजार गाठें थी।

३. उत्पत्ति के क्षेत्र:—विभाजन से पूर्व भारत में जितना पाट होता था, उसका लगभग ६०% अकेले बंगाल से ही प्राप्त होता था। बंगाल के मैमनसिंह, ढाका, फरीदपुर, रंगपुर, पवना, राजाशाही, कोमिला, बोगरा आदि जिले पाट की पैदावार के लिए प्रसिद्ध थे। परन्तु उस भूमि का अधिकांश पाकिस्तान के पूर्वी बंगाल प्रान्त में चला गया है। भारत के पश्चिमी बंगाल राज्य में पाट की खेती की जाने वाली भूमि थोड़ी रह गई है। फिर भी आज बंगाल में भारत का सबसे अधिक पाट मिलता है।

बंगाल के अतिरिक्त शेष १०% पाट आसाम, बिहार और उड़ीसा में होता था। आसाम में ब्रह्मपुत्र नदी की घाटी तो भारत में हैं लेकिन सिलहट की घाटी अब पाकिस्तान में चली गई

है। बिहार में पाट की खेती पर विभाजन का कोई असर न पड़ा और भविष्य में यही राज्य पाट की खेती के लिये मुख्य रहेगा। राज्य के उत्तरी भाग में पूर्णिया जिले में पाट होता है। वहाँ
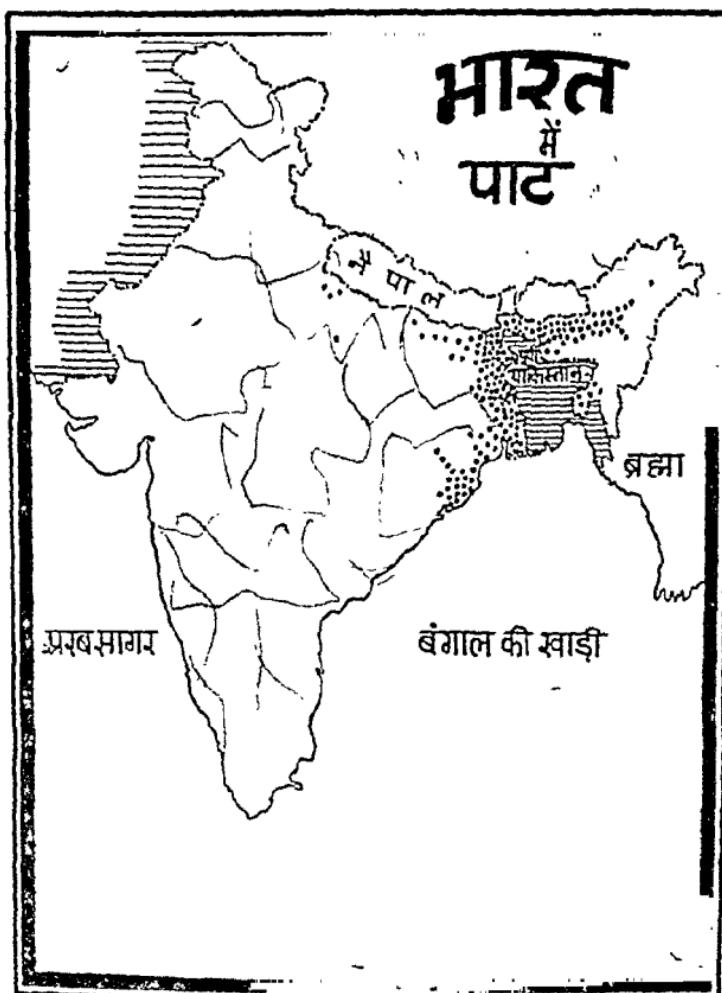
चित्र सं० ४०. भारत में पाट की पैदावार

तराई क्षेत्र में नेपाल और बिहार राज्यों में पाट की खेती और की जा सकती है। उड़ीसा के कटक जिले में पाट की खेती होती है।

४. पाट की खेती के नवीन क्षेत्रः—हमारी पाट की मिलों के लिए कच्चे माल की कमी होने के कारण भारत सरकार की योजनानुसार देश के विभिन्न भागों में पाट की खेती की जा रही है। पाट कृषि-शोधक (Jute Agricultural Research) विभाग के प्रयास से पाट की वृद्धि के लिए निम्नलिखित उपाय किए जा रहे हैं:—

(अ) पहले जिन भागों में पाट की खेती होती थी, वहाँ खेती के तरीकों में सुधार कर उपज में वृद्धि की जा रही है। अब पाट को पंक्तियों में बोया जाता है, जिससे सारी जमीन काम आ सके। बीज भी उत्तम कोटि का काम में लिया जाता है। बंगाल और बिहार के उन भागों में, जहाँ दलदली भूमि पहले यों ही पड़ी थी, पाट की खेती की जा रही है।
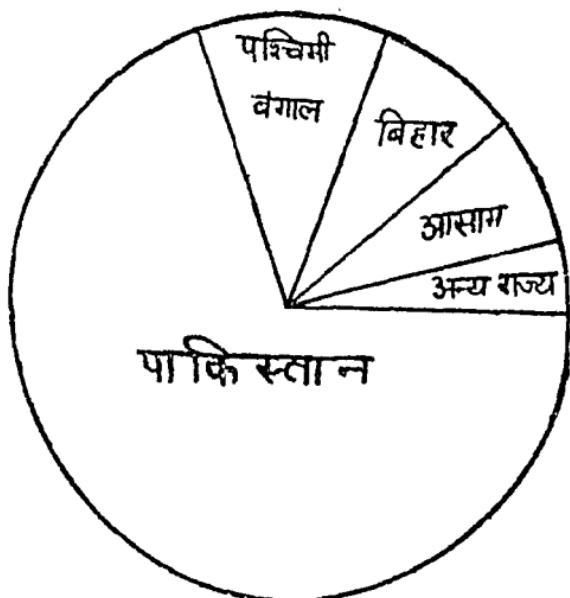
चित्र सं० ४१. भारत के पाट पैदा करने वाले राज्य

(आ) उत्तर प्रदेश के तराई क्षेत्र में लगभग पचास हजार एकड़ भूमि में पाट की खेती आसानी से हो सकती है। यह भूमि व्यर्थ ही पड़ी है और पाट की खेती से उसकी उपयोगिता बढ़ जायगी। पाट की खेती का यह काम वहाँ प्रारम्भ हो चुका है।

(इ) दक्षिणी भारत में पाट की खेती:—बंगाल और बिहार में पाट के लिये कम भूमि रहने के कारण दक्षिणी भारत में पाट की खेती के लिए जाँच की गई। एक ही साल के अनुभव ने बता दिया कि मद्रास और केरल राज्यों में पाट की खेती के अनुकूल काफी जमीन पड़ी है। केरल में ऐसी लगभग दो हजार एकड़ भूमि पड़ी हुई थी, जहाँ दलदल होने के कारण साल में केवल चावल की एक ही फसल हो सकती थी। वहाँ अब पाट की खेती की जाने लगी है। मद्रास की नदियों के डेल्टा-प्रदेश में जूट बोई जाने लगी है। बम्बई में भी पाट की खेती के लिए जाँच की गई तो ज्ञात हुआ कि पश्चिमी समुद्र तट के मैदान में इसकी खेती के लिए बहुत संभावना है। इस प्रकार दक्षिणी भारत के कई स्थानों में अब पाट की खेती होने लगी है।

हमारी मिलों के लिए प्रतिवर्ष लगभग पचास लाख जूट की गाँठों की और आवश्यकता रहती है। ऐसी आशा की जाती है कि पाट की खेती में वृद्धि करने से शीघ्र ही हम जूट के सम्बन्ध में आत्मनिर्भर हो जाएँगे।

५. व्यापार:—हमारे यहाँ पर समय समय पर जितने परिवर्तन पाट के व्यापार में हुए हैं, उतने किसी भी वस्तु के लिए नहीं हुए।

प्रारम्भ में हमारे विदेशी व्यापार में पाट का प्रमुख स्थान रहता था। हमारे यहाँ से जितना निर्यात होता था, उसमें लगभग ३०% मूल्य का कच्चा पाट या बना हुआ सामान होता था। हमारे जूट के ग्राहकों में मुख्य ग्रेट ब्रिटेन, संयुक्तराष्ट्र अमेरिका, अर्जेन्टाइना, ब्राजील, रूस, आस्ट्रेलिया आदि थे। इनमें से अधिकांश देश कृषि-प्रधान हैं जहाँ पाट के बोरे गेहूँ तथा अन्य प्रकार की पैदावार को सुरक्षित रखने में काम आते हैं।

परन्तु धीरे-धीरे विश्व के अन्य देशों ने पाट के स्थान पर दूसरे ही प्रकार के रेशे से बोरे बनाना शुरू कर दिया, तब हमारे पाट की माँग कुछ कम होने लगी।

गत महायुद्ध में विदेशों को पाट का माल कम जाने लगा, परन्तु लड़ाई में रेत के थैले, सीमेंट के बोरे तथा तम्बू बनाने के लिए पाट की आवश्यकता पड़ी। युद्ध समाप्त होते ही पाट की माँग अचानक कम हो गई। तब सरकार को बाध्य होकर पाट की कृषि में कमी करनी पड़ी। किसानों को पाट कम पैदा करने तथा चावल और गन्ने की खेती में वृद्धि करने का आदेश दिया जाने लगा। पाट की खेती के लिए खेत का थोड़ा-सा भाग निर्धारित कर दिया गया, जिससे किसान शेष भाग में खाद्यान्न उत्पन्न कर सकें।

देश के विभाजन से परिस्थिति बिल्कुल ही बदल गई। पाट पैदा करने वाली भूमि का अधिकांश पाकिस्तान में चले जाने के कारण सरकार ने देश के भिन्न-भिन्न भागों में पाट उत्पन्न करने की योजनाएँ बनाईं। पाट की खेती करने के लिए किसानों को प्रोत्साहन दिया जाने लगा।

विभाजन होने पर पाट निर्यात करने के स्थान पर पाकिस्तान से बहुत सा पाट खरीदने के लिए हम तैयार हुए। इस प्रकार पाट के व्यापार ने पिछले कुछ ही दिनों में बहुत परिवर्तन देखे। परन्तु अब हमारे यहाँ पर कारखानों में काम लाने के लिए पर्याप्त पाट उत्पन्न होने लगा है।

३. सन

पाट की भाँति सन के पौधे से भी रेशा प्राप्त होता है। इसका रेशा हमारे यहाँ मुख्यतः रस्सियाँ बटने के काम आता है। इसके पत्ते नशीले द्रव्यों (जैसे भंग) में गिने जाते हैं।

सन के लिए पाट की भाँति बहुत अधिक उपजाऊ भूमि की आवश्यकता नहीं होती। इसी कारण साधारण तापक्रम और कम वर्षा वाले भागों में भी यह पनप जाती है। यही कारण है कि जहाँ पाट की खेती देश के थोड़े से भाग में होती है, सन की खेती का विस्तार बहुत अधिक है।

हमारे यहाँ सन तीन प्रकार की होती है:—

(१) पटसन (Sann Hemp):—इसका रेशा उत्तम कोटि का गिना जाता है। इसकी उपज उत्तर-प्रदेश, बम्बई और मद्रास में अच्छी होती है। पश्चिमी यूरोप के देशों को इसका निर्यात भी किया जाता है। आजकल देश में पाट की कमी होने के कारण मद्रास राज्य के कृष्णा, गोदावरी और टिनेवेली जिलों में इसकी पैदावार को बढ़ाया जा रहा है।

(२) सिसल सन (Sisal Hemp):—इसकी खेती मुख्यतः मद्रास और बम्बई राज्य में ही होती है।

(३) भंग (Indian Hemp):—इसके हमारे यहाँ दो प्रयोग हैं—रेशे से रस्सियाँ तैयार की जाती हैं और पत्तों को मादक-द्रव्य तथा दवाइयों में काम लेते हैं। इसकी खेती उत्तरी पर्वतीय प्रदेश में होती है। नैपाल, काश्मीर और पंजाब (शिमला) इसकी खेती के लिए प्रसिद्ध हैं। भंग की पैदावार पर सरकार का नियन्त्रण है।

पहले सन की खेती की ओर किसानों का बहुत कम ध्यान था, परन्तु विभाजन के पश्चात् देश में जब से पाट की कमी आई है, तब से सन की उत्पत्ति में वृद्धि होने लगी है।

[ई] व्यापारिक उपजें

खाद्यान्नों, पेय-पदार्थों तथा वस्त्र बनाने के लिये कच्चे माल के अतिरिक्त भारत में और भी कई प्रकार की उपजें होती हैं, जिनके उत्पादन से किसान को अच्छा धन मिलता है, देश में उनसे कई व्यवसाय चलते हैं और विदेशी लोग भी उनसे बहुत लाभ उठाते हैं। इस प्रकार की व्यापारिक उपजों में तिलहन, तम्बाकू तथा रबर का मुख्य स्थान है।

१. तिलहन

१. साधारण परिचय:—विश्व में सबसे अधिक तिलहन हमारे देश भारत में ही होते हैं। यहाँ अनेक प्रकार के तिलहन मिलते हैं जैसे अलसी, सरसों, तिल, मूँगफली, बिनौला आदि। इनका तेल निकाल कर भारत तथा अन्य देशों में कई कामों में आता है। प्राचीन काल में तेल को जलाकर रोशनी करते थे परन्तु आजकल इसके लिए मिट्टी का तेल ही बहुधा काम आता है। देश के विभिन्न राज्यों में तेल खाने में काम आता है। वनस्पति घी इन्हीं तेलों से तैयार किया जाता है। आजकल तेल से कई कारखाने चलते हैं—जैसे साबुन बनाना, रोगन तथा वार्निश तैयार करना, दवाइयाँ तैयार करना आदि। तेल की खली पशुओं को खिलाने से पशु मजबूत होते हैं और अच्छा दूध देते हैं। खली को खेतों में डालकर मिट्टी के उपजाऊपन को भी बढ़ाया जाता है। खली बहुत कीमती खाद गिनी जाती है।

बीज तथा उत्पत्ति के स्थान के अनुसार हमारे यहाँ उत्पन्न होने वाले तिलहन दो भागों में बाँटे जा सकते हैं—(अ) छोटे दाने वाले तिलहन—इनमें अलसी, सरसों, राई तथा तिल मुख्य हैं। ये तिलहन विशेषतः उत्तरी भारत में पाये जाते हैं। (आ) बड़े दाने वाले

तिलहन—जैसे मूँगफली, बिनौला, रेंड़ी, नारियल आदि। इनकी खेती दक्षिणी भारत में अधिक होती है।

२. कुल उत्पत्तिः—भारत में लगभग २·९३ करोड़ एकड़ भूमि में तिलहन की खेती होती है और कुल पैदावार प्रायः साठ लाख टन है।

देश के विभाजन से तिलहन की खेती पर बहुत अधिक प्रभाव नहीं पड़ा क्योंकि पहले हमारे यहाँ जितनी भूमि में तिलहन की खेती होती थी उसका केवल ८% ही पाकिस्तान में गया है, शेष सब भारत में रह गया।

३. उत्पत्ति के क्षेत्रः—हमारे देश में जितना तिलहन पैदा होता है उसका आधे से भी अधिक भाग दक्षिणी भारत में होता है। उत्तरी भारत के मैदान में अन्य खाद्यान्नों की उत्पत्ति करने के कारण तिलहन के लिए कम भूमि रह जाती है।

दक्षिणी भारत में सबसे अधिक तिलहन मद्रास राज्य में होता है। उसके पश्चात् क्रमशः आंध्र प्रदेश, मध्य प्रदेश और बम्बई का स्थान है। उत्तरी भारत में पंजाब, उत्तर-प्रदेश, बिहार, बंगाल तथा आसाम सभी राज्यों में तिलहन की थोड़ी बहुत खेती होती है परन्तु इन सब राज्यों की पैदावार मिलाकर अकेले मद्रास राज्य के बराबर है।

४. तिलहन की किस्मेंः—प्रत्येक प्रकार के तिलहन का यहाँ थोड़ा-थोड़ा विवरण दिया जाता है।

(अ) छोटे दाने के तिलहन

१. अलसीः—यह रबी की फसल है। इसके लिए गहरी मिट्टी की आवश्यकता होती है जिसमें नमी काफी समय तक ठहर सके। वर्षा का औसत ३० इंच और ६० इंच के बीच होना चाहिए। इस प्रकार अलसी के लिए उत्तम मिट्टी और उत्तम जलवायु होना चाहिये।

हमारे देश में प्रतिवर्ष लगभग तैंतीस लाख एकड़ भूमि में अलसी की खेती होती है और कुल उपज प्रायः चार लाख टन होती है। अलसी पैदा करने वाले देशों में भारत का विश्व में तीसरा स्थान है (पहला अर्जेन्टाइना और दूसरा रूस है)।

भारत में अलसी की उपज के लिए दो क्षेत्र प्रसिद्ध हैं—(अ) काली मिट्टी वाला प्रदेश और (आ) गंगा-सिन्धु का मैदान। काली मिट्टी के प्रदेश में पैदा की गई अलसी उच्चकोटि की गिनी जाती है। राज्यों के अनुसार अलसी की अधिकांश पैदावार मध्य प्रदेश, बम्बई, बिहार और उत्तर प्रदेश में होती है। शेष अलसी पंजाब, आंध्र प्रदेश और राजस्थान में होती है।

अलसी का तेल वार्निस और रोगन बनाने में काम आता है। देश में उत्पन्न की हुई अलसी का अधिकांश पश्चिमी यूरोप के औद्योगिक देशों (विशेषतः इंग्लैंड, फ्रांस, बेलजियम,

इटली आदि) को भेज दिया जाता है। अभी हाल में हमारे देश के कई भागों में तेल निकालने की कुछ मिलें स्थापित हो गई हैं जिनसे अलसी के निर्यात में दिन प्रतिदिन कमी हो रही है।
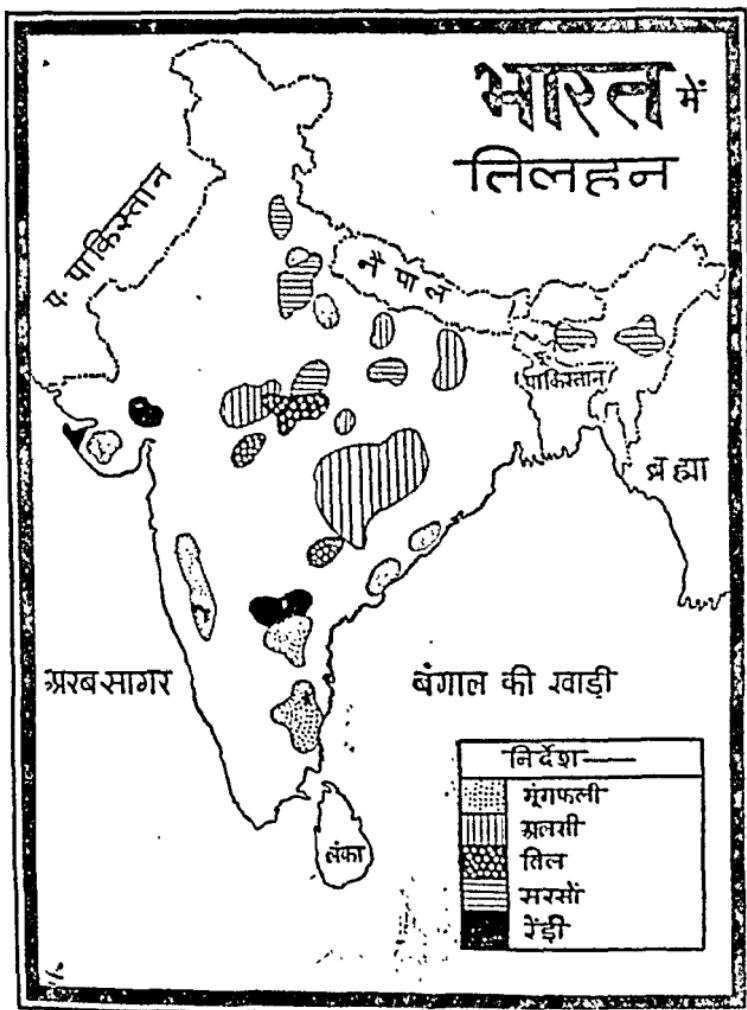
चित्र सं० ४२. भारत के विभिन्न तिलहन

२. सरसों:—इसकी खेती अलसी के साथ होने के कारण यह भी रबी की ही फ़सल है। इसकी पैदावार उत्तरी भारत में ही होती है। सरसों के लिए उपजाऊ मिट्टी और शुष्क, शरद जलवायु की आवश्यकता होने के कारण इसकी उत्पत्ति के क्षेत्र गङ्गा-सिन्धु के मैदान में स्थित पंजाब, उत्तर प्रदेश, बिहार और बङ्गाल हैं। कुल पैदावार का लगभग आधा भाग अकेले उत्तर प्रदेश में होता है।

सरसों का तेल प्रायः खाने में काम आता है। सरसों का निर्यात भी होता है। प्रतिवर्ष

इंगलैंड, फ्रांस, बेलजियम और इटली को काफी सरसों भेजी जाती है। वहाँ इसका तेल निकाल कर कारखानों में काम लेते हैं।

३. राईः—देश में जिन भागों में सरसों बोई जाती है वहीं पर राई की खेती होती है। कई जगह तो ये दोनों साथ-साथ एक ही स्थान पर बोई जाती हैं। यह भी गेहूँ, जौ अथवा चने के साथ ही बोई जाती है। सरसों और राई दोनों की खेती लगभग ५७ ला॰ एकड़ भूमि में होती है और कुल पैदावार दस लाख टन होती है। इन दोनों में सरसो अंश अधिक है।

राई विदेशों को नहीं भेजी जाती। इसका तेल देश में ही निकाल कर घरों में काम में ले लिया जाता है।

४. तिलः—उपजाऊ मिट्टी तो अच्छी होती ही है परन्तु तिल की खेती साधारण भूमि में भी हो सकती है। यही कारण है कि तिल की उपज भारत के कई भागों में होती है।

देश के ठण्डे भागों में तिल खरीफ की फसल है और गर्म भागों में रबी की। वैसे तो तिल कई स्थानों में होता है परन्तु मद्रास, मध्य प्रदेश, बिहार, उत्तर प्रदेश, बंगाल और बम्बई इसके लिए विशेष उल्लेखनीय हैं। राजस्थान में भी तिल की कुछ पैदावार होती है।

मूँगफली के बाद तिल की खेती अन्य तिलहनों से सबसे अधिक भूमि में होती है। इसकी खेती लगभग ६४ लाख एकड़ भूमि में होती है और कुल वार्षिक उपज लगभग छः लाख टन है। विश्व में तिल की कुल पैदावार का प्रायः चौथाई भाग भारत में पैदा होता है।

हमारे देश में जितना तिल होता है उसका तीन-चौथाई भाग तो देश में ही तेल निकालने के काम आ जाता है। केवल चौथाई भाग निर्यात किया जाता है। निर्यात का अधिकांश ग्रेट ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी, बेलजियम, इटली, मिस्र आदि को जाता है।

(आ) बड़े दाने के तिलहन

५. मूँगफलीः—इसका जन्मस्थान ब्राजील देश माना जाता है। सोलहवीं शताब्दी से इसकी खेती भारत में की जाने लगी। आज भारत में विश्व के सभी देशों से अधिक मूँगफली होती है।

मूँगफली उष्ण कटिबन्ध की पैदावार है। इसके उगते समय काफी दिनों तक जलवायु गर्म रहना चाहिए। २० इं॰ और २५ इं॰ के बीच की वर्षा पर्याप्त होती है। पौधे के लिए पाला बड़ा खतरनाक है। मूँगफली की खेती साधारण रेतीली मिट्टी में भी अच्छी हो सकती है। इसकी फसल के बाद मिट्टी का उपजाऊपन बढ़ जाता है।

हमारे देश में जितनी भूमि में तिलहन की खेती है उसके प्रायः चौथाई भाग में अकेली

मूँगफली बोई जाती है। लगभग १·२६ करोड़ एकड़ भूमि में मूँगफली की खेती होती है और कुल पैदावार का वार्षिक अनुमान ३८ लाख टन है।

चित्र सं० ४३. भारत में मूँगफली उत्पन्न करने वाले राज्य

सम्पूर्ण पैदावार का अधिकांश प्रायद्वीपी भारत में होता है। अकेले मद्रास राज्य में कुल पैदावार का आधा भाग होता है। इसके अतिरिक्त बम्बई, आंध्र प्रदेश और मध्य प्रदेश का स्थान है। उत्तरी भारत में उत्तर प्रदेश इसकी खेती के लिए प्रसिद्ध है। यत्न करने पर राजस्थान और पंजाब में भी इसकी पैदावार की जा सकती है।

कुल पैदावार का तीन-चौथाई भाग देश में ही काम आता है। मूँगफली को कच्चा भी खाते हैं। दक्षिणी भारत में तो भोजन में इसके तेल का खूब प्रयोग होता है। इसी के तेल से वनस्पति घी तैयार करते हैं।

हमारे यहाँ की मूँगफली खरीदने वाले देशों में फ्रांस, इंगलैंड, जर्मनी, बेलजियम, संयुक्तराष्ट्र अमेरिका, आस्ट्रेलिया और हंगरी मुख्य हैं। फ्रांस के कई व्यवसाय हमारी मूँगफली पर निर्भर हैं।

सबसे अधिक मूँगफली मद्रास बन्दरगाह द्वारा बाहर भेजी जाती है। बम्बई मूँगफली भेजने का दूसरा बन्दरगाह है।

६. बिनौला:—देश के जिन भागों में कपास की खेती होती है वहाँ बिनौला भी मिलता है क्योंकि यह कपास के पौधे का बीज है। इस प्रकार बम्बई, मध्य प्रदेश, पंजाब, उत्तर-प्रदेश आदि राज्यों में बिनौला होता है।

पहले बिनौले को केवल दूध देने वाले पशुओं (विशेषतः भैंसे) को ही खिलाते थे।

परन्तु अब तो इसका तेल भी निकाला जाने लगा है। यह तेल वनस्पति घी बनाने में काम आता है।

खेत से जितनी कपास प्राप्त होती है उसके दो-तिहाई भाग में तो बिनौला होता है और एक-तिहाई केवल रुई रह जाती है। भारत में प्रायः बीस लाख टन से भी अधिक बिनौला मिलता है।

बिनौले का निर्यात बहुत कम होता है। थोड़ा-सा यूरोप के पश्चिमी देशों को भेज देते हैं शेष देश में ही काम आ जाता है। इसकी खली बड़ी अच्छी होती है। इसको मनुष्य भी खाते हैं और पशुओं को भी खिलाते हैं। इसके खाने से पशु अधिक दूध देते हैं और उसमें घी की मात्रा बढ़ जाती है। बिनौले की खली बहुत कीमती खाद भी होती है, इसको खेतों में देने से पैदावार खूब बढ़ जाती है।

७. **अन्डी या रेंडीः**—यह उष्ण कटिबन्ध वाले देशों में उगने वाला एक पौधा है जिसकी ऊँचाई १० फीट और १५ फीट के बीच होती है। इसके बीज से तेल निकाला जाता है।

अंडी का तेल अधिक चिकना होता है। अधिक साफ किया हुआ तेल दवाइयों में काम आता है। इसका जुलाब अच्छा गिना जाता है। तेल से साबुन और मोमबत्ती भी बनाई जाती है। जलाने में भी यह तेल अच्छा होता है क्योंकि इसकी लौ से धुआँ बहुत कम निकलता है। अधिक ठंड पड़ने पर भी इसका तेल नहीं जमता। यही कारण है कि अधिक ऊँचाई पर उड़ने वाले वायुयानों में अंडी के तेल का प्रयोग किया जाता है। सूती कपड़े को रंगने और छापने के लिए जो 'लाल तेल' काम में आता है वह भी अण्डी से ही तैयार होता है। अंडी की खली कीमती खाद होती है। इस प्रकार अण्डी का तेल कई कामों में प्रयुक्त होता है।

पहले विश्व के अण्डी की उपज का तीन-चौथाई से भी अधिक भाग भारत में होता था और भारत का स्थान प्रथम था। परन्तु अब ब्राजील में अंडी की पैदावार होने से हमारा स्थान दूसरा रह गया है।

अंडी के लिए दुमट मिट्टी सर्वोत्तम गिनी जाती है। वर्षा की इसको अधिक आवश्यकता नहीं होती। इसकी जड़ों में पानी का भरा रहना बड़ा हानिकारक होता है।

अण्डी की उपज भारत के कई राज्यों में होती है परन्तु आंध्र प्रदेश और मद्रास राज्य इसके लिए प्रसिद्ध हैं। इनके अतिरिक्त बम्बई, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, बिहार और उड़ीसा का स्थान है।

भारत में लगभग १३ लाख एकड़ भूमि में अंडी बोई जाती है और इसकी कुल पैदावार लगभग एक लाख टन है। कुल उपज का दो-तिहाई भाग तो देश में ही तेल निकालने के लिए काम आ जाता है। केवल एक-तिहाई विदेशों को जाता है। हमारे प्रमुख ग्राहक ग्रेट ब्रिटेन, संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, फ्रान्स, बेलजियम, इटली और स्पेन हैं।

८. खोपरा:—नारियल की गिरी जब सूख जाती है तो उसके टुकड़े कर देते हैं और उसी को खोपरा कहते हैं। कोल्हू या मशीन से पेल कर खोपरे से तेल निकाला जाता है जो बहुत कीमती होता है।

नारियल का वृक्ष उष्ण कटिबन्ध वाले देशों के समुद्री किनारे पर अधिक होता है। इसके लिए उच्च तापक्रम और अधिक वर्षा की आवश्यकता होती है। मिट्टी उपजाऊ हो। कुछ रेतीली मिट्टी इसके लिए अधिक उपयुक्त होती है।

नारियल का तेल सिर में डालने, भोजन में और साबुन बनाने के काम आता है। हमारे देश में जितना नारियल पैदा होता है उसके लगभग आधे का तेल निकाल लिया जाता है। शेष वैसे ही खा लिया जाता है।

दक्षिणी भारत में समुद्र किनारे पर लगभग १५ लाख एकड़ भूमि नारियल के वृक्षों से घिरी हुई है। वहाँ मद्रास, केरल और मैसूर राज्यों में नारियल की पैदावार अच्छी होती है। इसके अतिरिक्त बम्बई, बंगाल और उड़ीसा के तट पर भी नारियल के बहुत से पेड़ हैं।

नारियल का प्रायः सारा तेल देश में ही काम में ले लिया जाता है। अतः इसका निर्यात बहुत कम होता है।

पहले हमारे यहाँ से बहुत सा तिलहन बाहर भेजा जाता था। उससे देश को अच्छा धन मिलता था। हमारे निर्यात में तिलहन का मुख्य स्थान था। परन्तु अब धीरे-धीरे तिलहन का निर्यात कम हो रहा है। हमारे यहाँ पर कोल्हू या छोटी-छोटी मशीनों से तेल निकाला जाता है। इससे बहुत से लाभ हैं। हमारे यहाँ के भाइयों को रोजी मिल जाती है। खली भी देश ही में काम आ जाती है।

तिलहन के निर्यात से हमारे देश को बहुत हानियाँ होती हैं:—

(अ) निर्यात होने से तेल की खली विदेशों को चली जाती है। यह खली पशुओं को खिलाने में काम आती है और उसको खेतों में देने से मिट्टी का उपजाऊपन बहुत बढ़ जाता है।

(आ) तिलहन विदेशों में जाने से उसका तेल भी वहीं निकलता है और वहाँ के मजदूरों को ही पैसा मिलता है। हमारे देश की बढ़ती हुई जन-संख्या के लिए यह बहुत घातक है।

(इ) विदेशों से तेल मँगाने से महँगा पड़ता है। तिलहन के निर्यात को रोकने से देश में सस्ता तेल मिलेगा और इससे कई व्यवसाय बढ़ जाएँगे जैसे साबुन बनाना, मोमबत्ती बनाना, घी तैयार करना आदि।

(ई) देश के भीतरी भागों से बन्दरगाहों तक भेजने में काफी तिलहन नष्ट हो जाता है। फिर वहाँ से विदेशों को भेजने में भी जहाज में पर्याप्त हानि होती है।

(उ) तिलहन का विदेशों को निर्यात करने से मार्ग में जहाज का किराया व्यर्थ ही लग जाता है। फिर विदेशों से हमारे यहाँ तेल मंगवाने में भी खर्च हो जाता है। इस प्रकार विदेशों का तेल बहुत महँगा पड़ता है।

इन कारणों से धीरे धीरे तिलहन निर्यात को रोकने का यत्न करना चाहिये।

२. तम्बाकू

१. साधारण परिचयः—सोलहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में पुर्तगालवासियों द्वारा तम्बाकू का पौधा भारत में लाया गया। तब से इसकी खेती में यहाँ दिन प्रति दिन वृद्धि होती गई। हमारे देश में तम्बाकू की उपज पर्याप्त मात्रा में होती है और इसकी खेती से किसान को अच्छा रुपया मिलता है।

२. भौगोलिक आवश्यकताएँ:—तम्बाकू उष्ण अथवा अर्द्ध-उष्ण प्रदेश का पौधा है। इसके लिए बहुत उपजाऊ मिट्टी, पर्याप्त गर्मी (८०° फ०) और पर्याप्त पानी चाहिये। तम्बाकू की जड़ें खेत की मिट्टी को बहुत कमजोर कर देती हैं। यही कारण है कि तम्बाकू बोने से पहले खेत को खूब खाद देनी पड़ती है। खेत की सिंचाई भी कई बार करनी पड़ती है। पाला इसके लिए बहुत हानिप्रद होता है। हमारे यहाँ तम्बाकू रबी की फसल है। मार्च-अप्रैल में फसल तैयार हो जाती है।

३. कुल पैदावार:—तम्बाकू पैदा करने में भारत का विश्व में दूसरा स्थान है (प्रथम संयुक्त राष्ट्र अमेरिका है) सम्पूर्ण विश्व में तम्बाकू का लगभग एक-तिहाई भाग भारत में होता है। भारत में सन् १९५७ में १,०२२ हजार एकड़ भूमि में तम्बाकू बोई गई और उत्पादन २०६ हजार टन हुआ।

४. उत्पत्ति का क्षेत्रः—भारत के कई भागों में तम्बाकू की खेती की जाती है। उत्तरी-भारत में बिहार और बंगाल में काफी तम्बाकू होती है। बिहार की अधिकांश पैदावार दरभंगा, मुजफ्फरपुर, मुंगेर और पूर्णिया जिलों से प्राप्त होती है। बंगाल में जलपाइगुड़ी और हुगली जिले तम्बाकू के लिये प्रसिद्ध हैं। इनके अतिरिक्त पंजाब में भी तम्बाकू की कुछ खेती होती है।

दक्षिणी भारत में मद्रास और बम्बई राज्यों में तम्बाकू की अच्छी खेती होती है। मद्रास राज्य की कुल पैदावार का आधे से अधिक भाग अकेले गंटूर जिले में होता है। शेष विसाखापटनम्, गोदावरी, मदुरा और कोयम्बटूर से मिलती है। बम्बई, बड़ौदा, सतारा और बेलगांव में काफी तम्बाकू होती है। आंध्र प्रदेश में भी कुछ तम्बाकू होती है।

५. व्यापार:—भारतीय तम्बाकू उच्च कोटि की नहीं होती। यह अधिकतर हुक्के के काम की होती है। आजकल सिगरेट बनाने की पैदावार बढ़ाई जा रही है। अधिकांश तम्बाकू

देश के भीतर ही काम आ जाने के कारण निर्यात के लिए बहुत कम बचती है। फिर भी कुछ तम्बाकू विदेशों को भेजते ही हैं। ग्रेट ब्रिटेन हमारा सबसे बड़ा ग्राहक है। कुछ तम्बाकू जापान

चित्र सं० ४४. भारत के तम्बाकू उत्पन्न करने वाले भाग

तथा एशिया के मध्य-पूर्वी देशों को भी भेजी जाती है। कुल निर्यात का लगभग तीन-चौथाई भाग मद्रास बन्दरगाह से होता है और शेष प्रायः बम्बई से।

२. रबर

हमारे देश में रबर की उत्पत्ति लगभग पिछले ५० सालों से की जा रही है। रबर एक वृक्ष के दूध से तैयार किया जाता है।

रबर के लिए बहुत उपजाऊ मिट्टी की आवश्यकता होती है। इसके लिए गर्मी अधिक होनी चाहिये। साल का औसत तापक्रम १००° फ० होने से रबर का पेड़ पनप सकता है। पानी की भी रबर को बहुत आवश्यकता होती है। यह वृक्ष उन्हीं स्थानों में लग सकता है जहाँ की वार्षिक वर्षा का औसत १०० इंच से भी अधिक हो। रबर प्राप्ति के लिए एक आवश्यकता और है और वह है सस्ती मज़दूरी का होना। रबर के पेड़ से दूध एकत्रित करने में बहुत आदमियों की जरूरत होती है।

भारत में लगभग १·७ लाख एकड़ भूमि में रबर के वृक्ष हैं और कुल रबर की पैदावार ४·३३ करोड़ पौंड है। कुल पैदावार का आधा भाग तो उत्तम कोटि का होता है और शेष घटिया। भारत विश्व का लगभग २% रबर पैदा करता है।

दक्षिणी भारत में ही रबर के लिए वांछित जलवायु है। अतः वहीं पर देश का अधिकांश रबर होता है। देश की कुल पैदावार का लगभग तीन-चौथाई भाग अकेले केरल राज्य से मिलता है। लगभग १०% मद्रास राज्य में होता है। मैसूर राज्य में भी कुछ रबर होता है। आजकल आसाम राज्य में भी रबर लगाने का यत्न किया जा रहा है।

गत महायुद्ध में मलाया और दक्षिणी द्वीप-समूह के जापान के अधिकार में आ जाने से हमारे रबर की मांग बहुत बढ़ गई थी। विदेशों से रबर न मँगाकर भारत सरकार यहाँ के रबर को ही काम में लेने लगी। तब से यहाँ के रबर व्यवसाय को बहुत प्रोत्साहन मिला।

पहले हमारे यहाँ से ग्रेट ब्रिटेन, हॉलैंड, जर्मनी आदि को रबर भेजा जाता था। परन्तु अब वह निर्यात दिनों-दिन घट रहा है। देश में मोटर तथा साइकिलें बनने लगी हैं और उनके लिए रबर चाहिए। इण्डियन रबर बोर्ड की स्थापना से देश में ही अधिक और सस्ता रबर उत्पादन करने की योजनाएँ बन चुकी हैं और आशा है निकट भविष्य में हम रबर के सम्बन्ध में आत्म-निर्भर हो जाएँगे।

[उ] अन्य उपजें

उपर्युक्त कृषि की उपजों के अतिरिक्त भारत में कई प्रकार के फल, तरकारियाँ और मसाले होते हैं। इनकी उपज देश के विभिन्न भागों में होती है और उनका स्थानीय महत्व ही है। उनकी पैदावार में वृद्धि करने से हमारी खाद्य-समस्या को हल करने में बहुत कुछ सहायता मिल सकती है।

१. फल:—फलों की उपज के लिए विश्व में भारत सबसे उपयुक्त देश है। इसका कारण यह है कि यहाँ कई प्रकार की मिट्टी मिलती है और जलवायु में भी भिन्नता है। यही कारण है कि उष्ण कटिबन्ध के फलों से लेकर समशीतोष्ण कटिबन्ध के फलों तक यहाँ पैदा होते हैं। फलों की उपज के लिए सुगमता होने पर भी यहाँ इनकी उपज बहुत थोड़ी होती है। अनुमानतः भारत में जितनी भूमि में खेती होती है उसके केवल २% में ही फल और शाक

सब्जी बोई जाती है। सम्पूर्ण देश में साल में ५० लाख टन से भी कम फल होते हैं। हमारे देश की दैन्य अवस्था और यहाँ के फलों को विदेशों में भेजने के दोषपूर्ण तरीके ही इस कम पैदावार के उत्तरदायी हैं।
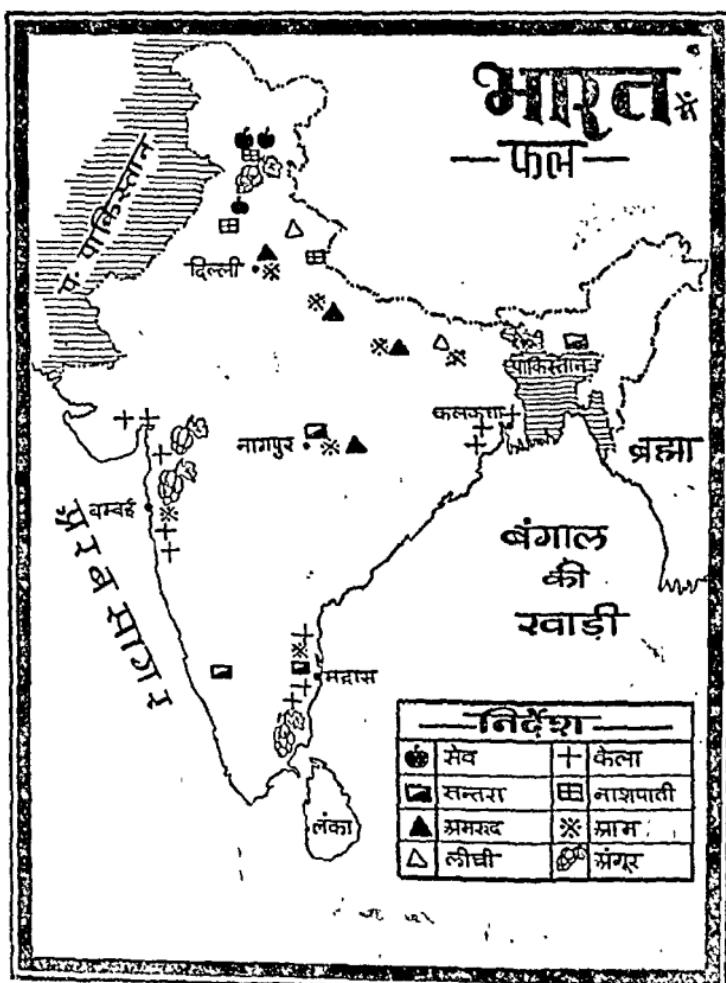
चित्र सं० ४५. भारत में फलों का उत्पादन

(१) आमः—यह उत्तम फल है और इसके उत्पादन का एकाधिकार भारत में ही है। इसके गुणों को पाश्चात्य देश के निवासियों ने भी जान लिया है। देश में प्रयुक्त होने के अतिरिक्त आजकल आम विदेशों को भी भेजा जाने लगा है। आजकल भारत के बड़े-बड़े नगरों में आम बेचने के लिए बहुत भेजा जाता है।

हमारे यहाँ कई प्रकार के आम होते हैं। देश के भिन्न-भिन्न स्थानों के आमों के स्वाद में विभिन्नता है। सबसे अधिक आम गङ्गा नदी की घाटी में मिलता है। उत्तर-प्रदेश में बहुत

आम होता है। बम्बई के आम भी बहुत प्रसिद्ध होते हैं। इसके अतिरिक्त पंजाब, बिहार, मद्रास और आसाम में भी आम होता है। इस प्रकार आम यहाँ सभी प्रकार की जलवायु में हो जाता है। लेकिन इसकी पैदावार उत्तरी भारत में अधिक होती है।

(२) केलाः—केले के लिए उष्ण और तर जलवायु की आवश्यकता होती है यह फल बहुत जल्दी पक जाता है और खराब भी हो जाता है। इसलिए केले को कच्चा ही तोड़कर बड़े-बड़े शहरों में बेचने के लिए भेज देते हैं। केले की उपज दक्षिणी भारत में अधिक होती है। बम्बई राज्य के केले बहुत प्रसिद्ध हैं। इसके अतिरिक्त मद्रास, बंगाल और आसाम में भी केला खूब होता है।

(३) सेबः—इसके लिये शुष्क और ठंडे जलवायु की आवश्यकता है। हिमालय प्रदेश के पहाड़ी ढालों पर इसके पेड़ बहुत हैं। काश्मीर, पंजाब, कूलू तथा उत्तर प्रदेश में नैनीताल जिले के सेब प्रसिद्ध होते हैं।

(४) नारंगीः—हमारे यहाँ नारंगियाँ भी कई जगह होती हैं। मध्य-प्रदेश में नागपुर की नारंगियाँ तो भारत भर में प्रसिद्ध हैं। उत्तरी भारत के पहाड़ी भाग में भी नारंगियाँ होती हैं जैसे भूटान, सिकिम आदि में। इस भाँति बंगाल के पहाड़ी जिलों में जैसे जलपाईगुडी और दार्जिलिंग में अच्छी नारंगी होती है।

(५) अन्य फलः—देश के कई भागों में बादाम, अनार, अखरोट, अंगूर आदि भी थोड़ा-बहुत होता है। इन फलों को पैदा करने वाले भाग जैसे उत्तरी-पश्चिमी सीमान्त प्रदेश और बलूचिस्तान अब पाकिस्तान में हैं। परन्तु यत्न करने पर भारत के पहाड़ी भागों में इनकी पैदावार बढ़ाई जा सकती है। खजूर भी कुछ स्थानों में होता है। अमरूद कई स्थानों में मिलता है।

फलों को सुरक्षित रखने और डिब्बों में बन्द करने के तरीकों में सुधार करने पर इनका उपयोग बढ़ जायगा।

२. तरकारियाँः—फलों की भाँति हमारे यहाँ कई प्रकार की तरकारियाँ हो सकती हैं और होती भी हैं। बड़े-बड़े नगरों में इनकी अधिक माँग होने के कारण नगरों के आसपास की बस्तियों में अब काफी सब्जियाँ बोई जाने लगी हैं। आलू, गोभी, टमाटर, गाजर, मूली, पालक आदि के अधिक उत्पादन से खाद्य-पदार्थों की बचत में काफी सहायता मिल सकती है। परन्तु इन तरकारियों का महत्व केवल स्थानीय ही है।

आलूः—वैसे तो यह शीतोष्ण कटिबन्ध की उपज है लेकिन भारत में आजकल इसकी अच्छी पैदावार होने लगी है। पाश्चात्य देशों में इसको अन्न की भाँति खाते हैं परन्तु हमारे यहाँ यह एक तरकारी के रूप में काम आता है। आलू का महत्व इसलिए अधिक है कि यह शीघ्र ही खराब नहीं होता। अतः इसको उत्पत्ति-क्षेत्र से दूर भी भेजा जा सकता है।

आलू की खेती देश के भिन्न-भिन्न भागों में साल भर होती रहती है। पहाड़ी भागों में यह गर्मी में बोया जाता है और मैदान में सर्दियों में।

हमारे देश में सात लाख एकड़ भूमि में आलू बोया जाता है और कुल उत्पादन लगभग दो लाख टन होता है। उत्तर-प्रदेश में लखनऊ, प्रयाग, कानपुर, फर्रुखाबाद, बनारस आदि नगरों के पास आलू की खेती अच्छी होती है। इसी राज्य के अलमोड़ा, मसूरी और नैनीताल आदि पहाड़ी जिलों में आलू होता है। बंगाल के दार्जिलिंग, बर्दवान और हुगली जिलों में आलू की खेती होती है। बम्बई में पूना जिले में आलू खूब होता है। मद्रास का नीलगिरी जिला आलू की पैदावार के लिए प्रसिद्ध है।

३. मसाले:—भारत में कई प्रकार के मसाले होते हैं। इन मसालों को उष्ण जलवायु की आवश्यकता होने के कारण इनकी खेती दक्षिणी भारत में अधिक होती है।

(१) लाल मिर्च:—इसके लिए काफी गर्मी की आवश्यकता पड़ती है। पहले बीज से पौधा लगा कर फिर उसको दूसरे स्थान पर लगाया जाता है। अधिकतर लाल मिर्च अपने उत्पत्ति स्थान में ही काम आ जाती है। मद्रास, बम्बई, बंगाल और राजस्थान में लाल मिर्च होती है।

(२) काली मिर्च:—यह एक पौधे का फल होता है इसकी खेती प्रायः दक्षिणी भारत में ही सीमित है। मद्रास और केरल में काली मिर्च बहुत होती है। जहाँ से वह उत्तरी भारत के राज्यों को भेज दी जाती है। बची हुई काली मिर्च थोड़ी-सी मात्रा में विदेशों को (विशेषतः यूरोपीय देशों को) भेज दी जाती है।

(३) इलायची:—यह भी दक्षिण भारत की ही उपज है। इसकी पैदावार मद्रास, मैसूर और केरल में अच्छी होती है। सफेद इलायची की अपेक्षा हरी इलायची अच्छी गिनी जाती है।

(४) दालचीनी:—यह एक प्रकार के वृक्ष के तने का छिलका होता है जो बड़ा सुगन्धित और स्वादिष्ट होता है। इसकी पैदावार भी दक्षिणी भारत के मद्रास, केरल और मैसूर राज्यों में अच्छी होती है। वहीं पर लौंग भी पैदा किया जाता है।

(५) सौंठ:—यह एक पौधे की जड़ों में गाँठ सी होती है। इसको कच्ची भी काम में लेते हैं और सुखा कर भी। यह कई दवाइयों में काम आती है। इसकी उपज मद्रास, बम्बई, बंगाल और उत्तर-प्रदेश में अच्छी होती है। कुछ सौंठ विदेशों को भी भेजी जाती है।

सारांश

भारत में कृषि का महत्वपूर्ण स्थान है। देश के अधिकांश लोग खेती ही करते हैं। देश के भिन्न-भिन्न भागों के जलवायु और मिट्टी में विभिन्नता होने के कारण वहाँ कई प्रकार की खेती की उपज होती है। देश की सम्पूर्ण उपज को हम निम्नलिखित भागों में बाँट सकते हैं :—

(अ) खाद्यान्न—जैसे चावल, गेहूँ आदि।
(आ) पेय पदार्थ—जैसे चाय, कहवा आदि।
(इ) रेशे वाली उपज—जैसे कपास, पाट आदि।
(ई) व्यापारिक उपज—जैसे तिलहन, रबर, तम्बाकू आदि।
(उ) अन्य पैदावार—जैसे फल, शाक, सब्जी आदि।

(अ) खाद्यान्न

१. चावल:—यह मानसूनी देशों की मुख्य उपज है। इसकी खेती के लिए पर्याप्त गर्मी तथा उपजाऊ भूमि की आवश्यकता होती है। जहां कम वर्षा होती हो वहां सिंचाई की जाती है। भूमि के उपजाऊपन के अनुसार भारत के विभिन्न भागों में चावल की खेती करने के तरीके भी कई हैं। इसकी खेती के लिए सस्ती मजदूरी की आवश्यकता होती है। हमारे देश के बंगाल, आसाम, बिहार, उड़ीसा, मद्रास व बम्बई राज्यों में चावल होता है। इनके अतिरिक्त मध्य प्रदेश और केरल में भी चावल होता है। अधिक आबादी के कारण हमें बाहर से भी चावल मँगाना पड़ता है।

२. गेहूँ:—इसकी खेती हमारे यहां सर्दी के दिनों में होती है। इसके लिए अधिक पानी की आवश्यकता नहीं होती परन्तु मिट्टी दुमट हो। उगते समय का तापमान ५०° फ० हो तो पकते समय का ७०° फ०। पंजाब और उत्तर प्रदेश में गेहूँ अधिक होता है। इनके अतिरिक्त बिहार, आंध्र व राजस्थान में भी कुछ गेहूँ होता है। अधिकांश पैदावार कर्क रेखा के उत्तर में होती है। पाकिस्तान के अलग हो जाने से पंजाब के गेहूँ पैदा करने वाले भाग का अधिकांश अब भारत से अलग हो गया है।

३. (क) ज्वार:—इसकी खेती दक्षिणी भारत में अधिक होती है। हैदराबाद व बम्बई इसकी खेती के लिए प्रसिद्ध हैं। कुछ पैदावार मद्रास, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश व मद्रास में भी होती है। दक्षिणी भारत में यह गरीब जनों का मुख्य भोजन है। इसका डंठल जानवरों को खिलाते हैं।

(ख) बाजरा:—यह कम वर्षा तथा कम उपजाऊ भूमि में पैदा हो जाता है। दक्षिणी भारत में इसको ज्वार के साथ बो देते हैं। बाजरे की खेती बम्बई, मद्रास, पंजाब, आंध्र और राजस्थान में अधिक होती है।

४. जौ:—गेहूँ की भाँति जौ भी रबी की फसल है। इसके लिए गेहूँ जैसे जलवायु की आवश्यकता होती है किन्तु यह कुछ अधिक गर्म, सर्द व कम उपजाऊ भूमि में भी पैदा हो जाता है। वैसे तो जौ प्रायः सारे उत्तरी भारत में होता है लेकिन उत्तर प्रदेश में इसकी पैदावार अधिक होती है।

५. गन्ना:—गन्ने को गेहूँ की भाँति नहीं खाया जाता परन्तु इससे शक्कर बनाते हैं और खाद्य पदार्थ होने के कारण गन्ने को हम खाद्यान्न गिनते हैं। हमारा देश गन्ने का जन्म

स्थान है। गन्ने की पैदावार हमारे यहाँ विश्व के सब देशों से अधिक होती है। इसकी खेती के लिए उपजाऊ और हल्की मिट्टी होनी चाहिये। जलवायु गर्म तथा नम हो। उत्तर प्रदेश, पंजाब, मद्रास, बिहार व बंगाल में गन्ने की पैदावार अधिक होती है। शक्कर के कारखानों की संख्या में वृद्धि होने के कारण हमारे देश में गन्ने की पैदावार भी दिन प्रतिदिन बढ़ रही है।

(आ) पेय पदार्थ

१. चायः—इसकी उपज के लिए अधिक गर्मी और पानी की आवश्यकता होती है। पौधे की जड़ों में पानी बहता रहना चाहिये। यही कारण है कि चाय की उपज मानसूनी देशों के पहाड़ी ढालों पर होती है। चाय की पत्तियाँ तोड़ने के लिए सस्ती मजदूरी आवश्यक है।

भारत की कुल चाय की पैदावार का लगभग ५०% आसाम में होता है। वहाँ ब्रह्मपुत्र नदी की घाटी में धरांग, शिवसागर तथा लखीमपुर जिले इसकी उपज के लिए प्रसिद्ध हैं। बंगाल के दार्जिलिंग और जलपाईगुड़ी जिलों में समस्त देश की उपज का २५% होता है। इनके अतिरिक्त कुछ चाय बिहार, उत्तर प्रदेश व पंजाब के पहाड़ी जिलों में भी होती है। दक्षिणी भारत में मद्रास राज्य के नीलगिरी जिले में चाय अच्छी होती है। कुछ चाय मैसूर व केरल में भी होती है।

चाय के निर्यात से भारत को पर्याप्त रुपया मिलता है।

२. कॉफीः—इसको चाय जैसा ही जलवायु चाहिये परन्तु पाला और अधिक ठंड इसके लिए बहुत घातक है। इसलिए इसकी खेती रबर जैसे ऊँचे पेड़ की छाया में की जाती है। मैसूर राज्य में देश का आधा कहवा होता है। वहाँ के कादुर, शिमोगा और हसन जिले इसकी पैदावार के लिए प्रसिद्ध हैं। मद्रास राज्य में भी इसकी खेती होती है। इस पेय पदार्थ को भी चाय की भाँति पर्याप्त मात्रा में निर्यात करते हैं परन्तु इसकी उपज यहाँ बहुत अधिक नहीं होती।

(इ) रेशे वाली उपज

कपासः—इसके पौधे के लिए उष्ण वायु और नम मिट्टी की आवश्यकता होती हैं। भारत के काली मिट्टी वाले प्रदेश में इसकी खेती अच्छी होती है। यह मिट्टी चिकनी होने के कारण पौधे के लिए नमी बनाये रखती है। उत्तरी भारत में भी पंजाब और उत्तर प्रदेश में सिंचाई करके उत्तम कोटि की कपास पैदा करते हैं। कपास के मुख्य क्षेत्र बम्बई और मध्य प्रदेश हैं। इसके अतिरिक्त पंजाब, मद्रास, उत्तर प्रदेश, बंगाल, आंध्र और मध्य प्रदेश में भी कपास की खेती होती है।

विभाजन हो जाने के कारण पंजाब की उच्च कोटि की कपास पैदा करने वाली काफी जमीन पाकिस्तान में चली गई है। भारत में सूती वस्त्र के व्यवसाय की वृद्धि के साथ-साथ

कपास की भी माँग बढ़ रही है। इसकी पूर्ति के लिए कई स्थानों में उत्तम कोटि की कपास बोई जाने लगी है और इस प्रकार कपास की खेती में वृद्धि की जा रही है।

पाटः—इसके लिए गर्म और तर जलवायु तथा उपजाऊ मिट्टी की जरूरत होती है। गङ्गा और ब्रह्मपुत्र के संयुक्त डेल्टे में प्रतिवर्ष नई मिट्टी आकर एकत्रित होती रहती है अतः वहाँ जूट की अधिक पैदावार होती है। बङ्गाल का अधिक पाट पैदा करने वाला भाग अब पूर्वी पाकिस्तान में चला गया है। जूट की इस कमी की पूर्ति करने के लिये दक्षिणी भारत के मद्रास राज्य में मदुरा जिले व केरल राज्य में इसकी खेती की जाने लगी है। आशा है शीघ्र ही इस कमी की पूर्ति हो जायगी।

(ई) व्यापारिक उपज

१. तिलहनः—भारत में कई प्रकार के तिलहन पाये जाते हैं जैसे अलसी, तिल, सरसों, मूँगफली, रेण्डी, नारियल आदि। इनका तेल खाने के काम आता है और इनसे कई वस्तुएँ भी तैयार की जाती हैं जैसे साबुन, वार्निश आदि। भारत के निर्यात में तिलहन का प्रमुख स्थान रहा है परन्तु इसके निर्यात से देश को लाभ तो कम और हानि अधिक होती है। सबसे बड़ा नुकसान यह है कि विदेशों में तिलहन की खली चली जाती है। यह खली उत्तम खाद होती है। आजकल भारत में ही तेल निकालने के कई कारखाने खुल रहे हैं।

२. रबरः—यह एक वृक्ष के रस से तैयार किया जाता है। इस वृक्ष के लिये गर्म और तर जलवायु की आवश्यकता होती है। भारत में विश्व का केवल २% रबर तैयार होता है। दक्षिण भारत में मद्रास, मैसूर व केरल में रबर के वृक्ष लगाये गये हैं। आजकल आसाम की पहाड़ियों पर भी रबर के पेड़ लगाये जा रहे हैं।

३. तम्बाकूः—यह उष्ण व अर्द्ध-उष्ण प्रदेशों की पैदावार है। मिट्टी इसके लिए बहुत ही उपजाऊ होनी चाहिये। हमारे देश में विश्व की उपज का लगभग एक-तिहाई भाग होता है। इसकी खेती के लिए बिहार, बंगाल, मद्रास, मैसूर व बम्बई राज्य प्रसिद्ध हैं।

४. सिनकोनाः—इस वृक्ष की छाल को कूट कर कुनैन तैयार करते हैं। कुनैन बनाने का प्रबन्ध भारत सरकार के अधीन है। मद्रास के नीलगिरी जिले, बंगाल के दार्जिलिंग जिले, मैसूर राज्य तथा केरल में सिनकोना के पेड़ मिलते हैं।

५. गर्म मसालेः—इनमें काली मिर्च, दालचीनी, लौंग, इलायची आदि कई प्रकार के गर्म मसाले होते हैं। इनके लिए गर्म और तर जलवायु की आवश्यकता होती है अतः ये दक्षिणी भारत के पश्चिमी घाट के ढालों पर अधिक मात्रा में पाए जाते हैं।

(उ) अन्य पैदावार

भारत में कई प्रकार के फल होते हैं। कई जगह तो फलों के बड़े-बड़े बगीचे हैं किन्तु पाश्चात्य देशों की तुलना में हमारे देश में फलों के महत्व को कम लोगों ने समझा है। उत्तर-

प्रदेश और बिहार में आम बहुत होते हैं। आजकल आम विदेशों को भेजने लगे हैं। काश्मीर में सेब, अंगूर और नाशपाती होती है। मध्य प्रदेश व आसाम के सन्तरे प्रसिद्ध हैं। दक्षिण भारत में केला बहुत होता है।

बड़े-बड़े नगरों के निकट आजकल शाक-सब्जी भी बहुत होने लगी है।

प्रश्न

१. भारत की कृषि की पैदावार को कितने विभागों में बांट सकते हैं? कौन-कौन से?
२. चावल की खेती भारत के किस भाग में अधिक होती है? क्यों?
३. पाकिस्तान के अलग हो जाने से पाट की खेती पर क्या प्रभाव पड़ा? पाट की कमी की पूर्ति किस प्रकार से की जा सकती है।
४. कपास के लिये किस प्रकार के जलवायु की आवश्यकता है। काली मिट्टी के प्रदेश के अतिरिक्त भारत के किन-किन भागों में कपास की पैदावार होती है?
५. हमारी खाद्य-समस्या किस प्रकार से हल हो सकती है?

अध्याय १२

पशु-पालन

पशु हमारे बड़े काम के हैं। उनसे हमें भोजन मिलता है और पहनने के लिये वस्त्र भी उनसे प्राप्त किये जाते हैं। भारत की खेती में पशुओं का बड़ा हाथ है। सच पूछा जाय तो बिना पशुओं की सहायता के यहाँ खेती हो ही नहीं सकती। गांवों में जहाँ न तो रेल-मार्ग हैं और न मोटरें ही, वहाँ पशु ही बोझा ढोते हैं। इस प्रकार पशुओं से प्रति वर्ष हमें करोड़ों रुपये का लाभ पहुँचता है। दूध, मक्खन, घी, चमड़ा, ऊन, खाद, हड्डियाँ, आदि जानवरों से ही प्राप्त होते हैं।

पशुओं का जीवन वनस्पति पर निर्भर होता है। हमारे यहाँ पहले वनस्पति की कमी नहीं थी परन्तु धीरे-धीरे खेती करने के लिए वनों को साफ करते गये। देश में घनी आबादी होने तथा अधिकांश लोगों का धन्धा कृषि होने के कारण जानवरों के लिये चरागाह नहीं हैं। फिर भी किसानों को पशु रखने ही पड़ते हैं परन्तु उनके लिए चारे की उत्तम व्यवस्था न होने के कारण यहाँ के पशु बहुत कमजोर होते हैं।

जलवायु तथा भू-रचना में विभिन्नता होने के कारण देश के अलग अलग भागों में कई प्रकार के जानवर पाये जाते हैं।

हमारे यहाँ के पशुओं में मुख्य ये हैं—गाय, बैल, भैंस, बकरी, घोड़ा, ऊँट आदि। उपयोगिता के अनुसार इन पशुओं को हम निम्नलिखित भागों में बाँट सकते हैं:—

(अ) दूध देने वाले पशु।
(आ) कृषि में काम आने वाले पशु।
(इ) बोझा ढोने वाले पशु।
(ई) मांस तथा ऊन देने वाले पशु।
(उ) अन्य पशु।

एक बात जो इन जानवरों में समान है वह यह है कि इन सभी से चमड़ा मिलता है। यह चमड़ा कई प्रकार से काम में आता है।

संसार में सबसे अधिक चौपाये हमारे देश में ही हैं। भारत में विश्व के कुल चौपायों का लगभग ३०% है

[१] दूध देने वाले पशु

दूध देने वाले पशुओं में गाय और भैंस मुख्य हैं।

गायः—भारत में गाय का बहुत महत्व है। इसको लोग गौ माता कहकर पुकारते हैं और पूजा करते हैं। इसका कारण यह है कि यह हमारे लिये बड़े काम की है। इसका दूध पीने के काम आता है। बछड़ा हल जोतने और गाड़ी खींचने के काम आता है। चमड़ा जूते बनाने तथा अन्य कामों में आता है। हड्डियाँ भी काम आती हैं। इस प्रकार गाय मरने पर भी हमारे लिये उपयोगी होती है।

हमारे देश में जितना दूध होता है उसका लगभग ४२·८% गाय से मिलता है।

भारत में लगभग १५½ करोड़ चौपाए हैं। अन्य देशों में गाय दो उद्देश्यों में पाली जाती है—मांस के लिए और दूध के लिए। हमारे यहाँ यह मांस के लिये नहीं पाली जाती। यहाँ गोवध बहुत बुरा समझा जाता है।। इसलिये यहाँ गाय पालने का एकमात्र उद्देश्य दुग्ध-प्राप्ति और बछड़े की उत्पत्ति है।

यों तो गाय प्रायः देश के सभी भागों में पाली जाती है परन्तु उत्तर प्रदेश, पंजाब, मध्य प्रदेश, बम्बई, आंध्र प्रदेश और मद्रास में गायों की संख्या अधिक है।

इतनी अधिक गायें होने पर भी यहाँ दूध अधिक नहीं होता। यहां की गाय बहुत दुबली होती है क्योंकि उसको खाने को अच्छा भोजन नहीं दिया जाता। पाश्चात्य देशों में गायों को अन्न खिलाया जाता है परन्तु हमारी गायों को भूसा भी आवश्यकतानुसार नहीं मिलता।

गाय पालने वाले देशों में औसत गाय प्रतिदिन कितना दूध देती हैं, इसकी यदि जाँच की जाय तो भारत का स्थान अन्तिम होगा। निम्नलिखित अंकों से यह स्पष्ट हो जायगाः—

नाम देश—	प्रति गाय दूध (प्रतिदिन):—
डेनमार्क	१६ सेर.
हालैंड	११ सेर.
इंग्लैंड	८ सेर.
न्यूजीलैंड	७ सेर.
भारत	१½ सेर.

यदि हमारी गायों को खाने के लिये पोषक पदार्थ दिये जाएँ और उनके रहने के लिये समुचित व्यवस्था की जाय तो इनका भी दूध बढ़ सकता है। भारत जैसे देश में जहाँ के अधिकांश निवासी शाकाहारी हैं, दुग्ध-प्राप्ति में वृद्धि करने का यत्न करना जरूरी है।

भैंसः—गाय की अपेक्षा भैंस अधिक दूध देती है। हमारे देश की भैंस औसतन साल में २५ मन के लगभग दूध देती है। कम दूध देने के कारण गाय को अब दूध प्राप्ति के दृष्टिकोण से कम पालने लगे हैं। उसका अधिक महत्व तो बछड़ा पैदा करने के लिए रह गया है। भैंस को पालने में दूसरा लाभ यह है कि इसके लिये गाय की भांति अधिक कीमती चारे की आवश्यकता नहीं होती। यह साधारण चारे पर भी अच्छा दूध दे सकती है। हमारे यहाँ जितना दूध होता है उसका ५४·४% भैंस से ही प्राप्त होता है।

भारत में लगभग ४½ करोड़ भैंसें हैं। देश के कृषि प्रधान भागों में भैंसें पाई जाती हैं। इनकी कई जातियाँ हैं जिनमें पंजाब की हरियाना और दिल्ली की मुर्रा भैंस, बम्बई की जफराबादी और सूरती भैंस तथा मध्य प्रदेश की नागपुरी भैंस प्रसिद्ध है।
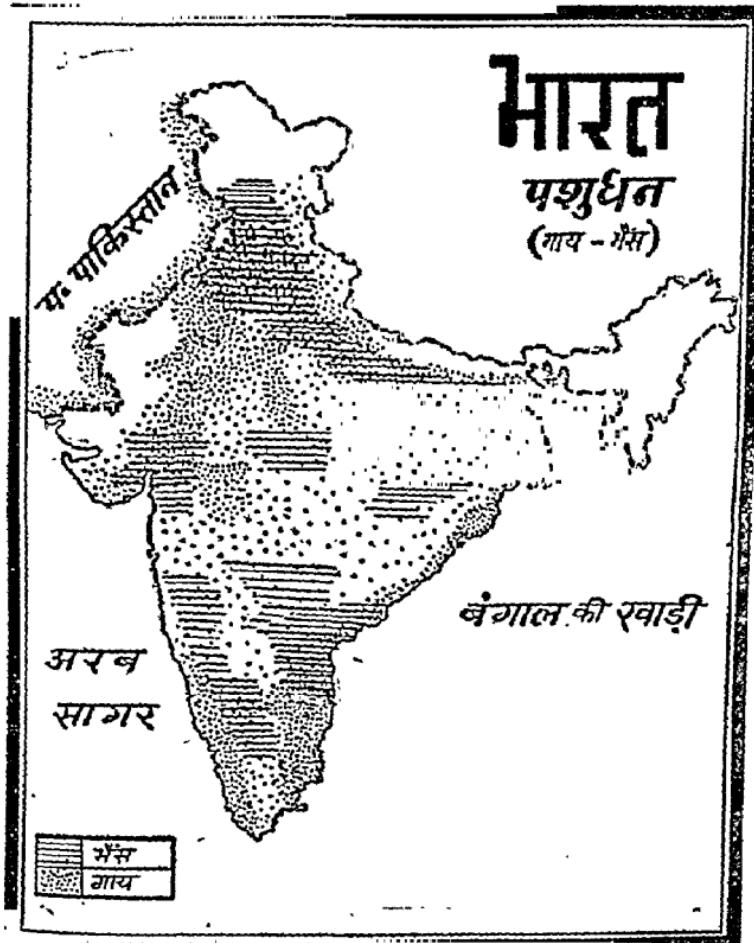
चित्र सं० ४६. भारत का पशु-धन

अन्य पशु:—भेड़ और बकरी भी दूध देती हैं। ये आसानी से पाली जा सकती हैं क्योंकि इनके लिए कम चारे की जरूरत होती है। नगरों में कम जगह होने के कारण लोग अपने घरों में बकरियाँ रखते हैं। परन्तु बकरी बहुत कम दूध देती है और वह भी थोड़े समय के लिए। हमारे देश में जितना दूध होता है उसका केवल २% ही बकरियों से प्राप्त होता है। बकरी का दूध शीघ्र पच जाता है। अतः इसको बीमारों और छोटे बच्चों को पिलाया जाता है।

दुग्ध व्यवसाय (Dairy Industry)

भारत में दुग्ध व्यवसाय में उन्नति करने के लिए बहुत सुविधा है। इसके दो मुख्य कारण

हैं—(अ) हमारे यहाँ माँसाहारी लोग कम होने से अधिकांश लोगों को पोषण के लिए दूध की आवश्यकता होती है, और (आ) कृषि प्रधान देश होने से यहाँ पशु बहुत पाये जाते हैं।

दूध के उत्पादन में अमेरिका के पश्चात् भारत का ही स्थान है। हमारे यहाँ लगभग ७० करोड़ मन दूध प्रतिवर्ष प्राप्त किया जाता है परन्तु हमारी बढ़ती हुई आबादी को देखते हुए यह बहुत ही कम है। कुल दूध का आधा तो घी बनाने के काम आता है, एक-तिहाई भाग पी लिया जाता है और शेष अन्य कामों में आता है। विश्व के भिन्न-भिन्न देशों में प्रतिदिन एक औसत मनुष्य कितना दूध काम में लेता है इसका विवरण यहाँ दिया जाता है:—

नाम देश:—	वजन (औंस में)
कनाडा	५६
न्यूजीलैंड	५५
आस्ट्रेलिया	५५
ग्रेट ब्रिटेन	४०
डेनमार्क	४०
संयुक्त राष्ट्र अमेरिका	३५
भारत	७

इससे ज्ञात होता है कि एक औसत भारतवासी को बहुत ही कम दूध मिलता है। अन्य देशों में तो मांस और अण्डों का भी प्रयोग होता है। फिर भी वहाँ लोग खूब दूध पीते हैं।

देश के लोगों का जीवन-स्तर बढ़ाने के लिए भोजन में पोषक पदार्थों को सम्मिलित करना पड़ेगा। हमारे यहाँ के साधारण व्यक्ति को कम से कम २० औंस दूध तो रोजाना मिलना चाहिए। तब ही स्वास्थ्य ठीक रह सकता है। इस प्रकार दूध में तिगुनी वृद्धि किये बिना तो काम ही नहीं चल सकता।

उष्ण जलवायु होने से भारत में मक्खन शीघ्र ही खराब हो जाता है। इसलिए यहाँ पर मक्खन से घी तैयार कर लेते है। घी गाँवों में ग्रामोद्योग के रूप में तैयार होता है और उसको शहरों में बेचने के लिए भेज देते हैं। घी बनाने के लिए यहाँ बहुत सहूलियत है और इससे किसान को पैसा भी अच्छा मिल जाता है। परन्तु आजकल वनस्पति घी के बन जाने से असली घी की पहचान बड़ी कठिनाई से होती है। सरकार की ओर से ऐसा प्रबन्ध कर दिया जाय जिससे असली और नकली घी में अन्तर स्पष्ट दिखाई दे।

आजकल बड़े-बड़े नगरों के पास दुग्ध-व्यवसाय बहुत उन्नति कर रहा है। यह अच्छा है क्योंकि उसके द्वारा शहरों में रहने वाले लोगों को दूध और घी अच्छी किस्म का मिल जाता है। आगरा, अलीगढ़, बंगलौर, कलकत्ता, बम्बई आदि में कई डेरियाँ हैं।

हमारे यहाँ दुग्ध-व्यवसाय में उन्नति करने के लिए निम्नलिखित उपाय करने चाहिये:—

१. चारे का समुचित प्रबन्धः—देश की अधिकांश भूमि में खाद्यान्न उत्पन्न किये जाते हैं। जानवरों के चारे के लिए बहुत कम जमीन है। नई परती भूमि में चारा उत्पन्न किया जा सकता है। पशुओं के लिए सायलेज का प्रबन्ध होना जरूरी है। इसके द्वारा हरे चारे को बन्द मकानों तथा पृथ्वी के नीचे गड्ढों में डाल कर रख देते हैं जिससे वहाँ हवा प्रवेश न करे और चारा पर्याप्त समय तक पड़ा रहे व खराब न हो। पशुओं के लिए भूसे का समुचित प्रबन्ध होना जरूरी है।

२. नस्ल सुधारनाः—पशुओं की नस्ल सुधारना भी जरूरी है। हमारे यहाँ के पशु बड़े कमजोर हैं। गाँवों में जगह जगह स्वस्थ सांड रखने चाहिये। सरकार ने सांड पालने के लिए बहुत यत्न किया है। गाय की भाँति भैंस की नस्ल भी सुधारी जा सकती है।

३. पशुओं की बीमारियों का निवारणः—हमारे यहाँ प्रतिवर्ष लाखों पशु छोटी-छोटी बीमारियों से मर जाते हैं। गाँवों में लोग पशुओं के इलाज के लिए कुछ भी प्रबन्ध नहीं कर सकते। मौका पड़ने पर वे यों ही थोड़ी बहुत दवाइयाँ बना लेते हैं परन्तु इससे विशेष लाभ नहीं होता आजकल सरकार की ओर से बड़े-बड़े नगरों में जानवरों के अस्पताल खुले हुए हैं। इस प्रकार के चिकित्सालय गाँव-गाँव में होने चाहिये।

४. सुव्यवस्थाः—भारतीय किसान की निर्धनता भी दुग्ध-व्यवसाय की उन्नति में बाधक है। गाँवों का दूध एकत्रित करने के लिए सहकारी संस्थाएँ स्थापित कर देनी चाहिये। फिर इनके द्वारा दूध, मक्खन तथा घी का वितरण करना लाभदायक सिद्ध होगा। डेनमार्क का दुग्ध-व्यवसाय इसी प्रकार उन्नति कर रहा है।

५. व्यावसायिक शिक्षाः—डेरी की शिक्षा के लिए स्थान-स्थान पर उचित प्रबन्ध हो। इस प्रकार के शिक्षा केन्द्र बँगलौर, आगरा आदि नगरों में स्थापित हो चुके हैं। परन्तु देश की माँग को देखते हुए इनकी संख्या बहुत ही कम है।

दुग्ध-व्यवसाय की उन्नति के लिए हमारी राष्ट्रीय सरकार ने कई योजनाएँ तैयार की हैं। उसमें ऊपर बताई हुई सभी बातों को लिया है। आशा है इसमें अच्छी सफलता मिलेगी।

[२] ऊन तथा मांस देने वाले पशु

ऊन तथा मांस के लिए हमारे यहाँ भेड़ और बकरी पाली जाती हैं। इनको पालने में अधिक कठिनाई नहीं होती परन्तु इनकी नस्ल सुधारना भी आवश्यक है।

भेड़ः—पाश्चात्य देशों में ऊन के लिए अलग किस्म की भेड़ पाली जाती है और मांस के लिए अलग। अच्छी ऊन देने वाली भेड़ का मांस अच्छा नहीं होता और अच्छे मांस वाली भेड़ की ऊन खराब होती है। परन्तु हमारे यहाँ मांस और ऊन देने वाली भेड़ों में कोई अन्तर नहीं रखा जाता। एक ही भेड़ दोनों कामों में आती है।

भारत के जिन भागों में कम वर्षा होती है और जहां की भूमि पथरीली है वहां भेड़ें पाली जाती हैं। अधिक वर्षा के क्षेत्र में भेड़ नहीं रह सकती है। यह सौभाग्य की बात है क्योंकि अच्छी वर्षा और समतल भूमि वाले भागों में तो घनी आबादी होने के कारण खेती होती है और वहां भेड़ों के लिए स्थान भी नहीं है। बेकार पड़ी हुई भूमि में भेड़ें आराम से रहती हैं। यही कारण है कि भेड़ को पालना बहुत आसान काम है और यह सस्ता धन्धा है।
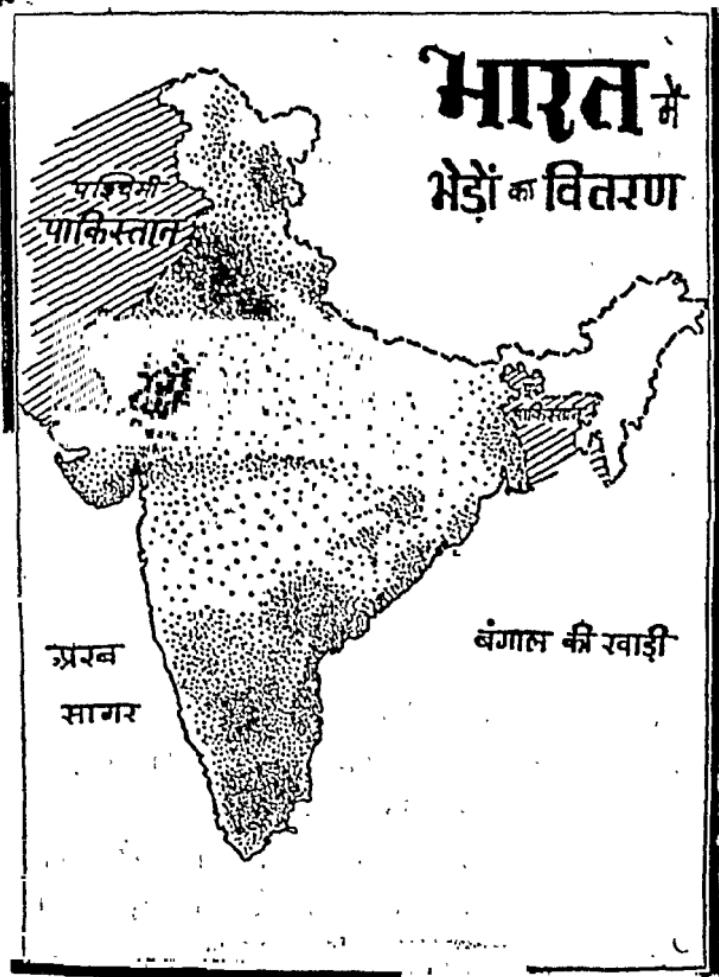
चित्र सं० ४७. भारत में भेड़ें

हमारे देश की भेड़ों की कुल संख्या चार करोड़ के लगभग है और उनके द्वारा प्रतिवर्ष लगभग दस लाख मन ऊन मिलती है। हमारे यहां की औसत भेड़ कम ऊन देती है। उसका औसत प्रायः एक सेर है। आस्ट्रेलिया की भेड़ों से चौगुनी ऊन मिलती है।

राजस्थान के जोधपुर और बीकानेर विभागों में अधिक भेड़ें पाली जाती हैं क्योंकि वहां वर्षा की कमी के कारण न तो कृषि ही हो सकती है और न अन्य धन्धा ही। पंजाब के हिसार

जिले में भी भेड़ें पालते हैं। उत्तर-प्रदेश में अलमोड़ा, गढ़वाल और नैनीताल जिले भेड़ों के लिए प्रसिद्ध हैं। बम्बई के गुजरात तथा सौराष्ट्र में भी भेड़ें मिलती हैं। मद्रास के कुरनूल, बिलारी और कोयम्बटूर जिलों के पहाड़ी भागों में भेड़ें पाली जाती हैं। मैसूर राज्य की भेड़ अच्छा ऊन देती है। काश्मीर राज्य में ठण्ड पड़ने के कारण उत्तम कोटि की ऊन होती है।

उष्ण जलवायु के कारण हमारे यहाँ की ऊन बहुत अच्छी नहीं गिनी जाती। फिर भी दक्षिणी भारत की अपेक्षा उत्तरी भारत की ऊन अच्छी होती है। हमारी अधिकांश ऊन देश में ही ऊनी कपड़ा बुनने में काम आ जाती है परन्तु कुछ ऊन ग्रेट ब्रिटेन तथा संयुक्तराष्ट्र अमेरिका को भी भेजी जाती है।

बकरीः—उत्तरी भारत में बकरी पाली जाती है। भेड़ की भाँति यह भी कम वर्षा पसन्द करती है और सभी प्रकार की चीजें खा लेती है। इसीलिये इसको पालना बहुत आसान है। इसकी कीमत भी कम होती है और पालने का खर्च भी कम होता है। यही कारण है कि लोग बकरी को "गरीब मनुष्य की गाय" कहते हैं। भारत में बकरियों की संख्या लगभग पाँच करोड़ है।

परन्तु बकरी दूध के लिए अधिक नहीं पाली जाती। हमारे यहाँ जितनी बकरियाँ हैं उनमें से केवल १५% ही दूध के लिए पालते हैं। शेष को मांस के लिए पालते हैं।

गाय का मांस खाना भारत के लोग धर्म-विरुद्ध समझते हैं। यही कारण है कि मांस के लिए बकरे की मांग बहुत होती है। बड़े-बड़े नगरों और फौजी छावनियों में मांस-वितरण करने के लिए गाँवों से बकरे एकत्रित कर लिये जाते हैं।

मांस और दूध के अतिरिक्त कुछ बकरियों के बाल मुलायम होने से उनका ऊन काम में ले लेते हैं। पहाड़ी भागों की बकरी के बाल अच्छे होते हैं।

मुर्गी-पालनः—मुर्गी तथा अन्य प्रकार की चिड़ियाँ अण्डे तथा मांस देने में सहायक होती हैं। पाश्चात्य देशों की भाँति इनको किसान अपने खेत में पाल सकता है। बड़े-बड़े नगरों में अण्डों की माँग होती है। भारत में अभी इस व्यवसाय का कम प्रचार है।

[३] बोझा ढोने वाले पशु

बैलः—भारत के जिन भागों में गाय पाई जाती है वहीं पर बैल भी मिलते हैं। बैल हमारे बहुत काम आते हैं। सच पूछा जाय तो बैल ही हमारे किसान का सहारा है। हमारे यहाँ खेती करने में मशीनों का प्रयोग नहीं होता और न उनका प्रयोग हमारे लिये अधिक लाभप्रद ही है। खेती का सारा काम बैलों की सहायता से ही किया जाता है।

बैल हल जोतने के काम आते हैं। मिट्टी को चौरस बनाने में बैल ही सहायक होते हैं। बैलों द्वारा कुओं से पानी खींचकर खेतों में सिंचाई भी की जाती है। खेत में उत्पन्न किए हुए अनाज को बैलगाड़ी द्वारा ही शहरों में भेजा जाता है। इसलिये यह कहना असंगत

न होगा कि बैल के बिना हमारी खेती हो ही नहीं सकती। बैल ही हमारे किसान की रीढ़ की हड्डी है।

बैल की इतनी उपयोगिता होने पर भी उसके स्वास्थ्य का थोड़ा भी ख्याल नहीं रखा जाता। खाने के लिए उसे पोषक पदार्थ न मिलने से वह बहुत दुर्बल होता है और उसकी उम्र भी कम होती है। आजकल बैल की नस्ल सुधारने में कुछ थोड़ा सा प्रयत्न किया जा रहा है।

भैंसाः—जैसा कि पहले बताया जा चुका है कि भैंस अच्छा दूध देती है। दुग्ध-व्यवसाय की वृद्धि करने के लिए भैंस को अधिक संख्या में पालना जरूरी है। भैंस का पुत्र भैंसा भी बैल की भाँति बोझा ढोने के काम आता है। उसकी कीमत बैल की कीमत से कम होती है। भैंसा बैल की अपेक्षा बोझा अधिक खींच सकता है। परन्तु भैंसे में एक दुर्गुण है और वह यह है कि वह सुस्त जानवर होता है। वह धीमी चाल से चलता है। परन्तु धीमी चाल की पूर्ति वह भारी बोझा ढोने की शक्ति से पूरा कर देता है।

उत्तरी भारत की अपेक्षा दक्षिणी भारत में अधिक भैंसे मिलते हैं। उनका अधिक उपयोग गाड़ियाँ खींचने में किया जाता है।

घोड़ाः—हमारे देश में घोड़ों की संख्या लगभग डेढ़ करोड़ है। ये सवारी के काम में आते हैं। घोड़े बहुत तेज दौड़ते हैं। पुलिस और फौज में भी घोड़े सिपाहियों की सवारी के काम आते हैं। भारत के बड़े-बड़े नगरों में घोड़े ताँगा खींचने के लिए प्रयुक्त होते हैं। घोड़े की सवारी हमारे यहाँ बहुत पुरानी है।

रेतीले भाग में घोड़े काम नहीं देते। पहाड़ी भूमि या सड़कों पर ये आसानी से चलते हैं।

ऊँटः—इसको "मरुस्थल का जहाज" कहते हैं। वहाँ के लोगों का निर्वाह ऊँट के बिना हो ही नहीं सकता। अन्य पशु रेगिस्तान में नहीं टिक सकता। ऊँट के पाँवों में गद्दियाँ होती हैं जो रेत में नहीं धँसतीं। यही कारण है कि वह रेत में बड़े मजे से चलता है। वह बिना पानी पिये भी कई दिनों तक रह सकता है।

हमारे देश में राजस्थान और पंजाब में अधिक ऊँट हैं। उनकी कुल संख्या सवा छः लाख के लगभग है। ऊँट सवारी करने, खेत जोतने, कुएँ से पानी खींचने तथा बोझा ढोने के काम आता है।

आजकल ऊँटों की संख्या दिन-प्रति-दिन कम होती जा रही है। इसका मुख्य कारण यह है कि रेतीली जमीन में जहाँ ऊँट पाया जाता है वहाँ आजकल मोटरें चलने लगी हैं। अब वहाँ ऊँट की सवारी मँहगी पड़ती है। ऊँट की रक्षा करने के लिए भारत सरकार प्रयत्नशील है। अभी हाल ही में देश के ऊँटों का सर्वेक्षण किया गया है और ऊँट की रक्षा करने के प्रयत्न बताए गए हैं।

अन्य पशुः—देश के भिन्न-भिन्न भागों में और भी कई पशु पाए जाते हैं जो अनेक प्रकार से काम आते हैं। कई स्थानों पर बोझा ढोने के लिए खच्चर काम में आते हैं। गधा

भी बोझा ढोने के लिए उपयुक्त होता है। पहाड़ी भाग में टट्टू पाले जाते हैं। वहाँ उन पर सवारी भी करते हैं और बोझा भी ढोते हैं। और अधिक पहाड़ों की ऊँचाई पर यह पशु बोझा ढोने के काम आता है। हिमालय पर्वतीय प्रदेश का यह मुख्य पशु है।

पशुओं द्वारा प्राप्त अन्य वस्तुएँ

दूध, मांस तथा ऊन के अतिरिक्त पशुओं से हमें कई अन्य वस्तुएँ भी मिलती हैं, जिनसे कई व्यवसाय चलते हैं। पशुओं के चमड़े से जूता तथा अन्य कई प्रकार की सुन्दर वस्तुएँ तैयार की जाती हैं। उनकी हड्डियों और सींगों से भी कई वस्तुएँ तैयार करते हैं। गोबर और मूत्र खेतों के लिए बहुत अच्छी खाद है। पशुओं से जितनी खाद हमें मिलती है, उसका मूल्य लग-ग तीन अरब रुपया आंका जाता है।

खाल और चमड़ा

जैसा कि ऊपर बताया गया है कि हमारे देश में पशुओं की संख्या विश्व के सब देशों से अधिक है। प्रतिवर्ष यहाँ बहुत से पशु मरते रहते हैं। कुछ पशु मांस के लिए भी मारे जाते हैं। उन मृत पशुओं के चमड़े से करोड़ों रुपये की आमदनी होती है। अनुमानतः हमारे यहाँ प्रतिवर्ष लगभग दो करोड़ गाय और बैल की खालें, पाँच लाख भैंस की खालें, अढ़ाई करोड़ बकरी की खालें और डेढ़ करोड़ भेड़ की खालें प्राप्त होती हैं।

चमड़ा हमारे यहाँ से बाहर भी जाता है। हमारे निर्यात में चमड़े का मुख्य स्थान रहा है। विश्व के निर्यात में भारत के व्यापार का पाँचवाँ अंश है। कुछ चमड़ा कच्चा भी भेजा जाता है और कुछ को यहाँ से कमा कर भेजते हैं। चमड़े को साफ करने के लिए बबूल, तुरवद आदि पेड़ों की छाल की आवश्यकता होती है। ये वृक्ष दक्षिणी भारत में अधिक होते हैं। अतः मद्रास में चमड़ा साफ करने के कई कारखाने हैं। आजकल उत्तर-प्रदेश (कानपुर), बंगाल, बम्बई, आंध्र प्रदेश तथा राजस्थान में भी चमड़ा कमाने के कई छोटे-मोटे कारखाने खोल दिएगए हैं।

भारत के कच्चे चमड़े के निर्यात का दो-तिहाई भाग संयुक्तराष्ट्र अमेरिका को निर्यात किया जाता है। लगभग २०% ग्रेट ब्रिटेन को भेजते हैं। शेष फ्रांस, इटली, जर्मनी आदि देशों को जाता है। बढ़िया चमड़ा भी विदेशों को निर्यात किया जाता है।

गत महायुद्ध के कारण चमड़े के निर्यात में कमी हो गई। युद्ध के समय भारत सरकार की फौजों में चमड़े की वस्तुओं (जूते, घोड़े की काठियाँ आदि) की अधिक आवश्यकता पड़ी। ये वस्तुएँ देश में ही बनने लगीं। कानपुर और मद्रास में इनके और कारखाने खोले गये। उनके लिए चमड़े की आवश्यकता पड़ी। देश में ही चमड़ा कमाने के नए-नए कारखाने खुल गए। मद्रास और बम्बई राज्यों में मिलकर पांच सौ से भी अधिक ऐसे कारखाने हैं। इनमें आधे से अधिक अकेले मद्रास में हैं।

आजकल हमारे यहाँ बढ़िया चमड़ा (क्रूम) भी तैयार होने लगा है। इसी कारण विलायती चमड़े के आयात में भी कमी हो रही है।

सारांश

उपयोगिता के अनुसार पालतू पशु तीन श्रेणियों में बांटे जा सकते हैं :—

१. दूध देने वाले पशुः—इनमें गाय, भैंस, बकरी मुख्य हैं। हमारे यहाँ गायों की संख्या अधिक है, परन्तु उन्हें भर पेट भोजन न मिलने से वे कम दूध देती हैं। भैंस गाय से अधिक दूध देती है। दुग्ध-व्यवसाय के लिये भैंस पालना लाभकारी होता है। बकरी बहुत कम दूध देती है। इसका दूध हल्का होने से बीमारों और बच्चों के लिए लाभदायक होता है।

२. ऊन तथा मांस देने वाले पशुः—भेड़ की ऊन मुलायम होती है। भेड़ और बकरी को मांस के लिए भी पालते हैं। आजकल मांस के लिए मुर्गा-मुर्गी भी पालने लगे हैं। मुर्गी के अण्डों की बड़े-बड़े नगरों में पर्याप्त माँग रहती है।

३. बोझा ढोने वाले पशुः—बैल हल जोतने व गाड़ी खींचने के काम में आता है। घोड़ा भी सवारी व गाड़ी खींचने में काम आता है। ऊँट को "मरुस्थल का जहाज" कहते हैं। मरुस्थल में ऊँट के बिना काम ही नहीं चल सकता।

दूध, मांस और ऊन के अतिरिक्त पशुओं से चमड़ा भी मिलता है। हमारे यहाँ से प्रतिवर्ष करोड़ों रुपये का चमड़ा निर्यात किया जाता है। चमड़े से कई प्रकार की वस्तुएँ तैयार की जाती हैं।

प्रश्न

१. पशुओं का जीवन वनस्पति पर क्यों निर्भर है ?
२. हमारे देश में गाय का इतना अधिक महत्व क्यों है ?
३. दुग्ध-व्यवसाय के लिए कौन-सा पशु अधिक उपयोगी है—गाय या भैंस ? क्यों ?
४. ऊँट को 'मरुस्थल का जहाज' क्यों कहते हैं ?
५. दूध और मांस के अतिरिक्त हमें पशुओं से कौन-कौन सी अन्य वस्तुएँ प्राप्त होती हैं ? उनके द्वारा कौन-कौन से कारोबार चलते हैं ?

अध्याय १३

मछली-व्यवसाय

विश्व के उन्नतिशील देशों में मछली लोगों के भोजन का प्रमुख अंश है। अमेरिका तथा यूरोप आदि पाश्चात्य देशों में बहुत सी मछलियाँ पकड़ी जाती हैं। जापान में तो मछली पकड़ने के धन्धे से बहुत से लोगों का गुजारा होता है। हमारे देश भारत में सब लोग तो मछली नहीं खाते, परन्तु कुल जनसंख्या के लगभग आधे लोग इसका प्रयोग अवश्य करते हैं।

हमारे देश में तो मछली व्यवसाय की ओर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है क्योंकि खाद्यान्नों की पूर्ति मछली से की जा सकती है। सौभाग्य से हमारे यहाँ मछली पकड़ने के लिए सुविधायें भी हैं। और यहाँ मछलियाँ भी कई प्रकार की मिलती हैं। अभी तक हमारे यहाँ साल में लगभग ५ लाख टन मछली पकड़ी जाती है। इसमें ७१% समुद्र से प्राप्त की जाती है। कुछ मछली बाहर से भी मँगवाते हैं। भोजन के अतिरिक्त मछलियों की चर्बी से तेल निकाला जाता है। उनकी हड्डियों से उत्तम कोटि की खाद तैयार की जाती है। चमड़ा भी काम आता है। हमारे यहाँ जितनी मछलियाँ पकड़ी जाती हैं, उनमें से आधी तो पकड़ने के स्थानों में ताजी ही खा ली जाती हैं। लगभग चौथाई भाग सुरक्षित करके अन्य भागों को भेज दी जाती है। शेष तेल निकालने तथा खाद तैयार करने में काम आती हैं।

भारत में मछलियाँ दो स्थानों पर पकड़ी जाती हैं—(अ) देश के भीतरी भागों में—जैसे नदी, झील आदि और (आ) समुद्र-तट से।

[अ] देश के भीतरी भागों (Inland) की मछलियाँ

भारत की मछली की कुल पैदावार का एक तिहाई भाग देश के भीतर स्थित तालाब, नदियों, बाँध आदि से मिलता है और शेष समुद्र से। भीतरी भागों में कम मछलियाँ इसलिए पकड़ी जाती हैं कि यहाँ अंग्रेजी सरकार ने ही मछली पकड़ने के व्यवसाय को चमकाया और क्योंकि वे लोग इंग्लैंड से आये हुए थे अतः वहाँ की भाँति यहाँ भी उन्होंने समुद्र किनारे पर ही मछली पकड़ना ठीक समझा। भीतरी भागों की ओर उन्होंने विशेष ध्यान नहीं दिया।

इंगलैंड तथा पाश्चात्य देशों में तो समुद्र की मछलियाँ ही लाभप्रद हैं। क्योंकि वहाँ की स्थिति, जलवायु और यातायात के साधन इनमें सहायक हैं। परन्तु हमारे यहाँ भीतरी भागों की मछलियाँ अधिक लाभदायक हैं क्योंकि यहाँ का जलवायु उष्ण होने से समुद्री किनारे से देश के भीतर मछली भेजने से वह मार्ग में ही खराब हो जाती है। देश के भीतर बड़ी बड़ी नदियों में कई तरह की मछलियाँ हैं। घनी आबादी भी भीतरी भागों में ही है। इस प्रकार समुद्र की मछली की अपेक्षा भीतरी भागों की मछलियाँ अधिक कीमती होती हैं।

भीतरी मछलियों के भी विभाग किये जा सकते हैं। वे इस प्रकार हैं:—

१. **नदियों की मछलियाँ:**—देश के भीतर कई बड़ी बड़ी नदियाँ हैं जिनमें साल भर पानी रहता है। कभी कभी उनमें बाढ़ भी आती है। वह खेती के लिए तो हानिकारक होती है, परन्तु मछलियाँ बाढ़ के पानी में खूब बढ़ती हैं।

२. **झीलों में:**— झीलें कई प्रकार से बनती हैं। कुछ झीलें नदियों के मार्ग छोड़ने से बन जाती हैं। ऐसे उदाहरण मैदानों में बहुत मिलते है। पहाड़ों में कुछ खड्डे होते हैं जो वर्षा में पानी से भर जाते हैं। रेगिस्तान में भी पानी की कुछ झीलें मिलती हैं। अभी इन झीलों में बहुत थोड़ी मछलियाँ हैं परन्तु प्रयत्न करने से उनकी संख्या बढ़ाई जा सकती है। बंगाल, बिहार, आसाम आदि राज्यों में ऐसी झीलों से ही मछलियाँ प्राप्त की जाती हैं।

३. **तालाबों में:**—इनमें देश के भीतर स्थित कई बड़े बड़े तालाबों को भी सम्मिलित कर सकते हैं। दक्षिणी भारत में कई छोटे-बड़े तालाब हैं, उनमें मछलियाँ पकड़ी जाती हैं।

४. **नहरों में:**—उत्तरी भारत के मैदान में नदियों से बड़ी बड़ी नहरें निकाली गई हैं। नदियों की भाँति उनसे भी मछलियाँ पकड़ी जा सकती हैं। पंजाब और पश्चिमी उत्तरप्रदेश की नहरों में और अधिक मछलियाँ पकड़ी जा सकती हैं।

५. **नदी की एस्चूरी में:**—जिस जगह नदी समुद्र में गिरने के लिए एस्चूरी या डेल्टा बनाती है, वहाँ नदी के मीठे पानी और समुद्र के खारे पानी का संमिश्रण होता है। ऐसे स्थान पर मछलियाँ अंडे देने के लिए आती हैं तब उन्हें पकड़ सकते हैं।

६. **दलदली भागों में:**—जहाँ नदियाँ बड़े बड़े डेल्टे बनाती हैं, वहाँ पानी फैल जाता है। स्थान स्थान पर दलदली भूमि दृष्टि-गोचर होती है। वहाँ ऐसी मछलियाँ मिलती हैं, जो कुछ समय के लिए बिना पानी के भी जीवित रह सकती हैं। कलकत्ते के आसपास की भूमि में भी ऐसी ही मछलियाँ पकड़ी जाती हैं।

भीतरी भागों में पकड़ी जाने वाली मछलियों में रोहू, कल्टा, प्राँस आदि मुख्य हैं।

इनके अतिरिक्त आजकल बहुमुखी योजनाएँ तैयार हो रही हैं। वे प्रायः नदियों पर बाँध बनाकर पानी को रोककर बनाई जाती हैं। उनका मुख्य उद्देश्य तो सिंचाई करना तथा जल-विद्युत का उत्पादन है परन्तु उनमें मछलियाँ पालने से कोई विशेष खर्च नहीं पड़ता। इससे यह लाभ भी है कि बाँधों का पानी भी साफ रहेगा, क्योंकि गन्दगी को तो मछलियाँ खा डालती हैं।

[आ] समुद्री (Marine Fisheries) मछलियाँ

संसार के सभी समुद्रों में मछलियाँ समान रूप से नहीं पाई जातीं। समुद्र में मछली पकड़ने के लिए कुछ आवश्यक बातें होनी चाहिये। जैसे पानी का छिछला होना, पानी में

पश्चिमी बंगाल में यत्न करने पर मछलियों में और अधिक वृद्धि की जा सकती है। बङ्गाल में दोनों ही प्रकार की मछलियाँ (भीतरी और समुद्री) मिलती हैं। अभी तक बङ्गाल की खाड़ी वाले तट पर मछली पकड़ने का बहुत कम काम हुआ है। मछली पकड़ने के तरीकों में सुधार करने तथा अच्छे जाल और जहाजों के प्रयोग से बंगाल में मछली पकड़ने के धन्धे में खूब उन्नति की जा सकती है। भारत सरकार का मछली-विभाग इस ओर बहुत प्रयत्नशील है। मछलियों में वृद्धि करने के लिए वहाँ गाँव-गाँव के तालाबों में उच्च कोटि की मछलियाँ पाली जा रही हैं।

२. मद्रासः—इस राज्य के समुद्र-तट की लम्बाई डेढ़ हजार मील से भी अधिक है। पश्चिमी समुद्र-तट और पूर्वी समुद्र-तट के निकट लगभग ४० हजार वर्ग-मील के क्षेत्र में मछलियाँ पाई जाती हैं। पश्चिमी समुद्र तट पर कालीकट और बंगलौर तथा पूर्वी तट पर विशाखापनटम्, मसलीपट्टम, नेलौर, मद्रास, पांडीचेरी आदि के बहुत से लोग मछली पकड़ने का व्यवसाय करते हैं। जितने लोग मद्रास राज्य में मछली पकड़ते हैं उतने भारत के और किसी राज्य में नहीं मिलेंगे।

पश्चिमी किनारे की अपेक्षा पूर्वी समुद्री किनारे पर अधिक मछलियाँ पकड़ी जाती हैं क्योंकि वहाँ का पानी छिछला है और उसका विस्तार अधिक है।

मद्रास राज्य के भीतरी भाग में भी नदियों और तालाबों से बहुत सी मछलियाँ पकड़ी जाती हैं। गोदावरी, कृष्णा और कावेरी नदियों में मछलियों की संख्या अधिक है। इस राज्य में यदि मछली पकड़ने के तरीक़ों में सुधार किया जाय तो और भी अधिक मछलियां प्राप्त की जा सकती हैं।

३. केरेल राज्यः—इस राज्य का समुद्री किनारा मछली-व्यवसाय के लिये बहुत ही उपयोगी है। यहाँ मछली से तेल निकालने के भी कई छोटे छोटे कारखाने हैं। मछली-व्यवसाय से राज्य को अच्छी आमदनी होती है। राज्य के भीतरी भागों में भी लैगूनों में बहुत सी मछलियां मिलती हैं।

केरेल में मछली पकड़ने में एक असुविधा जरूर है। वहाँ मानसून के समय समुद्र के पानी में तूफ़ान आते हैं। उस समय मछली पकड़ने वाले जहाजों को हानि उठानी पड़ती है।

४. बम्बईः—यद्यपि इस राज्य में बहुत अधिक संख्या में मछली नहीं पकड़ी जाती परन्तु फिर भी इस व्यवसाय के लिये जितनी सुविधा यहाँ पर है उतनी देश के अन्य किसी भी राज्य में नहीं है। इसके कई कारण हैं। बम्बई का समुद्र-तट कुछ अधिक कटा होने के कारण यहां उत्तम प्राकृतिक बन्दरगाह है। साल के आधे भाग में वहाँ का मौसम शान्त रहता है। समुद्र-तट भी बहुत लम्बा है और उसके निकट पानी की गहराई कम है जहाँ मछलियाँ रहना पसन्द करती है।

बम्बई राज्य की ओर से मछली पकड़ने के तरीकों में भी अच्छा सुधार किया गया है। मछुओं को शिक्षा देने के भी वहाँ कई केन्द्र खोल दिये गये हैं। आजकल वहाँ मछली पकड़ने के छोटे-छोटे स्टीमर भी बहुत संख्या में मिलने लगे हैं।

५. उड़ीसा:—इस राज्य में भीतरी तथा समुद्री दोनों ही प्रकार की मछलियाँ पकड़ी जाती हैं। समुद्र-किनारे के निकट ही बंगाल की खाड़ी में मछली पकड़ने योग्य बहुत बड़ा क्षेत्र है परन्तु अभी तक उसका विकास नहीं किया गया है।

उड़ीसा में चिलका झील में पर्याप्त मछलियाँ पकड़ी जाती हैं। यत्न करने पर यह व्यवसाय वहाँ और भी अधिक उन्नति कर सकता है।

६. पंजाब:—इस राज्य में नदियाँ और नहरें फैली हुई हैं। उनमें कुछ मछलियाँ अब भी मिलती हैं परन्तु उनके पालने की सुव्यवस्था करने से उनमें बहुत वृद्धि हो सकती है।

पंजाब के उत्तर में पहाड़ी भाग में कई झीलें और झरने हैं। वहाँ भी कुछ मछलियाँ पकड़ी जाती हैं। भाकरा बाँध बन जाने से पंजाब में मछलियों की कमी न रहेगी।

७. उत्तर प्रदेश:—इस राज्य में भी कई नदियाँ और झीलें हैं। कई जगह बाँध भी हैं। तराई प्रदेश में भी पर्याप्त पानी भरा रहता है। इस प्रकार उत्तर प्रदेश के कई भागों में मछलियाँ मिलती हैं परन्तु इस व्यवस्था की ओर अभी तक विशेष ध्यान नहीं दिया गया था। इसका मुख्य कारण यह है कि यहाँ के अधिकाँश लोग खेती में लगे हुए हैं। राज्य के पश्चिमी भाग में लोग मछली खाते भी कम हैं।

उत्तर प्रदेश की सरकार ने अब मछली-व्यवसाय की ओर ध्यान दिया है। कई तालाबों, झीलों और नदियों में मछलियाँ पाली जाने लगी हैं।

८. बिहार:—उत्तर प्रदेश की भाँति यहाँ भी लोगों का ध्यान कृषि की ओर अधिक है। राज्य के उत्तर में पूर्णिया जिले में पानी पर्याप्त है। तराई भी वहाँ निकट ही है। मछली-व्यवसाय वहाँ खूब बढ़ाया जा सकता है।

बिहार की नदियों तथा नहरों में भी मछली पालने के लिए बहुत सुविधा है।

इन राज्यों के अतिरिक्त मैसूर तथा आँध्र प्रदेश में भी मछली व्यवसाय की उन्नति के लिए बहुत सम्भावना है। वहाँ पर कई झीलें, तालाब और बाँध हैं, जिनमें मछलियाँ पाली जाती हैं और अधिक संख्या में फिर पाली जा सकती हैं। मैसूर में तो शिवसमुद्रम् के बाँध तथा अन्य तालाबों तथा नदियों में मछलियों के लिए बहुत जगह है। आँध्र में कम वर्षा होने के कारण तालाबों से सिंचाई की जाती है। उन तालाबों में मछलियों की संख्या कई गुना बढ़ाई जा सकती है।

भारत में एक राज्य में मछली-व्यवसाय की उन्नति के लिए बहुत कम संभावना है। वह है राजस्थान। यहाँ वर्षा की कमी के कारण बड़ी नदियाँ नहीं हैं। राज्य का उत्तरी-पश्चिमी भाग

रेगिस्तान होने के कारण वहाँ बड़े-बड़े तालाब और झीलें भी नहीं हैं। परन्तु राज्य के उदयपुर डिवीजन में पहाड़ी भूमि है। वहाँ अरावली पर्वत है और उसके निकट ही कई झीलें हैं। जयसमन्द झील तो भारत भर में प्रसिद्ध है। उसमें मछलियाँ पाली जा सकती हैं। पहले भिन्न-भिन्न राज्यों की छोटी-छोटी झीलों में कुछ मछलियाँ अवश्य मिलती थीं परन्तु वे वहाँ के

चित्र सं० ४८. भारत में मछली पकड़ने के क्षेत्र

शासकों के लिए ही सुरक्षित थीं। अब एक ही राज्य हो जाने से भारत के अन्य राज्यों की भाँति यहाँ भी मछलियों की संख्या बढ़ाई जा सकती है। चम्बल योजना तथा जवाई बाँध के बन जाने से वहाँ भी कुछ मछलियाँ पाली जा सकती हैं।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना में राजस्थान में मछली-व्यवसाय की उन्नति करने के लिए ६ लाख रुपये की धन-राशि निर्धारित की गई है।

भारत में मछली-व्यवसाय में वृद्धि करने की आवश्यकता

जैसा कि पहले बताया जा चुका है कि हमारे देश में आजकल खाद्यान्नों की कमी है। अभी तक हमें भोजन की सामग्री दो साधनों से प्राप्त होती है—खेतों में अन्न पैदा करने तथा पशुओं से दूध, घी, मक्खन आदि प्राप्त करने से। देश में घनी आबादी होने से खेती योग्य भूमि बहुत कम रह गई है। हमारे यहाँ एक मनुष्य के पीछे केवल पौन एकड़ भूमि ही है जिसमें की गई पैदावार साल भर के लिए पर्याप्त नहीं हो सकती। चारे की कमी होने से पशुओं में भी वृद्धि करने की अधिक संभावना नहीं है।

हाँ, मछली-व्यवसाय में हमारे यहाँ वृद्धि की जा सकती है, क्योंकि न तो इसके लिए खेती करने जैसी उपजाऊ भूमि की ही आवश्यकता है और न मछलियों को पोषक पदार्थों के खिलाने की ही। मछलियाँ समुद्र, नदियों और तालाबों में (जहाँ भूमि पर खेती नहीं होती) मिलती हैं। उनकी थोड़ी सी देख रेख करने तथा कुछ ही परिश्रम से मछलियों की संख्या बहुत बढ़ाई जा सकती है। इस प्रकार भोजन के साथ मछली का प्रयोग करने से अन्न-संकट कुछ हद तक मिटाया जा सकता है।

संसार के अन्य देशों को देखते हुए हमारे यहाँ प्रति मनुष्य के पीछे बहुत ही कम मछली पकड़ी जाती हैं। जैसा कि नीचे के अंकों से स्पष्ट है:—

नाम देश—	मछली (वजन पौंड में)
न्यूफाउन्डलैंड	६८०
नार्वे	६८०
जापान	१२१
कनाडा	१०९
डेनमार्क	६३
ग्रेट ब्रिटेन	४९
संयुक्त राष्ट्र अमेरिका	२५
रूस	१८
भारत	५

इस प्रकार भारत में सबसे कम मछली पकड़ी जाती है। इसका कारण यह नहीं है कि यहाँ मछलियों की कमी है। परन्तु मछली-व्यवसाय की ओर अभी तक लोगों का ध्यान बहुत कम गया है।

हमारी राष्ट्रीय सरकार ने मछली-व्यवसाय की उपयोगिता को जान लिया है। इसके फलस्वरूप केन्द्रीय मछली जाँचशाला (Central Fisheries Research Institute) बम्बई में स्थापित की गई है। इसकी तीन शालाएँ कलकत्ता, मद्रास और कालीकट में स्थापित की गई हैं। इनके द्वारा भिन्न-भिन्न प्रकार की मछलियों के पालने का अनुभव किया

उन्नति हो सकती है। उत्तर प्रदेश और पंजाब में लोग मछली कम खाते हैं अतः वहाँ यह व्यवसाय अधिक उन्नति पर नहीं है।

मद्रास और बम्बई राज्यों का समुद्रतट बहुत लम्बा है। वहाँ पानी भी छिछला है। यदि यत्न किया जाय तो वहाँ मछली पकड़ने के व्यवसाय में बहुत उन्नति हो सकती है।

चावल और मछली मिलाकर अच्छा भोजन होता है। चीन, जापान आदि मानसूनी देशों का यही मुख्य भोजन है। हमारे यहाँ पर भी जिन राज्यों में चावल उत्पन्न होता है वहाँ मछली पकड़ने में भी सुविधा है। यदि मछली पकड़ने में वृद्धि की जाय तो हमारी खाद्य-समस्या कुछ सीमा तक हल हो सकती है।

प्रश्न

१. देश के भीतरी प्रदेशों में पकड़ी जाने वाली मछलियों को कितने भागों में बाँटा जा सकता है? कौन-कौन से?
२. समुद्री मछलियों के कितने प्रकार हैं? कौन-कौन से?
३. मद्रास में मछलियाँ अधिक क्यों पकड़ी जाती हैं?
४. हमारे देश के मछली-व्यवसाय में वृद्धि करने की आवश्यकता क्यों पड़ी?
५. भारत में मछली-व्यवसाय किस प्रकार उन्नति कर सकता है?

अध्याय १४

खनिज सम्पत्ति

संसार के भूगर्भ में अतुलित धन-राशि निहित है। कुछ देशों ने इसको निकाल कर बहुत लाभ उठाया है और कुछ यों ही रह गए हैं। आज के बड़े-बड़े कारखानों में भूमि के नीचे से निकाले हुए खनिज ही काम आते हैं। परन्तु सभी देशों में खनिज पदार्थों का बाहुल्य नहीं है। इसका कारण यह है कि खनिज पदार्थों का अस्तित्व भूमि की चट्टानों की रचना पर निर्भर है। जहाँ की चट्टानें बहुत प्राचीन हैं वहाँ खनिज भी बहुत मिलेंगे और जहाँ नवीन चट्टानें हैं वहाँ उनकी कमी होगी।

वे देश सौभाग्यशाली हैं जिनके गर्भ में विविध प्रकार के खनिज पदार्थ पर्याप्त मात्रा में मिलते हैं। वे विश्व के अग्रणी देशों में गिने जाते हैं। इस दृष्टि से हम अपने देश भारत को भी सौभाग्यशाली मान सकते हैं। हमारे यहाँ दक्षिणी प्रायद्वीपी प्रदेश की चट्टानें बहुत पुरानी हैं। यहाँ कई प्रकार की चट्टानें हैं जिनमें बहुत से खनिज पदार्थ पाए जाते हैं। परन्तु उन सबका अभी तक पूर्ण विकास नहीं हुआ है।

भारत की खनिज सम्पत्ति में कई विशेषताएँ भी हैं और साथ-साथ उनमें कुछ दोष भी हैं। इन गुण-दोषों का विवेचन यहाँ संक्षेप में किया जाता है:—

(१) हमारे देश में कई प्रकार के खनिज निकलते हैं। इनमें से कुछ तो बहुत अधिक मात्रा में प्राप्त होते हैं। लोहा, मैंगनीज, अभ्रक आदि यहाँ पर्याप्त हैं। यहाँ का लोहा तो सर्वोत्तम कोटि का गिना जाता है। कहते हैं कि संचित लोहे में तो अमेरिका के बाद भारत का ही स्थान है। मैंगनीज में भी भारत रूस के बाद सबसे आगे है।

(२) कुछ खनिजों की हमारे यहाँ कमी भी है। इनमें चाँदी, निकल, पेट्रोल, टीन, जस्ता, शीशा आदि प्रमुख हैं। ये वस्तुएँ बाहर से मँगवानी पड़ती हैं।

(३) देश की प्रमुख खनिज-सम्पत्ति एक ही भाग में केन्द्रित है। अधिकांश लोहा, कोयला, अभ्रक, मैंगनीज आदि बिहार, बङ्गाल तथा उड़ीसा राज्यों में ही हैं। इस कारण इन्हें देश के अन्य भागों को भेजने से खर्च बहुत लगता है। यही कारण है कि लोहे के बड़े बड़े कारखाने उत्तरी भारत में स्थापित नहीं हो सकते।

(४) बहुत से खनिज पदार्थ केवल निर्यात के लिए ही निकाले जाते हैं जैसे अभ्रक, मैंगनीज, बौक्साइट, मोनाजाइट आदि। इनके निर्यात से देश को धन तो मिलता है, परन्तु आगे चल कर इससे बहुत हानि होगी। देश निर्धन हो जायगा।

(५) हमारे यहाँ अपार खनिज सम्पत्ति होने पर भी उसको निकालने का अब तक बहुत कम प्रयत्न किया गया था। विदेशी सत्ता ने अपनी आवश्यकतानुसार ही खनिजों को निकाला। इसके अतिरिक्त खान खोदने के तरीके भी बड़े दोषपूर्ण हैं।

भारत को स्वतन्त्रता मिलने के पश्चात् राष्ट्रीय सरकार खनिज सम्पत्ति के संचय और उसके निकालने के तरीकों में सुधार करने में बहुत प्रयत्नशील है।

हमारे देश में खनिज सम्पत्ति की जाँच का कार्य भूगर्भ-विभाग करता आया है। इसका कार्य सबसे पहले कोयले की जाँच करने के लिए प्रारम्भ हुआ था। धीरे-धीरे देश के भिन्न-भिन्न भागों के अन्य खनिजों की जाँच की गई। स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व देशी राज्यों के खनिजों की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता था। अब सारा भारत शासन-व्यवस्था के दृष्टिकोण से एक है। इसलिए खनिज पदार्थों की जाँच और खोज में कोई कठिनाई नहीं हो सकती।

भारत सरकार के सन् १९४८ के खनिज पदार्थ-सम्बन्धी प्रस्ताव के अनुसार देश के सभी राज्यों में सरकार की इस बहुमूल्य सम्पत्ति की जाँच करने का भार सरकार ने ले लिया है। यह सारा कार्य प्राकृतिक-स्रोत और वैज्ञानिक खोज सचिवालय की देख-रेख में होता है।

देश की खनिज सम्पत्ति में सुधार करने के लिए राष्ट्रीय सरकार ने एक खनिज समिति (Indian Bureau of Mines) स्थापित की है जिसके निम्नलिखित कार्य हैं:—

(१) खान खोदने के तरीकों में सुधार करना।

(२) खनिज पदार्थों को व्यर्थ में नष्ट न होने देना।

(३) खनिज पदार्थों का सदुपयोग करना।

(४) नए खनिजों का अनुसंधान करना।

(५) खनिजों के निर्यात के विषय में केन्द्रीय सरकार तथा अन्य राज्यों को सलाह देना।

(६) खनिज पदार्थों में व्यापार करने वालों को सुविधा देना।

(७) खानों में काम आने वाले औजारों और यन्त्रों का बनाना।

(८) खनिज सम्बन्धी शिक्षा का सुप्रबन्ध करना।

इन सारे कार्यों को तीन शाखाओं में बांट दिया गया है—(अ) खान निरीक्षण विभाग, (आ) खान सम्बन्धी यन्त्र बनाने की शाखा और (इ) खनिज उपयोग शाखा। ये तीनों विभाग स्वतन्त्र रूप से अपना कार्य कर रहे हैं।

१. कोयला

कोयला भारत का प्रमुख खनिज पदार्थ है। इसका प्रयोग यहां के कारखानों तथा यातायात के साधनों में होता है। भारत के बङ्गाल और बिहार राज्यों में कोयला अधिक मिलता है।

कोयला हमारे देश में यांत्रिक-शक्ति के उत्पन्न करने में अधिक काम आता है। अतः इसका विवरण अगले अध्याय में अलग दिया गया है।
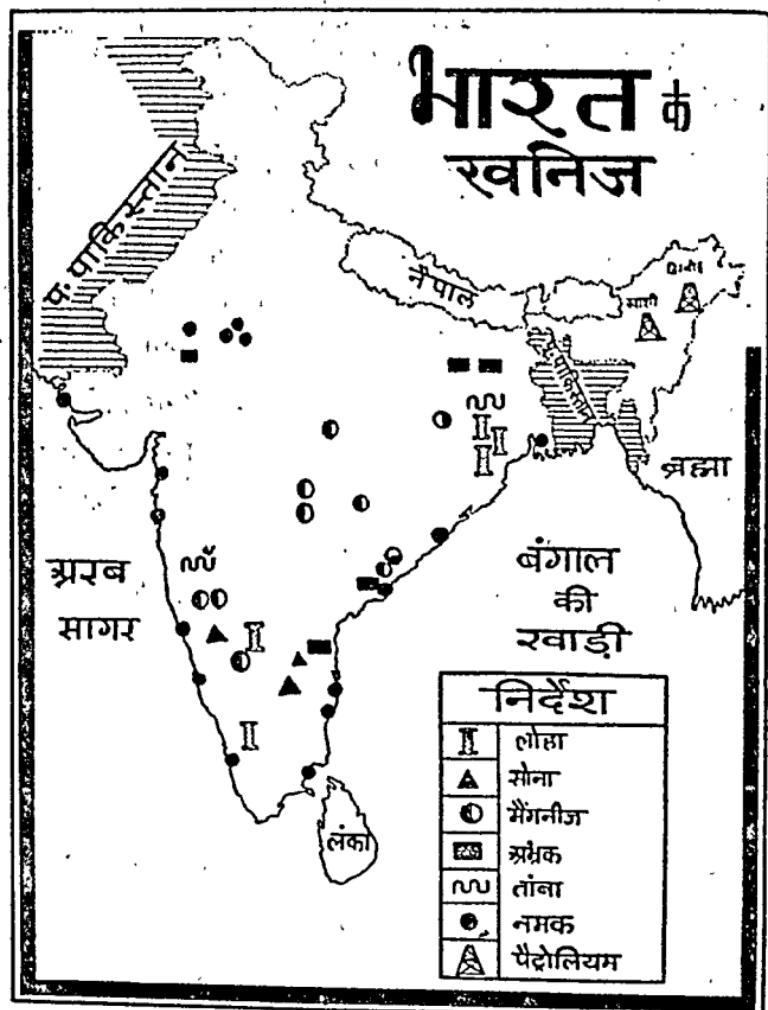
चित्र सं॰ ४६. भारत के खनिज क्षेत्र

२. लोहा

लोहा हमारे लिए सबसे अधिक उपयोगी धातु है। देश के घर-घर में लोहे से बनी हुई वस्तुएँ पाई जाती हैं। यदि सच पूछा जाय तो लोहे के बिना हमारा काम ही नहीं चल सकता।

जब लोहे को खान से निकालते हैं तो उसमें पत्थर के टुकड़े, कंकड़ तथा रेत मिली होती है। उसमें असली लौह-प्रस्तर कम होता है। इंग्लैंड में निकलने वाले लोहे में लौह-प्रस्तर

प्रायः २६% होता है। फ्रांस के लोहे में यह ३३% होता है। संयुक्त राज्य अमेरिका में यह लगभग ५०% होता है। स्वीडन तथा स्पेन में प्रस्तर लगभग ५६% होता है। हमारे लोहे में असली तत्व ५८% तक मिलता है। इसीलिये भारतीय लोहा सर्वोत्तम माना जाता है।

भूगर्भ में भारतीय लोहे की मात्रा अधिक है परन्तु अभी तक हमारे यहाँ बहुत कम लोहा निकलता है। इस समय तो लोहा निकलने वाले देशों में भारत का आठवाँ स्थान है। अकेले बिहार और उड़ीसा से सम्पूर्ण देश का ८८% लोहा निकलता है। लोहे की अधिकांश प्रमुख खानें कलकत्ते से २०० मील पश्चिम की ओर हैं।

भारत में लोहे का भण्डार ६७६ करोड़ टन तक ज्ञात किया जा चुका है।

लोह-प्रस्तर का मूल्यांकन उसमें विद्यमान धातु-परिमाण, खान की स्थिति और खुदाई की सुगमता के अनुसार किया जाता है। भारत इस सम्बन्ध में भाग्यवान है। यहाँ लोहे की खानों के पास ही कोयला और चूने का पत्थर भी मिलता है जो लोहा साफ करने में काम आता है।

लोहे की प्रमुख खानें बिहार के सिंहभूमि जिले, उड़ीसा के मयूरभंज, कियोंझार और बोनाई में हैं। कुछ कम प्रसिद्ध खानें मध्य-प्रदेश, मद्रास और मैसूर में भी स्थित हैं।
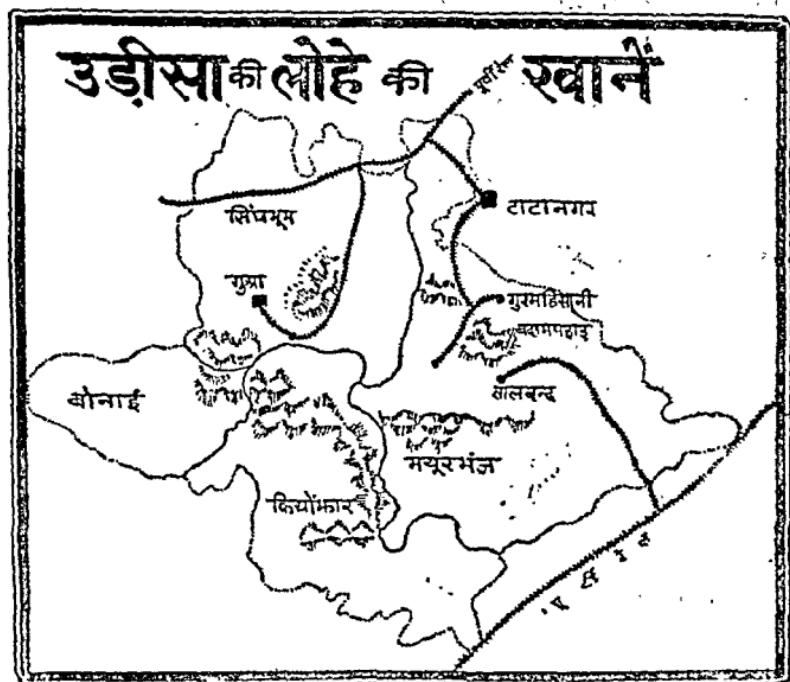
चित्र सं० ५०. उड़ीसा की लोहे की खानें

१. बिहारः—सिंहभूमि जिले में पंशिराबुरु, बूड़ाबुरु, गुआ और नोआमंडी की खानें

प्रसिद्ध हैं। इन खानों से निकले हुए लोहे में धातु-परिमाण ६०% से भी अधिक है। रेल की शाखा भी यहाँ जाती है। नोआमण्डी की खानों में से प्रायः आधी टाटा कम्पनी की हैं।

२. उड़ीसा:—इस राज्य में लोहे के दो प्रमुख केन्द्र हैं:—

(अ) मयूरभंज में गुरुमहिषानी, सुलेपत और बादाम पहाड़ मुख्य क्षेत्र हैं। इन खानों से भारत का एक-तिहाई लोहा निकलता है। रेलवे इनको जमशेदपुर से मिलाती है।

(आ) कियोंझार में दो मुख्य खानें हैं:—(१) बगियाबुरु और (२) सिंहभूमि जिले की नोआमण्डी खान का ही परिवर्द्धित भाग, जो यहाँ तक फैला हुआ है।

३. मध्यप्रदेश:—राज्य में लोहे की खानें तो बहुत हैं किन्तु उनकी खुदाई अभी तक कम हुई है। वहाँ के द्रग जिले में धाली और राझरा की पहाड़ियों में अपार लोहा भरा पड़ा है। चांदा जिले में लोहारा और पीपल गांव में भी लोहे की खानें हैं।

४. मैसूर:—राज्य की बाबाबूदन पहाड़ियों में कैमनगुण्डी में लोहे की प्रसिद्ध खान है।

५. मद्रास:—इस राज्य में चुम्बक-प्रस्तर मिलता है। वहाँ की लोहे की मुख्य खानें गोदामलाय, कोलामलाय, थिरतामलाय, सिंहापति और कंजामलाय हैं। भूगर्भ-शास्त्रियों का अनुमान है कि वहाँ लोहे का अनन्त भण्डार है, किन्तु यांत्रिक-शक्ति के अभाव के कारण खुदाई अधिक नहीं होती।

६. बम्बई:—राज्य के रत्नागिरी और राजपीपला जिलों में लोहे की खानें हैं।

२. मैंगनीज

यह भूरे रंग की एक धातु है। यह बहुत कड़ी होती है और बड़ी कठिनाई से पिघलती है। मैंगनीज का प्रयोग लोहे और फौलाद को कड़ा बनाने में होता है। इसमें चुम्बकीय शक्ति नहीं रहती। ब्लिचिंग पाउडर और कुएँ में डालने की लाल दवा (Potassium Permanganate) बनाने में भी इसका प्रयोग होता है। बिजली और काँच के कारखानों में भी इसका प्रयोग होता है। इसके प्रयोग से काँच का पीलापन दूर हो जाता है। अधिकतर मैंगनीज लोहे के कारखानों में ही काम आता है। संसार का प्रायः ९०% मैंगनीज लोहे से फौलाद बनाने के काम में ही लिया जाता है।

रूस के पश्चात् भारत ही संसार में सबसे अधिक मैंगनीज पैदा करता है। किन्तु यहाँ अधिकांश मैंगनीज विदेशों को निर्यात कर दिया जाता है, क्योंकि यहाँ पर इसका उपयोग करने के लिए लोहे के कारखाने बहुत कम हैं।

सबसे अधिक मैंगनीज मध्य-प्रदेश में निकलता है। वहाँ मैंगनीज-प्रस्तर नागपुर, बालाघाट, भण्डारा, छिंदवाड़ा और जबलपुर जिलों में पाया जाता है। इस राज्य में भारत का

लगभग ६० प्रतिशत मैंगनीज निकालते हैं। आंध्र प्रदेश के विशाखापटनम् बन्दरगाह के बन जाने से इसकी खुदाई में बहुत उन्नति हुई है।

मद्रास और आंध्र राज्यों में मध्य-प्रदेश से प्रायः आधा मैंगनीज निकालते हैं। यहाँ विशाखापटनम्, बेलारी तथा सिंदूर जिले इसके लिए प्रसिद्ध है।

उड़ीसा में गंगपुर, कियोंझार, बोनाई में मैंगनीज निकाला जाता है। बम्बई में पंच-महल और रत्नगिरी जिले, मैसूर में चीतल, द्रग, कादूर, शिमोगा, तुमकुर तथा बिहार का सिंहभूमि जिला मैंगनीज के लिए प्रसिद्ध है।

हमारे यहाँ लगभग ११'२ करोड़ टन मैंगनीज का भंडार है जिसमें से १० करोड़ टन अकेले मध्य प्रदेश और बम्बई में है। भारतीय लोहे के कारखानों में मैंगनीज की खपत निरन्तर बढ़ रही है किन्तु फिर भी मैंगनीज निकालने का व्यवसाय विदेशी निर्यात पर निर्भर है। हमारे देश से ब्रिटेन, जापान, संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, फ्रांस, बेलजियम और जर्मनी को मैंगनीज भेजा जाता है।

४. अभ्रक

यह खनिज पतली पतली परतों से मिला रहता है। प्रत्येक परत पारदर्शक होती है। इसका प्रयोग बिजली के यन्त्रों और शीशे के सामान में होता है। अतः इसकी माँग निरन्तर बढ़ रही है। वेतार के तार, समुद्री विज्ञान और मोटर-व्यवसाय में अभ्रक की बहुत आवश्यकता पड़ती है।

भारत संसार में सबसे अधिक अभ्रक निकालता है। इस व्यवसाय में लगभग दो लाख मनुष्य लगे हैं। यद्यपि अभ्रक भारत के कई प्रदेशों में मिलती है किन्तु दो क्षेत्र इसके लिए बहुत प्रसिद्ध हैं:—(१) बिहार क्षेत्र जो हजारीबाग, गया, मुंगेर और मानभूमि जिले में फैला हुआ है और (२) नैलोर क्षेत्र जो आंध्र प्रदेश के नैलोर जिले में फैला है। इन दो क्षेत्रों के अतिरिक्त राजस्थान, मैसूर और केरल राज्यों में भी अभ्रक निकलती है।

बिहार क्षेत्र से भारत की ८० प्रतिशत अभ्रक मिलती है। यहां पर [illegible] अभ्रक होती है। इस क्षेत्र में लगभग डेढ़ लाख मनुष्य इस व्यवसाय में [illegible] हुए हैं। [illegible] की अभ्रक बिजली के व्यवसाय में बहुत उपयोगी सिद्ध हुई है।

नैलोर क्षेत्र के पूर्वी समुद्र तट के अत्यन्त निकट लगभग ६० [illegible] की खानें हैं। यह अभ्रक हरे रंग की होती है और बिहार की अभ्रक [illegible] है।

भारत में बिजली का व्यवसाय अत्यन्त हीन अवस्था में है। अतः यहाँ देश के कुल अभ्रक का केवल दो प्रतिशत भाग ही काम में आता है। शेष अभ्रक विदेशों को भेज दी जाती है। संयुक्तराष्ट्र अमेरिका, ब्रिटेन, जर्मनी और फ्रांस हमारे मुख्य ग्राहक हैं। अभ्रक कलकत्ता, मद्रास और बम्बई के बन्दरगाहों से निर्यात की जाती है। तीन-चौथाई भाग से भी अधिक अभ्रक कलकत्ते से निर्यात की जाती है।

५. ताँबा

बिजली के तार, समुद्री तार और बिजली के अन्य पदार्थों में ताँबा बहुत प्रयुक्त होता है। इसमें जस्ता मिलाकर पीतल बनाया जाता है, टिन मिलाकर काँसा बनता है तथा निकल मिलाने से जर्मन-सिलवर बनता है। ताँबे के बर्तन भी बनते हैं।

ताँबा शुद्ध रूप में बहुत कम मिलता है। यह प्रायः अन्य पदार्थों में मिश्रित रूप में मिलता है। संसार के ताँबा पैदा करने वाले देशों में भारत का १२ वाँ स्थान है। किन्तु भारत बहुत प्राचीन काल से ताँबा निकालता आ रहा है।

भारत में ताँबा दो क्षेत्रों से मुख्यतः निकाला जाता है:—(१) सिंहभूमि क्षेत्र (बिहार) नैलौर क्षेत्र (मद्रास)। सिंहभूमि क्षेत्र में ८० मील लम्बी एक पट्टी में ताँबा पाया जाता है। इस पेटी में घाटसिला के निकट ही मोसाबानी और धोबानी की खानें हैं। घाटसिला की खानों से सबसे अधिक ताँबा निकाला जाता है। यहाँ पर खुदाई करने वाली इण्डिया कॉपर कॉरपोरेशन लिमिटेड कम्पनी है।

नैलोर क्षेत्र में आधुनिक तरीकों से खानें खोदी जाती हैं। किन्तु इस क्षेत्र में ताँबे की उत्पत्ति कम होती है।

इनके अतिरिक्त ताँबा बिहार (हजारीबाग, छोटा नागपुर), मैसूर तथा राजस्थान के अजमेर, भीलवाड़ा, खेतड़ी और अलवर में तथा हिमालय प्रदेश के कुमायूँ, गढ़वाल, सिक्कम आदि स्थानों में भी मिलता है। नवीनतम खोजों से ज्ञात हुआ है कि हिमालय प्रदेश में मुख्यतया गढ़वाल में ताँबे की बहुत अच्छी खानें हैं।

अभी तक हमारे देश में ताँबे का उपयोग पीतल के बर्तन बनाने में ही होता था। अब आशा की जाती है कि बिजली के व्यवसाय की उन्नति के साथ-साथ इस व्यवसाय की भी उन्नति होगी।

६. सोना

यह बहुमूल्य धातु है। सोना मुख्यतः गहने और सिक्के बनाने के काम आता है। यह दो प्रकार से मिलता है:—(१) नदियों की तह में बालू में मिला हुआ, जैसे हमारे यहाँ यह स्वर्णरेखा आदि नदियों की मिट्टी में छोटे-छोटे कणों के रूप में मिलता है (२) यह अधिकतर

प्राचीन आग्नेय चट्टानों में मिलता है जैसे मैसूर के कोलार जिले में खानें खोद कर निकाला जाता है।

भारत का लगभग ६६% सोना कोलार के स्वर्णक्षेत्र से आता है। यह क्षेत्र समुद्र के धरातल से दो हजार फीट से अधिक गहराई पर स्थित है। इस क्षेत्र को शिव-समुद्रम् से
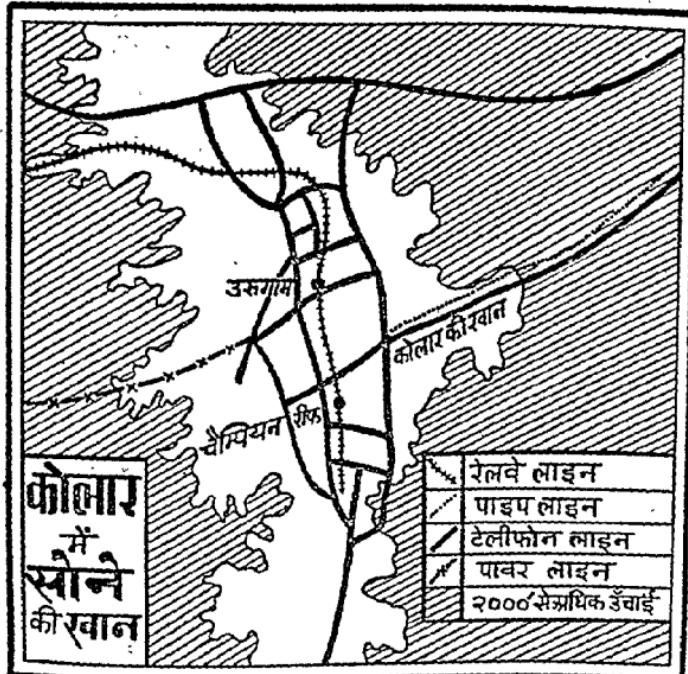
चित्र सं० ५१. कोलार में सोने की खान

बिजली दी जाती है और इन खानों में लगभग सवा दो हजार मजदूर काम करते हैं। इस क्षेत्र की 'चैम्पियन' रीफ तो सात हजार फीट की गहराई तक पहुँच गई है। अतः इसमें कार्य करना बहुत भयानक है।

भारत में बहुत कम सोना निकलता है अतः यह विदेशों से मँगाया जाता है। हमारे यहाँ लगभग २५० हजार औंस सोना निकलता है। समूचे देश की मांग के लिए यह पर्याप्त नहीं है।

७. नमक

भारत में नमक उत्पादन के तीन साधन हैं:—(१) समुद्री पानी (२) कुओं अथवा झीलों द्वारा प्राप्त खारा पानी और (३) चट्टानी नमक। हमारे उत्पादन का तीन-चौथाई नमक बम्बई और मद्रास के समुद्री तट के खारे पानी से प्राप्त होता है। लगभग चौथाई भाग राजस्थान की झीलों से मिलता है। थोड़ा सा नमक पंजाब में मंडी की चट्टानों से मिलता है।

बम्बई में सबसे अधिक नमक बनता है। बम्बई नगर से ३० मील के घेरे में कई नमक की फैक्ट्रियाँ हैं। वहाँ प्रायः जनवरी से जून तक नमक बनाया जाता है।

मद्रास में पूर्वी समुद्र तट पर गंजम से तूतीकोरन तक नमक बनाया जाता है। यहाँ नमक बनाने का मौसम भिन्न है। उत्तरी भारत में जनवरी से जून अथवा जुलाई तक नमक बनता है किन्तु दक्षिणी भाग में मार्च अथवा अप्रैल से अक्टूबर तक बनता रहता है। इस क्षेत्र से देश के कुल नमक के एक तिहाई से भी अधिक नमक प्राप्त होता है।

राजस्थान में खारे पानी की कई झीलें हैं इनमें सांभर झील सबसे बड़ी है। इसका क्षेत्रफल ९० वर्गमील है। इसके तले में पर्याप्त गहराई तक नमक रहता है जो पानी के सूख जाने पर सतह पर आ जाता है। इस झील से प्रायः ७० लाख मन नमक प्रतिवर्ष निकाला जाता है। सांभर के अतिरिक्त डीडवाना, पचभद्रा आदि कई झीलें हैं जिनमें भी नमक निकलता है। कई झीलें तो ऐसी हैं जिनमें अभी तक नमक निकाला ही नहीं जाता है। यत्न करने पर वहाँ भी नमक तैयार हो सकता है।

चट्टानी नमक केवल पंजाब के मण्डी राज्य में ही मिलता है। पंजाब की प्रसिद्ध नमक की पहाड़ी (साल्ट रेंज) अब पाकिस्तान में चली गई। अब भारत में चट्टानी नमक का उत्पादन घटकर २ प्रतिशत से भी कम रह गया है।

८. शोरा

शोरा बहुत उपयोगी वस्तु है। इसका मुख्य उपयोग खाद बनाने में होता है। इससे बारूद, शोरे का तेजाब, काँच आदि बनाते हैं। बिहार, उत्तर प्रदेश और पंजाब इसके प्रमुख उत्पादक हैं। लगभग सारा शोरा निर्यात कर दिया जाता है। केवल इसका थोड़ा सा भाग चाय के बागों के मालिक अपने उपयोग के लिए मँगा लेते हैं।

९. शेलखरी (जिप्सम)

इसका मुख्य उपयोग खाद बनाने में होता है। बंजर भूमि को उपजाऊ बनाने में विदेशों में इसका उपयोग बहुत होता है। इसको एक प्रकार का कागज बनाने के लिये और सीमेंट बनाने के लिए भी प्रयुक्त करते हैं। शेलखरी निकालने वाले कई क्षेत्र अब पश्चिमी पाकिस्तान में चले गये हैं।

भारत की लगभग ९५% शेलखरी राजस्थान के जोधपुर और बीकानेर डिवीजनों से मिलती है। शेष काश्मीर, मद्रास, बम्बई (सौराष्ट्र) और पंजाब में निकाली जाती है।

बिहार राज्य के सिंदरी नामक स्थान में उत्तम खाद बनाने का एक बहुत बड़ा कारखाना खोला गया है। देश की अधिकांश शेलखरी अब उसी में काम ली जाती है। ऐसे कारखाने और खोले जा रहे हैं अतः जिप्सम की मांग बढ़ती जायगी।

१०. चूना

चूना कई काम आता है। इससे सीमेंट बनाते हैं। मकान बनाने और पत्थरों को चिपकाने में भी चूना काम आता है। इसके अतिरिक्त लोहे को साफ करने के लिए भी चूने का प्रयोग किया जाता है।

हमारे देश के बिहार राज्य के शाहबाद जिले में पर्याप्त चूना मिलता है। राज्य के लोहे के कारखानों में यह काम आता है। मध्य प्रदेश के कटनी नामक स्थान के निकट चूने की कई खानें हैं। यही कारण है कि वहाँ सीमेंट बनाने के कारखाने खोल दिये गये हैं। इसके अतिरिक्त राजस्थान के कोटा और जोधपुर डिवीजन में भी चूने की कई खानें हैं।

११. ब्वाक्साइट

इस खनिज से एलूमिनियम बनाते हैं जो बहुत हल्की होती है। एलूमिनियम से बर्तन बनाते हैं और यह बिजली के कारखानों में भी काम आती है। अन्य धातुओं को मजबूत बनाने में भी इसका मिश्रण करते हैं। पेट्रोल को साफ करने में भी इसका प्रयोग होता है।

भारत के भूगर्भ में ब्वाक्साइट का संचित भंडार बहुत है। इसका अनुमान लगभग २५ करोड़ टन लगाया जाता है। लेकिन अभी तक यह बहुत कम निकाला गया है।

सबसे से अधिक ब्वाक्साइट का भण्डार मध्य-प्रदेश में है। वहाँ के जबलपुर, नन्दगाँव बालाघाट आदि जिले इसकी खानों के लिए प्रसिद्ध हैं। मध्य-प्रदेश के अतिरिक्त बिहार, बम्बई, कश्मीर और मद्रास राज्यों में भी इसकी खानें हैं। इनके अतिरिक्त मैसूर राज्य में भी यह खनिज विद्यमान है। इस प्रकार इसकी विशेषता यह है कि लोहा, मैंगनीज तथा अभ्रक की भाँति यह देश के एक ही कोने में न होकर सब स्थानों में पाई जाती है जिससे इसका उपयोग सभी जगह हो सके।

ब्वाक्साइट के भण्डार का अनुमान २,५०० लाख टन है जिसमें से २८० लाख टन बहुत उच्च कोटि का है।

आजकल एलूमिनियम केरल राज्य के एलपुरम् तथा बंगाल के आसनसोल के कारखानों में काम आती है। निकट भविष्य में ऐसे और अनेक कारखाने खुलने की सम्भावना है।

१२. क्रोमाइट

मजबूत लोहा (स्टील) बनाने के लिए क्रोमाइट काम में लिया जाता है। इससे क्रोमियम नमक भी तैयार करते हैं जो चमड़ा कमाने तथा रंगने में काम आता है।

हमारे देश में क्रोमाइट बहुत है। परन्तु अभी तक यह कम निकाला गया है। [illegible] लगभग ४५ हजार टन क्रोमियम निकाला जाता है।

देश में दो राज्य क्रोमियम की खानों के लिए प्रसिद्ध हैं—मैसूर और [illegible]

मैसूर में भारत की कुल उत्पत्ति का लगभग ६५% मिलता है। राज्य के हसन और शिमोगा जिलों में यह बहुत पाई जाती है। अनुमान है कि अकेले हसन जिले के गर्भ में प्रायः ५ लाख टन क्रोमियम है। इन दोनों जिलों के अतिरिक्त कदूर और चितलद्रग जिलों में भी इसकी खानें हैं।

बिहार के सिंहभूमि जिले में भारत का एक तिहाई क्रोमियम है। इसके अतिरिक्त रांची और भागलपुर जिलों में भी यह धातु थोड़ी बहुत मात्रा में पाई जाती है।

देश में जितना क्रोमाइट निकलता है उसका अधिकांश विदेशों को भेज दिया जाता है। जिन देशों में लोहे के बड़े बड़े कारखाने हैं वे ही इसे मँगवाते हैं। इसलिए हमारे क्रोमाइट के ग्राहकों में ग्रेट ब्रिटेन, संयुक्त-राष्ट्र अमेरिका, बेलजियम और स्वीडन मुख्य हैं। इसका अधिकांश निर्यात मद्रास और कलकत्ते के बन्दरगाहों से होता है।

१३. मोनाजाइट

इस खनिज का रंग हल्का पीला, लाल या भूरा होता है। इससे थोरियम (Thorium) नामक तत्व प्राप्त होता है जो सम्भवतः अणु परमाणु तैयार करने में काम आता है। इससे गैस भी तैयार होती है। थोरियम रेडियो के ट्यूबों में भी काम आता है। अनुमानतः मोनाजाइट में थोरियम की मात्रा ८% से १०% तक गिनी जाती है।

भारत में विश्व का सबसे अधिक मोनाजाइट मिलता है। यहाँ लगभग संसार की कुल मोनाजाइट का ८०% पाया जाता है।

देश का अधिकांश मोनाजाइट दक्षिणी भारत के केरल राज्य में कुमारी अन्तरीप के निकट मिलता है। वहाँ इसका कण या तो समुद्र-तट की रेतीली मिट्टी में मिला हुआ होता है या बहती हुई नदियों के पानी में मिलता है। यह कण पहाड़ियों से बहकर मैदान में आ जाता है जहाँ इसकी खानें चट्टानों में हैं। केरल के अतिरिक्त मद्रास राज्य के टिनेवली तथा विशाखापटनम् जिलों में भी मोनाजाइट मिलता है। इसकी कुछ मात्रा मैसूर के बंगलोर जिले तथा बिहार के गया जिले से भी प्राप्त की जाती है।

हमारे यहाँ साल में लगभग पाँच हजार टन मोनाजाइट निकाला जाता है। पहले इसको अमेरिका, फ्रांस, जर्मनी आदि देशों को भेज दिया जाता था, परन्तु सरकार ने अब इसके महत्व को पहचान लिया है और इसका निर्यात बन्द कर दिया गया है।

१४. मेगनेसाइट

मेगनेसाइट से मेगनेसियम तैयार किया जाता है। यह खनिज पदार्थ शीशा, सीमेन्ट, कागज तथा मकान की छत और फर्श के लिये बनावटी पत्थर तैयार करने में काम आता है। इस प्रकार इसके कई प्रयोग हैं।

देश का अधिकांश मेगनेसाइट मद्रास में सेलम के निकट निकाला जाता है। सेलम के इस व्यवसाय की उन्नति एक संस्था के द्वारा हुई, जिसका नाम 'मेगनेसाइट सिन्डिकेट लिमिटेड'

है। कुछ मेगनेसाइट मैसूर में भी मिलता है। अनुमान लगाया गया है कि खोज करने पर यह खनिज बिहार तथा राजस्थान में भी प्राप्त किया जा सकता है।

अभी तक हमारे यहाँ लगभग २५ हजार टन मेगनेसाइट निकाला जाता है। इसका अधिकांश कोचीन तथा मद्रास बन्दरगाहों द्वारा इंगलैंड तथा यूरोप के पाश्चात्य औद्योगिक देशों को निर्यात कर दिया जाता है। शेष को जमशेदपुर के लोहे के कारखाने में भेज देते हैं।

१५. इल्मेनाइट

यह सफेद रङ्ग का खनिज पदार्थ है और इससे टिटेनियम तैयार किया जाता है जो सफेद रोगन के बनाने के काम में आता है। इसका रंग सब पदार्थों से अधिक सफेद होता है। इतने दिन सफेद रोगन बनाने में शीशा काम आता था परन्तु अब उसका स्थान यह पदार्थ ले रहा है।

अभी हाल ही में अनुमान लगाया गया है कि हमारे देश में संसार के अन्य सब देशों से अधिक इल्मेनाइट मिलता है। सारे संसार की मांग का लगभग तीन चौथाई की पूर्ति भारत से होती है। इसका अधिकांश अकेले केरल राज्य से मिलता है।

ऐसा अनुमान है कि हमारे देश में ३,५०० लाख टन इल्मेनाइट विद्यमान है।

यह दुर्भाग्य की बात है कि जितना इल्मेनाइट हमारे यहाँ निकलता है उसका अधिकांश देश में काम न लेकर विदेशों को निर्यात कर दिया जाता है। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका तथा ग्रेट ब्रिटेन हमारे प्रमुख ग्राहक हैं।

अन्य खनिज पदार्थ

ऊपर बताई हुई धातुओं के अतिरिक्त भारत में और भी कई धातुएँ मिलती हैं, जैसे वूलफ्रेम या टंगस्टन, जिरकोन, एन्टीमनी, एस्बेस्टोस, टिन, हीरा आदि। परन्तु ये अभी तक बहुत कम मात्रा में मिलते हैं और इनकी खोज भी अभी तक ठीक तरह से नहीं की गई है।

उपयोगिता की दृष्टि से हमारे देश के खनिजों का विभाजन

जैसा कि ऊपर के वर्णन से ज्ञात होता है हमारे यहाँ बहुत से खनिज पदार्थ तो ऐसे मिलते हैं जिनकी कमी संसार के अन्य देशों में है। कुछ ऐसे हैं जो हमारे यहां काम न आने के कारण बाहर भेज दिये जाते हैं। कुछ धातुएँ केवल इतनी ही मात्रा में निकलती हैं कि जिनसे हमारा काम चल जाय। परन्तु कुछ धातुओं की हमारे यहां इतनी कमी है कि हमें वे विदेशों से मंगवानी पड़ती हैं।

इस प्रकार हमारे यहां की सम्पूर्ण धातुओं को हम निम्नलिखित विभागों में बांट सकते हैं:—

(अ) वे खनिज पदार्थ जो भारत के भूगर्भ में अधिक मात्रा में विद्यमान हैं:— इनमें अभ्रक, इल्मेनाइट, मोनाजाइट और लोहे का प्रमुख स्थान है।

(आ) अधिक निर्यात किये जाने वाली धातुएँ :—इनमें मैंगनीज, ब्वाक्साइट, मेगनेसाइट, सिलिका, क्रोमाइट आदि हैं।

(इ) वे धातुएँ जो हमारी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पर्याप्त हैं:—इनमें कोयला, चूना, जिरकोन, इमारती पत्थर, संगमरमर, ताँबा, नमक, नाइट्रेट आदि मुख्य हैं।

(ई) वे धातुएँ जिनकी हमारे यहाँ कमी है:—शीशा, जस्ता, टिन, चाँदी, निकल गंधक, पारा, टंगस्टन, ग्रेफाइट, पोटाश, एस्फाल्ट, एन्टीमनी आदि। इन्हें हम विदेशों से मँगाते हैं।

खनिज पदार्थों के संचय की आवश्यकता

खेत में एक साल फसल नष्ट हो जाने पर निराश होने की अधिक आवश्यकता नहीं है क्योंकि दूसरे साल अच्छी पैदावार हो सकती है परन्तु खनिज पदार्थों के एक बार निकल जाने पर वे भूमि से फिर प्राप्त नहीं किए जा सकते। इसलिए उनका सदुपयोग किया जाना चाहिए। खनिज सम्पत्ति की दृष्टि से हम सौभाग्यशाली इसलिए भी हैं कि पाकिस्तान के विभाजन का हमारे खनिजों पर विशेष प्रभाव नहीं पड़ा। थोड़े से शेलखरी, मुल्तानी मिट्टी, चट्टानी नमक तथा क्रोमाइट को छोड़ कर प्रायः सारी आधारभूत धातुएँ भारत में ही रह गई हैं। अब हमें ऐसा उपाय करना चाहिए जिससे भूमि में से कम से कम धातुएँ निकाली जायँ और वह संचित राशि आवश्यकतानुसार फिर काम आवे। निकाली हुई धातुओं का पूर्ण सदुपयोग किया जाय।

खनिज पदार्थों के सुधार के लिए सुझाव

(१) खान खोदने के तरीकों में सुधार की आवश्यकता सबसे प्रथम है। आजकल खान से खनिजों को निकालते समय धातु का पर्याप्त अंश जमीन के भीतर ही रह जाता है। ऐसे यंत्रों का प्रयोग करना चाहिये कि जिनसे सारी धातु जमीन से बाहर निकल जाय।

(२) नई नई धातुओं का अनुसंधान किया जाय। इसके लिए शिक्षित लोगों को प्रोत्साहित किया जाय।

(३) मूल धातुओं (जैसे मैंगनीज, क्रोमाइट, इल्मेनाइट आदि) का निर्यात या तो कानून बनाकर रोक दिया जाय या इनके बदले में रुपया न लेकर हमारे देश में न मिलने वाली धातुएँ बाहर से मंगवाई जायँ।

(४) खनिज पदार्थों के आयात और निर्यात पर सरकार का पूर्ण नियन्त्रण हो। इनके लिये वार्षिक कोटा निर्धारित कर दिया जाय।

(५) लोहेतर धातुओं की वस्तुएँ हमारे देश में ही तैयार की जाएँ।

(६) जिन राज्यों में खनिज अधिक मात्रा में मिलें वहाँ से उन्हें दूसरे राज्य में भेजने के लिए यातायात के सुगम साधन हों। ऐसा करने से कारखाने एक ही जगह केन्द्रित न होकर सारे देश में स्थापित हो जायेंगे।

(७) जल-विद्युत का अधिक विकास हो जिससे अधिक कारखानें खुले और देश की धातुएँ काम में आवें। ऐसा करने से कोयले की भी बचत होगी।

(८) देश से निर्यात करने वाली धातुओं पर टैक्स अधिक लगाया जाय और बाहर से आने वाली पर कम टैक्स हो। ऐसा करने से खनिज-व्यवसाय की वृद्धि होगी।

(९) खनिज सम्बन्धी शिक्षा की व्यवस्था की जाय। देश के छात्रों को शिक्षा के लिए विदेशों को भेजा जाय तथा विदेशी विद्वानों को यहाँ बुलाकर उनकी सहायता ली जाय।

(१०) खनिज पदार्थों का पूर्ण सदुपयोग किया जाय। जहाँ तक हो सके एक ही धातु का प्रयोग कई उद्योग धन्धों में किया जाय।

सारांश

हमारे देश भारत में कई प्रकार के खनिज पदार्थ छिपे पड़े हैं परन्तु अभी तक बहुत कम खनिज निकाले जाते हैं। यहाँ अभ्रक और मैंगनीज पर्याप्त मात्रा में निकलते भी हैं। भारत का लोहा तो अपनी उत्तमता के लिए विश्व में विख्यात है। कुछ खनिजों की हमारे यहाँ कमी भी है, जैसे चांदी, निकल, टीन, जस्ता आदि। तांबा और सोना हमारे यहाँ मिलते अवश्य हैं परन्तु कम मात्रा में। देश के कई भागों में चूना, शेलखरी, नमक, ब्वाक्साइट आदि प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। क्रोमाइट, मोनाजाइट, मेगनेसाइट और इल्मेनाइट की भी कमी नहीं है।

इस प्रकार हमारे यहाँ निकलने वाले खनिज पदार्थों को हम निम्नलिखित विभागों में बांट सकते हैं:—

(१) भारतीय भूगर्भ में अत्यधिक मात्रा में विद्यमान खनिजः—इसमें अभ्रक, इल्मेनाइट, मोनाजाइट और लोहा है।

(२) अधिक मात्रा में निर्यात की जाने वाली वस्तुएँ:—मैंगनीज, ब्वाक्साइट, सिलिका और क्रोमाइट हैं।

(३) हमारी आवश्यकता की पूर्ति करने वाली धातुएँ:—कोयला, चूना, संगमर-मर, नमक आदि हैं।

(४) वे धातुएँ जिनकी हमारे यहाँ कमी है:—टीन, चाँदी, जस्ता, गंधक, पारा, पोटाश, एस्फाल्ट, एन्टीमनी आदि।

खनिज सम्पत्ति पर ही उद्योग-धंधे निर्भर हैं। अतः इस सम्पत्ति के संचय की बहुत आवश्यकता है। इसके लिए सबसे पहली बात खान खोदने के तरीकों में सुधार करना है। नई धातुओं का अनुसंधान करना चाहिये। मूल धातुएँ जैसे मैंगनीज, क्रोमाइट आदि का निर्यात बहुत कम मात्रा में किया जाय। जल विद्युत का अधिक विकास किया जाय जिससे कोयले की बचत हो सके। खनिज सम्बन्धी शिक्षा की व्यवस्था की जाय। सभी धातुओं का सदुपयोग किया जाय।

प्रश्न

१. खनिज-सम्पत्ति की दृष्टि से हमारे देश की स्थिति कैसी है ?
२. भारतीय लोहे की क्या विशेषताएँ हैं ?
३. हमारे देश में कौन कौन सी धातुओं का बाहुल्य है ?
४. किन किन साधनों से हमें नमक प्राप्त होता है ?
५. हमारी खनिज-सम्पत्ति का संचय किस प्रकार हो सकता है ?

अध्याय १५

यांत्रिक शक्ति के साधन

मनुष्य ने अपनी बुद्धि से निर्जीव वस्तु में भी जीवन फूँक दिया। जिस प्रकार हमारे शरीर को भोजन देने से वह काम करता है, उसी प्रकार लोहे से बनी हुई निर्जीव मशीनों को भी भोजन देने से वे चलने लगती हैं। हाँ, उस भोजन में अन्तर अवश्य है—हम अनाज खाते हैं तो मशीनों को कोयला, तेल आदि देना पड़ता है। भोजन खाने से हमारे शरीर में शक्ति आती है। इसी कारण भोजन को हम मनुष्य के लिए शक्ति का साधन कह सकते हैं। ठीक इसी तरह मशीन के भोजन अर्थात् कोयला, तेल आदि को भी हम यांत्रिक-शक्ति के साधन कह सकते हैं।

प्रारम्भ से आज तक मनुष्य ने सभ्यता के विकास के साथ साथ किस प्रकार यान्त्रिक शक्ति में भी उन्नति की, इसका इतिहास बड़ा रोचक है। पहले-पहल बोझा ढोने के लिए शक्ति के साधनों में वृद्धि करने का विचार मनुष्य के दिमाग में आया। वह एक स्थान से दूसरे स्थान को अपने पाँवों से चल सकता था परन्तु अधिक बोझ लेकर चलना उसके लिए कठिन था। उसने सोचा कि बोझ को अपने सिर या पीठ पर रखने की बजाय यदि भूमि पर ही घसीटा जाय तो अधिक वजन ले जाया जा सकता है। परन्तु इसमें भी कठिनाई आई। मार्ग की मिट्टी भी साथ ही घसीटी जाने लगी और बोझा और अधिक भारी होने लगा।

चीन देश के निवासियों ने सबसे पहले पहिये का आविष्कार किया। उन्होंने दो पहियों की एक गाड़ी बनाई और उस पर सामान बाँध कर खींचना शुरू किया। इससे उन्हें बहुत सहूलियत मिली। धीरे धीरे मनुष्य की बजाय पशुओं द्वारा गाड़ियाँ खींची जाने लगीं और उनका प्रयोग सारे संसार में होने लगा।

इंगलैण्ड की कोयले की खानों से कोयला मैदान में ले जाने के लिए पटरियाँ बनाई गईं और उन पर पहिये वाली छोटी छोटी गाड़ियाँ चलने लगीं, जिन्हें घोड़े बड़ी आसानी से खींचने लगे। पहियों के पटरियों पर होने के कारण घोड़ों को अधिक जोर नहीं पड़ा।

इसके बाद वह सोपान आता है, जब मनुष्य ने वाष्प की शक्ति को पहचाना। इसके द्वारा तो शक्ति के साधनों में पशुओं का नाम ही दूर हो गया। पशुओं के बजाय बड़े-बड़े इंजन करोड़ों मन वजन को खींचने लगे। जल, स्थल और आकाश में उस वाष्पक्रिया ने अद्भुत जादू दिखाया।

फिर भी मनुष्य को संतोष नहीं हुआ। इस समय तक तो वाष्प तैयार करने के लिए केवल कोयला और पानी ही काम आता था परन्तु अब पेट्रोल का प्रयोग होने लगा। पेट्रोल से बड़ी बड़ी मशीनें चलने लगीं। कोयला तथा तेल से बिजली तैयार की गई जो बड़े-बड़े कारखाने चलाने में काम आने लगी। परन्तु इस प्रकार की बिजली महंगी पड़ने लगी। तब बहते हुए पानी के प्रवाह से लाभ उठा कर जलविद्युत् उत्पन्न की गई। यह बहुत सस्ती पड़ी।

अब तो सूर्य की गर्मी को एकत्रित करके भी मशीनें चलाई जा रही हैं। अणु-परमाणु ने तो सारे संसार को चकित कर दिया है।

ऊपर बताये हुये शक्ति के सारे साधन विश्व के सभी देशों में समान रूप से वितरित नहीं हैं। किसी देश में वे कम मात्रा में हैं और किसी में अधिक। किसी में कोयला अधिक है तो किसी में पेट्रोल। किसी में जल-विद्युत के उत्पादन में बहुत सहूलियत है। किसी देश में वायु-शक्ति का भी प्रयोग होता है।

आजकल किसी भी देश की शक्ति की जांच वहां पर विद्यमान यांत्रिक शक्ति के इन साधनों के आधार पर होती है। जिस देश में शक्ति के साधन जितनी ही अधिक मात्रा में हैं, वह देश उतना ही अधिक शक्तिशाली गिना जाता है। रूस और अमेरिका को शक्तिशाली देश क्यों गिनते हैं? इसीलिए कि वहाँ पर यांत्रिक शक्ति के साधन—कोयला, पेट्रोल, जल-विद्युत आदि बहुत अधिक मात्रा में हैं। इन्हीं के बल पर वहां के बड़े-बड़े कारखाने चलते हैं, जहां आवश्यकता की कई वस्तुएं तैयार की जाती हैं।

यांत्रिक शक्ति के साधनों की दृष्टि से हमारे देश भारत की अवस्था भी बुरी नहीं है। हमारे यहाँ पर काम आने वाले साधनों में तीन मुख्य हैं:—

(१) कोयला
(२) पेट्रोल
(३) जल-विद्युत

इनमें से कोयला तो आवश्यकतानुसार मिल ही जाता है, परन्तु पेट्रोल की बड़ी कमी है। इसके लिए हमें विदेशों पर निर्भर रहना पड़ता है। हां, जल-विद्युत के दृष्टिकोण से हमारी स्थिति बहुत अच्छी है। इस प्रकार की शक्ति उत्पन्न करने के लिए हमें बहुत सहूलियतें प्राप्त हैं। देश के विभाजन से शक्ति के इन साधनों पर विशेष प्रभाव नहीं पड़ा। पाकिस्तान में इनकी कमी ही है। कोयला तो वहाँ मिलता ही नहीं।

१. कोयला

कोयले को औद्योगिक क्षेत्र का 'जनक' कहा जाता है। भारत में कोयला मूल्य और परिमाण दोनों दृष्टियों से प्रमुख खनिज है।

भारत में कोयले का प्रदेश

हमारे देश में कोयला के दो मुख्य क्षेत्र हैं:—गोंडवाना क्षेत्र और टरशरी क्षेत्र।

१. **गोंडवाना क्षेत्रः**—(अ) दामोदर नदी की घाटी में:-रानीगंज, झेरिया, बोकारो, गिरीडीह, उत्तरी और दक्षिणी करनपुरा आदि।

(आ) सोन नदी की घाटी में:—उमरिया, सोहागपुर, सिंगरौली, सरगूजा आदि।

(इ) महानदी की घाटी में:—तिलचिर, रामपुर आदि।

(ई) गोदावरी की घाटी में:—तन्दुर, सिंगरेनी, बलालपुर आदि।

(उ) सतपुड़ा क्षेत्र में:—मोहपानी, शाहपुर, बेतल, छिंदवाड़ा आदि।

जैसा कि ऊपर बताया गया है कि देश का अधिकांश कोयला गोंडवाना क्षेत्र से ही प्राप्त होता है।

२. टरशरी कोयलाः—(अ) आसाम में माकूम और नजिरा क्षेत्रों में। (आ) राजस्थान के बीकानेर डिवीजन में पलाना क्षेत्र में।

राज्यों के अनुसार कोयले का वितरण

१. बिहार:—झेरिया क्षेत्र कलकत्ते से १४० मील उत्तर-पश्चिम की ओर यह स्थित है। रानीगंज से यह कोयला क्षेत्र बहुत निकट है। इसका क्षेत्रफल लगभग १७५ वर्ग मील है। यह भारत का सर्वोत्तम कोयला क्षेत्र है क्योंकि हमारे देश का आधे से अधिक कोयला यहीं से प्राप्त होता है। यहाँ का कोयला भारत भर में श्रेष्ठतम गिना जाता है। यहाँ पर उत्तम

चित्र सं० ५२. भारत में कोयले के प्रमुख क्षेत्र

कोयला अधिक निचाई पर है, जिसकी परतें दो हजार फीट तक पाई जाती हैं। झेरिया के कोयले की एक विशेषता यह है कि यह गंगा की घाटी के पास है और रेलों के जाल के द्वारा अन्य स्थानों से मिला हुआ है। रेल-मार्ग द्वारा यह कलकत्ते और जमशेदपुर से मिला हुआ है।

झरिया का कोयला श्रेष्ठ होने पर भी यहाँ अन्य देशों की भाँति कारखाने कम खुले। इसके मुख्य कारण ये हैं:—(१) इस क्षेत्र के पास कोई कच्चा माल नहीं मिलता।

(२) इस क्षेत्र के आसपास भूमि पठारी और बंजर है, जहाँ उचित मात्रा में मीठा पानी नहीं मिल सकता। कोयले के व्यवसाय के लिए भी पानी कठिनाई से प्राप्त होता है। (३) इस भाग के निवासी जंगली हैं, जो कारखाने में काम करने योग्य नहीं हैं।

झरिया क्षेत्र के पश्चिम में लगभग दो सौ वर्ग मील में बोकारो क्षेत्र है। यह क्षेत्र झरिया के निकट ही है। झरिया के उत्तर में गिरीडीह क्षेत्र बाराकर नदी की घाटी में है। यद्यपि क्षेत्रफल में यह बहुत छोटा है। किन्तु यहाँ का कोयला सर्वोत्तम है अतः इसका उपयोग लोहे के कारखानों में ही होता है। उत्तरी करनपुरा क्षेत्र का क्षेत्रफल लगभग ४५० वर्गमील है। भविष्य में यह क्षेत्र उन्नति कर जाएगा, ऐसी आशा है।

२. बंगाल:—रानीगंज:—इस क्षेत्र का क्षेत्रफल लगभग ६०० वर्गमील है और इससे देश का एक-तिहाई कोयला प्राप्त होता है। इसमें ६ परतें अच्छी हैं। यहाँ से रेलों और जहाजों के लिए कोयला बहुत भेजा जाता है।

३. मध्य प्रदेश:—यहाँ दो मुख्य क्षेत्र हैं—एक सतपुड़ा प्रदेश में पेंचवैली और दूसरा वरधा नदी की घाटी में बलालपुर।

४. आंध्र प्रदेश:—सिंगरैनी—यहाँ का मुख्य क्षेत्र है। यह हैदराबाद नगर से १४५ मील दूर है यहाँ का कोयला राज्य की रेलों तथा कारखानों में प्रयुक्त होता है।

५. मद्रास:—इस राज्य में बहुत कम कोयला मिलता है, परन्तु अभी हाल में वहाँ घटिया कोयला (लिग्नाइट) मिला है। उसका उपयोग किया जा सकता है।

भारतीय कोयले के दोष

(१) देश के विस्तार को देखते हुए यहाँ कोयले की मात्रा बहुत कम है। यहाँ साल में लगभग तीन करोड़ टन कोयला निकाला जाता है। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका और ब्रिटेन को देखते हुए यह मात्रा बहुत कम है।

(२) भारत का कोयला घटिया होता है। इसमें कारबन कम रहता है परन्तु राख, फासफोरस और जल अंश अधिक रहता है।

(३) यहाँ पर कोयले का वितरण एक सा नहीं है। परन्तु देश के कोयले का लगभग ६८ प्रतिशत बंगाल, बिहार, उड़ीसा, मध्यप्रदेश और आंध्र प्रदेश में मिलता है। अन्य भागों में कोयला बहुत कम है और उत्तर प्रदेश में तो यह बिलकुल मिलता ही नहीं।

(४) कोयला-उत्पादक क्षेत्र न तो समुद्र के पास हैं और न वहाँ ऐसी नदियाँ हैं जिनमें जहाज चल सकें। रेल द्वारा कोयला भेजने से किराये का बहुत खर्च होता है। इससे कोयले का मूल्य बढ़ जाता है।

(५) जिन स्थानों में कोयले की खानें हैं वहाँ आबादी बहुत कम है, जैसे छोटे नागपुर का पठार। वहाँ काम करने के लिये मजदूर नहीं मिलते। अधिकांश मजदूर दूर दूर से आते हैं। इसलिए मजदूरी मँहगी पड़ती है।

कोयले का प्रयोग

हमारे कोयले का ३३ प्रतिशत रेलों के उपयोग में आता है। १४% कोयला लोहे के कारखानों में, ७% सूती कपड़े के कारखानों में, ३% ईंटों के भट्टों में, और ६% जूट, चाय और कागज के कारखानों में खप जाता है। कोयले की खानों में १०% कोयला व्यय हो जाता है। बिजली उत्पन्न करने में ७% कोयला काम में आता है। शेष अन्य उपयोगों में आता है। भारत के घरों में जलाने के लिए कोयला प्रयुक्त नहीं किया जाता।

कोयले के व्यवसाय में लगभग दो लाख मजदूर काम करते हैं जो मुख्यतः छोटा नागपुर, बिहार तथा मध्य-प्रदेश से आते हैं। इनमें से अधिकांश फसल काटने के समय चले जाते हैं और खानों में मजदूरों की कमी पड़ जाती है। ये मजदूर अपने काम में कुशल भी नहीं होते।

भारत के पश्चिमी भाग विशेषतः बम्बई राज्य में कोयला दक्षिणी अफ्रीका और आस्ट्रेलिया से मँगाते हैं क्योंकि भारत का अधिकांश कोयला घटिया है, जिसकी मांग कम है। देश का कोयला रेलों द्वारा वहाँ पहुँचने पर महँगा पड़ता है।

कोयले का सदुपयोग

कोयले का जीवन बहुत थोड़ा होता है। इसलिये इसका सदुपयोग करना चाहिये। भारत में बढ़िया कोयले को लोहे के कारखानों के लिए सुरक्षित रखना चाहिये क्योंकि वह बहुत कम है। उसको रेलों के इंजनों में काम में नहीं लेना चाहिये। घटिया कोयला हमारे देश में बहुत है। अभी हाल में मद्रास के दक्षिणी अर्काट और कुड्डालौर जिलों में लिग्नाइट कोयला पाया गया है। कुड्डालौर जिले में कोयले के इस क्षेत्र में ५० करोड़ टन कोयले का अनुमान लगाया गया है। दक्षिणी अर्काट में खोज हो रही है। इस कोयले से बिजली बनाई जा सकती है अथवा द्रव्य तेल बनाया जा सकता है।

सदुपयोग का उद्देश्य यह भी है कि खान खोदने के वर्तमान तरीकों में सुधार किया जाय। आजकल खानों से केवल उत्तम कोयला निकालते हैं। शेष खान में ही रह जाता है जो दुबारा नहीं निकाला जा सकता है। अतः कोयले का उत्पादन सरकार के अधीन हो।

कोयले के सदुपयोग का अर्थ यह भी है कि इसके द्वारा उत्पादित शक्ति का कोई भी अंश व्यर्थ न जावे। इससे सम्पूर्ण महत्वपूर्ण और मूल्यवान् उत्पादन तैयार किये जायँ।

अनुमान है कि भारत के भूगर्भ में ६००० करोड़ टन कोयला है। यह कोयला १,००० फीट की गहराई तक एक फुट या उससे अधिक मोटाई की तहों में पाया जाता है।

भारत में आसाम ही ऐसा राज्य है जहाँ पर तेल निकलता है। हमारा तेल क्षेत्र आसाम के उत्तरी-पूर्वी कोने से ब्रह्मपुत्र की घाटी के पूर्व तक लगभग २०० मील लम्बा है, जिसमें बहुत से तेलकूप हैं। इनमें सबसे अधिक तेलोत्पादक क्षेत्र लखीमपुर जिले में डिग्बोई के पास है। २ वर्ग मील के क्षेत्र में लगभग ५०० कूप हैं। इस क्षेत्र के प्रमुख केन्द्र डिग्बोई, बप्पापुंग और हंसापुंग हैं। परन्तु इस क्षेत्र का उत्पादन भी निरन्तर गिरता जा रहा है। इस क्षेत्र के उत्पादन का नियन्त्रण एक विदेशी कम्पनी के अधीन है। कुछ वर्ष हुए उस कम्पनी ने तेल साफ करने की मशीन लगा दी है जो पेट्रोल से उसके अन्य उत्पादन प्राप्त करती है।
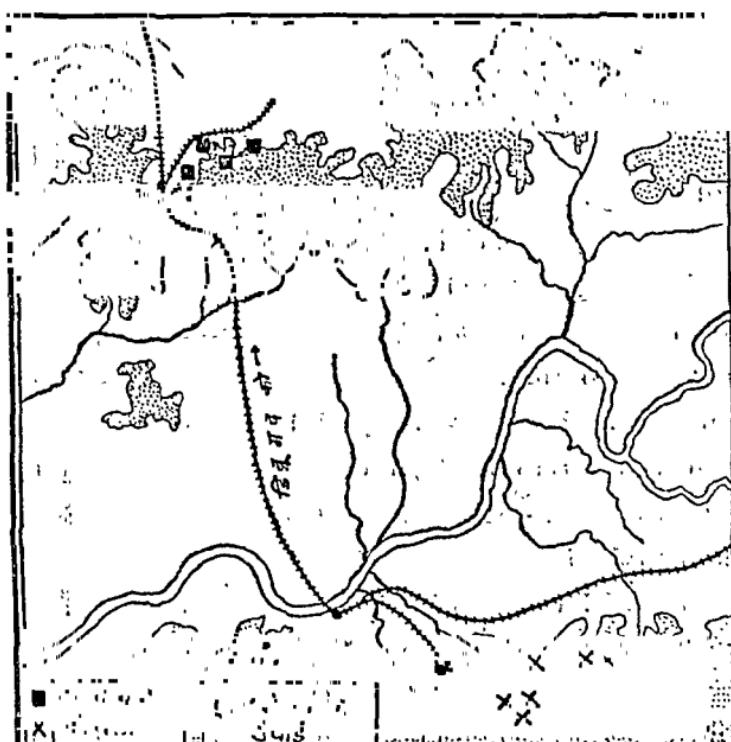
चित्र सं० ५३. आसाम में कोयले तथा मिट्टी के तेल के क्षेत्र

आसाम से निकले हुए तेल से मिट्टी का तेल, मशीनों को चिकना करने का तेल, जूट रंगने का तेल, साफ पेट्रोल और मोम प्राप्त होता है। यहाँ का मोम बहुत उत्तम होता है जिससे मोमबत्ती बनाते हैं अथवा ब्रिटेन को निर्यात कर दिया जाता है।

भारत लम्बी सड़कों का देश है। देहातों के भीतरी भागों तक पहुँचने के लिये मोटर ही सबसे सुलभ साधन है, अतः यहाँ पेट्रोल की खपत बहुत अधिक है। इस समय भारत

में पेट्रोल अत्यन्त सीमित मात्रा में मिलता है। देश की न्यूनतम मांग भी भारतीय तेलोत्पादन से दस गुना है। वास्तव में यह मांग कई गुना बढ़ सकती है। अतः भारत की तेल-समस्या अति चिन्ताजनक है।

मिट्टी के तेल की पूर्ति करने के उपाय

(१) तेल के समस्त साधनों का नवीनतम वैज्ञानिक साधनों से परीक्षण:—अनुमान किया जाता है कि हिमालय क्षेत्र में हजारा से नैनीताल तक तथा आसाम में सुरमा नदी की घाटी से ब्रह्मपुत्र तक तेल-क्षेत्र की एक पंक्ति है। भूगर्भवेत्ताओं का मत है कि भारत के पश्चिमी तट पर कच्छ और खम्भात में तथा राजस्थान के अर्द्ध मरुस्थली भाग में तेल का अत्यधिक भण्डार है, जिसका उत्पादन होने पर भारत की तेल-समस्या कुछ सीमा तक सुलझ सकती है। इन सब क्षेत्रों का नवीनतम वैज्ञानिक साधनों से परीक्षण होना नितान्त आवश्यक है। इस दिशा में कार्य प्रारम्भ हो गया है।

(२) कृत्रिम उपाय से तेल बनाना (Synthetic Oil):—इसके कई तरीके हैं:—

(अ) पश्चिमी देशों में कोयले से तेल पैदा करते हैं। इस प्रकार का तेल ग्रेट ब्रिटेन और जर्मनी में अधिक तैयार किया जाता है। हमारे देश में घटिया कोयला ही अधिक होता है। इस कोयले का उपयोग तेलोत्पादन में भली भाँति किया जा सकता है।

(आ) भारत देश में चीनी के कारखाने पर्याप्त शीरा व्यर्थ नष्ट करते हैं। इससे मद्यसार बनाई जा सकती है। इसको पेट्रोल के साथ १ और ४ के अनुपात में मिलाकर कई प्रकार के इंजनों में प्रयुक्त किया जा सकता है। जर्मनी, फ्रांस, पोलैण्ड आदि देशों में चुकन्दर की जड़ों का प्रयोग मद्यसार बनाने के लिए किया जाता है।

(इ) विज्ञान तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद के प्रयोगों ने सिद्ध कर दिया है कि लकड़ी के बुरादे तथा व्यर्थ नष्ट होने वाले पत्तों और जड़ों से भी तेल प्राप्त किया जा सकता है।

(३) विदेशों से आदान-प्रदान के आधार पर पेट्रोल मँगाना:—इस समय भारत ईरान, ईराक, ब्रह्मा आदि देशों से स्वच्छ पेट्रोल मँगवाता है। हमें विदेशों से अपनी चीनी, सूती व ऊनी वस्त्र, सीमेंट, चमड़े का सामान, जूट का सामान आदि आवश्यक वस्तुएँ भेज कर अपने पड़ौसी देशों से मिट्टी का तेल मँगाना चाहिये और तेल साफ करने के लिए अपने बन्दरगाहों पर कारखाने स्थापित करने चाहिये, जिससे हमारे मजदूरों को काम मिलेगा तथा पेट्रोल के साफ करने से अन्य पदार्थ भी प्राप्त होंगे। तेल साफ करने के कारखाने अब हमारे यहाँ स्थापित होने लगे हैं।

३. जल-विद्युत

किसी देश की उन्नति के लिये यांत्रिक शक्ति का सस्ता साधन होना आवश्यक है।

भारत में कोयला और तेल का अभाव है किन्तु यहाँ जल-शक्ति प्रचुर मात्रा में विद्यमान है तथा इसके उपयोग करने की दिशा में भी प्रगति हो रही है।

भारत में जल-विद्युत के विकसित होने में एक बाधा यह है कि यहाँ वर्षा एक ऋतु में होती है। जल-शक्ति के विकास के लिए जल का निरन्तर एक-सा प्रवाहित रहना अनिवार्य है। इसलिये भारत में वर्षा के जल को बाँध बनाकर एकत्रित कर लेना पड़ता है। फल-

चित्र सं० ५४. भारत में जल-विद्युत के केन्द्र
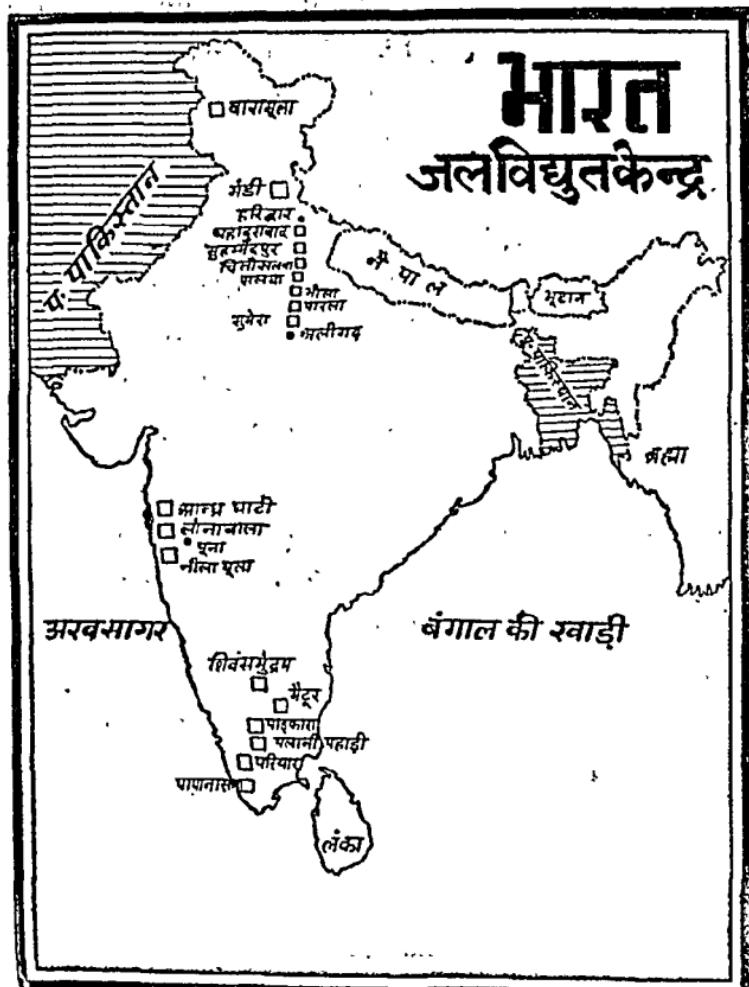
स्वरूप बिजली का खर्च बढ़ जाता है। उत्तरी भारत के मुख्य नगरों में कोयले से बिजली बनाने में सस्ती पड़ती है। किन्तु दक्षिण के पठारी भाग में जहाँ दूर से कोयला मंगाना पड़ता है, जल-विद्युत का अधिक विकास हुआ है। इसके अतिरिक्त जल-विद्युत की वृहत् योजनायें वहाँ उस समय बनी जब कोयले की कीमत अधिक थी।

[अ] दक्षिणी भारत की जल-विद्युत योजनाएँ

१. बम्बई राज्यः—वहाँ टाटा के प्रयत्न से तीन शक्ति-गृह स्थापित हुए जिससे बम्बई, कल्यान, पूना और थाना नगरों को बिजली दी जाती है। तीनों शक्ति-गृहों के नाम ये हैं:—

(१) टाटा हाइड्रो पावर सप्लाई कम्पनी:—भोरघाट के ऊपर लोनावाला, वालवान और शिरावता झीलों में तीन विशाल बाँध बनाये गये हैं जिनसे एक अगाध जलाशय बन गया है। यह पानी बड़े बड़े नलों द्वारा ऊँचाई से खोपोली के शक्ति-गृह में छोड़ा जाता है। ऊँचाई से गिरने के कारण पानी के प्रत्येक वर्ग इंच में पाँच मन का दबाव हो जाता है। इस शक्ति से पहिये चलते हैं जिनसे बिजली तैयार होती है। यह शक्ति-गृह बम्बई से ४३ मील दूर है।
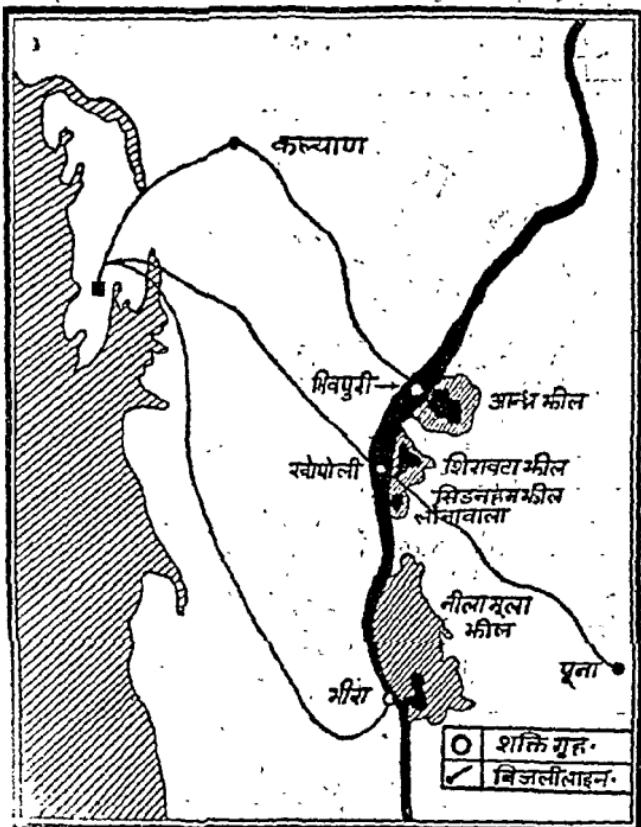
चित्र सं० ५५. बम्बई की विद्युत योजनाएँ

(२) आंध्र वैली पावर सप्लाई कम्पनी:—यह शक्ति-गृह भीवपुरी पर है। आंध्र नदी पर बाँध बनाकर पानी एकत्रित किया जाता है। आंध्र झील लोनावाला से १२ मील दूर उत्तर-पूर्व में स्थित है।

(३) टाटा पावर कम्पनी:—बम्बई से ८० मील दक्षिण पूर्व में भीरा नामक स्थान पर नीलामूला नदी में बाँध बनाया गया है जिससे बम्बई को बिजली दी जाती है।

इन्हीं तीनों योजनाओं से बम्बई की सूती कपड़ा बुनने की मिलें चलती हैं। रेलवे में भी बिजली का प्रयोग होता है।

बम्बई राज्य में कुछ योजनाएँ विचाराधीन हैं जिनमें मुख्य ये हैं:—(१) उत्तरी गुजरात योजना:—जो अहमदाबाद इलेक्ट्रिक कम्पनी का विस्तार करेगी। (२) दक्षिणी गुजरात ग्रिड योजना:—जिसके द्वारा सूरत में नया शक्ति-गृह स्थापित होगा। (३) कोयना हाइड्रो प्रोजेक्ट:—यह कोयना नदी पर बाँध बनाकर तैयार की जायगी। (४) कोल्हापुर योजना जिसकी बिजली कोल्हापुर की मिलों को व नगर को प्राप्त होगी।

२. मैसूर राज्य:—शिवसमुद्रम् योजना:—मैसूर राज्य में भारत की प्रथम जलविद्युत योजना सन १९०२ में कावेरी नदी पर बनी। कोलार की सोने की खानों को बिजली देने के लिए शिवसमुद्रम् स्थान पर शक्तिगृह बनाया गया जो कोलार से ९९ मील दूर है। आजकल

चित्र सं० ५९. दक्षिणी भारत में जल-विद्युत शक्ति का विकास

यहाँ से मैसूर राज्य के २०० नगरों को बिजली दी जाती है जिनमें बंगलौर मुख्य है। मैसूर राज्य में शिमशा और जोग प्रपातों से भी बिजली बनाने का प्रयत्न हुआ है।

३. मद्रास राज्यः—यहाँ तीन मुख्य जल-विद्युत योजनाएँ हैं:—

(१) पैकारा जल-विद्युत योजनाः—मद्रास के नीलगिरी जिले में पैकारा नदी पर बिजली पैदा की जाती है और कोयम्बटूर, एरोड, त्रिचनापली, मदुरा आदि नगरों को दी जाती है। पैकारा शक्ति-गृह दक्षिणी भारत की औद्योगिक उन्नति में अत्यन्त सहायक सिद्ध हुआ है।

(२) मैटूर जल-विद्युत योजनाः—सन् १९३४ ई० में कावेरी नदी पर सिंचाई के लिये मैटूर बाँध बनाया गया। सिंचाई के उद्देश्य से बने हुये बाँधों में यह संसार का उच्चतम-बाँध है। इसके पानी से बिजली उत्पन्न की जाती है जो सलेम, तंजोर, उत्तरी और दक्षिणी अर्काट को लाभ पहुँचाती है। यह एरोड स्थान पर पैकारा योजना से मिला दी गई है।

(३) पापानासम योजनाः—ताम्रपर्णी नदी पर पापानासम के पास सन् १९४४ ई० में एक बाँध बनाया गया। इससे बिजली पैदा की जाती है, और तूतीकोरिन, टिनेवेली और मदुरा आदि जिलों को बिजली पहुँचाई जाती है।

इनके अतिरिक्त पेरियर नदी के पेरियर बाँध और पालनी पहाड़ी से भी बिजली उत्पन्न की जाती है। कई योजनाएँ अभी विचाराधीन हैं।

(४) केरल राज्यः—वहाँ पल्लीवासल जल-विद्युत योजना है, जिनमें मुद्रपूजा नदी के पानी से बिजली तैयार की जाती है। इससे अलवाय का एलूमिनियम का कारखाना चलता है। कोचीन की सम्पूर्ण बिजली की मांग इसी योजना से पूरी होती है।

इस प्रकार दक्षिण भारत में मानसूनी वर्षा तथा पठारी भूमि होने से बिजली उत्पन्न करने में बड़ी सुविधा है।

[आ] उत्तरी भारत की जल-विद्युत योजनाएँ

१. काश्मीरः—यहाँ बारामूला योजना है जो श्रीनगर से ३४ मील दूर उत्तर-पश्चिम में स्थित है। वहाँ झेलम नदी के पानी से बिजली तैयार कर बारामूला और श्रीनगर पहुँचाई जाती है।

२. पंजाबः—वहाँ मण्डी जल-विद्युत योजना का शक्तिगृह जोगेन्द्र नगर में है। मंडी राज्य में व्यास नदी की एक सहायक उहल नदी के प्रपात से बिजली तैयार की जाती है। इससे शिमला, अम्बाला, करनाल और फिरोजपुर को बहुत सस्ती बिजली पहुँचाई जाती है। भविष्य में यहाँ से सहारनपुर, मेरठ, दिल्ली आदि नगरों को भी बिजली दी जा सकेगी।

३. उत्तर प्रदेशः—यहाँ गङ्गा की ऊपरी नहर के कृत्रिम प्रपातों से सिंचाई के उपयोग के लिये बिजली तैयार की जाती है। इसको गंगा की घाटी की ग्रिड योजना (Ganges Valley Grid Scheme) कहते हैं। इस योजना में सात शक्तिगृह हैं जिनके नाम ये हैं—बहादुराबाद, मोहमदपुर, चित्तौरा, सालवा, भोला, पालरा और सुमेरा। ये सातों शक्तिगृह बिजली के तारों द्वारा एक दूसरे के साथ मिला दिये गये हैं। इस योजना से

उत्तर-प्रदेश के पश्चिमी भाग के सहारनपुर, मुजफ्फरनगर, मेरठ, बुलन्दशहर, अलीगढ़, आगरा, एटा, बिजनौर, मुरादाबाद आदि जिलों के कई नगरों और गाँवों को बिजली मिलती है। रोशनी के अतिरिक्त इस बिजली का प्रयोग कई कारखानों में भी होता है। उन जिलों में जहाँ नहर का पानी नहीं पहुँच सकता वहाँ पर कुएँ खोदकर इस बिजली से पानी ऊपर उठाया जाता है और खेतों की सिंचाई की जाती है।

इसके अतिरिक्त शारदा नहर के पानी से भी बिजली उत्पन्न करने की योजना है जिसका नाम 'शारदा हाइड्रो-इलेक्ट्रिक प्रोजेक्ट' है। इसके द्वारा उत्तर-प्रदेश के कई स्थानों को लगभग ४१,४०० किलोवाट बिजली दी जावेगी जिससे कारखाने भी चलेंगे और सिंचाई भी की जायगी। दूसरी योजना का नाम 'यमुना हाइड्रो-इलेक्ट्रिक स्कीम' है जो देहरादून से ३० मील दूर नदी में बाँध बनाकर तैयार की जायगी। इसका काम प्रारम्भ हो गया है।

४. अन्य जल विद्युत योजनाएँ:—हिमालय के पहाड़ी नगरों में बहते हुए झरने और नदियों से भी बिजली पैदा की जाती है। शिमला, नैनीताल, मंसूरी, दार्जिलिंग आदि में इसी प्रकार बिजली प्राप्त की जाती है। आसाम के चाय के बगीचों में भी पत्तियों को सुखाने के लिए जल-विद्युत ही काम में ली जाती है।

बिजली के उत्पादन में भारत का स्थान

ऊपर के विवरण से ज्ञात होता है कि हमारे यहाँ तीन प्रयोजनों से बिजली उत्पन्न की जाती है:—(अ) बड़े नगरों में रोशनी और कारखानों के लिये, जैसे कलकत्ता, बम्बई आदि (आ) सिंचाई के लिये, जैसे उत्तर प्रदेश में गङ्गा-नहर की ग्रिड योजना और (इ) पहाड़ी नगरों की माँग को पूरी करने के लिये जैसे शिमला, दार्जिलिंग आदि।

हमारे यहाँ प्रतिवर्ष लगभग १२ लाख किलोवाट बिजली पैदा होती है। जिसमें से लगभग ५ लाख किलोवाट जल से उत्पन्न की जाती है। सम्पूर्ण भारत में संभावित जल-विद्युत का अनुमान चार करोड़ किलोवाट है। सारे संसार के लिये यह संख्या ३० करोड़ के लगभग है। इस प्रकार भारत में बिजली के विकास के लिये बहुत सम्भावना है। परन्तु इस समय तो जितनी जल-विद्युत् हमारे यहाँ उत्पन्न होती है वह संसार के अन्य देशों को देखते हुए बहुत कम है। नीचे दी हुई तालिका से यह स्पष्ट हो जायगा:—

नाम देश:—	संभावित जल-विद्युत का विकसित प्रतिशत
स्विट्जरलैंड	६८%
नार्वे	५४%
कनाडा	३५%
रूस	३४%
फ्रांस	३२%
स्वीडन	२८%
संयुक्त-राष्ट्र अमेरिका	२४%
भारत	३%

इस प्रकार हमारे यहाँ जल-विद्युत का विकास अभी बहुत थोड़ा हुआ है। जितना भी विकास कुल बिजली का हुआ है, उसमें असमान वितरण का बड़ा भारी दोष है। बड़े-बड़े नगरों में तो बिजली है। परन्तु छोटे कस्बों और गांवों में यह बिलकुल है ही नहीं। जितनी बिजली भारत में उत्पन्न की जाती है, उसका लगभग आधा अंश देश के केवल दो नगरों (बम्बई और कलकत्ता) में काम आता है, जिनकी जन-संख्या सम्पूर्ण देश का केवल १% ही है। शेष आधी बिजली ९९% लोगों के लिए है। इस असमान वितरण का कारण यह है कि हमारे देश के अधिकांश लोग गांवों में ही रहते हैं, जहाँ अभी तक बिजली है ही नहीं।

चित्र सं० ५७. भारत की प्रस्तावित जल-विद्युत योजनाएँ

हमारी राष्ट्रीय सरकार ने कई ऐसी योजनाएँ बनाई हैं, जिनके द्वारा लगभग डेढ़ करोड़ किलोवाट बिजली और उत्पन्न होगी। बड़ी बड़ी नदियों में बाँध बनाकर उनसे जल-विद्युत का विकास किया जायगा। बिजली के अतिरिक्त उन बांधों से खेती की सिंचाई भी की जायगी,

नदी की बाढ़ भी रोकी जायगी, मछलियाँ भी पाली जायँगी तथा उनके किनारे वृक्ष भी लगाये जायँगे। इस प्रकार उन योजनाओं के अनेक प्रयोग होने के कारण उन्हें बहुमुखी योजनाएं कहते हैं। ऐसी योजनाओं में दामोदर घाटी योजना, भाकरा योजना, महानदी योजना, कोसी योजना आदि मुख्य हैं। इनका वर्णन आगे किया जायगा।

इन योजनाओं से बड़ा लाभ यह होगा कि इनके पानी से जो बिजली तैयार की जायगी उसके द्वारा गाँव-गाँव में और घर-घर में रोशनी होगी तथा कई बड़े-बड़े कारखाने और ग्रामोद्योगों का विकास होगा। तभी हमारा देश सम्पन्न होगा।

सारांश

कारखाने चलाने के लिए तीन प्रकार की शक्ति के साधन हैं:—

१. कोयला:—हमारे देश की मांग की पूर्ति करने के लिये यहाँ कोयला पर्याप्त होता है। इसका प्रयोग प्रमुख कारखानों तथा रेल चलाने में होता है। प्रायद्वीपी भारत की दामोदर, सोन, महानदी तथा गोदावरी नदी की घाटी में कोयले की खानें हैं। बिहार राज्य में झरिया क्षेत्र कोयले के लिये प्रसिद्ध है। बङ्गाल का रानीगंज क्षेत्र बहुत विशाल है और यहां का कोयला भी उत्तम कोटि का है। इनके अतिरिक्त मध्य-प्रदेश, मद्रास व आंध्र प्रदेश राज्यों में भी कोयले की खानें हैं।

हमारे देश के कोयले के व्यवसाय में कुछ दोष भी हैं:—

संयुक्त राज्य अमेरिका अथवा ब्रिटेन की तुलना में यहाँ कम कोयला निकलता है। यहाँ का कोयला बहुत उच्च कोटि का नहीं होता। कोयले की खानें देश के सभी भागों में न होकर एक भाग में सीमित है। कोयला उत्पादन करने वाले क्षेत्र समुद्र किनारे से दूर होने से इस खनिज को निर्यात करने में कठिनाई होती है।

२. पेट्रोल:—हमारे यहाँ शक्ति के इस साधन की बहुत कमी है। थोड़ा बहुत मिट्टी का तेल व पेट्रोल आसाम राज्य में मिलता है। मोटरों की संख्या में निरन्तर वृद्धि होने से पेट्रोल की कमी हमें खल रही है।

३. जल-विद्युत्:—शक्ति का यह साधन हमारे यहाँ प्रचुर मात्रा में उत्पन्न किया जाता है। यहाँ पहाड़ी भूमि और घनी वर्षा वाले क्षेत्रों में बहुत अधिक बिजली पैदा की जा सकती है। अभी तक जल-विद्युत का विकास दक्षिणी भारत में ही अधिक हुआ है। बम्बई राज्य में तीन बड़ी बड़ी योजनायें हैं जिनके द्वारा वहाँ के सूती कारखानों को बिजली मिलती है। ये योजनायें टाटा महोदय के प्रयास से बनी हैं। मैसूर राज्य की शिवसमुद्रम् योजना बहुत प्रसिद्ध है। मद्रास राज्य की योजनाओं में पैकारा, मैटूर और पापानासम की योजनाएँ मुख्य हैं। केरेल की पल्लीवासल योजना है। उत्तरी भारत के

काश्मीर राज्य में बारामूला योजना है जिससे श्रीनगर को बिजली मिलती है। पंजाब की मण्डी योजना प्रसिद्ध है। उत्तर प्रदेश में गंगा नदी की ग्रिड योजना से कई गाँवों व नगरों को बिजली मिलती है और बिजली के कुओं से सिंचाई भी की जाती है।

भारत सरकार ने देश के विभिन्न राज्यों में नदियों के पानी को रोक कर कुछ ऐसी योजनाएँ बनाई हैं जिससे बिजली पैदा की जायगी और सिंचाई भी होगी। ये बहुमुखी योजनाएँ कहलाती हैं। इन योजनाओं से पानी का प्रयोग कई कामों में होने के कारण इनसे उत्पादित बिजली सस्ती पड़ेगी।

प्रश्न

१. भारत में कौन-कौन से शक्ति के साधन प्राप्त हैं ?
२. प्रायद्वीपी भारत में कोयला उत्पत्ति के कौन-कौन से मुख्य क्षेत्र हैं ?
३. हमारे यहाँ पेट्रोल की पूर्ति किस प्रकार से की जा सकती है ?
४. जल-विद्युत की उत्पत्ति के लिए किन किन बातों का होना आवश्यक है ? तथा दक्षिणी भारत में जल-विद्युत योजनाएँ अधिक क्यों हैं ?
५. उत्तरी भारत की जल-विद्युत योजनाओं में मुख्य कौनसी हैं ?

अध्याय १६

बड़े उद्योग

प्राचीन काल में लोगों की आवश्यकताएँ कम थीं। मुख्य व्यवसाय खेती करना था और उसके साथ साथ अपने प्रतिदिन के जीवन में काम आने वाली वस्तुओं को भी लोग बना लेते थे। परन्तु आज ऐसा करने से काम नहीं चलता। हमारी आवश्यकताएँ इतनी बढ़ गई हैं कि सभी प्रकार की वस्तुएँ एक घर में या गाँव में तैयार नहीं हो सकतीं। ज्यों-ज्यों सभ्यता का विकास होता गया त्यों-त्यों लोगों में श्रम का विभाजन होने लगा। कुछ लोग खेती करने में लगे रहे तो कुछ कारखानों में अनेक प्रकार की वस्तुएँ बनाने लगे। कृषि की उपज और कारखानों में बनी हुई वस्तुओं का आदान-प्रदान होने लगा। यही नहीं कुछ राष्ट्र तो कृषि प्रधान बन गये और कुछ व्यवसाय-प्रधान। इंगलैंड, जर्मनी, बेलजियम आदि यूरोप के राष्ट्र व्यवसाय-प्रधान हैं। कनाडा, अर्जेन्टाइना, ब्राजिल आदि कृषि प्रधान राष्ट्र हैं। अपने यहाँ अधिक उत्पादित की हुई वस्तुओं को दोनों ही प्रकार के राष्ट्र आपस में लेने-देने लगे।

एक ही प्रकार की वस्तु पैदा करने वाला राष्ट्र स्वावलम्बी नहीं होता। उसे अपनी आवश्यकता की कई वस्तुओं के लिए दूसरों पर निर्भर रहना पड़ता है। केवल खेती करने वाले राष्ट्र आत्म निर्भर नहीं होते। कारखानों की वस्तुएँ उन्हें बाहर से मँगानी पड़ती हैं। ठीक इसी प्रकार व्यवसाय प्रधान राष्ट्र अन्न तथा कारखानो में काम आने वाला कच्चा माल विदेशों से मँगाते हैं। वास्तव में आत्म-निर्भर या स्वावलम्बी राष्ट्र वे ही हैं, जहाँ खेती भी खूब होती हो और जहाँ कारखाने भी पर्याप्त मात्रा में हों। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका व रूस आदि ऐसे ही राष्ट्र हैं। अपनी आवश्यकता की अधिकांश वस्तुएं वे राष्ट्र स्वयं ही बना लेते हैं और अपने यहाँ भोजन सामग्री भी पर्याप्त मात्रा में उत्पन्न कर लेते हैं।

भारत में कारखानों की आवश्यकता

हमारे देश भारत में खेती का एक विशेष महत्व है। यहाँ का जलवायु खेती की उपज के लिए उपयुक्त है। यह बताया जा चुका है कि भारत में कई प्रकार की खेती की पैदावार होती है। परन्तु भारत जैसे विशाल राष्ट्र को केवल खेती पर निर्भर रखना उचित न होगा। हमें सब बातों में आत्म-निर्भर होना होगा। खेती के अतिरिक्त यहाँ पर कई प्रकार के कारखाने खोलने की आवश्यकता है। यह सौभाग्य की बात है कि भारत में कारखाने खोलने में भी सुविधा है। लोहे का सामान, वस्त्र, शक्कर आदि बनाने के कारखाने यहाँ खोले जा चुके हैं और उन्होंने आशातीत उन्नति की है।

रत में विदेशी शासन पर्याप्त समय तक रहा । अंग्रेजों का देश ब्रिटेन व्यवसाय प्रधान होने से उन्होंने भारत को अपने यहाँ के कारखानों में बनी हुई वस्तुओं की बिक्री के लिए बाजार समझ रखा था । इसी कारण उन्होंने भारतीय उद्योग-धन्धों को प्रोत्साहन नहीं दिया ।

कारखानों का स्थानीयकरण

कारखानों की स्थापना करने के लिए कई बातों की आवश्यकता होती है । नीचे के वर्णन से ज्ञात होता है कि कारखाने स्थापित करने के साधन हमारे देश में पर्याप्त हैं ।

कारखाने खोलने के लिए निम्नलिखित बातें होनी चाहियेः—

१. यांत्रिक शक्तिः—मशीनों के चलाने के लिए कोयले की आवश्यकता होती है । बिजली से मशीनें चलती हैं । हमारे यहाँ अपनी आवश्यकतानुसार कोयला मिल जाता है । परन्तु उसमें दोष यह है कि वह देश के एक ही भाग में केन्द्रित है । परन्तु जहाँ कोयला नहीं है वहाँ जल-विद्युत का विकास किया जा सकता है । उसके लिए हमारे यहाँ बहुत सुविधा है । बम्बई की कपड़े की मिलें इसी से चलती हैं ।

२. कच्चा मालः—जिस वस्तु को बनाने का कारखाना खोला जाय उसका माल निकट ही प्राप्त होना चाहिये । सूती कपड़े के लिए कपास, लोहे के कारखानों के लिए लोहा और कोयला आदि कच्चे माल हैं । दूसरे देशों में कच्चा माल मंगाने से महंगा पड़ता है और दूसरों पर निर्भर भी रहना पड़ता है । भारत में कारखानों के लिए कई प्रकार का कच्चा माल मिलता है, जिसका अधिकांश अभी तक विदेशों को ही निर्यात होता है ।

३. बिक्री का क्षेत्रः—जो वस्तु कारखाने में तैयार की जाय उसकी देश में मांग होनी चाहिये । उसकी बिक्री के लिए विदेशों पर निर्भर रहना ठीक नहीं है । भारत में घनी आबादी होने से यहाँ पर कई प्रकार की बहुत सी वस्तुओं की आवश्यकता रहती है ।

४. पूंजीः—मशीनें खरीदने तथा कारखाने बनाने के लिए रुपये की आवश्यकता होती है । भारत एक निर्धन देश होने से यहाँ धन की कमी है और जिन लोगों के पास थोड़ा बहुत धन है भी, वे उसको कारखानों में लगाने की हिम्मत नहीं करते ।

५. कुशल कारीगरः—कारखानों में काम करने के लिए मजदूरों की आवश्यकता होती है । हमारे यहाँ मजदूर तो बहुत हैं परन्तु वे शिक्षित न होने से अच्छा काम नहीं कर सकते । हाँ, उचित शिक्षा देने पर वे अच्छे सिद्ध हो सकते हैं ।

६. यातायात के सुगम साधनः—कारखानों में बने हुए माल को बाहर भेजने के लिए यातायात के अच्छे साधनों का होना जरूरी है । हमारे देश के क्षेत्रफल को देखते हुए यहाँ अभी तक रेल-मार्ग का बहुत कम विकास हुआ है । अधिकांश रेलें बन्दरगाहों के भीतरी भागों से ही मिलाती हैं जिससे देश में उत्पन्न किया हुआ कच्चा माल विदेशों को भेज दिया जाता था । जलमार्ग की भी कमी सी है । सड़कें भी कम हैं ।

७. आधारभूत व्यवसायों की आवश्यकता:—कारखानों में काम आने वाली बड़ी बड़ी मशीनें विदेशों से मँगवाने में बहुत महँगी पड़ती हैं क्योंकि वे भारी होती हैं। अपने देश में ही सब प्रकार की मशीनें बनें ऐसा प्रबन्ध होना चाहिये। भारत में अभी इसकी कमी है यद्यपि मशीनें बनाने के लिए यहाँ उत्तम लोहे की कमी नहीं है।

८. पानी की आवश्यकता:—कारखानों की मशीनों में पानी की आवश्यकता होती है। इसके अतिरिक्त काम करने वाले मजदूरों के लिये भी पानी चाहिये। मानसूनी देश होने से हमारे यहाँ मीठे पानी की कमी नहीं है। देश के कई भागों में साल भर नदियाँ बहती रहती हैं जिनके किनारे कारखाने खोले जा सकते हैं।

९. उत्तम जलवायु:—हमारे यहाँ गर्मी पर्याप्त पड़ती है परन्तु देश के सभी भागों में उसका प्रभाव एक सा नहीं है। न साल भर गर्मी ही गर्मी रहती है। उत्तरी भारत का जलवायु काम करने में विशेष रुकावट नहीं डालता। कई स्थानों का जलवायु तो स्वास्थ्य के लिए बड़ा हितकर है। हाँ, दक्षिणी भारत में अधिक गर्मी पड़ने से लोगों को कारखानों में काम करने में कठिनाई अवश्य होती है। परन्तु उसको सहन करने की उनमें आदत पड़ गई है।

१०. सरकार का संरक्षण:—कारखानों की उन्नति के लिए राज्य का संरक्षण होना बहुत आवश्यक है। जापान, संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, ग्रेट ब्रिटेन आदि जितने भी राष्ट्रों ने कारोबार में उन्नति की उसका प्रधान कारण सरकार की सहायता है। देश में आने वाले माल पर अधिक टैक्स लगा देने से देश का बना हुआ माल सस्ता पड़ता है। इसी प्रकार कच्चे माल के निर्यात पर अधिक कर लगा देने से उसका निर्यात कम हो जाता है और वह देश के कारखानों को सस्ते भाव से मिलने लगता है।

भारत में विदेशी राज्य होने से ही इतने दिन हमारे कारखानों की उन्नति नहीं हो सकी। अंग्रेजों ने हमारे देश को अपने देश की बनी हुई वस्तुओं की बिक्री के लिए बाजार समझा। कच्चा माल यहाँ से बाहर भेजा जाने लगा और बना हुआ माल यहाँ खूब आने लगा। सरकार की यह नीति हमारे कारखानों के लिए घातक सिद्ध हुई।

अब हमें स्वतन्त्रता मिल गई है और हमारी राष्ट्रीय सरकार देश की उन्नति में जी-जान से प्रयत्न कर रही है। अतः वह दिन दूर नहीं जब कि हमारे यहाँ सभी प्रकार के कारखाने अधिक संख्या में मिलेंगे।

कृषि की उन्नति में हमारे यहाँ कितनी संभावना है इसका वर्णन पीछे किया जा चुका है। ऊपर के वृत्तान्त से यह भी स्पष्ट है कि हमारे यहाँ कारखाने खोलने के लिए हर प्रकार की सहूलियत है। सरकार के प्रयत्न से आशा की जाती है कि हमारा देश भी संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, रूस तथा फ्रांस से कम न रहेगा। हम भी उन देशों की भांति शीघ्र ही अधिक मात्रा में आत्म-निर्भरता प्राप्त कर लेंगे।

कारखानों के विकास का संक्षिप्त इतिहास

आधुनिक कारखानों का जन्म हुये लगभग सौ वर्ष हो गये। परन्तु इनकी प्रगति बहुत धीमी रही। प्रारम्भ में इनमें बहुत कम वृद्धि हुई और आजकल तो दिनों-दिन संख्या बढ़ती जा रही है। इस प्रकार प्रारम्भ से आज तक इन कारखानों के विकास को हम पांच भागों में बाँट सकते हैं।

(१) सन् १८५० से १९१३ तक (अर्थात् प्रथम विश्व-व्यापी युद्ध से पूर्व):—उस समय यूरोप तथा अमेरिका के उद्योग-धंधे बड़ी तेजी से उन्नति कर रहे थे। उनके लिए कच्चे माल की कुछ आवश्यकता थी। विदेशी सत्ता होने से उन दिनों हमारे यहाँ से प्रतिवर्ष करोड़ों रुपये का कपास, पाट, चमड़ा, तिलहन, चाय आदि कच्चे माल के रूप में विदेशों को भेजे जाने लगे। इस प्रकार हमारा निर्यात दिन-प्रतिदिन बढ़ता ही गया। कच्चे माल के बदले विदेशों से हमें मशीन का बना हुआ माल मिलने लगा। कच्चे माल से देश को बहुत धन मिला। कलकत्ते और बम्बई से क्रमशः पाट और कपास बाहर जाने के कारण वहाँ इनके कुछ कारखाने खुले। कुछ कपड़ा और पाट की बोरियाँ आदि यहाँ बनने लगीं परन्तु ये कारखाने विदेशियों के हाथ में ही थे अतः हमें उनसे लाभ न हो सका।

(२) सन् १९१४ से सन् १९१९ तक (प्रथम महायुद्ध के समय):—उस समय यूरोप में युद्ध होने से इङ्गलैंड, जर्मनी, फ्रांस आदि का ध्यान कारखानों से हट कर युद्ध की ओर लग गया। कारखानों में आवश्यकता की वस्तुएँ न बनकर विध्वंसकारी यन्त्र बनने लगे। इसका परिणाम यह हुआ कि हमारे कच्चे माल की माँग निरन्तर घटती गई। विदेशों के कारखानों में बनी हुई वस्तुएँ भी हमें कठिनाई से मिलने लगीं। सरकार को भी कारखानों की विदेशी वस्तुएं मँगवाने में कठिनाई हुई। इसलिए अंग्रेजी सरकार ने हमारे यहाँ कुछ कारखाने खोलने की ओर ध्यान दिया। हमारे यहाँ कारखानों में वृद्धि हुई। इनके सहारे अंग्रेज मित्र राष्ट्रों की कुछ सहायता भी कर सके।

(३) सन् १९२० से सन् १९३८ तक (अर्थात् प्रथम महायुद्ध और द्वितीय युद्ध के बीच का समय):—प्रथम युद्ध के अनुभव ने सरकार को सतर्क कर दिया। अंग्रेजों ने सोचा कि यदि भारत में कारखानों को प्रोत्साहन दिया जाय तो वे संकट में उनके काम आवेंगे। 'इण्डियन फिज्कल कमीशन' की सिफारिश पर सन् १९३२ में सरकार संरक्षण-नीति को अपनाने के लिए तैयार हो गई। यद्यपि इस नीति के अपनाने में सरकार का रुख अधिक रोचक नहीं रहा और टैरिफ बोर्ड की सिफारिश करने पर भी वृहद् रासायनिक, सीमेंट, कांच आदि व्यवसायों को संरक्षण नहीं दिया गया, परन्तु फिर भी चीनी और दियासलाई के व्यवसायों को संरक्षण प्राप्त हो गया और इन व्यवसायों की आशातीत उन्नति हुई।

इस समय विदेशों से आने वाले माल में घटती होने लगी। चीनी का व्यवसाय तो इतना उन्नत हो गया कि सन् १९३८ तक देश में चीनी की माँग की पूर्ति यहाँ की मिलों से

ही हो जाती थी। सन् १६३० के पूर्व तो हम अधिकांश चीनी बाहर से मंगवाते थे। इस काल की दूसरी विशेषता यह है कि अधिकांश व्यवसायों में भारतीय पूंजी ही लगी।

(४) सन् १६३६ से १६४७ तक (द्वितीय महायुद्ध के समय तथा पश्चात्):—इन दिनों विश्व के प्रमुख व्यावसायिक देश युद्ध की सामग्री तैयार करने में लग गये। जर्मनी तो नष्टप्राय ही हो गया। इंग्लैंड की शक्ति युद्ध में लगी रही। जापान भी युद्धरत था। केवल अमेरिका में युद्ध न हुआ और वहीं की बनी हुई वस्तुएं सारे संसार में जाने लगीं परन्तु वहां के कारखाने भी मित्र राष्ट्रों के लिए युद्ध के यन्त्र बना रहे थे, इसलिए व्यापारिक वस्तुओं के बनाने में कमी हो गई।

इस द्वितीय युद्ध ने हमारे औद्योगिक विकास में युगान्तर उपस्थित कर दिया। आवागमन के साधनों में भारी कमी हो जाने से हमें बाहर की वस्तुएं कठिनाई से मिलने लगीं। धीरे-धीरे विदेशी वस्तुओं का आना बहुत सीमा तक रुक गया। आवश्यकता की वस्तुएं हमारे देश में ही बनने लगीं। सरकार ने भी इस ओर कदम बढ़ाया। फौज में काम आने वाला वस्त्र, चमड़े का सामान, बिजली का सामान आदि भारतीय कारखानों में ही तैयार होने लगा। पहले तो सामान बहुत अच्छा न बन सका, परन्तु धीरे-धीरे उसमें सुधार हो गया।

जब एक बार कारखाने खुल गए तो फिर युद्ध समाप्त होने पर भी वे चलते ही रहे। एक लाभ जो हमें और हुआ वह यह है कि एशिया के अन्य देशों से जापान का बाजार हट जाने से हमारे कारखानों में बनी हुई वस्तुएं वहां भेजी जाने लगीं।

(५) स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात्:—१५ अगस्त सन् १६४७ को देश को स्वतन्त्रता मिल गई। इतने दिन हमारे व्यवसायों की उन्नति में विदेशी सरकार ही बाधक थी। परन्तु अब वह रुकावट मिट गई, हमारी राष्ट्रीय सरकार ने हर सम्भव उपाय से हमारे उद्योग-धन्धों को प्रोत्साहन देने के लिये कई योजनाएं तैयार की हैं। सन् १६४८ में इण्डस्ट्री और सप्लाई के मंत्री के आधिपत्य में केन्द्रीय सलाहकार व्यवसाय समिति (Central Advisory Council of Industries) की स्थापना हुई, जो देश के कला-कौशल-सम्बन्धी सभी मामलों में सरकार को सलाह देती है।

अब राज्य की ओर से भी कई कारखाने खोले गए हैं। कई कारखानों में सरकार की देख-रेख है। मोटर, वायुयान, जलयान आदि बनाने के कारखाने भारत में ही खुल गए हैं। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में औद्योगिक विकास को प्रमुखता दी गई है। सारांश यह है कि राष्ट्रीय सरकार की यह नीति है कि जहां तक हो सके देश के कच्चे माल का निर्यात बन्द करदें और बाहर से तैयार किये हुये माल के आयात में भी धीरे-धीरे कमी की जाय।

आधुनिक उद्योग-धन्धों का विवरण

जैसा कि ऊपर बताया गया है-अब हमारे देश में कई कारखाने खुल गए हैं जिनमें कई प्रकार की वस्तुएं तैयार की जाती हैं-जैसे कपड़ा, लोहे का सामान, शक्कर, पाट का सामान,

(इ) कपड़े की माँगः—बने हुए कपड़े की माँग देश में बहुत है। मिलों की स्थापना से पहले बम्बई बन्दरगाह द्वारा ही विदेशों से कपड़ा आता था।

(ई) पूँजीः—पहले बम्बई के व्यापारियों ने चीन को कपास तथा अफीम भेज कर बहुत धन कमाया था। फिर अमेरिका की लड़ाई के समय जब वहाँ से कपास का निर्यात बन्द हो गया तो यूरोप के कारोबारी देशों को हमारे यहाँ से कपास जाने लगी। तब बम्बई के व्यापारियों को धन-संचय करने का अच्छा अवसर मिला। युद्ध के पश्चात् उन्होंने संचित पूँजी को कारखाने खोलने में लगाया।

(उ) यांत्रिक-शक्तिः—प्रारम्भ में तो कारखाने चलाने के लिये कोयले की कठिनाई रही। परन्तु बाद में पश्चिमी घाट से जल-विद्युत् के उत्पादन से कारखानों के लिए यांत्रिक-शक्ति की कमी न रही। यह बिजली कोयले से सस्ती भी पड़ती है।

(ऊ) उपयुक्त जलवायुः—सूती कपड़ा बनाने के लिए नम जलवायु की आवश्यकता होती है। शुष्क जलवायु से सूत का धागा टूट जाता है। पश्चिमी समुद्र-तट पर होने के कारण तथा मानसूनी वर्षा से बम्बई का जलवायु तर है जो वस्त्र-व्यवसाय में बहुत लाभदायक सिद्ध हुआ है।

(ए) यातायात के सुगम साधनः—बम्बई में यातायात के सुगम साधन हैं। विदेशों से यह समुद्र-मार्ग द्वारा जुड़ा हुआ है और भारत के भीतरी भागों से रेलों द्वारा इसलिये यहाँ बना हुआ माल बाहर आसानी से भेज दिया जाता है। कपास एकत्रित करने में कोई कठिनाई नहीं होती।

(ऐ) सस्ती मजदूरीः—वैसे तो भारत में अधिक आबादी होने के कारण मजदूरों की कमी नहीं है। परन्तु बम्बई के आस-पास काली मिट्टी के उपजाऊ क्षेत्र से पर्याप्त मजदूर मिल जाते हैं। पाश्चात्य लोगों के संसर्ग में आने के कारण बम्बई के लोग कार्य-कुशल भी हो गए। इन्हीं कारणों से बम्बई नगर में थोड़े ही समय में कई कारखाने खुल गए। परन्तु अधिक जन-संख्या बढ़ जाने तथा भूमि की कमी के कारण अब बम्बई में मँहगाई बढ़ गई है। मजदूरों को भी अधिक वेतन देना पड़ता है। इस समस्या को हल करने के लिए एक उपाय सोचा गया। बम्बई में अब घटिया कपड़े की बजाय उत्तम कोटि का वस्त्र बनने लगा जो कीमती होने के कारण उत्पादन के खर्चे को सहन कर सके। घटिया कपड़ा बुनने वाली मिलें अब देश के अन्य भागों में खोल दी गई।

अहमदाबाद भी सूती कपड़े की मिलों के लिए प्रसिद्ध है। कपास उत्पादन करने वाले क्षेत्र में होने के कारण इसकी स्थिति बड़े महत्व की है। वहाँ ७४ मिलें हैं जिनमें कई प्रकार का कपड़ा तैयार होता है। वहाँ पर भी आजकल बढ़िया कपड़ा बुनने की प्रवृत्ति हो गई है। वहाँ के मजदूर बड़े कुशल गिने जाते हैं। बम्बई तथा अहमदाबाद की मिलें देश का लगभग आधा सूती धागा और दो-तिहाई वस्त्र तैयार करती हैं।

बम्बई और अहमदाबाद के अतिरिक्त बम्बई राज्य में शोलापुर, वेलगाँव, बड़ौदा, सूरत, भड़ौंच आदि में भी कपड़े के कई कारखाने हैं।

२. मद्रास और आंध्रः—राज्यों में थोड़े ही समय में सूती-वस्त्र व्यवसाय ने अच्छी उन्नति की है। यहाँ ६० कारखाने हैं जिनकी मशीनें नई और बढ़िया हैं। मद्रास की खाकी रंग की जीन बहुत प्रसिद्ध है। कोट के लिये भी कई प्रकार का कपड़ा बनता है। युद्ध के समय यहाँ की मिलों से फौज के लिये सरकार ने बहुत सा कपड़ा खरीदा। हाथ के छोटे रूमाल भी यहाँ अच्छे बनते हैं।

मद्रास में सूती कपड़े के मुख्य केन्द्रों में मद्रास नगर, कोयम्बटूर, गन्टूर, मदुरा आदि मुख्य हैं। कावेरी नदी द्वारा नव-सिंचित भूमि में कपास पर्याप्त मात्रा में उत्पन्न की जा रही है और वहाँ भी अब मिलें खुल रही हैं।

३. पश्चिमी बंगालः—राज्य में कुल मिलाकर ३६ मिलें हैं जिनमें से आधी कलकत्ते के निकट हुगली के तट पर हैं। वहाँ पास ही पाट की मिलें आ गई हैं। राज्य में घनी आबादी होने के कारण कपड़े की माँग बहुत है। इसके अतिरिक्त नम जलवायु, कलकत्ते का बन्दरगाह, पास ही में लोहा और कोयला मिलना आदि बातें भी इस व्यवसाय के लिए हितकर हैं। कठिनाई केवल कपास की है जो दूसरे राज्यों से मँगवाई जाती है। परन्तु यातायात के सुगम साधन होने के कारण उत्तर-प्रदेश और पंजाब की उत्तमकोटि की कपास यहाँ आ सकती है। वास्तव में बंगाल में इस व्यवसाय की वृद्धि के लिए बहुत सुविधाएँ हैं।

४. उत्तर-प्रदेशः—इस राज्य में गङ्गा नदी के किनारे के नगरों में मिलों की संख्या अधिक है। कुल २६ मिलें हैं। आगरा, कानपुर, अलीगढ़, मुरादाबाद, बनारस आदि सूती कपड़े की मिलों के केन्द्र हैं। इन मिलों में मोटा कपड़ा तथा दरियाँ बनती हैं। वस्त्र-व्यवसाय के लिये उत्तर-प्रदेश में सबसे बड़ी सहायक बात है वहाँ की घनी आबादी के लिए इसकी माँग। कारीगर भी वहाँ के कुशल हैं और यातायात के तो बहुत सुगम साधन हैं। कपास राज्य के पश्चिमी भाग में हो जाती है। परन्तु वहाँ का शुष्क जलवायु और कोयले की दूरी इस व्यवसाय में बाधक है, विविध प्रयोजन-योजनाओं द्वारा बिजली उत्पन्न होने पर आशा है यह व्यवसाय इस राज्य में और उन्नति करेगा।

५. अन्य राज्यः—भारत के अन्य भागों में भी सूती कपड़े के कारखाने हैं। उन राज्यों में मध्य-प्रदेश, मैसूर, केरल, राजस्थान आदि हैं।

इन कारखानों में बना हुआ कपड़ा प्रायः उत्पत्ति के क्षेत्रों में ही काम आ जाता है और थोड़ा अन्य राज्यों को भी भेज देते हैं।

(३) देश के विभाजन का सूती-वस्त्र-व्यवसाय पर प्रभावः—पाकिस्तान के विभाजन का हमारी मिलों पर तो विशेष प्रभाव न पड़ा क्योंकि जितनी मिलें पहले भारत में थीं उनमें से केवल १४ ही पाकिस्तान में गई हैं। इसलिये मिलों की संख्या में तो कोई विशेष कमी

नहीं हुई। परन्तु कच्चे माल अर्थात् कपास की स्थिति में बहुत अन्तर पड़ गया। पंजाब में उत्तम कपास पैदा करने वाले भाग का अधिकांश अब पाकिस्तान में है। सिन्ध का तो कपास उत्पादक सारा क्षेत्र ही पाकिस्तान में है। इस प्रकार देश के विभाजन से हमें कपास बाहर से मँगानी पड़ेगी चाहे वे पाकिस्तान से मँगवायें या अन्य देशों से। परन्तु देश में अधिक कपास उगाने का आन्दोलन जारी है और आशा की जाती है कि हमारी कपास की माँग की पूर्ति शीघ्र ही हो जायगी।

(४) व्यापार:—पहले हमारे यहाँ विदेशों से पर्याप्त सूती कपड़ा आता था परन्तु अब तो हमारी मिलें कपड़े का उत्पादन करने लगी हैं। कपड़े के लिये अब हम विदेशों का मुँह नहीं ताकते। आजकल तो हमारे यहाँ से कुछ कपड़ा बाहर भी जाने लगा है। हमारे प्रमुख ग्राहक ये हैं:—ब्रह्मा, स्याम, इंडोनेशिया, पाकिस्तान, अरब, फ़ारस, ईराक, सीरिया, पूर्वी अफ्रीका आदि। अधिकांश निर्यात बम्बई के बन्दरगाह द्वारा ही होता है।

(५) भारतीय सूती-वस्त्र-व्यवसाय का भविष्य:—हमारे देश में सूती व्यवसाय का भविष्य बहुत उज्ज्वल है। इसका सबसे बड़ा कारण यह है कि हमारा घरेलू बाजार बहुत बड़ा है। इसके अतिरिक्त हमारे पड़ौसी देशों में भी इसकी मांग बहुत है।

हाँ, इस समय इस व्यवसाय के बढ़ाने में कुछ कठिनाइयाँ अवश्य हैं। परन्तु हमारी राष्ट्रीय सरकार इन्हें दूर करने में संलग्न है। हमारे सूती कारखानों के विकास में निम्नलिखित कठिनाइयाँ हैं:—

(अ) मशीनों की कमी:—हमारी मिलों की सारी मशीनें विदेशों से मँगवाई हुई हैं और अधिक मशीनें मँगवाने में कठिनाई है और धन भी बहुत खर्च होता है। हमारी राष्ट्रीय सरकार ने अब देश में ही मशीनें बनवाने की योजना बना ली है। आशा है निकट भविष्य में हमारी यह कठिनाई दूर हो जायगी।

(आ) कपास की कमी:—पाकिस्तान के विभाजन से उत्तम कोटि की रुई की जो कमी हो गई उसकी पूर्ति के लिए भी सरकार भरसक प्रयत्न कर रही है। देश में जगह-जगह उच्च कोटि की कपास बोई जा रही है। पंजाब की भाकरा योजना के समाप्त होने पर तो यहाँ कपास का बाहुल्य हो जायगा।

(इ) लोहे की आवश्यकता:—हमारे यहाँ की वर्तमान मिलों की मरम्मत के लिए साल में लगभग आठ हजार टन लोहे और फौलाद की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त नई मिलों की स्थापना के लिये प्रतिवर्ष बीस हजार टन की और आवश्यकता होगी। इसके लिये हमारे देश में क्षेत्र बहुत हैं। हमारा लोहा उत्तम कोटि का और पर्याप्त मात्रा में है। सरकार लौह-व्यवसाय की उन्नति भी कर रही है। इस सारे लोहे की माँग की पूर्ति देश में तैयार किए हुए लोहे और फौलाद से हो सकती है।

(ई) सीमेंट की माँग:—मिलों के मकान बनाने में सीमेंट का बहुत प्रयोग होता है।

वर्तमान कारखानों की मरम्मत के लिए लगभग बीस हजार टन सीमेंट की हर साल जरूरत रहती है। नये कारखाने बनाने के लिए यह माँग २५ हजार टन (वार्षिक) है। आलकल हमारे यहाँ सीमेंट के कई कारखाने खुल गये हैं और खुलते जा रहे हैं, अतः यह माँगें भी अपने देश से ही पूरी हो जायँगी।

(उ) रासायनिक पदार्थों की कमीः—कपड़े को तैयार करने में कई रासायनिक पदार्थों की आवश्यकता है। छपाई और रंगाई के लिए कई प्रकार के रंग चाहिए। रासायनिक पदार्थों के तैयार करने के लिए नमक, सोडा आदि चाहिये। ये वस्तुएँ हमारे यहाँ मिलती हैं। इतने दिन तो रासायनिक पदार्थ विदेशों से ही मँगाये जाते थे परन्तु अब इसके कारखाने हमारे यहाँ बड़ी द्रुत गति से खुल रहे हैं। आशा है वे हमारी मिलों की माँग की पूर्ति करेंगे।

(ख) ऊनी वस्त्र-व्यवसाय

शीतोष्ण कटिबन्ध के देशों में ऊनी वस्त्र बनाने के व्यवसाय बहुत उन्नति पर हैं। भारत में बहुत कम आदमी ऊनी वस्त्र पहनते हैं। अमीरों को छोड़कर गरीब किसानों को तो कभी भी ऊनी कपड़े नहीं मिलते। सर्दी की ऋतु यहाँ केवल चार महीने ही रहती है। दक्षिण भारत में तो फिर भी ठण्ड की कमी ही रहती है। हाँ, एक बात अवश्य है। हमारे यहाँ ऊन के नमदे, कम्बल, दुशाले आदि अवश्य बनाये जाते हैं जो विदेशों को भी निर्यात किये जाते हैं।

भारत में कुल मिलाकर लगभग २० मिलों में ऊनी माल तैयार होता है। वैसे तो कम्बल आदि बनाने का काम हमारे यहाँ बहुत प्राचीन काल से ही होता है परन्तु इन बड़े कारखानों को खुले बहुत अधिक समय नहीं हुआ। सबसे पहली मिल सन् १८७६ में कानपुर में स्थापित हुई। अगले २५ वर्षों में धारीवाल (पंजाब), बम्बई, बंगलौर आदि में कुछ मिलें खुलीं। इनका मुख्य प्रयोजन उन दिनों बम्बई, मद्रास तथा कलकत्ते में स्थित अंग्रेजी फौजों को कम्बल बनाकर देना था।

प्रथम विश्वव्यापी युद्ध के कारण ऊनी व्यवसाय को बहुत प्रोत्साहन मिला। बाहर से माल आना बन्द हो गया और भारत सरकार की फौजों के लिए ऊनी माल हमारी मिलों से ही प्राप्त होने लगा। अमृतसर, बड़ौदा आदि में भी मिलें खुल गईं।

परन्तु युद्ध के समाप्त होने पर हमारे ऊनी व्यवसाय को बुरे दिन देखने पड़े। विदेशों से बना हुआ ऊनी माल भारत में आने लगा। इसकी तुलना में यहाँ का बना माल कम पसंद किया जाता था। कुछ मिलें तो बन्द भी हो गईं। सन् १९३८ में द्वितीय महा समर प्रारम्भ हो गया और एक बार फिर ऊनी व्यवसाय यहाँ चमकने लगा। इस समय यहाँ अच्छा कपड़ा भी बनने लगा। देश की मिलों का उत्पादन बढ़ने लगा। फौजों की माँग भारतीय ऊनी वस्त्र से पूरी करने का यत्न किया गया।

युद्ध के पश्चात् आज भी हमारे इस व्यवसाय की हालत बहुत खराब नहीं है। हमारे यहाँ पर बनी हुई वस्तुएँ अब भी प्रसिद्ध हैं। काश्मीर में श्रीनगर के दुशाले तो विश्व-विख्यात

है। पंजाब में अमृतसर और उत्तर-प्रदेश में मिर्जापुर के नमदे तथा कम्बल बड़े अच्छे होते हैं। मैसूर के बंगलौर के कारखाने में पहनने के लिए उत्तम कोटि का कपड़ा तैयार होने लगा है।

भारत में ऊनी वस्त्र-व्यवसाय की अधिक उन्नति न होने के कई कारण हैं:—

(१) भारत में ऊन तो काफी होती है परन्तु वह अच्छी नहीं होती। ऊन को काटने के तरीके अच्छे नहीं हैं। यहाँ जितनी ऊन होती है, उसका आधा भाग विदेशों को बहुत ही सस्ते दामों में बेच देते हैं।

(२) देश में ऊनी कपड़े की मांग थोड़े ही दिनों रहती है। इसके अतिरिक्त ऊनी वस्त्र पहनते भी बहुत कम लोग हैं, क्योंकि वह महँगा पड़ता है।

(३) पाश्चात्य औद्योगिक देशों में बड़ा अच्छा कपड़ा तैयार होता है। भारत के बाजार में वही अधिक बिकता है। यहाँ का बना हुआ वस्त्र उसके मुकाबले में खड़ा नहीं रह सकता।

(४) देश के कारखाने एक जगह न होकर सब जगह फैले हुए हैं। ऊनी वस्त्र व्यवसाय उत्तर में काश्मीर के श्रीनगर से दक्षिण में बंगलौर तक है। पश्चिम में बम्बई से पूर्व में कानपुर तक है। इस प्रकार सामूहिक रूप से इन कारखानों में सुधार करने में कठिनाई उपस्थित होती है।

(५) हमारे यहाँ के पूँजी-पतियों का ध्यान सूती वस्त्र-व्यवसाय की ओर की अधिक है। ऊनी व्यवसाय तो मुख्यतः घरेलू धन्धों में गिना जाता है।

इतना होते हुए भी हमारे यहाँ प्रतिवर्ष बहुत सा ऊनी माल संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, इङ्गलैंड और कनाडा को भेजा जाता है। यहाँ की रग, लोई और कम्बल बहुत पसन्द किये जाते हैं। इस व्यवसाय की ओर यदि यहाँ के पूँजीपति और सरकार ध्यान दें तो भविष्य में इसकी अच्छी उन्नति हो सकती है।

(ग) रेशमी वस्त्र-व्यवसाय

रेशमी वस्त्र हमारे यहाँ बहुत प्राचीन काल से ही बनता आ रहा है। यह पवित्र समझा जाता है और पूजा आदि के समय इसका प्रयोग किया जाता है। भारत में प्रायः घरेलू धन्धों के रूप में-ही चल रहा है। इसकी छोटी-मोटी कुल मिलाकर २०० फेक्ट्रियाँ हैं परन्तु आधुनिक ढंग की बड़ी फेक्ट्री की कमी है।

रेशम के व्यवसाय के लिए लोगों को भिन्न-भिन्न काम करने पड़ते हैं। पहले शहतूत के पेड़ लगाये जाते हैं। फिर उनके पत्तों को खिलाकर रेशम के कीड़े पाले जाते हैं। तदनन्तर उन कीड़ों पर लिपटे हुए धागों को समेटते हैं। अन्त में धागे से कपड़ा तैयार किया जाता है।

१७ वीं शताब्दी में हमारे यहाँ से इङ्गलैंड को रेशम भेजा जाता था परन्तु गत शताब्दी में जापान, इटली और चीन में पर्याप्त रेशम होने लगा। वह विदेशों में सस्ता बिकने लगा और हमारे रेशम का निर्यात बन्द सा हो गया। अब तो हम कुछ रेशम बाहर से भी मंगवाने लगे।

रेशमी व्यवसाय के लिए भारत के तीन स्थान बहुत प्रसिद्ध हैं:—(अ) मैसूर राज्य, (आ) पश्चिमी बङ्गाल और (इ) काश्मीर। इनके अतिरिक्त बिहार, आसाम, उत्तर-प्रदेश आदि में भी कुछ रेशम होता है। इनमें मैसूर से सम्पूर्ण भारत का लगभग ६०% रेशम मिलता है।

भारत में चार प्रकार का रेशम पाया जाता है—(१) शहतूत के पत्तों पर पाले हुए कीड़ों से। यह बङ्गाल, काश्मीर और मैसूर में अधिक होता है (२) टस्सर रेशम—यह बिहार के मुंगेर और भागलपुर जिलों तथा उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर और बनारस जिलों में उत्पन्न किया जाता है। (३) अरण्डी—इस पर पाला हुआ कीड़ा आसाम में अधिक होता है और (४) मगा—यह भी आसाम और उड़ीसा में मिलता है।

रेशम की बुनाई के लिए भारत के मुख्य केन्द्र ये हैं—श्रीनगर, अमृतसर, बनारस, मिर्जापुर, मुर्शिदाबाद, बांकुरा, नागपुर, भागलपुर, पूना, बेलगाँव, बंगलौर, त्रिचनापली, तंजौर आदि।

रेशम-व्यवसाय में सुधार करने के लिये सबसे पहले जुलाहों की आर्थिक अवस्था ठीक करनी होगी और उन्हें उत्तम कोटि के कर्घे दिए जायेंगे। इस व्यवसाय के विकास के लिए अभी हाल ही में हमारी राष्ट्रीय सरकार ने सेन्ट्रल सिल्क बोर्ड स्थापित किया है जिसका उद्देश्य हर पहलू से इसको उन्नत बनाना है।

कृत्रिम रेशम:—नकली रेशम सस्ता होने के कारण इसका प्रचलन आजकल बहुत बढ़ गया है। हमारे यहाँ प्रतिवर्ष लगभग २० लाख पौंड नकली रेशम का आयात होता है जिसका मूल्य ६० लाख रुपया है।

अभी तक नकली रेशम बनाने के कारखाने हमारे यहाँ नहीं हैं। परन्तु अब सरकार इसकी दस फेक्ट्रियाँ खोलने का विचार कर रही है। नकली रेशम के लिए सेलालूज की आवश्यकता होती है जो बाँस, पाट तथा गन्ने के छिलके की लुब्दी से तैयार की जा सकती है। देहरादून की 'फोरेस्ट रिसर्च इन्स्टीट्यूट' ने सिद्ध कर दिया है कि सवाई घास तथा बाँस की लुब्दी से नकली रेशम बहुत उच्च कोटि का बन सकता है।

सरकार की ओर से आयोजित कृत्रिम रेशम की फैक्ट्रियाँ उत्तर-प्रदेश, बम्बई, आंध्र प्रदेश और केरल में खुलेंगी। इनके खुल जाने से हमारे यहाँ से लाखों रुपयों का विदेशों को जाना बन्द हो जायगा और बहुत से लोग काम में लग जायेंगे।

२. लौह-व्यवसाय

(१) साधारण परिचय:—यों तो भारत में हजारों वर्षों से लोहे की वस्तुएँ बनाई जा रही हैं। परन्तु आधुनिक ढंग के बड़े बड़े कारखानों की स्थापना हुए बहुत समय नहीं हुआ। आज भारत में लोहे का व्यवसाय बहुत बड़ा धन्धा गिना जाता है।

मशीन के इस युग में वही देश अधिक समर्थ गिना जाता है जिसमें लोहे के अधिक

कारखानें हैं। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, इङ्गलैंड, जर्मनी, फ्रांस, रूस आदि देशों में लोहे के कई कारखाने हैं। इस व्यवसाय के लिये जिन बातों की आवश्यकता है वे सभी हमारे देश में विद्यमान हैं परन्तु विदेशी शासन होने के कारण भारत में इस व्यवसाय को प्रोत्साहन नहीं मिला। कुछ ही समय पूर्व तक हमारी आवश्यकता की सारी लोहे की वस्तुएँ विदेशों से ही आती थीं। अब भी हम बड़ी बड़ी मशीनें बाहर से ही मंगाते हैं।

परन्तु अब हमारे यहां पर लोहे और फौलाद के कुछ कारखानें खुल गए हैं। आशा है निकट भविष्य में इस व्यवसाय की बहुत अधिक उन्नति होगी। देश के विभाजन से भी हमारे लौह-व्यवसाय पर कोई प्रभाव न पड़ा क्योंकि प्रायः सभी कारखानें भारत में रह गए हैं।

(२) आवश्यकताएँ:—लोहे को जब खान से निकालते हैं तो उसमें पत्थर के टुकड़े, रेत आदि मिले हुए होते हैं। उनको साफ़ करने के लिए कच्चे लोहे को भट्टी पर चढ़ाते हैं।
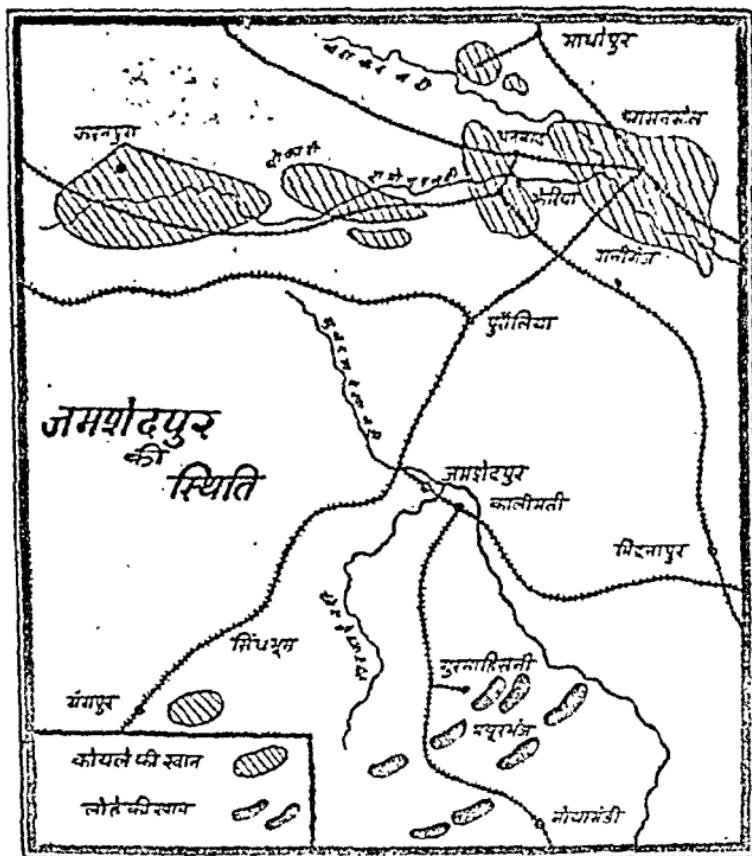
चित्र सं० ५६. जमशेदपुर में लोह-व्यवसाय के लिए सुविधाएँ।

फिर उसमें कोयला और चूना डालते हैं। इनके पिघलने से लोहे का मैल दूर हो जाता है और वह शुद्ध लोहा हो जाता है। अनुमानतः एक टन लोहे को साफ करने में दो टन कोयला और

एक टन चूने के पत्थर की आवश्यकता होती है। शुद्ध लोहे को कड़ा और मजबूत बनाने के लिए उसमें मैंगनीज मिश्रण करते हैं, तब फौलाद बन जाता है।

दक्षिण में लोहे की सारी आवश्यक वस्तुएं विद्यमान हैं। केवल उनके वितरण में दोष अवश्य है। ये सब वस्तुएं देश के भिन्न-भिन्न भागों में न मिलकर केवल बिहार और उड़ीसा राज्यों में पाई जाती हैं। यही कारण है कि लोहे के बड़े बड़े कारखाने वहीं पर स्थापित हुए हैं। लोहा और कोयला भारी पदार्थ होने के कारण उन्हें दूरस्थ स्थानों तक ले जाने में कठिनाई होती है।

चित्र संख्या ६०. भारत में लोहा व इस्पात के उद्योग

(२) प्रमुख केन्द्रः—वैसे तो हमारे यहां छोटे-मोटे कुल मिलाकर १८ लोहे के कारखाने हैं परन्तु उनमें प्रमुख कारखाने निम्नलिखित हैं:—

(अ) टाटा आयरन एण्ड स्टील कम्पनी लिमिटेड जमशेदपुरः— यह भारत का सबसे बड़ा लोहे का कारखाना है। जमशेदपुर की स्थिति महत्वपूर्ण है। बिहार के सिंहभूमि जिले में स्वर्णरेखा और खोरकी नदियों के बीच में इसकी स्थिति प्रत्येक दृष्टिकोण से अच्छी है। मयूरभंज और सिंहभूमि की खानें यहां से ५०-६० मील से अधिक दूर नहीं हैं। झेरिया का प्रसिद्ध कोयला क्षेत्र केवल १०० मील के अन्तर पर है। सिर्फ चूने का पत्थर २०० मील दूर गंगापुर से आता है। स्वर्णरेखा नदी इस कारखाने को पानी पहुँचाती है। बाजार भी यहां से विशेष दूर नहीं है। कलकत्ते से बम्बई को जाने वाला रेल-मार्ग जमशेदपुर होकर जाता है। इस रेलवे की शाखाएँ जमशेदपुर को लोहे और कोयले के क्षेत्र से मिलाती हैं। यहाँ १२ लाख टन से अधिक तैयार किया हुआ लोहा और इतना ही फौलाद प्रतिवर्ष तैयार होता है। द्वितीय विश्वव्यापी युद्ध के अवसर पर यहाँ सेना के लिए कई वस्तुएँ तैयार की जाती थीं। बिजली से फौलाद तैयार करने का काम भी यहाँ प्रारम्भ हो गया है। अमेरिका के ढंग से रेलवे के पहिये और मोटर के टायर तैयार करने की मशीन जमशेदपुर में बन रही है।

(आ) इण्डियन आयरन एण्ड स्टील कारपोरेशन, कलकत्ता:—यह कारखाना सर्व प्रथम सन् १६१८ में आसनसोल के निकट हीरापुर में खोला गया था। कलकत्ते से यह १४२ मील दूर है। सन् १६३६ में बंगाल आयरन कम्पनी और सन् १६५३ में स्टील कारपोरेशन ऑफ बंगाल नामक दो बड़ी लोहे की कम्पनियाँ इसमें मिल गईं। तब से यह कारखाना बहुत बड़ा हो गया है।

इंडियन आयरन एण्ड स्टील कारपोरेशन के लिए लोहा नोआमंडी और गुरुमहिसानी से मिल जाता है। अब इस विशाल कारखाने का विस्तार किया जा रहा है जो सन् १६६० तक पूरा हो जायगा। इस नवीन योजना के अनुसार कारखाने द्वारा प्रतिवर्ष ८ लाख टन माल तैयार होगा।

(इ) मैसूर आयरन वर्क्स, भद्रावती:—यह कारखाना मैसूर राज्य की ओर से १६३० ई० में स्थापित हुआ। लोहा २६ मील दूर बाबाबूदन की पहाड़ियों से आता है। चूने का पत्थर भद्रावती से १३½ मील दूर केमनगुण्डी से आता है। पहले इस कारखाने में कोयले की बजाय लकड़ी जलाने में काम आती थी परन्तु अब जल विद्युत् का प्रयोग होने लगा है।

(४) गत महायुद्ध और भारतीय लौह-व्यवसाय:—पिछले महायुद्ध के समय हमारे कारखानों में बहुत काम होने लगा। भारत सरकार को रेल के डिब्बे, चद्दरें, लोहे के ट्यूब, तार, रेल की पटरियाँ आदि की आवश्यकता हुई। हमारे कारखानों ने ये वस्तुएँ तैयार कर सरकार को भी दीं और जनता को भी। पहले हमारे यहां से भी कच्चा लोहा बहुत निर्यात होता था परन्तु युद्ध के समय उसका अधिकांश यहीं पर काम आने लगा।

आजकल हमारे कारखानों में लगभग ४० हजार टन पक्का लोहा और फौलाद तैयार होता है लेकिन विश्व की कुल लोहे की उत्पत्ति को देखते हुए यह भी कम है।

(५) **भारतीय लौह-व्यवसाय का भविष्यः**—गत महायुद्ध ने स्पष्ट कर दिया है कि हमारे देश में लौह-व्यवसाय बहुत उन्नति कर सकता है। अब इसका विकास होना अनिवार्य भी है। इस व्यवसाय की उन्नति होने के लिए निम्नलिखित संभावनाएँ हैं:—

(अ) हमारे यहाँ लोहा सर्वोत्तम कोटि का है। इससे बनी हुई वस्तुएँ बड़ी मजबूत होती हैं। विश्व के सभी देशों के लोग हमारे लोहे को पसन्द करते हैं।

(आ) हमारे देश में लोहे की मांग बहुत है। देश में लोहे की वस्तुएँ अधिक तैयार होने पर भी विदेशों से उन्हें क्यों मंगवाएंगे।

(इ) हमारे पड़ौसी देश उद्योग-धन्धों में पिछड़े हुए हैं। वहाँ न तो लोहा मिलता है और न कोयला ही। वे भारत पर आशा लगाए बैठे हैं।

(ई) लोहे के कारखानों से समुद्र-तट भी दूर नहीं है अतः वहाँ की बनी हुई वस्तुएँ आसानी से बाहर भेजी जा सकती हैं।

(उ) हमारी राष्ट्रीय सरकार इस व्यवसाय को बहुत प्रोत्साहन दे रही है। मशीनें बनाने के कारखानों, मोटर, वायुयान तथा जलयानों के बनाने के लिए लोहे की माँग बहुत बढ़ रही है।

१५ अगस्त सन् १९५३ को भारत और जर्मनी के बीच एक समझौता हुआ जिसके फलस्वरूप भारत में एक बड़ा भारी कारखाना खोला जाने की योजना बनाई गई। उड़ीसा राज्य के रूरकेला स्थान पर इस कारखाने के निर्माण का काम प्रारम्भ हो गया है। कुल मिला कर एक अरब रुपया खर्च होगा और इसकी उत्पादन क्षमता १० लाख टन होगी।

दूसरा बड़ा कारखाना रूसी कारीगरों की सहायता से मध्य प्रदेश के भिलाई नामक स्थान में बन रहा है जिसमें एक अरब की पूंजी लगेगी और उस कारखाने में ८ लाख टन फौलाद तथा दो लाख टन कच्चा लोहा तैयार होगा।

तीसरा बड़ा कारखाना पश्चिमी बंगाल के दुर्गापुर नामक स्थान में बनेगा। इसमें ब्रिटिश इस्पात मिशन से सहायता ली जा रही है। इस कारखाने में लगभग तीन लाख टन ढलाई का लोहा तैयार होगा।

आशा है, निकट भविष्य में हमारा लोहे का व्यवसाय बहुत चमकेगा।

२. शक्कर व्यवसाय

१. **साधारण परिचयः**—गन्ने से शक्कर तैयार करने की कला हमारे देश में बहुत पुरानी है। कहते हैं कि गन्ने से पहले-पहल भारत में चौथी शताब्दी में चीनी बनाई गई थी। सातवीं शताब्दी में यहीं से यह विद्या ईरान देश में पहुँची। धीरे धीरे भारत में इतनी चीनी होने लगी कि अठारहवीं शताब्दी के मध्यकाल तक हमारे यहाँ से इसका निर्यात तक होता था।

(४) भारतीय चीनी व्यवसाय के दोष और उनके निवारण के उपायः—

भारत के चीनी व्यवसाय में बहुत सी कमियाँ हैं जो आसानी से दूर की जा सकती हैं।

(अ) सबसे बड़ा दोष यह है कि गन्ना एकत्रित करने में बहुत अधिक खर्च होता है। चीनी बनाने में जितना व्यय होता है, उसका लगभग ६० प्रतिशत तो गन्ना खरीदने में खर्च होता है। गन्ने के खेत हमारे यहाँ दूर दूर हैं। अतः गन्ने को फैक्ट्री तक लाने में अधिक समय भी लगता है और खर्च भी अधिक पड़ जाता है। इस खर्च को कम करने का यह उपाय है कि फैक्ट्री के निकट ही गन्ना उत्पन्न किया जाय और जहाँ तक सम्भव हो गन्ने के खेत भी फैक्ट्री के ही अधीन हों।

(आ) गन्ना अच्छा न होने के कारण उससे कम रस पैदा होता है। उत्तरी भारत की अपेक्षा दक्षिण भारत का गन्ना अच्छा होता है, क्योंकि वहाँ का जलवायु अधिक उष्ण होने के कारण गन्ने की खेती के उपयुक्त है। जावा, सुमात्रा आदि के गन्ने में इसी कारण अधिक रस निकलता है। मद्रास राज्य के सिंचाई की जाने वाले भागों में गन्ने की खेती बढ़ाई जा सकती है।

(इ) गन्ने की प्रति एकड़ उपज कम है। पहले हमारे यहाँ एक एकड़ में लगभग दस टन गन्ना पैदा होता था। गन्ने में कुछ सुधार करने पर यह उपज १४ टन तक होने लगी है, परन्तु जावा आदि को देखते हुए यह बहुत कम है। वहाँ प्रति एकड़ ४०-५० टन गन्ना होता है। हमारे यहाँ भी खेतों को अधिक खाद देने से और वैज्ञानिक तरीकों से खेती करने पर प्रति एकड़ उपज बहुत बढ़ सकती है।

(ई) शक्कर बनाने का समय बहुत थोड़ा है। हमारे यहाँ नवम्बर से जनवरी तक ही चीनी के कारखानों में काम होता है। फिर गन्ना न मिलने के कारण ये बन्द रहते हैं। अच्छी किस्म का गन्ना पैदा करने से उसकी प्राप्ति और अधिक समय तक हो सकती है। कम से कम छः महीने तक तो कारखाने चलने ही चाहिए।

(उ) कुल उत्पादित गन्ने का २५ प्रतिशत ही चीनी बनाने में काम आता है। शेष से गुड़ बनाते हैं।

(ऊ) शक्कर बनाते समय शीरे, छिलके आदि का व्यर्थ ही नष्ट होना ठीक नहीं। शीरा निम्नलिखित प्रकार से उपयोग में लाया जा सकता है:—

(क) इससे एल्कोहल बना कर उसे पेट्रोल में मिला सकते हैं जिससे पेट्रोल की कमी कुछ सीमा तक पूरी हो सके, (ख) शीरे को पशुओं को भी खिला सकते हैं। (ग) इसको एस्फाल्ट में मिलाकर सड़कों पर डाल देने से सड़कें पक्की हो जाती हैं। (घ) शीरे से खाद तैयार करके उसे खेतों में दे सकते हैं।

इसी प्रकार गन्ने का छिलका भी काम में लिया जा सकता है। इससे लुब्दी तैयार कर कागज तथा नकली रेशम भी तैयार हो सकता है।

(५) भारतीय चीनी व्यवसाय का भविष्य:—विश्व के अन्य देशों को देखते हुए हमारे देश में चीनी की खपत बहुत कम होती है। नीचे दिये आंकड़ों से यह स्पष्ट हो जायगा:—

नाम देश	प्रति मनुष्य प्रतिवर्ष खपत
डेनमार्क	१ मन २२ सेर.
न्यूजीलैंड	१ मन १७ सेर.
आस्ट्रेलिया	१ मन १६ सेर.
ग्रेट ब्रिटेन	१ मन १५ सेर.
संयुक्त राष्ट्र अमेरिका	१ मन १० सेर.
भारत	केवल १० सेर.

देश की दीन अवस्था चीनी की खपत में बड़ी भारी बाधक है। यदि यहाँ चीनी सस्ते भाव में मिलने लगे तो इसका प्रयोग और अधिक मात्रा में हो सकता है। हमारी राष्ट्रीय सरकार का मुख्य उद्देश्य देश के लोगों का जीवन-स्तर ऊँचा उठाना है। इसके साथ साथ चीनी की मांग भी बढ़ेगी और हमारे पड़ौसी देशों में भी चीनी की मांग खूब है। क्योंकि वहाँ यह व्यवस्था है ही नहीं। इस प्रकार हमारे इस व्यवसाय का भविष्य बहुत उज्ज्वल है।

४. पाट का व्यवसाय

(१) पाट-व्यवसाय का भारत में जन्म:—यों तो बहुत दिनों से बंगाली जुलाहे पाट के बोरे और कपड़ा ग्रामोद्योग के रूप में बनाते थे, परन्तु बड़े पैमाने पर इसकी उन्नति क्रीमिया के युद्ध के समय हुई। उसके फलस्वरूप स्काटलैंड में स्थित डंडी की मिलों को लिनन वस्त्र बनाने के लिए रूस से सन मिलना बन्द हो गया। उस समय ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने भारत से उन मिलों को पाट भेजना प्रारंभ कर दिया। इस प्रकार डंडी की मिलों के लिए कच्चे माल की कमी न रही।

हमारे यहाँ जूट का पूर्ण लाभ उठाने के लिए सन् १८५५ में बंगाल में एक मिल खोली गई। इसको आशातीत सफलता प्राप्त होने के कारण धड़ा-धड़ कई मिलें खुल गईं। सन् १६१४–१८ के महायुद्ध के समय पाट की वस्तुओं की लड़ाई में अधिक मांग होने के कारण, भारत के व्यवसाय को बहुत प्रोत्साहन मिला।

सन १६३० ई० के पश्चात् विश्व के आर्थिक संकट के कारण पाट-व्यवसाय को भारी धक्का पहुँचा। हमारी मिलों में माल तो बहुत तैयार होने लगा, परन्तु उसकी मांग कम होती

गई। बाहर से कम मांग होने के मुख्य तीन कारण थे—(अ) कनाडा, संयुक्त राष्ट्र अमेरिका आदि देशों में जहाँ भारत से गेहूँ भरने के लिए बोरे मंगवाये जाते थे, 'एलीवेटर' काम आने लगे जिनके बन जाने से बोरों की आवश्यकता ही नहीं रही (आ) विदेशों में बोरे बनाने के लिए पाट के बजाय कई अन्य पदार्थ काम में आने लगे जैसे न्यूजीलैंड का फिरियम टैनेक्स पौधा, रूस तथा आर्जेन्टाइना में अलसी के पौधे का रेशा आदि। फिलिपाइन का मनीला सन भी अच्छा सिद्ध हुआ (इ) अनाज, सीमेन्ट आदि भरने के लिए कागज तथा कपड़े आदि के थैले काम में आने लगे। परन्तु गत महायुद्ध के समय भारतीय सरकार को फौज के लिए तम्बू, बोरियाँ, रस्सियाँ, तिपाल आदि की आवश्यकता पड़ी। उस समय हमारा जूट व्यवसाय फिर चमका।

(२) देश का विभाजन और जूट व्यवसायः—देश का अधिकांश पाट बंगाल राज्य में होता है। देश के विभाजन से बंगाल के दो टुकड़े हो गये, पश्चिमी बंगाल भारत में रहा और पूर्वी बंगाल पाकिस्तान में। अधिकांश मिलें कलकत्ते के निकट हुगली नदी पर स्थित है। अतः वे सब भारत में आ गईं और पाट पैदा करने वाला भाग पाकिस्तान में चला गया जहाँ मिलों के बिना उसका पूर्ण सदुपयोग नहीं किया जा सकता। हमारी मिलों के लिए जितने पाट की आवश्यकता है इसका केवल २९% ही हमारे यहाँ पैदा होता है। हमारे यहाँ पाट की कम पैदावार तथा पाकिस्तान के बहुत दिनों तक हमें पाट न देने के कारण हमारी कई मिलें बन्द पड़ी हैं। अब धीरे-धीरे सरकार पाट की उत्पत्ति बढ़ा रही है और आशा की जाती है कि शीघ्र ही आवश्यकतानुसार पाट यहाँ होने लगेगा। इस दिशा में पर्याप्त सफलता मिली है।

इस प्रकार भारतीय पाट-व्यवसाय ने प्रारम्भ से आज तक उत्थान तथा पतन के कई दिन देखे।

(३) व्यवसाय का क्षेत्रः—भारत में कुल मिलाकर १०८ पाट की मिलें हैं। जिनमें से ९८ अकेले पश्चिमी बङ्गाल में हैं। शेष बिहार, उत्तर प्रदेश, मद्रास और मध्य प्रदेश में हैं।

पश्चिमी बंगाल की मिलें भी सारे राज्य में विस्तृत न होकर कलकत्ते के निकट हुगली नदी के किनारे लगभग ६० मील लम्बे और दो मील चौड़े क्षेत्र में है। इनका मुख्य केन्द्र कलकत्ता है।

कलकत्ते के निकट पाट के इतने अधिक कारखाने स्थापित करने के कई कारण हैं—(अ) कारखानों में काम आने वाला कच्चा माल अर्थात् पाट इस क्षेत्र के निकट अधिक होता है(आ) कलकत्ता बिहार के कोयले के क्षेत्रों से रेल द्वारा जुड़ा हुआ है अतः कारखानों को चलाने के लिए कोयला वहाँ से आसानी से आ सकता है (इ) हुगली नदी का पानी पाट को साफ करने के लिए काम आ जाता है (ई) वहाँ का जलवायु आर्द्र होने के कारण धागा अच्छा तैयार होता है (उ) कलकत्ते की घनी आबादी से सस्ते मजदूर मिलने में सहायता होती है और (ऊ) कलकत्ता एक अच्छा बन्दरगाह है और वहाँ से पाट का बना हुआ माल विदेश को भेजने में बहुत सुविधा रहती है।

परन्तु कलकत्ते के निकट अब नये कारखाने खोलने से लाभ नहीं हो सकता क्योंकि वहाँ कच्चे माल की कमी है। अब बिहार, उड़ीसा तथा मद्रास में, जहाँ भारतीय सरकार पाट पैदा कर रही है, नये कारखाने खोले जायेंगे।
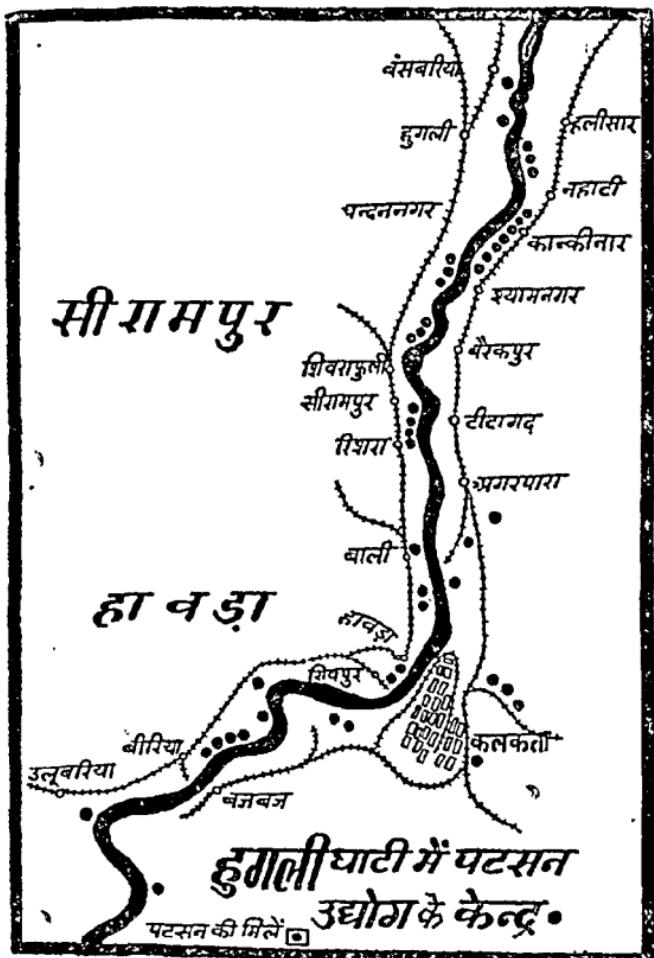
चित्र सं० ६२. हुगलीघाटी में पटसन उद्योग के केन्द्र

(४) उत्पादनः—सन् १९५७ में भारत में १०२९.६ हजार टन पाट का माल तैयार हुआ जिसमें लगभग ८० प्रतिशत का निर्यात कर दिया गया।

(५) व्यापारः—पहले हमारे यहाँ से पाट का सामान बाहर बहुत जाता था। इससे यहाँ के लोगों को काफी धन मिलता था। हमारे कुल निर्यात में लगभग ३०% पाट या पाट की बनी हुई वस्तुएँ होती थीं। अब भी निर्यात से बहुत धन मिलता है।

हमारे पाट के मुख्य ग्राहक ये हैं:—ग्रेट ब्रिटेन, संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, आर्जेन्टाइना, ब्राजील, रूस, आस्ट्रेलिया आदि । देश के विभाजन के पश्चात् पाट के सामान की उत्पत्ति कम होने के कारण निर्यात में कमी हो गई है ।

(६) पाट व्यवसाय का भविष्य:—पाट के व्यवसाय की उन्नति के लिए इण्डियन सेन्ट्रल जूट कमेटी बहुत पहले से ही प्रयास करती आ रही है । अभी हाल ही में कलकत्ते के इण्डियन जूट मिल्स एसोसियेशन के द्वारा जूट टेक्नोलोजी (Institute of Jute Technology) की स्थापना हुई है । इस संस्था के द्वारा पाट की उत्पत्ति में वृद्धि करने के उपाय सोचे जायेंगे और पाट का सदुपयोग किस प्रकार किया जाय इस पर भी विचार होगा । इतने दिन हमारे यहाँ पाट के बोरे, कैनवास, सूतली, रस्सा आदि ही तैयार होते थे, परन्तु अब उससे बढिया कपड़ा भी तैयार किया जाने लगा है । जाँच करने पर ज्ञात हुआ है कि पाट में कपास तथा ऊन मिश्रण करने से बहुत अच्छा कपड़ा तैयार हो सकता है ।

इतने दिन पाट के सामान को बेचने के लिए हम विदेशों पर ही निर्भर थे परन्तु अब हमारे देश में भी इसकी मांग निरन्तर बढ़ती जा रही है । शक्कर के व्यवसाय की उन्नति के साथ बोरियों की अधिक आवश्यकता होगी । सीमेन्ट के कारखानों में भी इसकी मांग बढ़ती जा रही है । इस प्रकार अपने घरेलू बाजार में ही पाट के माल की आवश्यकता होने के कारण इस व्यवसाय का भविष्य उज्ज्वल है ।

(आ) अन्य आवश्यक व्यवसाय

वस्त्र व्यवसाय, शक्कर का धन्धा, पाट तथा लौह उद्योग के अतिरिक्त हमारे देश में और भी कई धन्धे हैं जिनमें हमारी आवश्यकता की वस्तुएँ बनती हैं । इनमें से बहुत सी वस्तुएँ तो ऐसी हैं जो विदेशों से अधिक संख्या में यहाँ मँगाई जाती हैं । कुछ धन्धे ऐसे हैं जो एक बार देश में खुल जाने पर थोड़े ही समय में बहुत लाभप्रद सिद्ध हुए हैं । कागज, दियासलाई, सीमेन्ट आदि इसके उदाहरण हैं । इन धन्धों की वृद्धि के लिये हमारे यहाँ बहुत सम्भावना है । कारखानों में बने हुए माल की बिक्री के लिए भारत का बाजार बहुत विस्तृत है । इसी कारण से यहाँ के धन्धे थोड़ा यत्न करने पर भी खूब चमक सकते है ।

इन धन्धों का यहाँ संक्षेप में वर्णन किया जाता है ।

१. कागज बनाने का व्यवसाय

कागज बनाने का धन्धा घरेलू व्यवसाय के रूप में हमारे यहाँ कई सालों से चला आ रहा है परन्तु आधुनिक ढंग की मिलें तो पिछली शताब्दी के उत्तरार्द्ध में ही खुलीं । हमारे यहाँ कागज की खपत बहुत कम है क्योंकि देश में शिक्षा का प्रचार कम है । संसार के कुछ उन्नतिशील देशों में प्रति मनुष्य सालाना कितने कागज की खपत होती है यह नीचे दिये हुए अंकों से स्पष्ट हो जायगा :—

नाम देश :—	प्रति मनुष्य वार्षिक कागज की माँग:—
संयुक्त राष्ट्र अमेरिका	२०० पौं०
ग्रेट ब्रिटेन	१७५ पौं०
कनाड़ा	१५० पौं०
भारत	१$\frac{1}{2}$ पौं०

ज्यों ज्यों हमारे देश में शिक्षा का प्रसार होगा त्यों-त्यों कागज की माँग बढ़ती जायगी। इस प्रकार इस व्यवसाय की भविष्य में बहुत उन्नति होगी। जिन वस्तुओं से कागज बनाया जाता है वे भारत में बहुतायत से पाई जाती हैं अतः इस व्यवसाय की वृद्धि के लिए यहाँ सुविधा है।

कागज बनाने के लिए चिथड़े, खराब जूट, मुलायम लकड़ी का गूदा, बाँस, मूँज और सबाई घास इत्यादि काम में लाये जाते हैं। इसको कूट कर और उबाल कर रासायनिक वस्तुओं द्वारा मुलायम बनाते हैं। इस मुलायम लुब्दी को पानी में मिलाकर बहुत पतले बने हुए तारों के पर्दों में होकर बहाते हैं। कागज तारों के पर्दों के बीच में एक पतली तह सा रह जाता है और पानी बह जाता है। इस गीली तह को सुखा कर कागज तैयार कर लेते हैं।

लुब्दी बनाने के लिये भारत में बाँस पर्याप्त मात्रा में मिलता है। बाँस के वन एक या दो वर्ष में ही तैयार हो जाते हैं। बंगाल में नैहाटी के निकट बाँस की लुब्दी बनाने की एक बड़ी मिल है। आसाम, मद्रास, बम्बई आदि में बाँस के घने वन हैं। अतः इस राज्यों में बाँस की लुब्दी बनाने के कारखाने स्थापित हो सकते हैं। यह अवश्य है कि बाँस का कागज घटिया होता है किन्तु बढिया कागज की मांग भारत में सीमित होने के कारण बांस से लुब्दी बनाने का कार्य बहुत शीघ्र उन्नति कर रहा है। लुब्दी बनाने के लिए सबाई घास मुख्य है। उत्तर प्रदेश और पंजाब में इसी की लुब्दी बनाकर और उसमें विदेशों में मँगाई हुई लकड़ी की लुब्दी मिलाकर कागज तैयार करते हैं। इससे बढ़िया कागज बनता है। चिथड़ों आदि से भी सस्ती लुब्दी बनती है। मुलायम लकड़ी भारत में हिमालय प्रदेश में है, किन्तु वहाँ तक पहुँचने के लिए यातायात के साधन अच्छे नहीं हैं। अतः लकड़ी की लुब्दी विदेशों से ही मँगाई जाती है।

लुब्दी बनाने के लिये कुछ रासायनिक पदार्थों तथा कास्टिक सोडा, ब्लीचिंग पाउडर और रंग की आवश्यकता होती है। खेद है कि ये द्रव्य विदेशों से मँगाने पड़ते हैं। इनके महँगे मूल्य के अतिरिक्त बन्दरगाह से कारखाने के केन्द्र तक पर्याप्त किराया पड़ जाता है। गत विश्व-व्यापी युद्ध के परिणाम-स्वरूप हमारे रासायनिक द्रव्यों के कारखानों में पर्याप्त उन्नति हुई है। और कागज का व्यवसाय बहुत चमक रहा है।

भारत में कागज बनाने का व्यवसाय कलकत्ते के आसपास मुख्यतया केन्द्रित है। सन् १८६७ ई० में कलकत्ते के आसपास सेरामपुर में कागज की प्रथम भारतीय मिल स्थापित हुई, उसी वर्ष बाली में रायल पेपर मिल स्थापित हुई। १८८२ ई० में लखनऊ में 'अपर इण्डिया कूपर पेपर मिल' और टीटागढ़ (कलकत्ते के निकट) में 'टीटागढ़ पेपर मिल' की स्थापना हुई।

सन् १६३६ में भारत में १२ कारखाने थे और आज कारखानों की संख्या लगभग ४० हो गई। इस प्रकार इस व्यवसाय ने पिछले कुछ ही दिनों में अच्छी उन्नति करली।
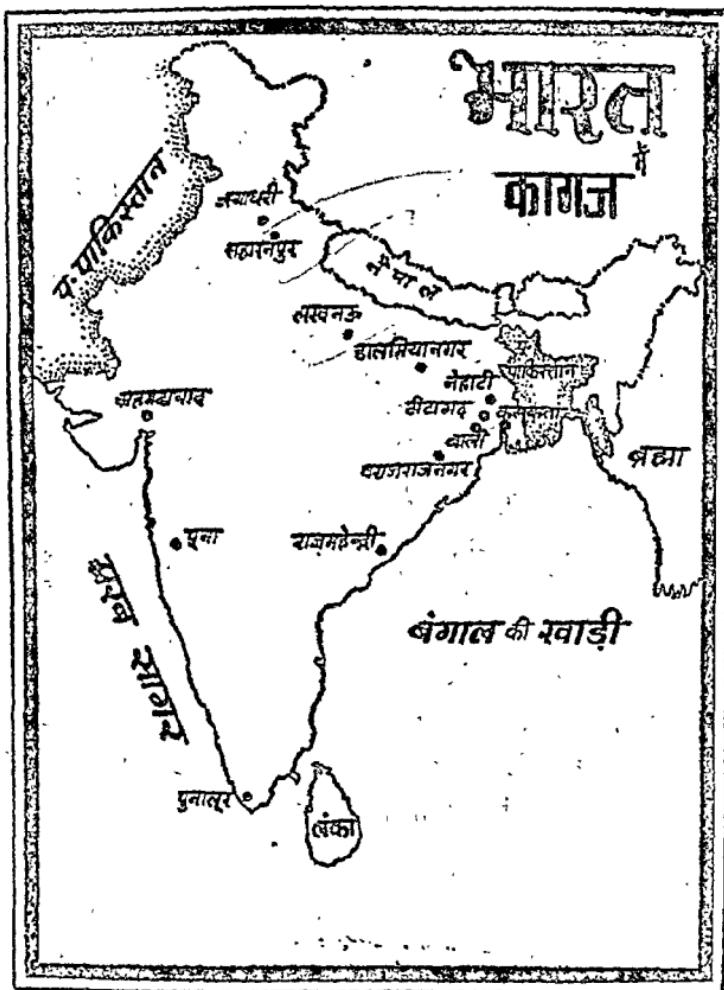
चित्र सं० ६३. भारत में कागज की मिलें

कलकत्ता (टीटागढ़ आदि), लखनऊ, बम्बई, सहारनपुर, पूना, पुनालूर (ट्रावनकोर), जगाधारी (अम्बाला के निकट) और राजमहेन्द्री कागज बनाने के मुख्य केन्द्र हैं।

भारत में अखबारी का कागज (Newsprint) बहुत कम बनता है। अनुसंधान के बाद पता लगा है कि काश्मीर तथा टेहरी-गढ़वाल में अखबारी कागज बनाने के योग्य फर और स्प्रूस के पेड़ हैं। मध्यप्रदेश में नेपानगर में अखबारी कागज बनाने की फैक्ट्री स्थापित हुई है। आशा की जाती है कि यह फैक्ट्री देश की आवश्यकता के तिहाई भाग की पूर्ति करेगी।

द्वितीय विश्व-व्यापी युद्ध ने भारत के कारखानों को उन्नत करने का सर्वोत्तम साधन प्रदान किया है। उस समय विदेशों से कागज का आना बन्द हो गया और लकड़ी की लुब्दी भी उपलब्ध न हो सकी। अतः भारत को अपने पैरों पर खड़ा होना पड़ा और हाथ से कागज बनाने के कार्य में भी उन्नति हुई। आज भारत में यद्यपि अनपढ़ों की संख्या लगभग ८५ प्रति- है किन्तु फिर भी कागज की इतनी माँग है कि उसकी पूर्ति विदेशों से कागज मँगाकर की जाती है।

देश के विभाजन से हमारे कागज व्यवसाय पर थोड़ा असर हुआ कि कागज बनाने के लिए जो बांस काम आता था उसको उत्पन्न करने वाली भूमि का कुछ भाग पाकिस्तान में चला गया है। परन्तु उसके स्थान पर वृक्ष, सबाई घास तथा गन्ने के छिलकों से लुब्दी बनाई जा सकती है।

हमारे यहां कागज के आयात का अधिकांश ग्रेट ब्रिटेन, जर्मनी, स्वीडन, नार्वे, जापान, हालैंड आदि से आता है।

२. सीमेंट का व्यवसाय

सीमेंट बनाना भारत का नया धन्धा है। देश में ज्यों ज्यों नगरों की वृद्धि हो रही है त्यों त्यों मकान तथा सड़कें बनाने के लिए सीमेंट की मांग दिन प्रतिदिन बढ़ रही है।

सीमेंट के लिए चूने के पत्थर, चिकनी मिट्टी, शेलखरी तथा कोयले की आवश्यकता होती है। उच्च कोटि का चूने का पत्थर भारत के कई राज्यों में मिलता है। चिकनी मिट्टी की भी कमी नहीं है। शेलखरी राजस्थान में अधिक मिलती है और कोयला भी बिहार राज्य में अधिक मिलता है। देश में सीमेंट के कच्चे माल की तो कमी नहीं है परन्तु वह एक जगह केन्द्रित न होकर देश के भिन्न भिन्न भागों में मिलता है। यही कारण है कि सीमेंट के कारखाने भी देश के कई भागों में स्थापित किए गये हैं।

सीमेंट का सबसे पहला कारखाना सन् १९०४ में मद्रास में खुला। आज संपूर्ण भारत में २३ कारखाने हैं। इन कारखानों में सन् १९५७ में ५,६०१.६ हजार टन सीमेन्ट तैयार हुआ है। हमारे देश की सीमेन्ट की मांग के लिए अब हमें विदेशों का मुँह नहीं ताकना पड़ता। फिर भी कुछ सीमेंट हम बाहर से आज भी मँगाते हैं।

हमारे सीमेंट के कारखानों का एक बड़ा संयुक्त संघ है जो 'एशोसियेटेड सीमेन्ट कम्पनीज़' के नाम से प्रसिद्ध है। इसके अतिरिक्त डालमियां सीमेन्ट कम्पनी दूसरी सीमेन्ट व्यवस्था है।

सीमेन्ट के कारखाने बिहार, मद्रास, मध्यप्रदेश, सौराष्ट्र, राजस्थान आदि में हैं। प्रथम विश्व-व्यापी युद्ध से इस व्यवसाय को बहुत प्रोत्साहन मिला। उस समय पोरबन्दर (बम्बई), कटनी (मध्य प्रदेश), लाखेरी (राजस्थान) आदि में कारखाने खुल गए। द्वितीय युद्ध में तो इनका उत्पादन बढ़ गया क्योंकि विदेशों से सीमेंट आना बन्द हो गया और देश में इनकी मांग बढ़ गई।

सीमेन्ट के व्यवसाय में लगभग ४५ हजार व्यक्ति काम करते हैं।

भारत के औद्योगिक विकास में सीमेन्ट की बहुत आवश्यकता होगी। कारखाने बनाने के लिए सीमेन्ट की ही अधिक माँग रहती है यही कारण है कि सरकार ने सीमेन्ट के वितरण पर

चित्र सं० ६४, भारत में सीमेन्ट व्यवसाय

नियन्त्रण कर दिया था। पाकिस्तान से आये हुए लाखों शरणार्थी भाईयों के लिए मकान बनाने में भी सीमेन्ट की माँग खूब बढ़ रही है इन्हीं सब कारणों से सीमेन्ट के कारखानों में वृद्धि होने की बहुत अधिक संभावना है।

३. चर्म व्यवसाय

विश्व में सबसे से अधिक चौपाये भारत में ही हैं अतः यहाँ खालें भी खूब मिलती हैं। खाल को साफ करने का काम बहुत पुराने जमाने से ही हो रहा है। गाँवों में चमार लोग मरे हुए पशु का चमड़ा उतार लेते थे और उसको पुराने ढंग से नमक, छाल आदि की सहायता से कमा लेते थे। परन्तु अब चमड़ा कमाने के नए नए तरीके प्रचलित हो गये हैं।

भारतीय चर्म व्यवसाय की अधिक उन्नति गत विश्वव्यापी युद्ध में हुई। फौज के लिए चमड़े की सारी वस्तुएँ यहीं बनने लगीं। जूते बनाने का व्यवसाय तो बहुत बढ़ गया। प्रत्येक बड़े नगर में जूते के कई कारखाने मिलेंगे। इसके अतिरिक्त चमड़े के सूटकेस, कमरबन्द, घोड़े की काठियाँ आदि बनती हैं। कानपुर तथा मद्रास नगर में चमड़े के कारखानों में आज हजारों आदमी काम करते हैं।

चमड़े के व्यवसाय के लिए दो वस्तुओं की मुख्य आवश्यकता होती है:—(१) जानवरों की खाल और (२) चमड़ा कमाने की वस्तुएँ। उपर्युक्त वर्णन से स्पष्ट है कि भारत में जानवरों की खालें पर्याप्त मात्रा में होती हैं। चमड़ा कमाने की वस्तुओं में भारत बहुत धनी है। दक्षिणी प्रायद्वीप के शुष्क भागों में विशेषकर मैसूर, हैदराबाद और मद्रास में तुखार वृक्ष (Avaram) अधिकता से पैदा होता है। इस पेड़ की छाल से चमड़ा कमाते हैं। उत्तरी भारत में विशेषकर राजस्थान, उत्तर-प्रदेश, सौराष्ट्र और मध्य प्रदेश में बबूल की छाल इस कार्य में प्रयुक्त होती है। मायरोबालान तो भारत भर के अधिकांश जंगलों में मिलते हैं। इनके फल को चमड़ा कमाने में प्रयोग करते हैं। बहेड़ा आदि की छाल भी इस काम में आती है। इन वस्तुओं के अतिरिक्त रासायनिक पदार्थों की सहायता से भी चमड़ा कमाया जाता है।

चमड़ा दो प्रकार से कमाया जाता है:—(१) प्राचीन देशी तरीकों द्वारा और (२) नवीनतम आधुनिक ढंग से। बहुत प्राचीन काल से चमार देशी ढंग से चमड़ा कमाते आ रहे हैं, किन्तु वे घटिया चमड़ा कमाते हैं जो देहाती जूतों, जूतों के तलों और अन्य उपयोग में काम आता है अथवा आधे कमाये हुए चमड़े के रूप में विदेशों को निर्यात कर दिया जाता है।

आधुनिक ढङ्ग से चमड़ा कमाने के बहुत से कारखाने स्थापित हो गये हैं। चमड़े से जूते बनाने वाले भारत के सब से बड़े दो कारखाने 'कूपर एलन एण्ड कं०,' कानपुर तथा 'बाटा कम्पनी' बाटानगर (कलकत्ते के निकट) हैं। कानपुर में एक सरकारी कारखाना घोड़े की जीन आदि बनाता है। इनके अतिरिक्त कई कारखाने आगरा, लखनऊ, कलकत्ता, लुधियाना तथा अन्य उत्तरी-भारत के प्रसिद्ध शहरों में स्थापित हो गये हैं। दक्षिणी भारत में मद्रास और बंगलौर इस व्यवसाय के केन्द्र हैं।

उत्तर प्रदेश में चमड़े के व्यवसाय ने बहुत उन्नति की है। यहाँ का मुख्य केन्द्र कानपुर है जहाँ इस व्यवसाय की उन्नति के निम्नलिखित कारण हैं:—

(१) चमड़ा कमाने के लिये सस्ती बबूल की छाल पास के राज्य से बहुत मिलती है।

(२) यहाँ यूरोपीय लोगों ने इस व्यवसाय को प्रारम्भ किया और सरकार ने इसे पूरा संरक्षण दिया।

(३) कारखानों में काम करने वाले कुशल चमार सस्ते उपलब्ध हैं।

(४) युद्ध ने इस व्यवसाय को बहुत चमकाया। युद्धकाल में लगभग ३०-४० नये कारखाने स्थापित हो गये हैं और पुरानों में अधिक माल बनने लगा।

(५) कानपुर में यातायात के साधन बहुत सुगम हैं। वहां से कई रेलें जाती हैं।

रासायनिक पदार्थों के कारखाने स्थापित हो जाने से क्रोम चमड़ा बनाने के व्यवसाय में बहुत उन्नति हुई। मद्रास कानपुर और कलकत्ते के आस पास अधिकतर क्रोम चमड़ा बनाया जाता है।

४. कॉच का व्यवसाय

कॉच का व्यवसाय भारत में बहुत पुराना है, किन्तु आधुनिक ढंग के कारखाने थोड़े दिनों से ही आरंभ हुए हैं। प्रथम विश्वव्यापी युद्ध में इस व्यवसाय की बहुत

चित्र सं० ६५. भारत में कॉच उद्योग

उन्नति हुई। अब तो भारत में ५० से अधिक कारखानें हैं और इनमें दस हजार से भी अधिक व्यक्ति काम करते हैं।

बालू, सोड़ा और पोटाश को गलाने से कॉच तैयार होता है। कॉच बनाने योग्य शुद्ध

बालू भारत में कई जगह मिल सकती है। उत्तर प्रदेश में प्रयाग के निकट, बिहार में राजमहल के निकट, मध्यप्रदेश में जबलपुर, राजस्थान के सवाई माधोपुर और बम्बई में बड़ौदा में काँच के योग्य बालू पाई जाती है। सोडा अधिकतर बाहर से मंगाया जाता है। साधारण कोटि का सामान बनाने के लिए ऊसर भूमि के रेह से सोडा तैयार कर लेते हैं। पोटाश भारत के कई स्थानों में मिलता है।

काँच का व्यवसाय भी घरेलू व्यवसाय के रूप में तथा कारखानों के रूप में दोनों प्रकार से होता है। घरेलू व्यवसाय के रूप में भारत के बहुत से भागों में निम्न कोटि का सामान तैयार होता है, किन्तु उत्तर-प्रदेश में फिरोजाबाद और बम्बई राज्य में बेलगाँव इसके मुख्य क्षेत्र हैं। आधुनिक ढंग के कारखाने अभी अधिक नहीं खुले हैं। उत्तर-प्रदेश और बम्बई में आधुनिक ढंग के कुछ कारखाने हैं। फिरोजाबाद सबसे बड़ा केन्द्र है। काँच का सामान बनाने की कुल २२५ फैक्ट्रियाँ हैं जिनमें ९३ फैक्ट्रियों में केवल चूड़ियाँ बनाई जाती हैं।

गत महायुद्ध से पूर्व भारत में लगभग दो करोड़ रुपयों का काँच का सामान प्रति वर्ष बनता था जिसमें एक करोड़ रुपये का सामान अकेला उत्तर-प्रदेश तैयार करता था। आजकल हमारे यहाँ लगभग दस करोड़ रुपये का काँच का सामान बनता है। यहाँ कई कारखाने हैं, जिनमें चूड़ियाँ, बोतल तथा चद्दर आदि बनाते हैं। काँच की चद्दर बनाने वाली सब से बड़ी फैक्ट्री बहजोई (मुरादाबाद जिला) में है। चूड़ियाँ अधिकतर फिरोजाबाद में बनती हैं और बोतलें प्रयाग में बनती हैं। चिमनी तथा बिजली के बल्ब आदि शीकोहाबाद, नैनी, हाथरस तथा बहजोई में बनते हैं।

कलकत्ता, बम्बई, जबलपुर और अम्बाला में काँच के कारखाने हैं।

द्वितीय महायुद्ध ने काँच के व्यवसाय को बहुत उन्नत बना दिया है। सप्लाइ विभाग को काँच के सामान सम्बन्धी आवश्यकताओं का अधिकांश भारतीय फैक्ट्रियों द्वारा ही पूरा हुआ करता था। कुछ सामान पड़ौसी राष्ट्रों को निर्यात भी किया जाता है।

५. दियासलाई का व्यवसाय

दियासलाई दैनिक आवश्यकता की वस्तु है। इसका प्रयोग देश के छोटे से छोटे गाँव में भी होता है। अतः इसकी माँग हमारे देश में बहुत है।

दियासलाई तैयार करने के लिए मुलायम लकड़ी, सस्ते मजदूर तथा रासायनिक पदार्थों की आवश्यकता होती है। कुल खर्चे का लगभग ३५% मजदूरी में और २०% लकड़ी में व्यय होता है भारत में इन दोनों ही बातों की कमी नहीं है। अतः दियासलाई के व्यवसाय की उन्नति के यहाँ पर्याप्त क्षेत्र है। सुन्दर वन तथा अण्डमान द्वीप की लकड़ी दियासलाई के काम आ जाती है। हाँ, रासायनिक पदार्थों का अधिकांश अभी तक बाहर से मंगवाना पड़ता है।

सन् १८९५ में सबसे पहली दियासलाई की फैक्ट्री अहमदाबाद में खोली गई, परन्तु उसने विशेष उन्नति नहीं की। इसका मुख्य कारण यह है कि विदेशों से सस्ती दियासलाई मिल

चित्र सं० ६६: भारत में दियासलाई

जाती थी। सन् १९२१ में हमारे यहाँ केवल दो फैक्ट्रियाँ ही थीं। सन् १९२२ में भारतीय सरकार ने दियासलाई के आयात पर भारी कर लगा दिया। उस कर से बचने के लिए स्वीडन देश की एक कम्पनी ने सन् १९२४-२५ में भारत के कई नगरों में जैसे कलकत्ता, बम्बई, बरेली आदि में अपनी फैक्ट्रियाँ स्थापित करदी। इन सब का प्रबन्ध एक बड़ी कम्पनी द्वारा होने लगा जिसका नाम 'वेस्टर्न इण्डिया मैच कम्पनी' रखा गया। आज भी हमारे यहाँ जितनी दियासलाई तैयार होती है उसका लगभग ६०% इसी कम्पनी से प्राप्त होता है। सन् १९२८ में सरकार ने इस व्यवसाय को पूर्ण संरक्षण दिया। तब से कई फैक्ट्रियाँ स्थापित होने लगीं। १९३८

में हमारे यहाँ दियासलाई के ११३ कारखाने थे जिनमें १३ हजार मजदूर काम करते थे। इस प्रकार संरक्षण के कारण दियासलाई के व्यवसाय की बहुत उन्नति हुई।

इस समय हमारे देश में १३० दियासलाई के कारखाने हैं जिनमें प्रतिदिन लगभग ५०० ग्रोस दियासलाई के बक्स तैयार होते हैं। अब हमें विदेशों से दियासलाई मँगाने की आवश्यकता नहीं है।

दियासलाई के सबसे अधिक कारखाने कलकत्ते के निकट हैं। जितने मनुष्य इस व्यवसाय में सारे देश के कारखानों में काम करते हैं उनके एक-तिहाई वहीं पर हैं इसका मुख्य कारण यह है कि वहाँ दियासलाई बनाने योग्य लकड़ी सरलता से मिल जाती है। दूसरा बड़ा केन्द्र बम्बई है। इनके अतिरिक्त अहमदाबाद, मद्रास, बरेली, जबलपुर, शिमोगा (मैसूर), कोटा (राजस्थान), हैदराबाद, ग्वालियर आदि में भी दियासलाई के कारखाने हैं।

६. रासायनिक पदार्थों का व्यवसाय

किसी देश की व्यावसायिक उन्नति के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि वहाँ पर रासायनिक पदार्थों के कारखाने पूर्ण उन्नत हों। चमड़ा, साबुन, काँच, रबर, कई प्रकार के रोगन और वार्निशों तथा दवाइयों के बनाने में रासायनिक पदार्थों की आवश्यकता रहती है। भारत में रासायनिक वस्तुओं के बनाने योग्य वस्तुएँ जैसे नमक, शोरा, शेलखरी, चूने का पत्थर आदि भरपूर मात्रा में मिलती हैं किन्तु फिर भी यहाँ पर यह व्यवसाय अभी शैशवावस्था में है। द्वितीय महायुद्ध में यहाँ बहुत से कारखाने स्थापित हो गये। बम्बई, दिल्ली, कलकत्ता, मद्रास और बंगलौर में बड़े बड़े कारखाने स्थापित हो गये किन्तु अभी तक इनसे देश की माँग की बहुत थोड़े भाग की ही पूर्ति होती है।

७. लाख का व्यवसाय

लाख के कीटाणु पलाश, कुसुम, वेर आदि पेड़ों के गूदे को खाकर पलते हैं। डालों पर चिपकने वाले पदार्थ को लाख कहते हैं। डालों से निकालकर इसे साफ करते हैं तब इसे लाखदाना कहते हैं। लाख को साफ करके चपड़ी बनाते हैं।

लाख भारत की प्रमुख पैदावार है। वार्षिक उत्पादन का अनुमान ५० हजार टन है। छोटा नागपुर के वनों से अधिक लाख मिलती है। वहाँ भारत की ५० प्रतिशत से भी अधिक लाख पैदा होती है।

लाख बहुत उपयोगी वस्तु है। लाख से चपड़ी बनाने का व्यवसाय छोटा नागपुर के लोगों का मुख्य घरेलू धन्धा है। चपड़ी का लगभग ७५% से अधिक भाग विदेशों को निर्यात कर दिया जाता है। संयुक्त राज्य अमेरिका, ब्रिटेन, जर्मनी और जापान हमारे प्रमुख ग्राहक हैं। हमारे लाख के निर्यात का ३० प्रतिशत अमेरिका जाता है।

लाख ग्रामोफोन के रेकार्ड बनाने में प्रयुक्त होती है। संसार की लगभग ४५ प्रतिशत लाख ग्रामोफोन के रेकार्ड बनाने के काम में आती है। लाख का ३५ प्रतिशत भाग बिजली के

सामान और वार्निश बनाने में काम आता है। इससे मुहर, फोटोग्राफी का सामान, बटन, नकली हाथीदांत, तैल-वस्त्र, खिलौने, चूड़ियाँ और रंग आदि बहुत-सी चीजें बनती हैं।

८. साबुन बनाना

वैसे तो साबुन बनाने का व्यवसाय हमारे यहाँ घरेलू धंधा है और लोग गाँवों तथा नगरों में अपनी आवश्यकतानुसार साबुन बना लेते हैं, परन्तु आधुनिक ढंग के फैक्ट्री व्यवसाय के रूप में इसका सर्व प्रथम कारखाना मेरठ में सन् १८७९ में एक अंग्रेज द्वारा खोला गया।

प्रथम महायुद्ध से पूर्व हमारे यहाँ लगभग १४ हजार टन साबुन प्रतिवर्ष तैयार होता था। साबुन की माँग दिन प्रतिदिन बढ़ती ही गई। अतः हम विदेशों से लगभग दो करोड़ रुपये का साबुन हर साल मँगाते हैं।

सन् १९२८-२९ में टाटा बन्धुओं ने कोचीन में साबुन का एक बड़ा कारखाना खोला। सन् १९३४ में लिवर ब्रदर्स ने भारत का सबसे बड़ा साबुन का कारखाना खोल दिया और तब से हमारे यहाँ काफी साबुन बनने लगा।

द्वितीय महायुद्ध के समय साबुन की उत्पत्ति अधिक हुई और उसके बाद भी इसमें वृद्धि ही होती गई।

आज हमारे देश में छोटे-बड़े कुल मिलाकर १७० कारखाने हैं, जिनमें अच्छा साबुन बनने लगा है। पाकिस्तान को भी हमारे यहाँ से इनका निर्यात होता है। साबुन के मुख्य केन्द्र ये हैं—कलकत्ता, बम्बई, मैसूर और बड़ौदा। टाटानगर व मोदीनगर में बड़ा अच्छा साबुन बनने लगा है।

साबुन का जो घोल बेकार होता है उससे ग्लेशरिन तैयार की जाती है। इस प्रकार बम्बई में ग्लेसरिन बनाने की चार फैक्ट्रियाँ स्थापित हो चुकी हैं। यह ग्लेसरिन दवाईयों में काम आता है।

९. तम्बाकू-व्यवसाय

तम्बाकू पैदा करने में भारत का स्थान संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के पश्चात् दूसरा है। यहाँ की तम्बाकू कई प्रकार से काम ली जाती है—कुछ हुक्के में पीने के काम आती है, कुछ की सिगरेट बनाते हैं तो कुछ बीड़ी बनाने में काम आती है। तम्बाकू को खाते भी हैं और वह सूँघने के भी काम आती है। इन सभी प्रकार की तम्बाकू तैयार करने के लिए भारत में कई फैक्ट्रियाँ हैं जिनमें हजारों मनुष्य काम करते हैं। प्रति वर्ष इन कारखानों से ४५ करोड़ रुपये से भी अधिक कीमत की तम्बाकू तैयार की जाती है।

तम्बाकू व्यवसाय की उन्नति हमारे यहाँ स्वदेशी आन्दोलन के समय हुई। उससे पहले करोड़ों रुपये की सिगरेट और चुरट विदेशों से मंगवाई जाती थीं। अब भी हमारे यहाँ

बाहर से सिगरेट तो काफी आती है, परन्तु तम्बाकू की अन्य वस्तुओं का आयात कम हो गया है।

सिगरेट बनाने के कारखाने मुंगेर, सहारनपुर, कलकत्ता और बंगलौर में हैं। इनसे देश की सिगरेटों की पूरी माँग की पूर्ति तो नहीं हो सकती परन्तु अब हाल ही में हमारी राष्ट्रीय सरकार ने 'इण्डियन सेन्ट्रल टोबेको कमेटी' की स्थापना की है। इसके द्वारा देश में 'वर्जीनिया' किस्म की बढ़िया तम्बाकू तैयार की जायगी और आशा की जाती है कि निकट भविष्य में हमारे यहाँ उच्च कोटि की सिगरेटें बनने लगेंगी। इस समय कुल मिला कर लगभग २५ सिगरेट के कारखाने हैं।

बीड़ी बनाने के छोटे-छोटे कारखाने देश के कई नगरों में हैं। इसका व्यवसाय प्रायः ग्रामोद्योग के रूप में होता है। मध्य प्रदेश, बम्बई और मद्रास राज्यों में भारत की ६०% बीड़ियाँ तैयार होती हैं। इस व्यवसाय के मुख्य केन्द्र जबलपुर, नागपुर, कामठी और पूना हैं।

चुरट और सिगार के प्रायः सभी कारखाने मद्रास राज्य में स्थित हैं।

हुक्के की तम्बाकू उत्तरी-भारत में अधिक काम में ली जाती है। दिल्ली, लखनऊ, गोरखपुर, रामपुर आदि नगरों में हुक्के की उच्च कोटि की तम्बाकू तैयार की जाती है।

(इ) कुछ नवीन व्यवसाय

द्वितीय महायुद्ध के समय जब विदेशों से हमको कई वस्तुएँ प्राप्त न हो सकीं तो उनके बनाने के लिए देश में ही प्रबन्ध किया गया। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् तो भारत सरकार को व्यावसायिक नीति में काफी परिवर्तन करना पड़ा। बहुत से व्यवसायों का तो राष्ट्रीयकरण करने की योजनाएँ बनाई गई। इस प्रकार हमारे यहाँ कई नए-नए कारखाने खोले गये। इन नए व्यावसायों में जलयान, वायुयान तथा मोटरें बनाने आदि के कारखाने मुख्य हैं। यद्यपि ये व्यवसाय अभी शैशवावस्था में हैं परन्तु भविष्य में इनकी बहुत उन्नति होने की संभावना है।

१. जलयान बनाने का व्यवसाय

बहुत प्राचीन काल से मस्तूल के जहाज हमारे यहां बनते आये हैं। उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध तक यह व्यवसाय हमारे यहाँ बहुत उन्नति पर था। कलकत्ते के निकट और मलाबार के समुद्रीतट पर इतने अच्छे जहाज बनते थे कि ईस्ट इण्डिया कम्पनी अपने जहाज यहीं बनवाती थी। पहले हमारा विदेशी व्यापार भारतीय जलयानों द्वारा ही होता था।

परन्तु जब से यूरोप में भाप से चलने वाले जहाज बनने लगे, हमारा जहाज-व्यवसाय नष्ट होने लगा। विदेशी शासन ने इस व्यवसाय को और भी पंगु बना दिया।

बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में तो हमारा सारा समुद्री व्यापार विदेशी जहाजों द्वारा ही होने लगा। परन्तु द्वितीय महायुद्ध के समय हमें विदेशी जहाज प्राप्त न हो सके। इसी कारण सरकार का ध्यान इस व्यवसाय की ओर गया। इसी के फल-स्वरूप सन् १९४१ में सिन्धिया

इन्हीं कारणों से आशा की जाती है कि थोड़े ही समय में हमारा जलयान-व्यवसाय बहुत आगे बढ़ जायगा।

२. मोटर व्यवसाय

भारत एक विशाल देश है। यहाँ की आबादी गाँवों में बसी हुई है। जहाँ रेल-मार्गों का अधिक विकास नहीं हो सकता। गाँवों को रेल मार्ग से जोड़ने के लिए नई-नई सड़कें बनाई जारही हैं। इन सड़कों पर मोटरें और बैल-गाड़ियाँ चलती हैं। बैल-गाड़ियों की चाल धीमी होती है और उनमें वजन भी कम ले जाया जा सकता है इसलिए हमारे खेतों की उपज बहुत कम समय और कम खर्च में नगरों में पहुँचाने के लिए अधिक मोटरों की आवश्यकता है।

मोटरों की आवश्यकता तो शान्ति तथा युद्ध दोनों ही समय में होती है।

कुछ समय पूर्व हमारे यहाँ के कुछ उत्साही व्यवसायियों ने भारत में मोटर के कारखानों की स्थापना करने के लिए सरकार से प्रार्थना की, परन्तु विदेशी सरकार ने उसको अस्वीकार किया।

सन् १९४० में माटुंगा (बम्बई) में मोटर का कारखाना खोला गया जिसमें विदेशों से कल-पुर्जे मंगाकर मोटरें खड़ी की जाने लगी। इस कारखाने में मोटरों की मरम्मत भी अच्छी होने लगी। परन्तु युद्ध के समय जब बाहर से मोटरें प्राप्त करने में कठिनाई उपस्थित हुई तो सरकार ने कलकत्ते के निकट मोटर का कारखाना खोलने की स्वीकृति बिड़ला-बन्धुओं को दे दी। उस कारखाने का काम "हिन्दुस्तान मोटर कम्पनी" रखा गया। अब वहाँ मोटरें बनने लगी हैं। कलकत्ते के पास भी मोटर बनाने का कारखाना है। सन् १९५७ में कुल मिलाकर सभी प्रकार की ३१९३२ मोटरें तैयार की गई।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद तो हमारी राष्ट्रीय सरकार ने बम्बई में दो कारखाने और स्थापित करने की आज्ञा दी है। सरकार का विचार है कि एक कारखाना उत्तर प्रदेश तथा दूसरा मद्रास में और खोला जावे।

मोटर व्यवसाय हमारे यहाँ बहुत उन्नति कर सकता है। हमारे यहाँ मोटरों की बहुत आवश्यकता है। अन्य देशों को देखते हुए यहाँ बहुत कम मोटरें हैं। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में ४ मनुष्यों के पीछे एक मोटर है, परन्तु हमारे यहाँ तो एक मोटर के पीछे दो हजार से भी अधिक मनुष्य हैं।

मोटर बनाने के लिए लोहे और कोयले की आवश्यकता होती है। ये वस्तुएँ हमारे यहाँ मौजूद हैं। जमशेदपुर में मोटरों के और कारखाने खोले जा सकते हैं और खोले जायेंगे, ऐसी संभावना है।

३. वायुयान निर्माण व्यवसाय

आधुनिक यातायात के साधनों में वायुयान का स्थान सर्वोच्च है। इसके द्वारा कुछ ही समय में सैकड़ों मील की यात्रा की जा सकती है। वायुयान के द्वारा देश के एक किनारे

से दूसरे किनारे तक पहुँचने में घण्टे ही लगते हैं। हमारे देश में आजकल वायुयान द्वारा यात्रा करने की प्रथा बढ़ रही है। बड़े बड़े व्यवसायी लोग समय की बचत के लिए वायुयान द्वारा ही यात्रा करते हैं। वायुयान द्वारा डाक पहुँचाना तो आजकल साधारण बात हो गई है।

वायुयान का प्रयोग हमारे यहाँ किस प्रगति से बढ़ रहा है इसका अनुमान निम्न-लिखित अंकों से लगाया जा सकता है:—

सन् १९३८ में वायु-मार्ग की कुल लम्बाई ६,७०० मील थी, परन्तु युद्ध के समाप्त होते ही सन् १९४५ में यह नौ हजार से अधिक हो गई। आजकल तो हमारे यहाँ के वायु-मार्ग की लम्बाई १४ हजार मील से भी अधिक है।

परन्तु फिर भी देश की विशालता को देखते हुए हमारे यहाँ वायुयानों की संख्या कम है। इसकी यात्रा में अधिक खर्च होने के कारण साधारण मनुष्य वायुयान द्वारा यात्रा करने में असमर्थ है।

युद्ध के समय सन् १९४० में वायुयान के पृथक् २ भागों को जोड़ने व सुधारने और पुर्जों को बदलने के लिये बंगलौर में एक कारखाना खोला गया, जिसका नाम 'हिन्दुस्तान एयरक्राफ्ट कम्पनी' है। आज उस कारखाने ने अच्छी उन्नति करली है और अब वहाँ हवाई जहाज बनने लगे हैं। यह कारखाना सरकार के अधीन है।

बंगलौर ही में वायुयान बनाने का कारखाना सबसे पहले क्यों खोला गया, इसके कई कारण हैं:—

(अ) हवाई जहाज के लिए एल्यूमिनियम की आवश्यकता होती है, जो पास ही ट्रावनकोर के कारखानों से प्राप्त हो जाता है।

(आ) इस व्यवसाय में फौलाद की आवश्यकता है। वह मैसूर राज्य के भद्रावती के लोहे के कारखाने से मिल जाता है।

(इ) बंगलौर में विज्ञान की खोज के लिए सरकारी संस्था है, जिससे इस व्यवसाय में सहायता ली जा सकती है।

(ई) व्यावसायिक केन्द्र होने के कारण बंगलौर के कारखानों से कुशल कारीगर आसानी से मिल जाते हैं।

(उ) शिवसमुद्रम् से सस्ती जल-विद्युत मिल जाती है।

वायुयानों की माँग दिन प्रतिदिन बढ़ रही है। शान्ति के समय इनके द्वारा व्यापार में खूब वृद्धि होती है और युद्ध के लिए इनका होना अनिवार्य ही है। सामरिक दृष्टि से भारत का बड़ा महत्व है। दक्षिणी-पूर्वी एशिया तथा दक्षिणी-पश्चिमी एशिया के मध्य में होने के कारण हमारी वायु सेना में वृद्धि करना आवश्यक है। व्यापारिक दृष्टि से भी भारत यूरोप और आस्ट्रेलिया के बीच होने के कारण इसका अधिक महत्व है। इन दोनों महाद्वीपों में आने-जाने वाले वायुयान भारत होकर ही गुजरते हैं।

इस प्रकार हमारे देश में वायुयान बनाने के और अधिक कारखाने खुलने की आवश्यकता है। उनके लिए आसनसोल और जमशेदपुर संभावित स्थान हैं। क्योंकि यहाँ पर इस व्यवसाय में जिन बातों की आवश्यकता होती है, वे सभी मौजूद हैं।

४. फिल्म व्यवसाय

आजकल सिनेमा का प्रचार हमारे यहाँ खूब बढ़ रहा है। पहले तो सिनेमा के हाल बड़े बड़े नगरों में ही थे, परन्तु अब तो छोटे कस्बों में भी सिनेमा देखने को मिलता है। गश्ती-सिनेमा का प्रचार भी बढ़ रहा है।

सबसे पहले सिनेमा की फिल्म बनाने की व्यवस्था बम्बई में की गई। वहाँ का उत्तम जलवायु और सुन्दर प्राकृतिक दृश्य इस व्यवसाय के लिए बहुत सहायक सिद्ध हुए। आज से पैंतीस साल पहले हमारे यहाँ विदेशों में बनी फिल्में ही आती थीं। परन्तु अब उनका आयात बहुत कम हो रहा है। हाँ, अँग्रेजी फिल्में तो अब भी विदेशों से आती हैं।

आज हमारे देश में लगभग ५० फिल्म स्टूडियो हैं और कई छोटी व्यवस्थाएँ हैं। युद्ध से पूर्व जितनी फिल्में हमारे यहाँ तैयार होती थी, उनकी ६०% बम्बई से आती थीं, परन्तु अब वहाँ से ६०% प्रतिशत फिल्में तैयार होती हैं।

फिल्म बनाने के मुख्य केन्द्र बम्बई, पूना, कोल्हापुर, कलकत्ता, मद्रास और कोयम्बटूर हैं। देश के अन्य भागों में भी फिल्में तैयार की जा सकती हैं। देश के लोगों का जीवनस्तर बढ़ाने में सिनेमा फिल्म-व्यवसायी बहुत अधिक हाथ बँटा सकते हैं। सामाजिक कुरीतियों के निवारण तथा शिक्षा-प्रचार में सिनेमा का सदुपयोग किया जा सकता है।

आशा है फिल्म व्यवसाय की अच्छी उन्नति होगी। देश का प्राकृतिक सौन्दर्य इसमें बहुत सहायक होगा।

५. मशीन बनाने के कारखाने

अब हमारे देश में मूल व्यवसायों (Key Industries) को स्थापित करने की आवश्यकता है। इतने दिन हमारे कारखानों में काम आने वाली मशीनें विदेशों से आती थीं। सूती कपड़े की मिलों की सब मशीनें और पुर्जे बाहर से मँगवाए गये हैं। पाट की मिलों की मशीनें भी विदेशों से आई हैं। चीनी बनाने के लिए भी विदेशी मशीनें ही हैं।

परन्तु अब हमारी राष्ट्रीय सरकार प्रत्येक प्रकार की मशीन के लिए विदेशों पर निर्भर रहने की नीति को सहन नहीं कर सकती। विशेषकर इस परिस्थिति में जब कि हमारे यहाँ उत्तम लोहे का अतुल भंडार है।

अब हमारे यहाँ कुछ मशीनें बनने लगी हैं। अभी हाल ही में सरकार ने सूती वस्त्र बनाने की आवश्यक मशीनें बनाने के लिए इस व्यवसाय को संरक्षण दिया है। अब कई प्रकार के यन्त्र और कल-पुर्जे भारत में ही बनने लगे हैं।

फौज के हथियार तैयार करने की मशीनें बनाने की एक फैक्ट्री बम्बई के पास अम्बरनाथ नामक स्थान में अप्रेल सन् १९५१ में खोली गई।

बिजली की निरन्तर माँग बढ़ रही है। उसके लिए आवश्यक यन्त्र तैयार करने और कारखाने खोलने के लिए हमारी सरकार विदेशी फ़र्मों से परामर्श कर रही है। शीघ्र ही ऐसे कारखाने यहाँ खुलने वाले हैं जिनमें बिजली का सामान बनाने के यंत्र तैयार होंगे। इनके अतिरिक्त रेडियो, ट्रैक्टर, टेलीफ़ून के तार आदि बनाने की योजना भी विचाराधीन है। भारत सरकार रेडियो का सामान बनाने के लिए एक कारखाना खोलना चाहती है जिसमें तीन करोड़ रुपया खर्च होगा। इसमें विदेशी ब्राडकास्ट के लिए बड़े बड़े ट्रांसमिटर तैयार होंगे, छोटे ट्रांसमिटर भी बनेंगे तथा रेडियो वाल्व आदि भी तैयार होंगे।

इस प्रकार की मशीनें और कल-पुर्जे जब देश में ही बनने लगेंगे तो इन पर आधारित कई कारखाने भी यहाँ खुल जायेंगे और हमारे उद्योग धन्धों का खूब विकास होगा।

६. रासायनिक खाद बनाना

बिहार के सिन्दरी नामक स्थान में भारत सरकार की ओर से रासायनिक खाद बनाने का कारखाना खोला गया। इसका उद्घाटन २ मार्च सन् १९५२ को हुआ। कारखाने में २३ करोड़ रुपया खर्च हुआ।

सिंदरी के कारखाने में अमोनिया सल्फेट तैयार किया जाता है। इसको खेतों में देने से भूमि का उपजाऊपन कई गुना बढ़ जाता है। कारखाने में एक हजार टन अमोनिया सल्फेट प्रतिदिन तैयार किया जाता है। इसको तैयार करने में जिप्सम नामक खनिज काम आता है जो राजस्थान से मंगाया जाता है।

खाद के कूड़े-करकट से सीमेन्ट बनाने की योजना भी विचाराधीन है।

सिंदरी जैसे और कारखाने खोलने के लिए जाँच की जा रही है। संभावित स्थान भाकरा बांध के निकट नांगल है। राजस्थान में भी ऐसा कारखाना खोलने को सोचा जा रहा है।

७. साइकिल व्यवसाय

नगरों में साइकिलें बड़े काम की होती हैं। इस सवारी के रखने में खर्च कम पड़ता है। इसलिए मध्यम श्रेणी के लोग साइकिल से काम चला लेते हैं।

सन् १९२५ में मद्रास में जर्मनी की शिक्षण-सहायता से साइकिल बनाने की एक फैक्ट्री खोली गई, परन्तु उन दिनों ब्रिटेन और जापान से आने वाली साइकिलों की प्रतिस्पर्द्धा के कारण उस फैक्ट्री को सफलता कम मिली। फिर सन् १९३८ और १९४१ के बीच साइकिल बनाने के तीन कारखाने खोले गए-(१) 'इंडियन साइकिल मेन्यूफेक्चरिंग कम्पनी', कलकत्ता, (२) 'हिन्द साइकिल', बम्बई और (३) 'हिन्दुस्थान बाइसिकल मेन्यूफेक्चरिंग कम्पनी' पटना। सन् १९४९ में भारत सरकार ने तीन और साइकिल के कारखाने खोलने की अनुमति दी, जिनमें विदेशों का साझा भी है। फिर दो कारखाने खोले गए। इन आठों कारखानों में लगभग साढ़े तीन करोड़ रुपये की लागत लगी।

सन् १९५७ में हमारे देश में कुल मिलाकर ८,००,८३२ साइकिलें बनाई गई।

भारत के साइकिल के कारखानों में साइकिलें तैयार करने के अतिरिक्त साइकिलों के विभिन्न पुर्जे भी अलग बनाये जाते हैं।
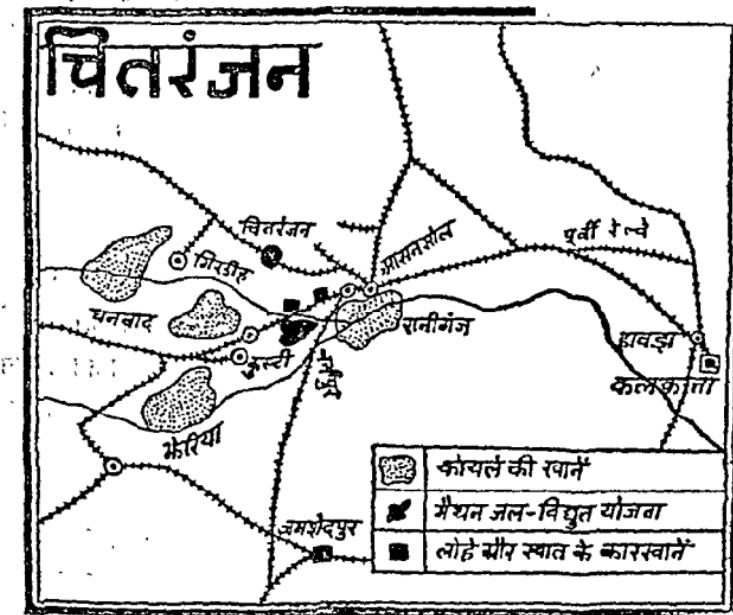
चित्र सं० ६८. चितरंजन की स्थिति

८. रेल के इन्जन बनाने का कारखाना

बंगाल, में चितरंजन नामक स्थान में रेल के इंजिन बनाने का कारखाना सन् १९४८ में खोला गया। इसकी लागत १५ करोड़ रुपया है। यह कारखाना सरकारी है। पहला इंजिन सन् १९५० में तैयार किया गया। इस कारखाने में प्रति वर्ष १२० इंजिन और ५० बायलर बनाने की योजना है।

९. रेल के डिब्बे बनाना

जून सन् १९५२ में मद्रास के निकट पेरामौर (Peramour) नामक स्थान पर रेल के डिब्बे बनाने का कारखाना शुरू हुआ। प्रारम्भ में इस कारखाने में प्रति वर्ष ३५० लोहे के डिब्बे तैयार किये जाएँगे। धीरे धीरे सवारी गाड़ी के एक-हजार डिब्बे साल में तैयार किए जाएँगे। इस कारखाने की लागत का अनुमान लगभग साढ़े सात करोड़ रुपया है। यह कारखाना भी सरकारी है।

१०. टेलीफून फैक्ट्री

बंगलौर से ६ मील दूर दुरावनी नगर में भारत सरकार की ओर से टेलीफून बनाने का एक कारखाना खोला गया है। इसमें इंग्लैंड की एक फर्म से सहायता ली गई है। इसमें टेलीफून बनने लगे हैं और बाहर से टेलीफून का आयात बहुत कम हो गया है। इस फैक्ट्री में प्रतिवर्ष लगभग एक हजार टेलीफून बनते हैं।

११. यंत्र बनाना

लगभग सौ वर्ष पहले सर्वे आफ इंडिया के यंत्रों की मरम्मत करने के लिए कलकत्ते में एक छोटा कारखाना खोला गया था। उसी को अब मैथेमेटिकल इन्स्ट्रूमेन्ट फैक्ट्री का नाम दे दिया गया है और उसमें बिजली, मशीनें संबंधी आदि कई प्रकार के यंत्र तैयार होने लगे है। अब तो उसमें शिक्षा, स्वास्थ्य तथा सेना में काम आने वाले यंत्र भी बनने लगे हैं। इस फैक्ट्री में बड़े थर्मामीटर तथा थियोडोलाइटर भी बनते हैं।

सारांश

खेती के साथ-साथ उद्योग-धंधों का विकास होना भी उन्नति का लक्षण है, आधुनिक ढंग के कारखाने हमारे यहाँ पाश्चात्य लोगों के संसर्ग का परिणाम है। कारखानों के विकास के लिए कच्चा माल, यांत्रिक शक्ति, बिक्री का क्षेत्र, कुशल कारीगर, यातायात के सुगम साधन आदि की आवश्यकता है। भारत में ये सभी साधन उपयुक्त हैं और हो सकते हैं। हमारे कारखानों का विवरण इस प्रकार है:—

(अ) मुख्य व्यवसाय

१. वस्त्र व्यवसाय:—हाथ से बना हुआ भारतीय सूती वस्त्र प्राचीन काल में भारत से विदेशों को निर्यात किया जाता था और उसकी ख्याति सारे संसार में थी, किन्तु आधुनिक ढंग के कारखानों को खुले अभी लगभग सौ वर्ष हुए हैं। इस व्यवसाय ने पिछले महायुद्ध के समय अच्छी सफलता प्राप्त करली।

बम्बई राज्य के बम्बई, अहमदाबाद, शोलापुर, सूरत, पूना आदि स्थानों में सूती कपड़े की मिलें हैं। यह राज्य कारखानों की संख्या के अनुसार भारत में प्रथम है। दूसरा स्थान मद्रास का है। इसमें मद्रास, मदुरा और कोयम्बटूर मुख्य केन्द्र हैं। पिछले कुछ सालों में बंगाल में सूती कपड़े की मिलें खुल गई हैं। इनके अतिरिक्त उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, पंजाब और राजस्थान में भी कपड़े की मिलें हैं।

सूती कपड़े के अतिरिक्त हमारे देश में ऊनी वस्त्र व रेशमी कपड़ा तैयार करने के कारखाने भी हैं। पंजाब में अमृतसर रेशम के लिए और काश्मीर में श्रीनगर ऊनी वस्त्र के लिए प्रसिद्ध हैं।

२. पाट-व्यवसाय:—बंगाल में पाट के कारखाने हैं। पाट उत्पन्न करने में भारत का एकाधिकार है। इन कारखानों को पानी की अधिक आवश्यकता होने के कारण ये हुगली नदी के दोनों किनारों पर स्थित हैं। कलकत्ता इसका केन्द्र है। कुछ कारखाने बिहार और उड़ीसा में हैं। इन कारखानों में बोरे, कनवास, टाट आदि बनाये जाते हैं। आजकल जूट से वस्त्र भी तैयार करने लगे हैं। पाकिस्तान बन जाने से पूर्वी बंगाल का पाट उत्पन्न करने वाला भाग अब भारत से अलग हो गया है। इससे बंगाल के कारखानों में कच्चे जूट की कमी होने लगी। परन्तु अब भारत के अन्य भागों में पाट पैदा करने लगे हैं और आशा है कि शीघ्र ही जूट की इस कमी की पूर्ति हो जायगी।

३. शक्कर के कारखाने:—भारत में विश्व का सबसे अधिक गन्ना पैदा होता है। यही कारण है कि यहाँ चीनी बनाने के कई कारखाने हैं। अधिकांश चीनी उत्तर प्रदेश और बिहार में बनती है। उत्तर प्रदेश में मेरठ, कानपुर, बरेली, गोरखपुर, लखनऊ, प्रयाग आदि और बिहार में चम्पारन, भागलपुर और मुजफ्फरपुर शक्कर बनाने के केन्द्र हैं। इनके अतिरिक्त बम्बई, मद्रास, पंजाब और बंगाल में चीनी की फैक्ट्रियाँ हैं। यत्न करने पर दक्षिण भारत में चीनी के कारखाने और खोले जा सकते हैं। हमारे देश के इस व्यवसाय का भविष्य बहुत उज्ज्वल है।

४. लोहे का व्यवसाय:—हमारे देश में उत्तम कोटि का लोहा प्रचुर मात्रा में मिलता है, परन्तु इस व्यवसाय की अभी तक अधिक उन्नति नहीं हुई है। गत महायुद्ध के समय विदेशों से लोहे के सामान को आयात करने में रुकावटें आ गई और तभी से हमारे लोहे के कारखानों की उन्नति प्रारम्भ हुई। हमारे यहाँ के लोहे के कारखानों के नाम ये हैं—(अ) टाटा आयरन एण्ड स्टील कम्पनी, जमशेदपुर, (आ) बंगाल आयरन कम्पनी लिमिटेड, कुलटी, (इ) इण्डियन आयरन एण्ड स्टील कम्पनी, बुरानपुर, (ई) यूनाइटेड आयरन एण्ड स्टील कारपोरेशन आफ एशिया, मनोहरपुर और (उ) मैसूर आयरन वर्क्स, भद्रावती।

लोहे के कारखानों के लिए भारत में बहुत सुविधा है। इस व्यवसाय से सम्बन्धित कच्चा माल अर्थात् लोहा, कोयला, चूना, मैंगनीज आदि सभी धातुएँ यहाँ पर पास पास उपलब्ध हैं। आशा की जाती है कि भविष्य में हमारा देश एशिया में इस व्यवसाय के लिए सबसे आगे बढ़ जायगा।

(आ) अन्य व्यवसाय

ऊपर बताये हुए व्यवसायों के अतिरिक्त भारत में और भी कई कारखाने हैं जिनमें कागज बनाना, सीमेंट का धन्धा, चमड़े का सामान, काँच का व्यवसाय, दियासलाई, रासायनिक पदार्थ आदि मुख्य हैं।

१. कागज़ बनाना:—इस व्यवसाय के लिए चिथड़े, गला हुआ पाट, मुलायम लकड़ी की लुब्दी, बाँस, मूँज, सवाई घास आदि की आवश्यकता होती है। ये वस्तुएँ हमारे देश में पर्याप्त मात्रा में पाई जाती हैं। अतः इस व्यवसाय के लिए यहाँ पर बहुत सुविधा है। कागज बनाने का सबसे बड़ा केन्द्र कलकत्ते के पास टीटागढ़ है। अन्य केन्द्र लखनऊ, बम्बई, पूना, सहारनपुर, राजमहेन्द्री आदि हैं।

२. सीमेंट के कारखाने:—यह हमारे यहाँ पर नया व्यवसाय है। पहले यहाँ बाहर से सीमेंट आता था। सीमेंट बनाने के लिए चूना, मिट्टी और शेलखरी की आवश्यकता होती है। भारत के जिन भागों में चूने का पत्थर प्रचुर मात्रा में मिलता है वहाँ सीमेंट के कारखाने अधिक हैं। मध्य प्रदेश में कटनी सबसे बड़ा केन्द्र है। इसके अतिरिक्त इसके कारखाने पोरबन्दर, ओखा, लाखेरी, देहरी आदि में हैं।

३. चमड़े के कारखानेः—कच्चा चमड़ा निर्यात करने के लिए भारत सदा से प्रसिद्ध रहा है क्योंकि हमारे देश में चौपायों की संख्या अधिक है। चमड़ा साफ करना मेहनत का काम है। अधिकतर चमड़ा पुराने तरीकों से कमाया जाता है परन्तु आजकल कुछ आधुनिक ढंग के कारखाने भी चमड़ा कमाने के लिए खोल दिये गये हैं। चमड़ा व्यवसाय का सबसे बड़ा केन्द्र कानपुर है; इसके अतिरिक्त आगरा, लखनऊ, कलकत्ता और लुधियाना में भी कारखाने हैं।

४. काँच का व्यवसायः—पिछले महायुद्धों के समय काँच के व्यवसाय को बहुत प्रोत्साहन मिला। आजकल हमारे देश के काँच के कारखानों में लगभग दस हजार से भी अधिक व्यक्ति काम करते हैं। उत्तर प्रदेश, बंगाल और बम्बई में आधुनिक ढंग के काँच के कारखाने हैं। उत्तर प्रदेश में फ़िरोजाबाद सबसे बड़ा केन्द्र है।

५. दियासलाईः—इस व्यवसाय के लिए मुलायम लकड़ी और सस्ती मजदूरी की आवश्यकता होती है। भारत में लगभग ६० कारखानों में दियासलाई तैयार होती है। कलकत्ता, अहमदाबाद, बम्बई, मद्रास, बरेली, जबलपुर और बिलासपुर मुख्य केन्द्र हैं।

(ई) कुछ नवीन व्यवसाय

भारत में आजकल कई नवीन व्यवसाय आरम्भ हो गये हैं जैसे जलयान बनाने के कारखाने, मोटर व्यवसाय, वायुयान निर्माण, फ़िल्म व्यवसाय आदि। जहाज बनाने का कारखाना विशाखापटनम् में है। इसमें जहाज भी बन चुके हैं। वायुयान निर्माण के लिए दक्षिण भारत में बंगलौर नगर में एक कारखाना खुला है। अभी तक तो इसमें वायुयानों की मरम्मत होती है और विदेशी पुर्जों को जोड़कर वायुयान तैयार कर लेते हैं। मोटर बनाने के दो कारखाने बम्बई में खुले हैं और एक कलकत्ते में। चितरंजन में रेल के इंजिन बनते हैं। रासायनिक खाद, यंत्र, टेलीफून आदि बनाने के भी कारखाने अब खुल गये हैं।

प्रश्न

१. भारत में औद्योगिक विकास की उन्नति के लिए क्या-क्या सुविधाएँ हैं?

२. लोहे के व्यवसाय के लिए किन-किन बातों का होना आवश्यक है? भारत में इस व्यवसाय के मुख्य केन्द्र कहाँ कहाँ पर हैं?

३. सूती कपड़े के व्यवसाय ने भारत में इतनी शीघ्र उन्नति किस प्रकार कर ली?

४. भारत और पाकिस्तान के विभाजन से पाट व्यवसाय पर क्या प्रभाव पड़ा?

५. दियासलाई, सीमेंट, कागज और लाख का व्यवसाय भारत के किन-किन भागों में होता है? क्यों?

---

(२) रानीगंज और झरिया के कोयले के क्षेत्र निकट ही हैं अतः कारखाने चलाने के लिए शक्ति सुगमता से प्राप्त हो जाती है।

(३) इस प्रदेश की आबादी घनी है अतः वहाँ मजदूर पर्याप्त संख्या में मिल जाते हैं।

(४) कलकत्ता नगर विभिन्न प्रकार के यातायात के साधनों से भारत के अन्य भागों से संबंधित है। यहाँ विदेशों से भी जल-मार्गों और वायु मार्ग से संबंध है।

(५) हुगली नदी से स्वच्छ पानी मिल जाता है जिससे कारखाने चलते हैं।

(६) कलकत्ते नगर में कई बैंक और पूंजीपति हैं। अतः वहाँ पूंजी की कमी नहीं रहती।

(७) घनी आबादी के कारण एक लाभ यह भी है कि वहाँ बने माल की बिक्री के लिए बाजार निकट ही है। वहाँ का बना माल भारत के अन्य भागों और विदेशों को भी सुगमता से भेज देते हैं।

इस प्रकार कलकत्ता औद्योगिक प्रदेश हमारे देश में ही नहीं बल्कि एशिया का एक मुख्य औद्योगिक प्रदेश है।

२. आसनसोल क्षेत्र

रानीगंज और झरिया के कोयला क्षेत्रों के निकट आसनसोल औद्योगिक प्रदेश है। यह प्रदेश लौह-व्यवसाय के लिए प्रसिद्ध है। प्रदेश में लोहे की कई प्रकार की मशीनें, साइकिलें, रेल के इंजिन आदि का निर्माण होता है। एल्यूमीनियम की चद्दरें और सामान भी तैयार होता है। रानीगंज के निकट कागज तथा चीनी मिट्टी के बर्तन भी बनाए जाते हैं।

आसनसोल प्रदेश के मुख्य केन्द्र चितरंजन, आसनसोल, हीरापुर, रानीगंज और कुल्टी हैं। आसनसोल की स्थिति मध्यवर्ती होने से ही इस प्रदेश का नाम यह पड़ा।

आसनसोल क्षेत्र हमारे देश का बहुत बड़ा औद्योगिक प्रदेश बनने जा रहा है। इसकी उन्नति के कारण इस प्रकार हैं :—

(१) कारखाने चलाने के लिए रानीगंज और झरिया में उत्तम कोटि के कोयले का भंडार है।

(२) लोहा निकट ही सिंहभूमि क्षेत्र से प्राप्त किया जाता है।

(३) आसनसोल रेल मार्गों का बड़ा केन्द्र होने से आवागमन के सुगम साधन हैं।

(४) इस प्रदेश से कलकत्ता केवल १४० मील दूर है। वहाँ से रासायनिक पदार्थ एवं मशीनरी मंगाने में सुविधा है।

(५) बराकार नदी से स्वच्छ जल पर्याप्त मात्रा में मिल जाता है।

(६) लोहे के अतिरिक्त इस प्रदेश में कागज के कारखाने चलाने के लिए निकट के वनों से घास और बांस पर्याप्त मात्रा में मिल जाते हैं।

(७) निकट ही बिहार और बंगाल से सस्ते मजदूर मिल जाते हैं।

३. बम्बई प्रदेश

बम्बई नगर और उसके निकट के थाना, परेल, दादर, माहिम आदि मिलकर बम्बई औद्योगिक क्षेत्र बना है। यह प्रदेश भारत का पुराना औद्योगिक क्षेत्र है।

इस प्रदेश का मुख्य उद्योग सूती वस्त्र बनाना है। सूती कपड़े की रंगाई और छपाई का काम भी अच्छा होता है। इसी प्रदेश में ऊनी वस्त्र एवं कृत्रिम रेशमी वस्त्र बनाने के भी कारखाने हैं।

वस्त्र व्यवसाय के अतिरिक्त बम्बई में काँच, साबुन, वनस्पति घी, रासायनिक पदार्थ, बिजली का सामान, प्लास्टिक की वस्तुएँ बनाने आदि के कारखाने भी हैं। आजकल वहाँ मोटर और साइकिलें बनाने के कारखाने भी खुल गए हैं। बम्बई प्रदेश में रासायनिक उद्योग बहुत प्रगति कर रहा है। वहाँ का फिल्म उद्योग तो बहुत प्रसिद्ध हो गया है।

निम्नलिखित कारणों से ही बम्बई औद्योगिक प्रदेश बन गया है :—

(१) यह प्रदेश यूरोप से निकट होने से यहाँ कारखानों में काम में आने वाली मशीनें आयात करने में सुविधा है।

(२) बम्बई के प्रमुख उद्योग वस्त्र-व्यवसाय के लिए कच्चा माल अर्थात् कपास पास ही उत्पन्न होती है।

(३) कारखाने चलाने के लिये टाटा-विद्युत-योजना से सस्ती बिजली मिल जाती है।

(४) नगर में बड़े बड़े बैंक हैं जिनसे व्यवसाय अच्छा चलता है।

(५) बम्बई स्वयं उत्तम बन्दरगाह है और यह देश के भीतरी भागों से रेल-मार्गों द्वारा संबंधित है। अतः वहाँ बने हुए माल को बाहर भेजने में सुविधा रहती है।

(६) बम्बई का नम जलवायु विशेषतः सूती वस्त्र व्यवसाय के लिए उपयुक्त है।

(७) मालवा और गुजरात से कारखानों में काम करने के लिये श्रमिक मिल जाते हैं।

साधारण औद्योगिक प्रदेश

जैसा कि पहले बताया गया है इन उद्योग प्रदेशों में जमशेदपुर, अहमदाबाद, बैंगलोर, कानपुर आदि हैं।

१. जमशेदपुर

यह प्रदेश कलकत्ते से लगभग १५० मील दूर छोटे नागपुर के पठारी भाग में स्थित है। यहाँ पर कोयला और लोहा सुगमता से मिल जाता है अतः लोहे का उद्योग प्रारम्भ किया गया। स्वर्ण रेखा और खोरकाई नदियों से स्वच्छ पानी उपलब्ध हो जाता है।

जमशेदपुर का लोहे का कारखाना आज एशिया का सबसे बड़ा कारखाना है। आज़कल वहाँ लोहे की रेल की पटरियाँ, गार्डर, कांटेदार तार, टीन की चद्दरें, खेती के यंत्र आदि बनते हैं।

लोहे की वस्तुओं के अतिरिक्त जमशेदपुर क्षेत्र में रासायनिक पदार्थ भी बनते हैं। वहीं पर लोहे के पुराने टुकड़ों से अमोनिया सल्फेट नामक खाद तैयार होती है।

ऐसा अनुमान है कि निकट भविष्य में जमशेदपुर भारत का एक विशाल औद्योगिक क्षेत्र बन जायगा।

२. अहमदाबाद

साबरमती नदी के तट पर अहमदाबाद नगर स्थित है। आसपास की काली मिट्टी में कपास का उत्पादन होने से नगर में सूती वस्त्र बनाने के कारखाने खुल गए हैं। आजकल अहमदाबाद में बहुत सुन्दर कपड़ा बनने लगा है।

सूती वस्त्र के अतिरिक्त अहमदाबाद के औद्योगिक प्रदेश में ऊनी व रेशमी कपड़ा भी बनता है। वहाँ पर कागज एवं दियासलाई बनाने के कारखाने भी हैं।

सूती वस्त्र व्यवसाय में अहमदाबाद आजकल बम्बई से भी आगे बढ़ने लगा है।

३. कानपुर

गंगा और यमुना नदियों के दो आब में स्थित होने से कानपुर का विशेष महत्व है। उत्तर प्रदेश का यह सबसे बड़ा औद्योगिक केन्द्र है।

कानपुर में विभिन्न वस्तुएँ बनाने के कारखाने हैं। नगर में सूती और ऊनी वस्त्र बनता है। चमड़े के जूते तथा अन्य सामान बनाने के भी वहाँ कई कारखाने हैं। नगर में दो पाट के कारखाने भी हैं। आस पास के मैदानी भाग में गन्ने की पैदावार होने से नगर में चीनी बनाने के कई कारखाने खोल दिये गए हैं। इनके अतिरिक्त वहाँ साइकिलें, बिजली के पंखे, पानी निकालने के पम्प, खेत के औज़ार आदि भी बनते हैं। छोटे उद्योगों में वनस्पति घी, साबुन, तेल और रासायनिक पदार्थ तैयार होते हैं।

गंगा के समतल और उपजाऊ मैदान में स्थित होने से कानपुर एक व्यापारिक नगर भी बन गया है। यातायात की सुविधा होने से ही यहाँ के उद्योग और व्यापार में वृद्धि हुई।

४. दिल्ली

दिल्ली भारत की राजधानी है। इन दिनों यह नगर बहुत बड़ा होगया है। धीरे धीरे यह औद्योगिक केन्द्र बन रहा है। आजकल नगर के आस पास कई औद्योगिक बस्तियाँ बस गई हैं।

(७) निकट ही बिहार और बंगाल से सस्ते मजदूर मिल जाते हैं।

३. बम्बई प्रदेश

बम्बई नगर और उसके निकट के थाना, परेल, दादर, माहिम आदि मिलकर बम्बई औद्योगिक क्षेत्र बना है। यह प्रदेश भारत का पुराना औद्योगिक क्षेत्र है।

इस प्रदेश का मुख्य उद्योग सूती वस्त्र बनाना है। सूती कपड़े की रंगाई और छपाई का काम भी अच्छा होता है। इसी प्रदेश में ऊनी वस्त्र एवं कृत्रिम रेशमी वस्त्र बनाने के भी कारखाने हैं।

वस्त्र व्यवसाय के अतिरिक्त बम्बई में काँच, साबुन, वनस्पति घी, रासायनिक पदार्थ, बिजली का सामान, प्लास्टिक की वस्तुएँ बनाने आदि के कारखाने भी हैं। आजकल वहाँ मोटर और साइकिलें बनाने के कारखाने भी खुल गए हैं। बम्बई प्रदेश में रासायनिक उद्योग बहुत प्रगति कर रहा है। वहाँ का फिल्म उद्योग तो बहुत प्रसिद्ध हो गया है।

निम्नलिखित कारणों से ही बम्बई औद्योगिक प्रदेश बन गया है :—

(१) *यह प्रदेश यूरोप से निकट होने से यहाँ कारखानों में काम में आने वाली* मशीनें आयात करने में सुविधा है।

(२) बम्बई के प्रमुख उद्योग वस्त्र-व्यवसाय के लिए कच्चा माल अर्थात् कपास पास ही उत्पन्न होती है।

(३) कारखाने चलाने के लिये टाटा-विद्युत-योजना से सस्ती बिजली मिल जाती है।

(४) नगर में बड़े बड़े बैंक हैं जिनसे व्यवसाय अच्छा चलता है।

(५) बम्बई स्वयं उत्तम बन्दरगाह है और यह देश के भीतरी भागों से रेल-मार्गों द्वारा संबंधित है। अतः वहाँ बने हुए माल को बाहर भेजने में सुविधा रहती है।

(६) बम्बई का नम जलवायु विशेषतः सूती वस्त्र व्यवसाय के लिए उपयुक्त है।

(७) मालवा और गुजरात से कारखानों में काम करने के लिये श्रमिक मिल जाते हैं।

साधारण औद्योगिक प्रदेश

जैसा कि पहले बताया गया है इन उद्योग प्रदेशों में जमशेदपुर, अहमदाबाद, बैंगलोर, कानपुर आदि हैं।

१. जमशेदपुर

यह प्रदेश कलकत्ते से लगभग १५० मील दूर छोटे नागपुर के पठारी भाग में स्थित है। यहाँ पर कोयला और लोहा सुगमता से मिल जाता है अतः लोहे का उद्योग प्रारम्भ किया गया। स्वर्ण रेखा और खोरकाई नदियों से स्वच्छ पानी उपलब्ध हो जाता है।

जमशेदपुर का लोहे का कारखाना आज एशिया का सबसे बड़ा कारखाना है। आजकल वहाँ लोहे की रेल की पटरियाँ, गार्डर, कांटेदार तार, टीन की चद्दरें, खेती के यंत्र आदि बनते हैं।

लोहे की वस्तुओं के अतिरिक्त जमशेदपुर क्षेत्र में रासायनिक पदार्थ भी बनते हैं। वहीं पर लोहे के पुराने टुकड़ों से अमोनिया सल्फेट नामक खाद तैयार होती है।

ऐसा अनुमान है कि निकट भविष्य में जमशेदपुर भारत का एक विशाल औद्योगिक क्षेत्र बन जायगा।

२. अहमदाबाद

साबरमती नदी के तट पर अहमदाबाद नगर स्थित है। आसपास की काली मिट्टी में कपास का उत्पादन होने से नगर में सूती वस्त्र बनाने के कारखाने खुल गए हैं। आजकल अहमदाबाद में बहुत सुन्दर कपड़ा बनने लगा है।

सूती वस्त्र के अतिरिक्त अहमदाबाद के औद्योगिक प्रदेश में ऊनी व रेशमी कपड़ा भी बनता है। वहाँ पर कागज एवं दियासलाई बनाने के कारखाने भी हैं।

सूती वस्त्र व्यवसाय में अहमदाबाद आजकल बम्बई से भी आगे बढ़ने लगा है।

३. कानपुर

गंगा और यमुना नदियों के दो आब में स्थित होने से कानपुर का विशेष महत्व है। उत्तर प्रदेश का यह सबसे बड़ा औद्योगिक केन्द्र है।

कानपुर में विभिन्न वस्तुएँ बनाने के कारखाने हैं। नगर में सूती और ऊनी वस्त्र बनता है। चमड़े के जूते तथा अन्य सामान बनाने के भी वहाँ कई कारखाने हैं। नगर में दो पाट के कारखाने भी हैं। आस पास के मैदानी भाग में गन्ने की पैदावार होने से नगर में चीनी बनाने के कई कारखाने खोल दिये गए हैं। इनके अतिरिक्त वहाँ साइकिलें, बिजली के पंखे, पानी निकालने के पम्प, खेत के औजार आदि भी बनते हैं। छोटे उद्योगों में वनस्पति घी, साबुन, तेल और रासायनिक पदार्थ तैयार होते हैं।

गंगा के समतल और उपजाऊ मैदान में स्थित होने से कानपुर एक व्यापारिक नगर भी बन गया है। यातायात की सुविधा होने से ही यहां के उद्योग और व्यापार में वृद्धि हुई।

४. दिल्ली

दिल्ली भारत की राजधानी है। इन दिनों यह नगर बहुत बड़ा होगया है। धीरे धीरे यह औद्योगिक केन्द्र बन रहा है। आजकल नगर के आस पास कई औद्योगिक बस्तियाँ बस गई हैं।

दिल्ली में सूती वस्त्र बनाने के कारखाने हैं। अब वहां साइकिलें भी बनती हैं। बिजली के पंखे बनाने के कारखाने भी हैं। वनस्पति घी, रासायनिक पदार्थ, सिलाई की मशीनें, चीनी के वर्तन और प्लास्टिक की वस्तुएँ बनाने के कारखाने भी दिल्ली में हैं।

कारखाने दूर दूर तक फैले हुए हैं। दिल्ली का औद्योगिक प्रदेश का विस्तार लगभग २५ मील के घेरे में है। इसकी उन्नति का मुख्य कारण दिल्ली की उत्तम स्थिति है।

५. बंगलौर

यह नगर दक्षिण भारत में पूर्वी समुद्रतट और पश्चिमी समुद्रतट के बीच में पठारी भूमि पर स्थित है। यहाँ का जलवायु स्वास्थ्यवर्द्धक है।

बंगलौर में हवाई जहाज बनाने का कारखाना है। वहाँ पर रेल के डिब्बे भी बनते हैं इन दिनों वहाँ के एक सरकारी कारखाने में टेलीफून के यंत्र भी बनते हैं।

वस्त्र व्यवसाय के लिए भी बंगलौर प्रसिद्ध हो गया है। वहाँ सूती, ऊनी और रेशमी सभी प्रकार का वस्त्र बहुत उत्तम कोटि का बनता है। वस्त्र व्यवसाय के अतिरिक्त इस प्रदेश में काँच का सामान, चीनी मिट्टी के बर्तन और बिजली का सामान भी तैयार किया जाता है।

बंगलौर का उत्तम जलवायु इस प्रदेश की उन्नति में विशेष लाभप्रद सिद्ध हुआ। निकट ही शिवसमुद्रम् से सस्ती बिजली मिल जाती है। वहाँ की वैज्ञानिक शोधशालाएँ उद्योग-धंधों के निर्माण में सहायक हुईं।

६. मद्रास

भारत के पूर्वी समुद्र तट पर मद्रास एक सुन्दर बन्दरगाह है। मद्रास नगर भारत का एक प्रसिद्ध औद्योगिक नगर बन गया है। वहाँ पर सूती और ऊनी वस्त्र बनाने के कई कारखाने हैं। इनके अतिरिक्त नगर में काँच, चमड़े का सामान, वनस्पति घी, दियासलाई, रासायनिक पदार्थ और सिगरेट बनाने के कारखाने भी हैं।

आजकल मद्रास में मोटरें भी बनने लगी हैं। निकट ही पेराम्बेवूर में रेल के डिब्बे भी बनते हैं। साईकिलें भी बनाई जाती हैं। फिल्म व्यवसाय भी वहाँ उन्नति पर है।

इस प्रकार मद्रास एक उत्तम औद्योगिक प्रदेश बन गया है। नगर का बन्दरगाह होना, जल-विद्युत और कच्चे माल की प्राप्ति, भीतरी भागों से रेल-मार्गों का सम्बन्ध आदि सुविधाओं ने ही मद्रास को औद्योगिक प्रदेश बना दिया है।

सारांश

आजकल हमारे देश में उद्योग-धंधों का विकास हो रहा है। इसके फलस्वरूप देश में कुछ औद्योगिक क्षेत्रों की स्थापना होगई है।

हमारे देश में औद्योगिक क्षेत्र दो प्रकार के हैं—

(अ) मुख्य क्षेत्रः—इनमें तीन मुख्य हैं—कलकत्ता, आसनसोल और बम्बई। कलकत्ते में हुगली नदी के किनारे पर पाट के बड़े कारखाने हैं। वहाँ सूती वस्त्र भी बनता है। अन्य व्यवसायों में काँच, कागज, बिजली का सामान, चीनी मिट्टी के बरतन, रासायनिक पदार्थ आदि बनाने के कारखाने हैं। आसनसोल के निकट लोहा और कोयला पर्याप्त मिल जाता है अतः वहाँ पर लोहे की वस्तुएँ बनाने के कारखाने हैं। चितरंजन में रेल के इंजिन बनाए जाते हैं। बम्बई विशेषतः सूती व्यवसाय के लिए प्रसिद्ध है। वहाँ पर काँच, वनस्पति घी, रसायन पदार्थ और बिजली का सामान भी तैयार होता है।

(आ) साधारण प्रदेशः—जमशेदपुर, अहमदाबाद, कानपुर, बंगलौर, दिल्ली और मद्रास द्वितीय श्रेणी के औद्योगिक प्रदेश हैं। जमशेदपुर में लोहे के कारखाने हैं। अहमदाबाद का मुख्य उद्योग सूती वस्त्र व्यवसाय है। कानपुर में वस्त्र व्यवसाय एवं शक्कर और चमड़े का सामान बनता है। यह औद्योगिक प्रदेश के साथ साथ व्यापारिक केन्द्र भी है। बंगलौर में हवाई जहाजों का निर्माण होता है। वहीं पर सूती, ऊनी और रेशमी वस्त्र बनाने के कारखाने हैं। मद्रास में सूती और ऊनी वस्त्र तैयार होता है। निकट ही रेल के डिब्बे बनाने का बड़ा कारखाना है।

प्रश्न

१. औद्योगिक प्रदेश किसे कहते हैं?
२. भारत के प्रमुख औद्योगिक प्रदेश कौन कौन से हैं?
३. हुगली प्रदेश में कौन कौन से उद्योग हैं?
४. बम्बई में वस्त्र व्यवसाय की स्थापना क्यों हुई।
५. बंगलौर और कानपुर के कौन कौन से व्यवसाय प्रसिद्ध हैं?

अध्याय १८

कुटीर उद्योग

पिछले अध्यायों में उन उद्योगों का वर्णन किया गया है जो बड़े पैमाने पर चलते हैं। बड़े बड़े कारखानों में बहुत से मनुष्य भीमकाय मशीनों से अधिक वस्तुएँ तैयार करते हैं। परन्तु हमारे देश भारत की अवस्था को देखते हुए यहाँ पर केवल बड़े उद्योग-धन्धों का ही विकास करना उचित नहीं है। भारत गांवों का देश है, ग्रामीणों की क्रय-शक्ति भी अधिक नहीं है, छोटी-मोटी वस्तुएँ बनाने के लिए गांव वालों को समय भी पर्याप्त मिल जाता है। इन्हीं सब कारणों से हमारे देश में लघु एवं कुटीर व्यवसाय अथवा ग्रामोद्योग विशेष महत्व का स्थान रखते हैं।

प्राचीन काल में हमारे यहाँ के कुटीर उद्योग बहुत प्रसिद्ध थे। ग्रामोद्योग के रूप में तैयार की हुई मलमल तथा अन्य प्रकार का कपड़ा पर्याप्त मात्रा में विदेशों को निर्यात किया जाता था। लोहे के औजार तथा अन्य वस्तुएँ बहुत सुन्दर बनती थीं। लकड़ी की खुदाई का काम अच्छा होता था। जरी तथा सलमे सितारे का काम जगत्प्रसिद्ध था। यहाँ के शासक ऐसे उद्योगों में विशेष रुचि रखते थे। परन्तु धीरे धीरे कुटीर धन्धों की अवस्था गिरने लगी। पिछली शताब्दी के अंतिम दिनों तो हमारे यहाँ के कुटीर धन्धों की बड़ी हीन अवस्था हो गई।

भारतीय कुटीर उद्योगों की हीन अवस्था के कई कारण हैं:—

(१) मशीनों से बना हुआ माल सस्ता पड़ता है। वह देखने में भी सुन्दर लगता है। इसीलिए लोग मशीन के बने हुए माल को अधिक खरीदते हैं।

(२) जैसा कि ऊपर बताया गया है, पहले भारतीय शासक अर्थात् राजा-नवाब हाथ से बनी हुई कारीगरी की वस्तुओं को बहुत पसन्द करते थे। उनका शासन समाप्त हो जाने पर छोटे व्यवसायों को बड़ा धक्का पहुँचा।

(३) ब्रिटिश शासन की आर्थिक एवं औद्योगिक नीति हमारे देश के कुटीर उद्योगों के लिए घातक सिद्ध हुई। अंग्रेजी सरकार ने इंग्लैंड में बने हुए माल को बेचने के लिए भारत को अपना बाजार बनाया। फलस्वरूप हर संभव उपाय से हमारे कुटीर उद्योगों को नष्ट किया गया और हमारे यहाँ विदेशी वस्तुएँ बिकने लगी।

(४) इंग्लैंड के अतिरिक्त भारत में अन्य विदेशी राष्ट्रों से भी कई प्रकार की वस्तुएँ आने लगी, जिनकी तुलना में हमारे यहाँ बनी हुई व तुएँ टिक न सकीं।

(५) यातायात के सुगम साधन अन्य दिशाओं में तो सहायक सिद्ध हुए परन्तु कुटीर उद्योगों पर उनका प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। उनके द्वारा विदेशी वस्तुएँ सब जगह पहुँचने लगीं।

(६) कारीगरों की आर्थिक अवस्था बुरी है। अपने छोटे-मोटे यंत्र खरीदने के लिये उनके पास धन नहीं है। कच्चा माल भी उन्हें सुगमता से प्राप्त नहीं होता।

(७) कुटीर उद्योग के रूप में बने हुए माल की बिक्री का भी सुप्रबन्ध नहीं है। उनकी बिक्री बहुत दिनों बाद होती है अतः कारीगर को समय पर रकम नहीं मिलती। वह निराश हो जाता है।

(८) कारीगरों के लड़के गाँव में धन्धा न होने से नगरों में जा बसते है। वहाँ वे नौकरी करने लगते हैं और इस प्रकार अपने पैतृक व्यवसाय को सदा के लिए छोड़ देते हैं।

(९) कारीगरों के पास पुराने तरीके के यंत्र हैं। अशिक्षित होने के कारण वे नए यंत्रों की उपयोगिता नहीं समझते हैं। गाँवों में बिजली की कमी के कारण नवीन प्रकार के यंत्रों का उपयोग भी नहीं किया जा सकता। पुराने यंत्रों से माल का उत्पादन कम होता है।

(१०) सैकड़ों वर्षों की विदेशी हुकूमत के कारण हमारे यहाँ राष्ट्रीय भावना कम रह गई। अपने यहाँ पर बनी हुई वस्तुओं के खरीदने में लोग कम रुचि लेने लगे। ऐसी भावना से कुटीर उद्योगों के विकास पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ा।

यह सब कुछ होने पर भी भारतीय कुटीर-उद्योगों का अस्तित्व नहीं मिटा। कई उद्योग तो आज भी अच्छी अवस्था में हैं। इसके कारण हैं:—

(१) देश के अधिकांश निवासी खेती करते हैं और गाँवों में रहते हैं। मानसून समाप्त हो जाने पर वे खेती के काम से निवृत हो जाते हैं। अवकाश के समय अपनी आमदनी बढ़ाने के लिए वे कुछ वस्तुएँ निर्मित करते रहते हैं।

(२) भारतवासी अपना घर छोड़कर बाहर जाना कम पसन्द करते हैं। अपने गाँव में ही जो कुछ व्यवसाय उन्हें मिल जाय उसी से वे संतुष्ट रहते हैं। इस अवस्था में वे घरेलू धन्धे ही करते हैं।

(३) बेरोजगारी के कारण भी गांवों के निवासी अन्य धन्धा न मिलने पर छोटी-मोटी वस्तुएँ बनाकर अपना गुजारा करते हैं।

(४) कुछ ऐसी वस्तुएँ भी होती हैं जो बड़े-बड़े कारखानों में नहीं बन सकतीं। उनके लिए हाथ की कला ही काम देती है।

(५) कुटीर उद्योगों के चलाने में कम पूँजी लगानी पड़ती है। अतः जिसके पास थोड़ा धन हो वे भी इन व्यवसायों को चला सकते हैं।

(६) जाति-प्रथा ने कुटीर व्यवसायों के पनपने में विशेष योग दिया। बहुत से उद्योग जातियों के विभाजन पर ही निर्भर हैं।

(७) महात्मा गाँधी के स्वदेशी आन्दोलन ने हमारे कुटीर उद्योगों में नया जीवन फूँक दिया।

कुटीर उद्योगों का वर्गीकरण

उपयोगिता तथा काम में आने वाले कच्चे माल के आधार पर हमारे यहाँ के कुटीर उद्योग निम्नलिखित वर्गों में बांटे जा सकते हैं:—

(१) वस्त्र उद्योगः—इसके अन्तर्गत सूत की कताई, करघे से कपड़े की बुनाई, कपड़े की रंगाई तथा छपाई हैं। ऊनी, सूती और रेशमी तीन प्रकार का वस्त्र हमारे यहाँ तैयार होता है।

(२) पशु-पालन तथा तत्सम्बन्धी धन्धेः--दुग्ध व्यवसाय, घी तैयार करना, जानवरों का चमड़ा कमाना, चमड़े से जूते तथा अन्य सामान बनाना आदि इस धन्धे में गिने जाते हैं।

(३) वनों के उत्पादन पर आधारित धन्धेः—फर्नीचर बनाना, लकड़ी के खिलौने तथा अन्य सामान बनाना, गाड़ी बनाना आदि ऐसे धन्धे हैं।

(४) धातु सम्बन्धी व्यवसायः—लोहे का सामान बनाना, ढलाई का काम करना, पीतल, तांबा आदि के बर्तन बनाना तथा सोने और चाँदी के आभूषण बनाना इस श्रेणी में गिने जाते हैं।

(५) पत्थर का कामः—मकान बनान, पत्थर की खुदाई और जड़ाई, मूर्ति-निर्माण आदि ऐसे धन्धे हैं।

(६) मिट्टी सम्बन्धी कामः—मिट्टी के बर्तन, ईंटें, खिलौने आदि बनाना इस श्रेणी में आते हैं।

(७) खाद्य सम्बन्धी धन्धेः—इनमें आटा पीसना, दालें तैयार करना, गुड़ बनाना आदि हैं।

(८) औजार तथा यन्त्र बनानाः—खेती में काम आने वाले यन्त्र तथा हल, फावड़ा, कुदाली आदि बनाना, चाकू, कैंची आदि तैयार करना इस श्रेणी में हैं।

(९) व्यापारिक वस्तुएँ तैयार करनाः—साबुन बनाना, तेल तैयार करना, बीड़ी सिगरेट बनाना, नमक तैयार करना, कागज बनाना आदि ऐसे अनेक उद्योग हैं।

(१०) अन्य उद्योगः—इस श्रेणी में शेष बचे हुए सभी उद्योग लिए जा सकते हैं जैसे हाथी दाँत की वस्तुएँ, मधुमक्खी-पालन आदि।

इस प्रकार हमारे यहाँ कई प्रकार के कुटीर उद्योग हैं। इनसे अनेक मनुष्यों का गुजारा होता है। नीचे भारत के कुछ मुख्य कुटीर उद्योगों का संक्षिप्त वर्णन किया जाता है।

मुख्य कुटीर धन्धे

(अ) हाथ करघा उद्योग:—यह व्यवसाय हमारे यहाँ बहुत प्राचीन काल से प्रचलित है। करघे से कई प्रकार का सुन्दर वस्त्र तैयार किया जाता है। 'सूती वस्त्र जाँच समिति' के

अनुसार हमारे देश मे १२ लाख हाथ के कर्घे हैं जिन पर लगभग १५ लाख बुनकर काम करते हैं। इन कर्घों से लगभग डेढ अरब गज कपड़ा प्रति वर्ष तैयार किया जाता है।

भारत के विभिन्न भागों में हाथ कर्घों से वस्त्र तैयार किए जाते हैं। गुजरात का पटोला, मदुरा की साड़ियाँ तथा मणिपुर और उड़ीसा का वस्त्र विशेष रूप से प्रसिद्ध है।

(आ) होजियरी उद्योगः—छोटी छोटी मशीनों से बनियान, मौजे, मफलर, टोपियाँ आदि तैयार की जाती हैं। ये सूत, ऊन तथा रेशम से तैयार की जाती है। बंगाल तथा उत्तर-प्रदेश राज्यों में यह व्यवसाय बहुत अच्छी अवस्था में है। अनुमानतः उन दोनों राज्यों में साल में लगभग ८० लाख रुपये का माल तैयार किया जाता है। बम्बई तथा मद्रास में भी होजियरी का सामान बनता है।

(इ) लकड़ी का कामः—गाँवों में लकड़ी से अनेक वस्तुएँ बनाते हैं। वहाँ पर वे खेती के साथ-साथ लकड़ी व्यवसाय भी करते हैं। परन्तु बड़े-बड़े नगरों में यह कार्य स्वतन्त्र रूप से किया जाता है। लकड़ी की मेज, कुर्सी, आलमारी, पलङ्ग, खिलौने और विभिन्न प्रकार की वस्तुएँ बनाई जाती हैं। उत्तर-प्रदेश के सहारनपुर नगर में लकड़ी का काम अच्छा होता है। बरेली का फर्नीचर प्रसिद्ध है। मैसूर में चन्दन की लकड़ी पर खुदाई का काम अच्छा होता है। श्रीनगर में भी लकड़ी की खुदाई सुन्दर होती है।

(ई) धातु सम्बन्धी व्यवसायः—इस उद्योग में धातुओं से सम्बन्धित कई प्रकार की वस्तुएँ तैयार होती हैं। लोहे की उपयोगी वस्तुएँ तो प्रायः सभी जगह बनाते हैं। बर्तनों पर नकाशी का काम जयपुर, मुरादाबाद, बनारस आदि में अच्छा होता है। राजस्थान में धनी लोग सोने के गहने बनवाते हैं। वहाँ के सोनार इस काम में बड़े निपुण हैं।

(उ) तेल पेरनाः—हमारे यहाँ तिल, सरसों, रेंडी, मूँगफली आदि विभिन्न प्रकार की तिलहन पाई जाती है। इनसे तेल निकालते हैं। गाँवों में कोल्हू से तेल निकालते हैं। नगरों में तेल निकालने की छोटी मिलें भी हैं। हमारे यहाँ लगभग चार लाख कोल्हू या घानियाँ हैं जिनमें प्रति वर्ष लगभग दस लाख टन तेल निकाला जाता है। इस प्रकार तेल पेरने के उद्योग से बहुत से लोगों का निर्वाह हो जाता है। तेल निकालने के पश्चात् बची हुई खली पशुओं को खिलाते हैं। यह उत्तम खाद भी होती है जिसको खेत में देने से उत्पादन-शक्ति कई गुना बढ़ जाती है।

(ऊ) चमड़े का सामानः—चमड़े से सामान बनाने के बड़े कारखानों का वर्णन पिछले अध्याय में किया जा चुका है। उनके अतिरिक्त गाँवों में जूता बनाने का धन्धा बहुत प्रचलित है। कुएँ से पानी निकालने का चरस, घोड़े की काठियाँ, आदि उनके लिए उपयोगी वस्तुएँ घरेलू धन्धों के रूप में तैयार की जाती हैं।

(ए) हाथी दाँत का कामः—हाथी दाँत पर खुदाई करना तथा हाथी दाँत की कई सुन्दर वस्तुएँ बनाने का काम होता है। ऐसी वस्तुओं के लिए राजस्थान, मैसूर, आंध्र प्रदेश, केरल, दिल्ली, बंगाल आदि प्रसिद्ध हैं।

जैसा कि पहले बताया जा चुका है भारत जैसे कृषि-प्रधान राष्ट्र में कुटीर उद्योगों का महत्व है। इस प्रकार के उद्योगों को हर प्रकार से प्रोत्साहन देना चाहिए। कुटीर-व्यवसाय की उन्नति के लिए निम्नलिखित उपाय करने चाहिये:—

(१) गाँवों में काम करने वाले कारीगरों को उत्तम कोटि का कच्चा माल सस्ते भाव से दिलाने का प्रबन्ध किया जाय।

(२) ग्रामोद्योगों में काम आने वाले औजार बहुत पुराने ढंग के हैं। उनसे उत्पादन कम होता है। यदि कारीगरों को नवीन प्रकार के औजार दिये जाएँ तो काम भी सुविधा से होगा और उत्पादन भी अच्छा होगा।

(३) बनी हुई वस्तुओं को बेचने के लिये सुप्रबन्ध किया जाय, इसके लिये विक्रय-संस्थाएँ खोली जायँ।

(४) कारीगरों की आर्थिक अवस्था सुधारने का प्रयत्न किया जाय। उन्हें रुपया उधार देने के लिये सहकारी-संस्थाएँ अधिक से अधिक संख्या में खोली जायँ।

(५) अधिक उत्पादन के लिए छोटे कारखानों में बिजली का प्रयोग करने की आवश्यकता है। गाँवों में सस्ती बिजली पहुँचाई जाय।

(६) कारीगर तथा उनके बच्चों को उद्योग-सम्बन्धी शिक्षा देने का प्रबन्ध किया जाय।

(७) नगरों में स्थापित बड़े बड़े कारखानों में उत्पादित माल की प्रतियोगिता से बचने के लिए कुटीर उद्योगों को सरकार की ओर से संरक्षण दिया जाय।

(८) गाँवों में बने माल को बिक्री के स्थान पर पहुँचाने के लिए सस्ते यातायात के साधन हों। रेल किराया कम कर दिया जाय।

(९) कुटीर उद्योगों के रूप में तैयार किये हुए माल और बड़े कारखानों में उत्पादित माल में समन्वय स्थापित किया जाय। उदाहरण के लिए कपड़े की कताई का काम घरेलू धन्धों के रूप में की जाय और उसकी बुनाई बड़े कारखानों में की जा सकती है। ऐसा करने से बेकारी दूर होगी।

(१०) गाँवों में बनी हुई वस्तुओं के प्रयोग करने की ओर लोगों में रुचि उत्पन्न की जाय। विज्ञापन का प्रसार किया जाय और कुटीर व्यवसाय के रूप में बनी हुई वस्तुओं की बिक्री के प्रसार के लिये प्रदर्शनियों का आयोजन किया जाय।

हमारी राष्ट्रीय सरकार कुटीर उद्योगों की उन्नति करने के लिये प्रयत्नशील है। इसके लिये सरकार ने कई योजनाएँ बनाई हैं।

योजना और कुटीर उद्योग

गृह तथा कुटीर उद्योगों के विकास के लिये योजना-आयोग ने निम्नलिखित सुझाव रखे हैं:—

(१) कुटीर उद्योग और बड़े पैमाने के उद्योगों के क्षेत्रों का निर्धारण किया जाय।

(२) बड़े उद्योगों पर कर अधिक लगाया जाय और इस प्रकार से प्राप्त की हुई रकम को कुटीर उद्योगों के विकास में लगाया जाय।

(३) बड़े उद्योगों के साथ कुटीर उद्योगों को भी प्रोत्साहन दिया जाय।

(४) गृह उद्योगों के लिये कच्चे माल की पूर्ति की जाय।

(५) छोटे तथा बड़े उद्योगों के बीच अन्वेषण-सम्बन्धी कार्यों में सहयोग होना चाहिये।

द्वितीय योजना काल में गृह उद्योग और छोटे पैमाने पर चलने वाले उद्योगों के विकास में केन्द्रीय सरकार ने पर्याप्त रकम निर्धारित की है।

कुटीर उद्योगों की उन्नति के लिये निम्नलिखित संस्थाएँ खोली गई हैं:—

(अ) अखिल भारतीय कर्घा संघ (All India Handloom Board):— यह संस्था अक्टूबर सन् १९५२ में खोली गई। इसके द्वारा कर्घा व्यवसाय की उन्नति की जा रही है। हाथ से बने माल की बिक्री का सुप्रबन्ध किया जा रहा है। ऐसा माल खरीदने के लिए सुविधाएँ भी दी जा रही हैं।

(आ) अखिल भारतीय खादी और ग्रामोद्योग बोर्ड (All India Village Industries Board):— इसकी स्थापना जनवरी सन् १९५३ में हुई। इस बोर्ड के द्वारा खादी तथा ग्रामोद्योग के विकास की ओर प्रयत्न किया जा रहा है। उनके लिए औजार देना, बिक्री का प्रबन्ध करना, उद्योग सम्बन्धी समस्याओं को हल करना आदि हैं। पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत लिए हुए निम्न उद्योगों को इस बोर्ड द्वारा सहायता दी जायगी—(१) नीम का साबुन बनाना, (२) हाथ का कागज, (३) चमड़े का सामान बनाना, (४) चावल के छिलकों सम्बन्धी उद्योग, (५) खादी, (६) मधुमक्खी पालन, (७) गुड़ और खंडसारी, (८) दियासलाई, (९) ताड़ी का गुड़, (१०) घानी का तेल और (११) ऊनी वस्त्र बनाना।

इस योजना को सफल बनाने के लिए सरकार ने १४ लाख रुपये दिये हैं। राज्य सरकारों द्वारा भी ऐसे कई उद्योगों को सहायता दी जायगी यथा काँच का सामान, खेल का सामान, लोहे की वस्तुएँ आदि।

(इ) अखिल भारतीय हैंडीक्राफ्ट बोर्ड (All India Handicrafts Board):—इस बोर्ड की स्थापना नवम्बर सन् १९५२ में हुई। इसके द्वारा हाथ की कारीगरी सम्बन्धी व्यवसायों को प्रोत्साहन देना है। कारीगरों को रकम तथा आधुनिक ढंग के औजार दिये जाते हैं। निर्मित वस्तुओं की बिक्री का प्रबन्ध किया जाता है। प्रारम्भ में चार उद्योगों के विकास की ओर विशेष ध्यान दिया गया (१) मिट्टी के बर्तन, (२) खिलौने, (३) चटाई बनाना और (४) छपाई का काम करना।

(ड) लघु उद्योग बोर्ड (Small Scale Industries Board):—इसके द्वारा छोटे उद्योगों को सहायता दी जाती है।

(च) कोयर बोर्ड (Coir Board):—नारियल की जटा से बनाई हुई वस्तुओं को प्रोत्साहन देते हैं।

(ऊ) रेशम बोर्ड (Silk Board):—रेशमी वस्तुएँ तैयार करने के लिए स्थापित किया गया है।

कुटीर उद्योगों की बिक्री विदेशों में हो इसके लिए भी सरकार ने कई योजनाएँ बनाई हैं—रंगून, कोलम्बो, करांची, सिंगापुर, चटगाँव, अदन और बैंगकोक में सात विक्रय-केन्द्र खोले गये हैं। विदेशों में भारतीय कुटीर उद्योग के रूप में बनी हुई वस्तुओं के विज्ञापन के लिए प्रदर्शन-गृह खोले गए हैं।

सारांश

कृषि-प्रधान देश होने के कारण भारत के कुटीर उद्योगों का बड़ा महत्व है। राजा नवाबों ने इन उद्योगों को प्रोत्साहन दिया। अंग्रेजों के समय में इन उद्योगों की हीन दशा हो गई। फिर भी किसी न किसी रूप में ये उद्योग चलते ही रहे। हमारी राष्ट्रीय सरकार इन धन्धों के विकास में विशेष रूप से प्रयत्नशील है। उनकी बिक्री के लिए प्रबन्ध किया जा रहा है। उनके लिए कच्चा माल देने का भी प्रबन्ध किया गया है। पंचवर्षीय योजना में ऐसे उद्योगों के विकास के लिए सुझाव दिये गये हैं। सरकार ने भी इन उद्योगों की उन्नति के लिए कई संस्थाओं की स्थापना की है। विदेशों में भी विक्रय केन्द्र खोले गये हैं।

प्रश्न

१. हमारे यहाँ पर कुटीर उद्योगों का अधिक महत्व क्यों है ?
२. भारतीय कुटीर उद्योगों को कितने विभागों में बांट सकते हैं ?
३. हमारे यहाँ के प्रमुख कुटीर धन्धे कौन से हैं ?
४. पंचवर्षीय योजना ने कुटीर उद्योगों के विकास के लिए क्या सुझाव दिये हैं ?
५. भारत सरकार गृह उद्योगों की उन्नति किस प्रकार कर रही है ?

अध्याय १६

मनुष्य, भाषा और जन-संख्या

हमारे भारत में कई विशेषताएँ हैं। देश का विस्तार अधिक होने से देश के विभिन्न राज्यों में रहने वाले लोगों के शरीर की बनावट में भिन्नता है। लोगों के रंग में भी विषमता है। इस प्रकार के अन्तर का मुख्य कारण देश के अलग अलग भागों के जलवायु में समानता न होना है। दूसरी विशेषता देश के निवासियों की यह है कि यहाँ के लोग कई धर्मों के अनुयायी हैं। धर्म-पालन में हमारे देश-वासियों को पूर्ण स्वतन्त्रता है। धर्मों में भी विभिन्नता होने से लोगों के रहन-सहन, रीति-रिवाज तथा त्यौहारों में भी विभिन्नता है। जलवायु के अनुसार देश में कृषि की उपज भी कई प्रकार की होती है। इसलिये लोगों का मुख्य भोजन भी एक-सा नहीं है। लोगों की वेश-भूषा भी एक नहीं है। देश के अलग अलग भागों में जलवायु के अनुकूल ही लोग कपड़े पहनते हैं। देश में बोली जाने वाली भाषाएँ भी अनेक हैं।

इस प्रकार भारत एक निराला देश है। ऊपर बताई हुई विभिन्नताएँ होने पर भी हमारे यहाँ सबसे बड़ी विशेषता यह है कि सब लोग मिल-जुल कर रहते हैं। विश्व के कुल निवासियों की संख्या का लगभग पाँचवाँ भाग इसी देश में है। यहाँ इतने अधिक मनुष्य होने के कारण ही आज संसार के सभी देशों का ध्यान हमारी ओर आकर्षित हो रहा है।

आगे के पृष्ठों में भारत के मनुष्य, धर्म और यहाँ की जन-संख्या के वितरण का वर्णन किया जाता है।

१. मनुष्य

भारत विश्व के सबसे प्राचीन देशों में से है। इसी कारण यहाँ का इतिहास बहुत पुराना है। देश के सर्व-सम्पन्न होने के कारण यहाँ विदेशियों के कई आक्रमण हुए। बाहर से आये हुये लोग यहीं पर आकर बसने गये। यही कारण है कि यहाँ पर अब जातियों का इतना अधिक मिश्रण हो गया है कि यहाँ के निवासियों की मूल जाति का पता लगाना बहुत कठिन है।

सबसे पहले जो लोग यहाँ रहते थे उनको हम पूर्व-द्राविड़ लोग कह सकते हैं। वे बड़े असभ्य थे। बाद में द्राविड़ लोगों ने देश पर आक्रमण किया। उन्होंने आदि निवासियों को हरा कर उन्हें पहाड़ों तथा वनों में मार भगाया। इसी कारण आज पूर्व-द्राविड़ लोग देश में बहुत ही कम स्थानों में पाये जाते हैं। वे लोग भारत से बाहर लंका तथा दक्षिणी-पूर्वी आस्ट्रेलिया तक पहुँच गये। द्राविड़ लोग आजकल दक्षिणी भारत में अधिक मिलते हैं। उत्तरी

भारत में रहने वाले लोग अधिकांश आर्य जाति के हैं। ये लोग भारत में मध्य एशिया से आये। उन्होंने ही द्राविड़ लोगों से युद्ध कर उन्हें दक्षिण की ओर भेज दिया। सतपुड़ा पर्वत श्रेणी आर्य तथा द्राविड़ लोगों के बीच की सीमा मानी जा सकती है। भारत के उत्तरी पहाड़ी भाग के लोग विशेषतः नेपाल, भूटान तथा आसाम के निवासी मंगोल जाति के गिने जाते हैं। आकार में वे तिब्बत तथा चीन के निवासियों से मिलते-जुलते हैं।

इस प्रकार भारत में जातियों का अधिक मिश्रण होने से मूल जाति का पता लगाना इतना कठिन हो गया है कि आजकल यहाँ जातियों का वर्गीकरण उनके धर्म अथवा भाषा के अनुसार किया जाता है।

२. धर्म

भारत में भिन्न भिन्न धर्मों के अनुयायी पाये जाते हैं। प्राचीन काल से ही भारतवासी धर्म के सम्बन्ध में अत्यन्त उदार रहे हैं। अतः यहाँ सब अपनी इच्छानुसार अपने धर्मों का पालन करते हैं। यहाँ के मुख्य धर्म निम्नलिखित हैः—

१. हिन्दूः—यह संसार का बहुत पुराना धर्म माना जाता है। प्राचीन काल से ही इसमें अनेक परिवर्तन हुये। प्रारम्भ में गुणों और कर्मों के अनुसार यह चार वर्णों—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र—में बँटा हुआ था। आज इसमें अनेक जातियाँ और उप-जातियाँ बन गई हैं। प्रत्येक जाति जन्म से ही मानी जाती है। विश्वास के सम्बन्ध में यह धर्म उदार है। यदि मनुष्य कुछ विशेष प्रथाओं के अनुसार चलता हो तो वह हिन्दू है चाहे उसका विश्वास कैसा ही हो। व्यावहारिक दृष्टि से प्रत्येक हिन्दू आत्मा की अमरता में विश्वास रखता है। हमारे देश के अधिकांश निवासी हिन्दू धर्म को मानते हैं।

२. इस्लामः—भारत में इस्लाम के अनुयायियों की संख्या ४ करोड़ के लगभग है। पाँच करोड़ मुसलमान पाकिस्तान के नागरिक हो गये हैं। इस धर्म को मानने वाले हजरत मुहम्मद साहब को ईश्वर का पैगम्बर (दूत) मानते हैं। इस धर्म की दो शाखायें हैं—(१) सुन्नी और (२) शिया। सुन्नी लोग पैगम्बर के बाद चारों खलीफों को पैगम्बर के उत्तराधिकारी मानते हैं। शिया केवल अली को ही खलीफा स्वीकार करते हैं। जिन राज्यों में मुसलमानों की अधिक संख्या थी वे प्रायः सभी अब पाकिस्तान में हैं।

३. अनीमीः—दक्षिणी प्रायद्वीप के गोंड, भील, कोल, संथाल आदि जंगली जातियाँ इस धर्म को मानती हैं। ये लोग प्रकृति के उपासक हैं तथा अचेतन पदार्थों में भी दैवी शक्ति मानकर उसकी उपासना करते हैं। कुछ लोग इन्हें हिन्दू, कुछ लोग इन्हें ईसाई और मुसलमान बनाने का प्रयत्न कर रहे हैं। वास्तव में इन लोगों के विश्वास हिन्दू धर्म के विश्वासों से ही अधिक मिलते-जुलते हैं।

४. ईसाई—सोलहवीं शताब्दी से ईसाई मिशनरी भारत में आने लगे। पुर्तगाल-वासियों के प्रयत्न से पहिले दक्षिणी प्रायद्वीप में ईसाई धर्म फैला। वहाँ अधिकतर ईसाई रोमन

कैथोलिक हैं। अठारहवीं शताब्दी के मध्य में प्रोटेस्टेंट धर्म को मानने वाले लोग भी बढ़ने लगे। उत्तरी भारत में ये लोग अधिक हैं।

५. सिक्खः—इस धर्म के प्रवर्त्तक गुरु नानक थे। उनके धार्मिक ग्रन्थ 'ग्रन्थ साहब' में एक ईश्वर और मनुष्य मात्र में भ्रातृत्व-भावना का आदेश है। कंघा, केश, कड़ा, कच्छा और कृपाण सिक्खों के बाह्य चिन्ह हैं। इस मत के मानने वाले अधिकतर पंजाब में हैं।

इन धर्मों के अतिरिक्त फारसी, यहूदी, जैनी और बौद्ध धर्म के अनुयायी भी यहाँ रहते हैं किन्तु उनकी संख्या कम है।

सन् १९५१ की जन-गणना के अनुसार भारत में विभिन्न धर्मों को मानने वाले मनुष्यों की संख्या इस प्रकार है:—

क्रम संख्या	नाम धर्म	संख्या (लाख में)	दस हजार पीछे
१	हिन्दू	३,०३२	८,४९९
२	इस्लाम	३५४	९९३
३	इसाई	८२	२३०
४	सिक्ख	६२	१७४
५	आदिवासियों का धर्म	१७	४७
६	जैन	१६	४५
७	बौद्ध	२	६
८	जोरोस्ट्रियन	१	३
९	अन्य धर्म	१	३
	कुल योग....	३,५६७	१०,०००

२. भाषाएँ

जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है, हमारा देश भारत बहुत विशाल है। राष्ट्र के विभिन्न भागों में लोग कई प्रकार की भाषाएँ बोलते हैं। भारत में कुल मिलाकर १५० से भी अधिक भाषाएँ बोली जाती हैं, परन्तु प्रमुख भाषाएँ १४ हैं जिन्हें हम चार भागों में बाँट सकते हैं:—

(१) आर्य भाषाएँ:—प्रारम्भ में आर्यों की भाषा संस्कृत थी। धीरे-धीरे देश के भिन्न भिन्न भागों में इसके कई रूप हो गये। उत्तरी भारत के अधिकांश लोग आर्य भाषाएँ ही बोलते हैं। इन भाषाओं के बोले जाने वाले क्षेत्र का विस्तार अधिक होने के कारण इन्हें हम उप-भागों में बाँट सकते हैं:—

(अ) उत्तरी विभागः—इनमें पहाड़ी भाषाएँ सम्मिलित हैं—जैसे नेपाली, गढ़वाली आदि, (आ) पूर्वी विभाग—यहाँ की मुख्य भाषाएँ ये हैं—आसामी, बंगला, बिहारी और उड़िया, (इ) मध्य पूर्वी विभाग—जहाँ की मुख्य भाषा पूर्वी हिन्दी और अवधी है। यह पश्चिमी बिहार और पूर्वी उत्तर प्रदेश में बोली जाती है, (ई) मध्य विभाग—इसमें खड़ी

बोली, उर्दू, राजस्थानी और गुजराती मुख्य हैं, (उ) उत्तरी पश्चिमी विभाग—इसमें पंजाबी और सिन्धी मुख्य हैं और (ऊ) दक्षिणी विभाग—यहाँ की मुख्य भाषा मराठी है।

(२) द्राविड़ भाषाएँ:—इन भाषाओं की संख्या दस से भी अधिक हैं लेकिन मुख्य ये हैं—तामिल, तेलगू, कनारी, मलयालम, तूलू आदि। प्रायद्वीपी भारत के अधिकांश भाग में ये ही भाषाएँ बोली जाती हैं।

(३) कोल भाषाएँ:—भारत के आदि निवासी भील, कोल, संथाल आदि इन भाषाओं को बोलते हैं। उनको बोलने वाले अशिक्षित होने के कारण इन भाषाओं का साहित्य प्राप्त नहीं है।

(४) हिन्दी चीनी भाषाएँ:—ये भाषाएँ भारत के उत्तरी पहाड़ी भाग में रहने वाले मंगोल जाति के लोग बोलते हैं। नैपाल, भूटान और आसाम के पर्वतीय भागों में ये भाषाएँ प्रयुक्त होती हैं।

भारत की राष्ट्र-भाषा:—देश को स्वतन्त्रता मिलने के पश्चात् कई दिन तक इस बात पर विचार किया गया है कि देश की राष्ट्रभाषा क्या हो? लोगों ने अपने भिन्न-भिन्न मत प्रकट किये। अन्त में यह निश्चय हो गया है कि हिन्दी ही ऐसी भाषा है जिसको देश के अधिकांश लोग बोलते हैं। यह भाषा सरल भी है अतः इसके सीखने में भी असुविधा नहीं है। इसी आधार पर भारत सरकार ने घोषित कर दिया है कि हिन्दी ही देश की राष्ट्रभाषा रहेगी। सरकारी कार्यों में भी अब हिन्दी का प्रयोग होने लगा है। विश्व-विद्यालयों में भी शिक्षा का माध्यम हिन्दी रखने पर जोर दिया जा रहा है।

भारत में विभिन्न भाषाएँ बोलने वाले मनुष्यों की संख्या इस प्रकार है:—

क्र० सं०	नाम भाषा	बोलने वालों की संख्या (लाख में)
१	हिन्दी	७६०
२	बंगला	५४०
३	तेलगू	२६०
४	मराठी	२१०
५	तामिली	२००
६	पंजाबी	१६०
७	राजस्थानी	१४०
८	कनारी	१२०
९	उड़िया	१००
१०	गुजराती	१००
११	मलयालम्	१००
१२	सिंधी	४०
१३	आसामी	२०
१४	काश्मीरी	१५

४. जन-संख्या

सन् १६५१ की जन-गणना के अनुसार भारत में ३५,६८,२६,४८५ मनुष्य थे। उससे पहले की जन-गणना सन् १६४१ में हुई जिसके अनुसार भारत की जन-संख्या ३१,४७,६६,३८० थी। इस प्रकार दस वर्षों में १२.५% मनुष्य बढ़ गए। पिछले ५० वर्षों में जन-संख्या दूनी हो गई।

पिछली जन-गणना के अनुसार भारत के विभिन्न प्रदेशों की जन-संख्या का विवरण इस प्रकार है :—

क्रम संख्या	प्रदेश	कुल आबादी	कुल जन-संख्या का प्रतिशत
१	हिमालय प्रदेश	१,७०,४२,६६७	८.४
२	उत्तरी मैदान	१२,६३,६८,०४३	३६.१
३	प्रायद्वीपीय पठारी और पहाड़ी भाग	१०,६८,८५,६४५	३०.४
४	पश्चिमी घाट और तटीय प्रदेश	३,६६,२६,७६३	११.२
५	पूर्वी घाट और तटीय प्रदेश	५,१८,२३,३३६	१४.५
६	अण्डमान-नीकोबार द्वीपसमूह	३०,६७१	—
	कुल योग	३५,६८,२६,४८५	१००.०

इस प्रकार भारत के उत्तरी मैदान में सबसे अधिक मनुष्य रहते हैं। वहाँ पर खेती के लिये सुविधा है। हिमालय प्रदेश पहाड़ी होने के कारण वहाँ पर भारत की कुल आबादी का ८.४% ही है। लोगों को जीवन-निर्वाह के लिये सुविधा कम होने के कारण ही हिमालय प्रदेश में कम मनुष्य रहते हैं।

राज्यों के अनुसार उत्तर प्रदेश की जन-संख्या सबसे अधिक है। वहाँ ६,३२,५०,७४२ मनुष्य रहते हैं। सबसे कम मनुष्य अण्डमान और नीकोबार द्वीप समूह में रहते हैं। वहाँ की जन-संख्या ३०,६७१ ही है।

स्त्री और पुरुषों के अनुसार जन-संख्या

हमारे यहाँ की ३५,६८,२६,४८५ जन-संख्या में १८,३३,०५,६५४ आदमी हैं और १७,३५,२३,८३१ स्त्रियाँ हैं। इस प्रकार १,००० पुरुषों के पीछे ६४७ स्त्रियाँ हैं। मद्रास, आंध्र, उड़ीसा, ट्रावनकोर-कोचीन, मनीपुर और कच्छ को छोड़ कर अन्य राज्यों में स्त्रियों की तुलना में पुरुषों की संख्या अधिक है।

शहरी और ग्रामीण आबादी

देश की कुल आबादी का ८२.७% गाँवों में है। नगरों में तो केवल १७.३% मनुष्य

ही रहते हैं। आजकल गाँवों के लोग नगरों में जाकर बसने लगे हैं अतः शहरी आबादी दिन प्रतिदिन बढ़ती जाती है। नीचे के अंकों से यह बात स्पष्ट हो जाती है:—

सन्	ग्रामीण जनता का प्रतिशत	शहरी आबादी का प्रतिशत
१६२१........	८८.७............	११.२
१६३१........	८७.६............	१२.१
१६४१........	८६.१............	१३.६
१६५१........	८२.७............	१७.३

इस प्रकार ग्रामीण जन-संख्या में कमी हो रही है और शहरी आबादी में लगातार वृद्धि हो रही है। यह ठीक नहीं है। लोग गाँवों को छोड़कर शहरों में न जावें इसके लिये गाँवों में जीवन सम्बन्धी सुविधाएँ प्राप्त होनी चाहिये। यहाँ बिजली की व्यवस्था हो, बीमारों के इलाज का प्रबन्ध हो, सुरक्षा हो आदि। सुविधा मिलने पर लोग गाँवों में ही रहेंगे।

नगर और गाँव

एक लाख से अधिक आबादी के नगरों की संख्या भारत में ७३ है। कुल मिलाकर ३,०१८ कस्बे हैं और गाँवों की संख्या ५,५८,०८६ है। समूचे देश में ६ करोड़ ४४ लाख घर हैं जिनमें से ५ करोड़ ४१ लाख घर तो गाँवों में हैं और शेष एक करोड़ तीन लाख घर कस्बों और बड़े नगरों में हैं।

जन्म दर तथा मृत्यु दर

नीचे दिये हुये अंक भारत में प्रति हजार व्यक्तियों के पीछे जन्म दर और मृत्यु दर बताते हैं:—

सन्	जन्म दर	मृत्यु दर	मृत बच्चों की संख्या
१६४१	३२.१	२१.६	१५८
१६४२	२६.५	२१.४	१६३
१६४३	२६.१	२३.६	१६५
१६४४	२५.८	२४.५	१६६
१६४५	२७.०	२२.१	१५१
१६४६	२८.६	१८.७	१३६
१६४७	२६.६	१६.७	१४६
१६४८	२५.४	१७.१	१३०
१६४६	२६.७	१६.०	११३
१६५०	२४.८	१६.०	१२७

इन अंकों से निम्नलिखित तथ्य निकलते हैं:—

(१) प्रतिवर्ष एक हजार व्यक्तियों पीछे औसत जन्म दर ४० रही।

(२) प्रतिवर्ष एक हजार व्यक्तियों पीछे मृत्यु दर २७ रही।

(३) इस प्रकार प्रतिवर्ष एक हजार व्यक्तियों पर जन-संख्या की वृद्धि की औसत दर १३ है।

प्रवासी भारतीय जन

पिछले दो सौ वर्षों से भारत के कुछ लोग विदेशों में जाने लगे हैं। वहाँ पर वे अधिकांश रूप में खेतों में काम करते हैं। कुछ अन्यत्र भी मजदूरी करते हैं। मलाया, लंका, दक्षिणी अफ्रिका, मोरिसस, फिजी, ट्रिनीडाड, टोबेगो आदि में से प्रत्येक में एक लाख से अधिक भारतीय रहते हैं। इनके अतिरिक्त इण्डोनेशिया, यूगेन्डा, केनिया, टैंगानिका आदि में से प्रत्येक में २५ हजार से अधिक व्यक्ति रहते हैं। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका यथा यूरोप के कई राष्ट्रों में भी भारतवासी पर्याप्त संख्या में मिलते हैं।

विश्व के विभिन्न प्रदेशों में रहने वाले प्रवासी भारतीयों की संख्या लगभग चालीस लाख है।

५. जन-संख्या का घनत्व

देश के सभी स्थानों में जन-संख्या एक-सी नहीं है। कहीं पर लोग अधिक रहते हैं तो कहीं पर कम।

लोग वहीं रहना पसन्द करेंगे जहाँ उनको या तो खाने के लिए अन्न आसानी से मिल जाय या उनके पास अन्न खरीदने के लिए अच्छे साधन हों। इसीलिए कृषि-प्रधान देशों में अधिक लोग वहीं रहेंगे जहाँ उपजाऊ मैदान हों और कला कौशल में अग्रणी देशों के लोग कारखानों तथा खनिज पदार्थ वाले स्थानों के निकट रहेंगे।

भारत में घनी जन-संख्या निम्नलिखित बातों पर निर्धारित है :—

(१) **उपजाऊ व समतल भूमि:**—भारत कृषि-प्रधान देश होने से यहाँ के लगभग ४०% लोग गंगा-सिन्धु के मैदान में रहते हैं। वहाँ भूमि उपजाऊ होने तथा सिंचाई के उत्तम साधन होने के कारण खेती अच्छी होती है। काली मिट्टी वाले प्रदेश में भी खेती अच्छी होने से लोगों की आबादी अच्छी है। दक्षिणी पठार में पथरीली भूमि होने के कारण आबादी कम है।

(२) **उत्तम वर्षा:**—भारत में प्रायः तीन-चौथाई मनुष्य खेती करते हैं और खेती की उपज वर्षा पर निर्भर रहती है। इसलिये अधिक वर्षा वाले स्थानों में लोग भी अधिक रहते हैं। अच्छी वर्षा के कारण ही बंगाल में अधिक लोग रहते हैं और कम वर्षा के कारण राजस्थान की आबादी थोड़ी है।

(३) **सिंचाई के साधन:**—जहाँ वर्षा कम होती हो परन्तु जहाँ सिंचाई के साधन अच्छे हों वहाँ भी खेती अच्छी होती है। पंजाब के जिन भागों में अच्छी आबादी है वहाँ

वर्षा साल भर में २० इंच से भी कम होती है, परन्तु नहरें बन जाने से अच्छी खेती होने लगी है और उजाड़ भाग में घनी आबादी हो गई। इसी भाँति पूर्वी समुद्र तट के मैदान में महानदी, गोदावरी, कृष्णा, कावेरी आदि नदियों के डेल्टों में वर्षा कम होने पर नहरों द्वारा सिंचाई करके अच्छी खेती की जाती है।

(४) उत्तम जलवायु:—स्वास्थ्यप्रद जलवायु वाले स्थानों में ही लोग रहना पसन्द करते हैं। इसी कारण बंगाल के सुन्दर वन में दलदल होने के कारण कम लोग रहते हैं। तराई प्रदेश में भी मलेरिया उत्पादक जलवायु होने से आबादी कम है।
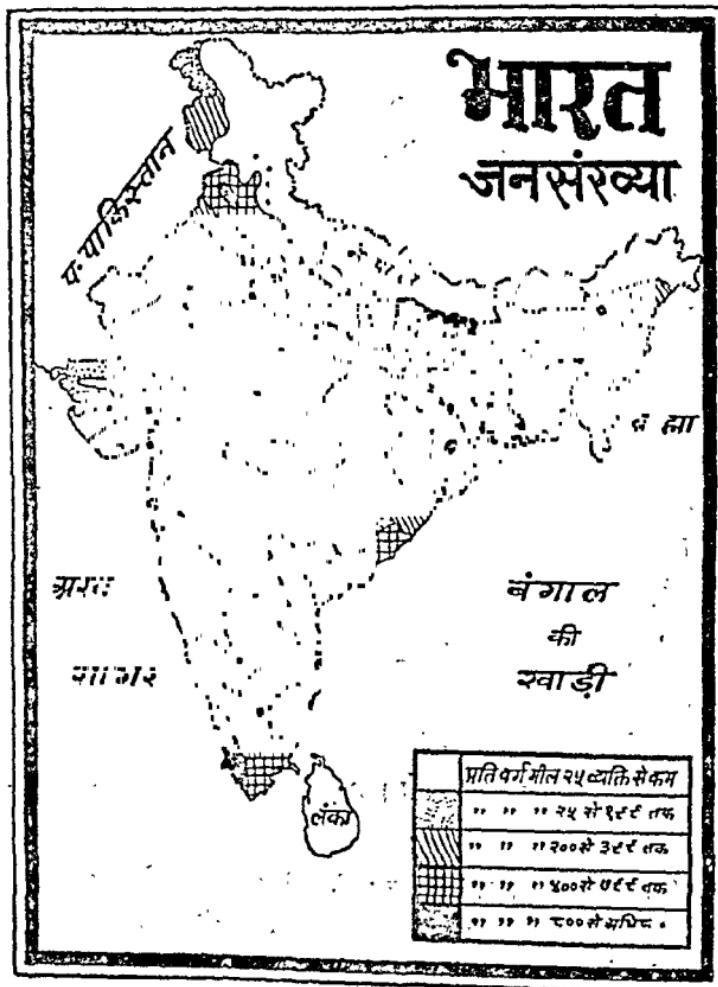
चित्र सं० ७०. भारत में जन-संख्या का घनत्व

(५) खनिज पदार्थों का होना:—जहाँ खनिज पदार्थ निकलते हों वहाँ उजाड़ भूमि होने पर भी लोग रहेंगे, कारण कि खनिज निकालने से उनको द्रव्य मिलता है। छोटा नागपुर

का पठारी भाग पहले उजाड़ प्रदेश था, परन्तु जब से वहाँ खनिज पदार्थ-लोहा, कोयला आदि निकाले जाने लगे हैं, जन संख्या दिन प्रतिदिन बढ़ती ही जा रही है।

(६) कला कौशल के केन्द्रः—जहाँ कारखाने खुल जाते हैं वहाँ काम करने के लिये बहुत से मनुष्य जाकर बस जाते हैं और आबादी बढ़ जाती है। बम्बई, अहमदाबाद, जमशेदपुर आदि की आबादी इसी प्रकार से बढ़ी है। भारत के जिन जिन भागों में उद्योग धन्धे खुल रहे हैं वहाँ की जन-संख्या बढ़ती जा रही है।

(७) उत्तम स्थितिः—मध्य की स्थिति होना भी अच्छा है। भारत की स्थिति बड़ी उत्तम है। हिन्द महासागर पर देश का अधिकार होने के कारण भारत का सम्बन्ध संसार के अन्य देशों से है। एशिया में तो इसकी स्थिति और भी उत्तम है। ऐसी स्थिति के कारण ही कानपुर नगर उन्नति कर गया है।

(८) यातायात के सुगम साधनः—जिन स्थानों में यातायात में साधन उत्तम हों, वहाँ जा कर लोग बस जाते हैं। दुर्भिक्ष पड़ने पर वहाँ बाहर से भी अन्न मंगाया जा सकता है। इसीलिए ऐसे स्थान सुरक्षित माने गये हैं।

(९) व्यापारिक वस्तुओं के उत्पादन केन्द्रः—देश के कुछ भागों में विशेष प्रकार की व्यापारिक वस्तुएँ पैदा होने के कारण लोग वहाँ पर जा कर बस गये हैं। पहाड़ी प्रदेश होने पर भी आसाम में बहुत से लोग जा बसे हैं, क्योंकि वहाँ पर चाय का उत्पादन होता है। काली मिट्टी के प्रदेश में कपास उत्पन्न होने से वहाँ की आबादी घनी हो गई है। बंगाल में पाट के उत्पादन के कारण अधिक आबादी है।

(१०) सुरक्षित स्थानः—जिन प्रदेशों में जान व माल की सुरक्षा का उत्तम प्रबंध होता है वहाँ पर अधिक लोग रहते हैं। मध्य-प्रदेश के पठारी भाग में प्राचीन काल में पिंडारियों के आक्रमण के कारण कम लोग रहते थे। इसी प्रकार अन्य पर्वतीय तथा अन्य भागों में भी आबादी कम है।

भारत में आबादी का घनत्व इस प्रकार हैः—

(अ) अधिक घनत्व के प्रदेश

नाम प्रदेश	आबादी का घनत्व प्रतिवर्ग मील
१. गंगा के मैदान का निचला भाग	....८३२
२. गंगा के मैदान का ऊपरी भाग	....६८१
३. मलाबार-कोनकान तट	....६३८
४. दक्षिणी मद्रास	....५५४
५. उत्तरी मद्रास और उड़ीसा का तटीय प्रदेश	....४६१
औसत घनत्व	....६६०

(अ) कृषि-सम्बन्धी कार्य

कृषि की श्रेणी	कुल जन-संख्या का प्रतिशत
१. भूमि के स्वामी कृषक	४६.६
२. दूसरों की जमीन पर खेती करने वाले	८.६
३. भूमि हीन श्रमिकवर्ग	१२.५
४. जमींदार वर्ग	१.५
कृषक वर्ग का जोड़	६६.८

(आ) खेती के अतिरिक्त अन्य धन्धे

नाम धन्धा	कुल जन-संख्या का प्रतिशत
१. अन्य उत्पादन (भूमि के अतिरिक्त)	१०.६
२. वाणिज्य	६.०
३. यातायात	१.६
४. नौकरी तथा अन्य कार्य	१८.०
अन्य धन्धों का जोड़	३०.२
कुल जोड़	१००.००

इस प्रकार हमारे यहाँ १०० व्यक्तियों में लगभग ७० मनुष्य अपने जीवन-निर्वाह के लिए खेती पर निर्भर रहते हैं। केवल १० प्रतिशत मनुष्य उद्योगों पर निर्भर हैं। ६ प्रतिशत वाणिज्य तथा २ प्रतिशत यातायात-सम्बन्धी कार्य करते हैं। अधिकांश लोगों के खेती करने के कारण हमारे यहाँ का मुख्य धन्धा कृषि ही है। इसीलिए भारत कृषि-प्रधान राष्ट्र कहलाता है।

७. जन-संख्या की समस्या

कुछ देशों का पूर्ण विकास केवल इसी कारण नहीं हो सका है कि वहाँ आबादी कम है। साइबेरिया में प्रकृति की ओर से दिए हुए स्रोतों की कमी नहीं है परन्तु वहाँ उनका उपयोग करने वाले कम हैं। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में भी जब पहले यूरोप-निवासी गए तो उनके सामने सबसे बड़ी समस्या यही थी कि खेतों में तथा खानों में काम करने वालों की कमी थी। आस्ट्रेलिया में भी वहाँ की कम आबादी आर्थिक विकास में बाधक है।

परन्तु मानसूनी देशों में वहाँ की अधिक आबादी एक समस्या है। घनी आबादी के अनुसार वहाँ पर भोजन-प्राप्ति के साधन नहीं हैं। हमारे देश भारत में प्रति वर्ष जन-संख्या की वृद्धि तो हो रही है, परन्तु कृषि की जाने वाली भूमि सीमित है। सारे लोगों को अपनी आवश्यकतानुसार भोजन नहीं मिलता है। कारखानों की कमी होने के कारण अधिक लोग खेती ही करते हैं। जब भोजन-प्राप्ति में कठिनाई है तो वस्त्र तथा रहने के घरों की कमी का होना आश्चर्य नहीं। देश के मनुष्य दैन्य अवस्था में होने के कारण उनका जीवन-स्तर बहुत नीचा है।

भारत की बढ़ती हुई जन-संख्या की समस्या को सुलझाने के लिए निम्नलिखित उपाय करने की आवश्यकता है:—

(१) बेकार पड़ी हुई भूमि को कृषि योग्य बनाया जाय। तराई क्षेत्र में खड्डों को पाटकर समतल भूमि तैयार कर देने से अच्छी उपज हो सकती है। इसी प्रकार यमुना की खादर तथा अन्य स्थानों की बंजर भूमि भी खाद देने पर तैयार हो सकती है। राजस्थान के शुष्क प्रदेश में सिंचाई के साधनों द्वारा बेकार पड़ी हुई भूमि भी खेती के काम आ सकती है। वहाँ अधिक मनुष्य रह सकते हैं।

(२) बड़े कारखानों की स्थापना तथा गाँवों में कुटीर-व्यवसायों को प्रोत्साहन मिलने से भी लोगों की आर्थिक अवस्था सुधर सकती है।

(३) घनी आबादी वाले लोग कम आबादी वाले राज्यों में जाकर बस सकते हैं। वहाँ जाकर वे उस भाग का विकास करें। कुछ अंश में ऐसा हुआ भी है—जैसे बंगाल के लोग आसाम के चाय के बगीचों में काम करने जाते हैं। बिहार के लोग आसनसोल तथा जमशेदपुर के लोहे के कारखानों तथा कलकत्ते के पाट के कारखानों में काम करते हैं। राजस्थान के कुछ लोग काली मिट्टी के प्रदेश विशेषतः अहमदाबाद की मिलों में काम करते हैं।

(४) भारत में आवश्यकता से अधिक उत्पन्न होने वाली वस्तुएँ (जैसे चाय, अभ्रक आदि) विदेशों को निर्यात की जाती हैं। उनके बदले में रुपया न लेकर अनाज ही लिया जाय।

(५) व्यापार तथा कारखानों में काम करने के लिए देश के लोग विदेशों में भी जा सकते हैं। आजकल हमारे यहाँ के राजदूत विश्व के प्रायः सभी बड़े-बड़े देशों में हैं। वे इस मामले में सहायक हो सकते हैं।

हमारी राष्ट्रीय सरकार बढ़ती हुई आबादी की समस्या को हल करने के लिये कई योजनाएँ बना रही है। देश की विभिन्न प्रयोजन-योजनाएँ कारखानों की वृद्धि आदि इसके प्रमाण हैं। आशा है कि निकट भविष्य में लोगों का जीवन स्तर ऊँचा हो जायगा और देश की अधिक आबादी हमारे लिये बोझा होने के बजाय बड़ी शक्ति होगी।

सारांश

हमारा देश भारतवर्ष बहुत बड़ा है। यहाँ कई प्रकार के लोग रहते हैं। देश के भिन्न भिन्न भागों में भाषाएँ भी कई बोली जाती हैं। देश की आबादी भी अधिक है।

१. मनुष्यः—हमारा देश बहुत प्राचीन है। सबसे पहले यहाँ पूर्व द्राविड़ लोग रहते थे। वे असभ्य थे। बाद में द्राविड़ लोगों ने यहाँ पर आक्रमण किया। उन्होंने आदि-निवासियों को हटा कर पहाड़ों और वनों में निकाल दिया। उत्तरी भारत में आर्य लोग मध्य एशिया से आये। उन्होंने द्राविड़ों से युद्ध किया और उन्हें दक्षिण में भेज दिया। इस प्रकार सतपुड़ा के उत्तर में आर्य लोग रहे और दक्षिण में द्राविड़। धीरे धीरे जातियों का सम्मिश्रण इतना अधिक हो गया है कि मनुष्य की मूल जाति को पहचानना कठिन हो गया।

२. धर्मः—बौद्ध धर्म का जन्म भारत में ही हुआ। परन्तु उस धर्म के अनुयायी आज देश में बहुत कम हैं। देश के अधिकांश लोग हिन्दू हैं। वे धार्मिक मामलों में बड़े उदार होते हैं। इस्लाम धर्म के मानने वाले लोग भी भारत में पर्याप्त थे, परन्तु उनमें से कुछ पाकिस्तान चले गये हैं। अब भी भारत में मुसलमानों की संख्या पर्याप्त है। यूरोपवासियों के साथ ईसाई धर्म भी भारत में आया। आज हमारे देश में कुल मिलाकर लगभग ७० लाख ईसाई हैं। पंजाब में सिक्ख हैं। इन लोगों के अतिरिक्त हमारे यहाँ जैन, फारसी, यहूदी आदि भी हैं।

३. भाषाएँः—भारत में कई भाषाएँ बोली जाती हैं। वैसे तो लगभग १५० भाषाएँ बोली जाती हैं, परन्तु प्रमुख भाषाएँ ये हैं—खड़ी बोली (हिन्दी), बंगाली, गुजराती, पंजाबी, तामिल, तेलगू, कनारी, मलयालम् आदि। देश की राष्ट्र-भाषा हिन्दी है और अब इसका प्रसार भारत के सभी राज्यों में किया जाता है।

४. जन-संख्याः—भारत में कुल मिलाकर ३५,६८,२६,४८५ मनुष्य रहते हैं। यह जन-संख्या विश्व के अन्य देशों की तुलना में बहुत अधिक है। परन्तु देश के सभी भागों की जन-संख्या एक सी नहीं है। कहीं अधिक मनुष्य रहते हैं तो कहीं कम। घनी जन-संख्या के लिए उपजाऊ भूमि, अच्छी वर्षा, सिंचाई के उत्तम साधन, उत्तम जलवायु, खनिज पदार्थ, कला-कौशल, यातायात के सुगम साधन आदि की आवश्यकता होती है। यही कारण है कि बंगाल, बिहार, ट्रावनकोर-कोचीन आदि की आबादी घनी है। हिमालय का पहाड़ी प्रदेश, राजस्थान का शुष्क प्रदेश, मध्य प्रदेश आदि में कम लोग रहते हैं।

५. जन संख्या की समस्याः—भारत की जन संख्या में प्रतिवर्ष वृद्धि होती रहती है परन्तु खेती करने योग्य जमीन उतनी ही है। इसलिये यह बढ़ती हुई आबादी देश के लिए बड़ी समस्या है। इस समस्या का समाधान इस प्रकार किया जा सकता है—(अ) देश के कम जन-संख्या वाले भाग में घनी जन-संख्या वाले प्रदेश के लोग बसाए जायँ (आ) ऊसर या बंजर भूमि को खेती योग्य बनाया जाय, (इ) बढ़ती हुई जन-संख्या को काम में लगाने के लिए कारखाने खोले जायँ और (ई) भारतीय नागरिकों को विदेशों में बसाने के लिए सहूलियत दी जाय।

प्रश्न

१. भारत के किस किस जाति के मनुष्य रहते हैं ?
२. देश में बोली जाने वाली प्रमुख भाषाएँ कौन कौन सी हैं ? हिन्दी को राष्ट्रभाषा क्यों बनाया गया ?
३. भारत के किन भागों में लोग अधिक रहते हैं ? क्यों ?
४. राजस्थान तथा दक्षिणी प्रायद्वीपी भाग में कम आबादी क्यों है ?
५. क्या उपाय किए जायँ कि देश की बढ़ती हुई आबादी को आसानी से भोजन प्राप्त हो सके ?

अध्याय २०

आवागमन के साधन

प्राचीन काल में एक देश से दूसरे देश को जाना बहुत कठिन था। भू-मार्ग द्वारा जाने में समय भी बहुत लगता था और रास्ते में कष्ट भी बहुत सहने पड़ते थे। परन्तु अब जल मार्गों के विकास तथा वाष्प-शक्ति के आविष्कार के कारण संसार के प्रत्येक देश को पहुँचाना सुगम हो गया है। यातायात के साधनों में वृद्धि होने से सारा संसार एक हो गया है, सुदूर देशों के बीच का अन्तर कम हो गया।

वस्तुओं के उत्पादन तथा उनके वितरण में यातायात के साधन बहुत सहायक हैं। हमारे कमरे में विश्व के कई भिन्न भिन्न देशों की वस्तुएँ हैं। यातायात के सुगम साधन होने के कारण ही हम उनका उपयोग करने में समर्थ हो सके हैं। आज इंग्लैंड के आदमी प्रति सवेरे डेनमार्क से वायुयान द्वारा प्राप्त नास्ता करके कारखानों को जाते हैं।

किसी भी देश की स्थिति तथा भू-रचना के अनुसार वहाँ भिन्न भिन्न प्रकार के आवागमन के साधन होते हैं। यदि पास ही समुद्र है या देश के भीतर नदियाँ हैं तो वहाँ जल मार्ग होंगे। मैदानी भाग में रेल-मार्ग तथा सड़के होंगी परन्तु पहाड़ी भाग में इनकी कमी होगी।

यातायात के मुख्य साधन तीन प्रकार के होते हैं:—

(अ) स्थल–मार्ग—रेल, सड़कें, कच्चे-मार्ग आदि।

(आ) जल–मार्ग—समुद्र, नदी, नहर तथा झीलों के मार्ग।

(इ) वायु मार्ग—वायुयान द्वारा।

इन आवागमन के साधनों का भारत में कितना विकास हुआ है इसका वर्णन यहाँ किया जाता है।

(अ) स्थल-मार्ग

१. रेलवेः—हमारे देश में रेल-मार्ग बन जाने से विभिन्न राज्यों में आने जाने में सुविधा हो गई है और व्यापार में भी बहुत वृद्धि हो गई है। परन्तु अन्य देशों को देखते हुए हमारे रेल मार्गों की लम्बाई बहुत कम है। यह बात निम्नलिखित तालिका से स्पष्ट हो जाती है—

नाम देश—	रेल-मार्ग (लम्बाई हजार मीलों में)
संयुक्त राष्ट्र अमेरिका	२३८
कनाडा	५७
ग्रेट ब्रिटेन	५०
भारत	३४

इस प्रकार देश की विशालता और यहाँ की घनी आबादी को देखते हुए हमारे भारत में रेल-मार्गों की कमी है और इसी कारण यहाँ रेलों में भीड़ रहती है। हमारे यहाँ लगभग ८ हजार मनुष्यों के पीछे एक रेल-मार्ग है फिर भी एशिया के अन्य देशों की तुलना में तो हमारी अवस्था ठीक है। इस दिशा में एशिया में हमारा प्रथम स्थान है और सम्पूर्ण विश्व में चौथा है।
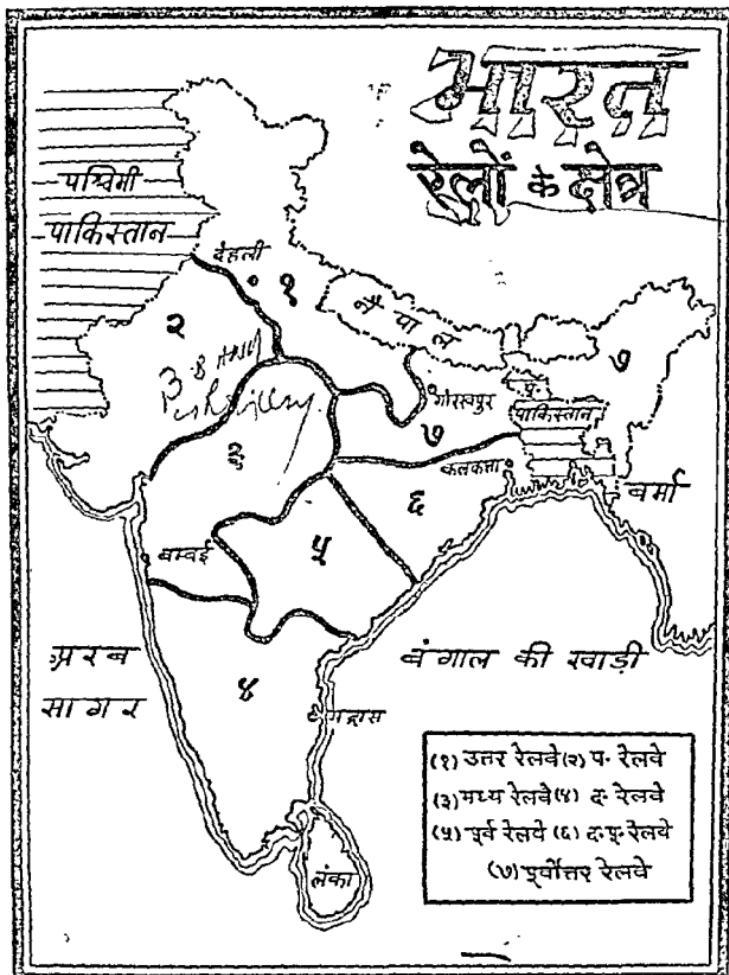
चित्र सं० ७१. भारत के सात नवीन विभागों के क्षेत्र

रेल-मार्ग निर्माण करने के लिए सबसे बड़ी आवश्यकता समतल भूमि की होती है। इसी कारण भारत के गंगा के मैदान में सबसे अधिक रेल-मार्ग हैं। वहाँ रेल-मार्गों का जाल सा बिछा हुआ है। दक्षिणी भारत की पठारी भूमि में रेल मार्ग कम हैं। मार्ग को समतल बनाने तथा नदियों को पार करने के लिए पुल बनवाने में वहाँ बहुत खर्च करना पड़ता है।

स्वतन्त्रता प्राप्त होने से पहले भारत में रेल मार्ग अलग-अलग कम्पनियों के थे। कुछ पर धीरे धीरे सरकारी अधिकार हो चुका था। कुछ रेलवे देशी रियासतों के राजाओं की थीं। अलग अलग व्यवस्था होने से रेल-मार्गों के संचालन में बड़ी कठिनाई उपस्थित होती थी। आजादी मिल जाने के पश्चात् इस कठिनाई को दूर करना आवश्यक समझा गया और सन् १९५० में राष्ट्र के विभिन्न रेल-मार्गों के एकीकरण करने के लिए एक कमेटी बनाई गई। उसकी सिफारिश के आधार पर सब रेल-मार्गों को छः विभागों में विभाजित करने की योजना की गई। सन् १९५१ से रेल-मार्गों के नये विभागों के निर्माण का कार्य प्रारम्भ हो गया। सन् १९५७ में छः के स्थान पर सात विभाग कर दिये गये। १५ जनवरी सन् १९५८ से आठवां विभाग खोल दिया गया है।

इस प्रकार रेल-मार्गों के राष्ट्रीयकरण हो जाने से व्यवस्था में बड़ी सुविधा हो गई। रेलों द्वारा प्राप्त आय में वृद्धि होने लगी और उससे नये रेल-मार्ग बनाने की योजनाएँ तैयार की जाने लगीं।

हमारी रेलों के सातों नवीन मार्गों का वर्णन इस प्रकार है:—

१. दक्षिणी रेलवे—इस विभाग का निर्माण १४ अप्रैल सन् १९५१ को हुआ।
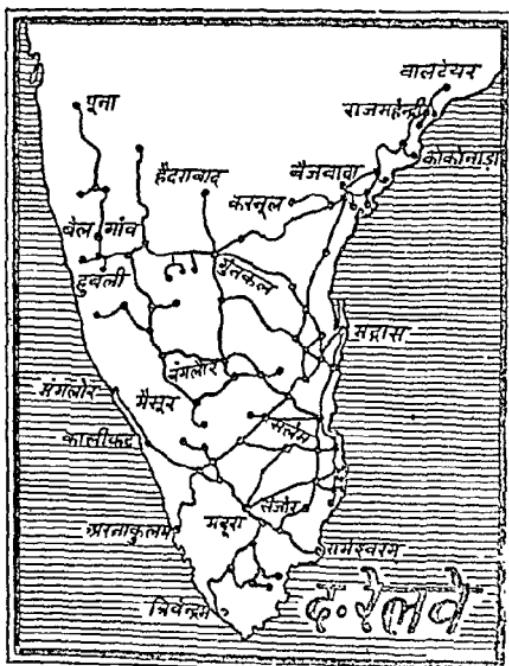
चित्र सं० ७२. दक्षिणी रेलवे

वास्तव में यह पहला विभाग है जिसका निर्माण रेलों की राष्ट्रीयकरण की नीति के अनुसार हुआ। इस विभाग के रेल-मार्ग की कुल लम्बाई लगभग ६,०५९ मील है। इस विभाग में

पहले की मद्रास और सदर्न मराठा-रेलवे, साउथ इण्डियन रेलवे तथा मैसूर रेलवे को सम्मिलित किया गया।

दक्षिणी रेलवे विभाग का मुख्य कार्यालय मद्रास नगर है। इस रेलवे द्वारा दक्षिणी भारत के मद्रास, आंध्र प्रदेश, मैसूर तथा केरल राज्यों में व्यापार होता है। व्यापार की मुख्य वस्तुओं में मूंगफली, नारियल, कपास, चमड़ा, गर्म मसाले, सूती वस्त्र आदि हैं।

२. मध्यवर्ती रेलवेः—५ नवम्बर सन् १९५१ को रेलवे के इस विभाग का निर्माण हुआ। इसकी कुल लम्बाई ५,६३२ मील है। इस विभाग में पहले की चार रेलवे मिलाई
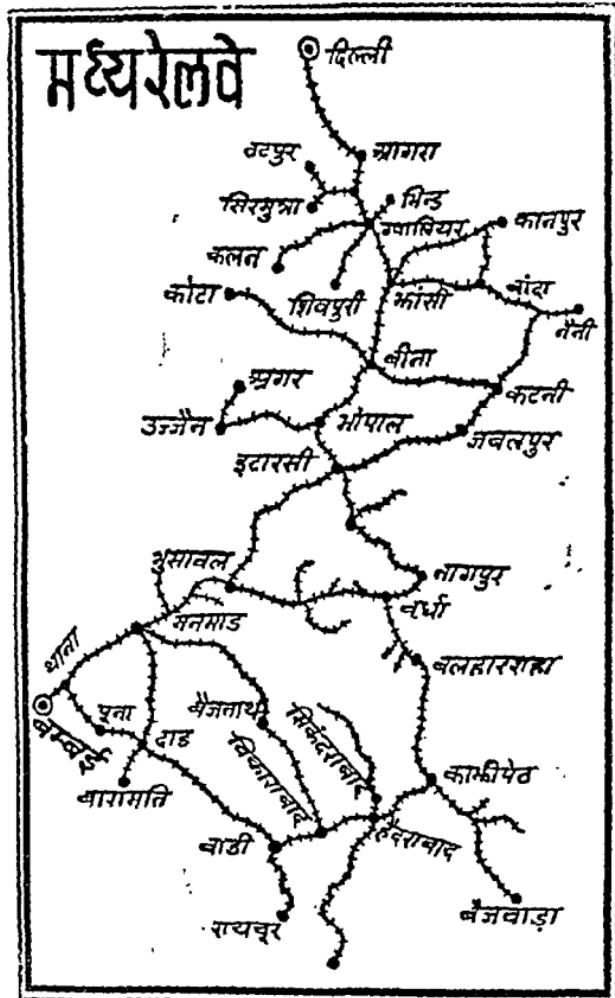
चित्र सं० ७३. मध्यवर्ती रेल विभाग

गईं जिनके नाम इस प्रकार हैं—ग्रेट इण्डियन पेनिनसूलर, निजाम स्टेट, सिंधिया और धौलपुर रेलवे।

विभाग का मुख्य कार्यालय बम्बई नगर है । मध्य रेलवे मध्य प्रदेश, बम्बई तथा आंध्र प्रदेश राज्यों का मुख्य रेल-मार्ग है । इसके द्वारा कपास, सूती वस्त्र, तिलहन, लकड़ी, मैंगनीज और सीमेंट का व्यापार अधिक होता है ।

चित्र सं० ७४. पश्चिमी रेलवे

३. पश्चिमी रेलवे:—इस विभाग का निर्माण भी मध्य रेलवे के साथ ही साथ ५ नवम्बर सन् १९५१ को हुआ । पश्चिमी रेल-विभाग में बम्बई, बड़ौदा और सेन्ट्रल इण्डियन रेलवे, सौराष्ट्र रेलवे, कच्छ रेलवे, राजस्थान रेलवे और जयपुर रेलवे को सम्मिलित किया गया । इसका मुख्य कार्यालय भी बम्बई में है ।

पश्चिमी रेल-विभाग की कुल लम्बाई ५,६२१ मील है । रेलवे का विस्तार बम्बई, राजस्थान तथा मध्य प्रदेश राज्यों में अधिक है ।
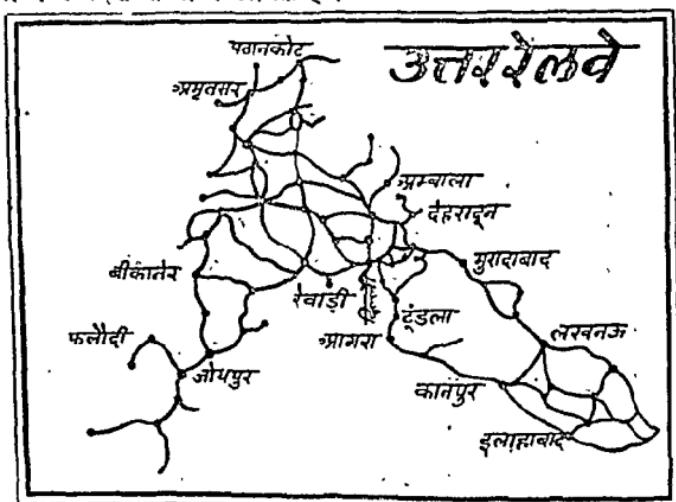
चित्र सं० ७५. उत्तरी रेलवे-विभाग

बम्बई और अहमदाबाद जैसे औद्योगिक नगरों को मिलाने वाली पश्चिमी रेलवे ही है। इसी कारण इस रेल विभाग द्वारा कपास तथा सूती वस्त्र का व्यापार अधिक होता है ।

४. उत्तरी रेलवेः—इस विभाग का उद्घाटन १४ अप्रैल सन् १९५२ को हुआ। इसमें पहले की ईस्ट पंजाब रेलवे, जोधपुर रेलवे, बीकानेर रेलवे तथा ईस्ट इण्डियन रेलवे के तीनों ऊपरी डिवीजन सम्मिलित किये गये।

उत्तरी रेलवे की कुल लम्बाई ६,०५२ मील है और इसका मुख्य कार्यालय दिल्ली नगर में है। यह रेलवे पंजाब, दिल्ली, उत्तरी राजस्थान तथा पश्चिमी उत्तर प्रदेश में फैली हुई है। इस रेलवे द्वारा गेहूँ, गन्ना, चमड़ा और ऊन का व्यापार होता है।

५. उत्तरी–पूर्वी रेलवेः—इस रेल-विभाग का उद्घाटन भी १४ अप्रैल सन् १९५२ को हुआ और इसका मुख्य कार्यालय गोरखपुर में है।

उत्तरी–पूर्वी रेल-विभाग में अवध-तिरहुत रेलवे, आसाम रेलवे तथा बम्बई, बड़ौदा और सेन्ट्रल इण्डियन रेलवे का फतेहगढ़ डिस्ट्रिक्ट सम्मिलित किया गया।
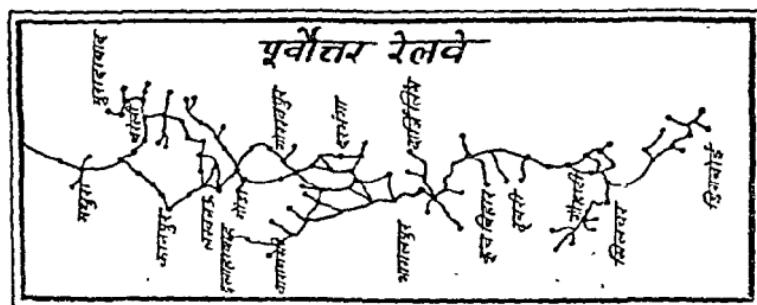
चित्र सं० ७६. उत्तरी-पूर्वी रेलवे

इस रेलवे की कुल लम्बाई लगभग ४,८०० मील है और इसका क्षेत्रफल उत्तर प्रदेश, बिहार तथा पश्चिमी बंगाल का उत्तरी भाग और आसाम राज्य है। उत्तरी-पूर्वी फ्रंटियर रेलवे के बन जाने से इस रेलवे का क्षेत्र अब कम हो गया है। गन्ना, चावल और लकड़ी का व्यापार इसके द्वारा होता है।

६. पूर्वी रेलवेः—वैसे तो इस रेल-विभाग का उद्घाटन १४ अप्रैल सन् १९५२ को हुआ था और उसमें ईस्ट इण्डियन रेलवे का मुगलसराय और हुगली के बीच का रेल-मार्ग तथा बंगाल-नागपुर रेलवे सम्मिलित थी तथा कुल रेल-मार्ग की लम्बाई ५,६६७ मील थी, परन्तु ता० १ अगस्त सन् १९५५ को इसके दो विभाग कर दिए गए। पूर्वी रेलवे तथा दक्षिणी-पूर्वी रेलवे।

इस समय पूर्वी-रेलवे में पहले के ईस्ट इण्डियन रेलवे का मुगलसराय से हुगली तक का भाग सम्मिलित है। कुल लम्बाई २,३२१ मील है। प्रधान कार्यालय कलकत्ता नगर में है।

पूर्वी रेलवे बिहार और पश्चिमी बंगाल राज्यों का प्रमुख रेल–मार्ग है और इसके द्वारा शक्कर, पाट, चावल और चाय का व्यापार होता है।

७. दक्षिणी-पूर्वी रेलवे:—जैसा कि बताया जा चुका है, इस विभाग को १ नवम्बर १९५५ में बनाया गया और इसमें बंगाल-नागपुर रेलवे सम्मिलित की गई।

चित्र सं० ७७. पूर्वी रेलवे-विभाग

दक्षिणी-पूर्वी रेलवे की कुल लम्बाई ३,३६९ मील है और इसका मुख्य कार्यालय भी कलकत्ता नगर में है।

इस रेलवे का विस्तार पश्चिमी बंगाल, मध्य प्रदेश तथा आंध्र प्रदेश में है। यह रेलवे भारत के खनिज-प्रधान प्रदेश में फैली हुई है अतः इसके द्वारा कोयला, लोहा, मेंगनीज, अभ्रक आदि की ढुलाई होती है। राष्ट्र के औद्योगिक विकास में यह रेल-विभाग विशेष रूप से सहायक सिद्ध हुआ है।

८. उत्तरी पूर्वी फ्रंटियर रेलवे:—१५ जनवरी सन् १९५८ को इस विभाग का उद्घाटन किया गया। यह रेल मार्ग सम्पूर्ण आसाम, उत्तरी बंगाल और उत्तरी बिहार में है। इसका क्षेत्रफल १,७३८ मील है और मुख्य कार्यालय पन्डू में है।

भारत के सम्पूर्ण रेल-मार्गों की लम्बाई ३४,४०६ मील है। हमारे देश में रेलवे ही प्रमुख आवागमन का साधन है। प्रतिवर्ष हमारी रेलों में सम्पूर्ण देश के लगभग ७० प्रतिशत यात्री सवारी करते हैं। इसी भांति जितने माल की ढुलाई होती है, उसके लगभग ८० प्रतिशत को ढोने में रेलों का ही प्रयोग होता है। मालगाड़ियाँ देश के व्यापार की वृद्धि में बहुत सहायक सिद्ध हुई हैं। हमारी रेलों द्वारा प्रति दिन लगभग ३६ लाख यात्री यात्रा करते हैं। साल में लगभग ११ करोड़ टन माल रेलों द्वारा ढोया जाता है।

रेलों को बने हमारे यहाँ लगभग सौ वर्ष हो गये। अप्रैल सन् १९५३ में दिल्ली में रेलों की शताब्दी बनाई गई। उस समय एक महान् प्रदर्शिनी का आयोजन किया गया जिसमें प्रारम्भ में काम में आने वाले इञ्जिन और डिब्बों के साथ साथ नवीनतम इंजिन और डिब्बे बताये गए। आज हमारे देश में ही रेल के इंजिन और डिब्बे पर्याप्त संख्या में बनने लगे हैं।

चित्र सं० ७८. दक्षिणी-पूर्वी रेलवे-विभाग

भारतीय रेलवे का प्रबन्ध रेलवे बोर्ड द्वारा होता है। रेलवे विभाग में कुल मिलाकर लगभग दस लाख मनुष्य काम करते हैं।

पहला रेल-मार्ग भारत में सन् १८५३ में बना था। तब से लेकर पिछले सौ वर्षों में भारत की रेलों ने क्या प्रगति की यह बात निम्नलिखित तालिका से स्पष्ट हो जाती है:—

सन्	रेल मार्गों की लम्बाई	कुल पूंजी	कुल आय	काम करने का व्यय	विशुद्ध आय
१८५३	२०	३८ लाख रु०	०.९० लाख रु०	०.४१ लाख रु०	०.४९ लाख रु०
१९५३-५४	३४,४०६	८७,८४५ लाख रु०	२७,२८१ लाख रु०	२३,१९९ लाख रु०	४,०८२ लाख रु०

इस प्रकार भारतीय रेलों का विकास बड़ी तीव्र गति के हो रहा है। प्रथम पंचवर्षीय योजना में रेलों के पुनर्स्थापन और विकास के लिये ४०० करोड़ रुपये रखे गये थे। द्वितीय पंच-वर्षीय योजना काल में यह राशि दुगनी से भी अधिक निर्धारित की गई। इन पांच वर्षों में रेलों की वृद्धि और विकास के लिये ९०० करोड़ रुपया व्यय किया जायगा।

२. सड़कें:—भारत एक विशाल देश है। यहाँ की रेलों की संख्या देश की आवश्यकता के लिये पर्याप्त नहीं है। देश के भीतरी भाग में पहुँचने के लिए सड़कों की अत्यन्त आवश्यकता है। पहिये वाली गाड़ियों के लिए अच्छी सड़कें तो बहुत ही कम हैं। देश की उन्नति के लिये देहात के गाँव गाँव में नई नई सड़कें बनाना अत्यन्त आवश्यक है। सच तो यह है कि यातायात के साधन ही सभ्यता की वृद्धि के मूल कारण हैं। भारत में लगभग साढ़े तीन लाख मील लम्बी सड़कें हैं जिनमें आधी से अधिक दक्षिणी भारत में हैं।

भारतीय सड़कों पर चलने वाली सवारियों की संख्या इस प्रकार है:—

मोटर साइकिलें	२६,२२१
घरेलू कार	१,५५,२३४
सवारी मोटरें	५१,९४१
माल ढोने की गाड़ियाँ	९१,४२५
अन्य सवारियाँ	९,४३०
कुल योग...............	३,३४,२५१

इन सड़कों पर ये मोटरें, गाड़ियाँ आदि चलती हैं। इन्हीं सड़कों द्वारा दूर दूर के गाँवों के निवासी रेल के स्टेशनों तक आते हैं और फिर बड़े बड़े नगरों को पहुँचते हैं। ग्रामों के निकट स्थित खेतों की पैदावार भी सड़कों द्वारा नगरों को भेजी जाती है।

भारत में चार पक्की लम्बी सड़कें हैं, जो देश के चारों कोनों को मिलाती हैं:—(१) ग्राण्ड ट्रंक रोड—यह कलकत्ते से दिल्ली होती हुई अमृतसर तक भारत में है। आगे यह सड़क पाकिस्तान में होती हुई पेशावर तक चली गई है। (२) कलकत्ते से मद्रास तक। (३) मद्रास से बम्बई तक। (४) बम्बई से दिल्ली तक। ये चारों सड़कें पाँच हजार मील लम्बी हैं। इनके अतिरिक्त डेकन रोड (दक्षिणी सड़क) मिर्जापुर से गढ़मुक्तेश्वर, मुरादाबाद, बरेली होती हुई बनारस व पटना तक जाती है। एक अन्य सड़क आगरे से अजमेर तक जाती है। दक्षिण में सड़कें अधिक हैं क्योंकि यहाँ की भूमि पथरीली है। मद्रास राज्य भारत में सड़कों में सबसे आगे है। बम्बई राज्य का सड़कों में दूसरा स्थान है। उत्तरी भारत के मैदान में पत्थर व कंकड़ के अभाव के कारण सड़कें बनाने में तथा उसकी मरम्मत में काफी खर्च पड़ता है। इसके अतिरिक्त नदियों के पुल भी कठिनाई से बनते हैं। अतः उत्तरी भारत में सड़कें कम हैं। बंगाल और उड़ीसा में इनकी अधिक कमी है। राजस्थान और दक्षिणी पंजाब

में जन-संख्या कम है अतः वहाँ भी सड़कें बहुत कम हैं। देश के नेताओं का गाँवों की ओर अधिक ध्यान है और आशा है कि सड़कों की उन्नति बहुत शीघ्र हो जावेगी।

चित्र सं० ७६. भारत की मुख्य सड़कें

सड़कों की उन्नति के लिये द्वितीय-पंचवर्षीय योजना में २६८ करोड़ रुपये रखे हैं।

३. कच्चे मार्गः—भारत में कई स्थान ऐसे भी हैं जहाँ न तो रेलें ही बन सकती हैं और न सड़कें ही। उत्तरी भारत के पहाड़ी भाग में आने-जाने के मार्ग बड़े दुर्गम हैं। वहाँ कई कच्चे मार्ग हैं, जहाँ मनुष्य पैदल ही चल सकते हैं। बद्रीनाथ, केदारनाथ आदि तीर्थ-स्थानों को जाने वाले यात्रियों का सामान भी वहाँ के पहाड़ी मजदूर ढोते हैं। पहाड़ी पग-डंडियों पर घोड़े और टट्टू भी चलते हैं। अधिक ऊँचे पहाड़ी भागों में तिब्बत के निकट याक और पहाड़ी बकरे भी बोझा ढोने में काम आते हैं।

राजस्थान के रेतीले भागों में सड़कें और रेलें बनाना कठिन है। वहाँ आँधियाँ अधिक चलने के कारण पक्के मार्ग बनाने में कठिनाई होती है और खर्च भी बहुत पड़ता है। ऊँट

वहाँ का प्रमुख पशु है। इसी के द्वारा लोग यात्रा करते हैं और इसी की पीठ पर बोझा ढोया जाता है।

मध्य प्रदेश और आसाम के पहाड़ी भागों में भी सड़कें और रेलें बनवाना कठिन है। अच्छी वर्षा होने के कारण वहाँ कई नदी-नाले हैं। वर्षा ऋतु में उनको पार करना कठिन हो जाता है। पुल बनाने में खर्च अधिक पड़ता है। ऐसे भागों में हाथी बड़ा उपयोगी पशु है। वह बोझा भी ढोता है और सवारी के काम भी आता है। सरगूजा के जंगलों में वर्षा के दिनों में हाथियों द्वारा ही डाक पहुँचाई जाती है। हाथी तैर कर नदी-नालों को पार कर लेते हैं।

उत्तरी मैदान में कई कच्चे मार्ग हैं जो रेलवे अथवा पक्की सड़कों से जुड़े हुए हैं। वहाँ बैलगाड़ियाँ काम आती हैं।

[आ] जल-मार्ग

भारत में जल-मार्ग दो प्रकार के हैं:—(अ) देश के भीतर नदियों में नावें और जहाज चलाना और (आ) समुद्री किनारे पर बड़े बड़े जहाजों के मार्ग। देश के भीतर वाली नदियाँ अन्तर्प्रान्तीय व्यापार के लिए काम आती हैं, परन्तु समुद्री किनारे पर बड़े बड़े विदेशी जहाज भी आते हैं।

१. नदी-मार्गः—प्राचीन काल से उत्तरी भारत की नदियाँ तथा उनकी सहायक नदियाँ यातायात की उत्तम साधन रही हैं किन्तु रेलों के बन जाने से इनका महत्व घट गया है। नावों द्वारा सामान ले जाने में रेल की अपेक्षा बहुत कम खर्च पड़ता है। इस प्रकार के जल-मार्गों का प्रयोग देश के व्यापार के लिए अत्यन्त आवश्यक है। जर्मनी, फ्रांस, रूस आदि देश नदियों का अच्छा उपयोग करते हैं। किन्तु हमारे देश में इनका उपयोग अधिक नहीं होता।

उत्तरी भारत में गङ्गा नदी व्यापार के लिए सबसे अच्छी है। अपने मुहाने से पाँच सौ मील तक इसकी गहराई लगभग तीस फीट है। अतः इसमें ५०० मील तक स्टीमर चल सकते हैं। छोटी नावें तो कानपुर तक सुगमता से पहुँचती हैं। ब्रह्मपुत्र नदी में पूर्वी पाकिस्तान होते हुये डिब्रूगढ़ तक और सुरमा नदी में कछार तक स्टीमर चलते हैं।

दक्षिणी भारत में महानदी, गोदावरी और कृष्णा नदियों में उनके डेल्टों के पास ही थोड़ी दूर तक नावें चलती हैं। इनकी सहायक नदियों में भी कुछ दूर तक केवल वर्षा ऋतु में ही नावें चल सकती हैं।

भारत की नहरें केवल सिंचाई के काम की हैं। नावें चलाने योग्य नहरें मद्रास में अधिक हैं। इस प्रकार की सबसे प्रसिद्ध नहर 'बकिंघम' नहर है जो कृष्णा नदी के डेल्टे को कावेरी के डेल्टे से मिलाती है। यह नहर पूर्वी समुद्रतट के समानान्तर है। इसके द्वारा गोदावरी की नहर और कृष्णा नहर में नावों द्वारा डेल्टे की उपज का अधिकांश भाग भेजा जाता है। करनूल और कुडाप्पा नहर भी आवश्यकता पड़ने पर नावें चलाने योग्य परिवर्तित

की जा सकती है। उड़ीसा में 'उड़ीसा-तट की नहर' में नावें चलती हैं। गङ्गा की ऊपरी नहर में २७५ मील तक नावें चल सकती हैं और पश्चिमी यमुना नहर में दिल्ली तक नावें चल सकती हैं।

भारत में जल-मार्गों की आवश्यकता बहुत अधिक है। अतः लोगों का ध्यान इस
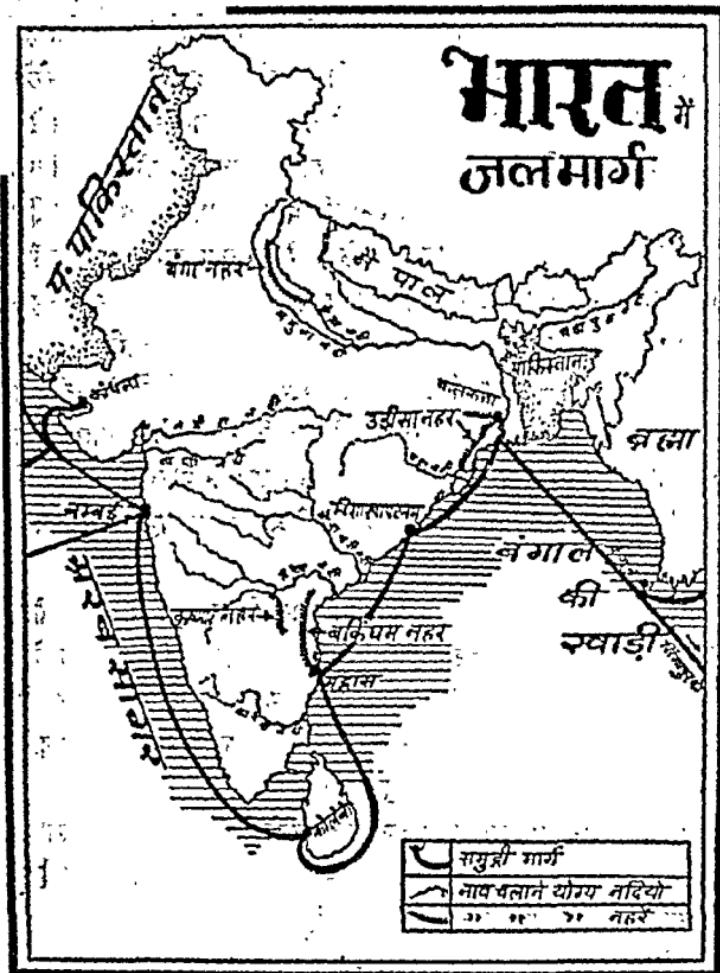
चित्र सं० ८०, भारत की नाव्य नदियाँ और समुद्र-मार्ग

ओर जाना अत्यन्त आवश्यक है। जल मार्गों की उन्नति में कुछ प्राकृतिक बाधाएँ—मानसूनी वर्षा तथा दक्षिण की नदियों का उद्गम ऐसे पहाड़ों पर होना जहाँ ग्लेशियर न होना आदि, आवश्यक हैं, किन्तु फिर भी जो कुछ हैं उनको काफी उपयोगी बनाया जा सकता है। ऐसा करने से माल की ढुलाई के लिये सस्ता साधन ही नहीं प्राप्त होगा किन्तु कुछ भार भी हल्का हो जावेगा। साथ ही देश के पिछड़े हुए भागों को भी उन्नत होने का अवसर प्राप्त होगा।

२. समुद्री मार्गः—हमारा देश समुद्र मार्ग द्वारा विश्व के प्रायः सभी प्रमुख देशों से जुड़ा हुआ है। कलकत्ता, बम्बई, मद्रास, विशाखापटनम्, कोचीन आदि भारत के फाटक हैं। यहाँ से समुद्र-मार्ग प्रारम्भ होते हैं। भारत निम्नलिखित समुद्र-मार्गों से सम्बन्धित है—

१. स्वेज-मार्गः—इस मार्ग के खुल जाने से यूरोप तथा भारत के बीच होने वाले व्यापार में सुविधा हो गई है। इसी मार्ग द्वारा हमारे देश से कच्चा माल यूरोप के औद्योगिक देशों को जाता है और वहां से मशीनें तथा मशीनों से बना हुआ माल आता है। एक दोष इस मार्ग में अवश्य है। वह यह है कि इसमें होकर छोटे जहाज ही आ सकते हैं क्योंकि स्वेज नहर संकरी होने के कारण उसके भीतर से बड़े बड़े जहाज पार नहीं हो सकते।

२. उत्तमाशा अन्तरीप-मार्गः—इस मार्ग द्वारा भारत दक्षिणी तथा पश्चिमी अफ्रीका से जुड़ा हुआ है। हमारे देश से दक्षिण अमेरिका को भी इसी मार्ग द्वारा जाते हैं। पहले जब स्वेज नहर नहीं बनी थी तो भारत से यूरोप जाने के लिये भी यही मार्ग था। इसी मार्ग द्वारा पुर्तगाल से वास्को-डी-गामा सबसे पहले भारत आया था। आज भी बड़े बड़े जहाज जो स्वेज नहर से नहीं गुजर सकते, इसी मार्ग द्वारा भारत तथा पूर्वी देशों को आते हैं।

३. सिंगापुर मार्गः—इस मार्ग द्वारा भारत एशिया के पूर्वी देशों से जुड़ा हुआ है। इण्डोनेशिया, चीन तथा जापान और भारत के बीच इसी मार्ग से व्यापार होता है। इसी मार्ग से होकर जापान से कनाडा तथा संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के पश्चिमी भाग को जाते हैं। न्यूजीलैंड जाने के लिये भी यह मार्ग उपयुक्त है। इसी प्रकार सिंगापुर-मार्ग भारत के लिये बड़े महत्व का है।

४. आस्ट्रेलिया मार्गः—अब दिन प्रतिदिन आस्ट्रेलिया तथा भारत के बीच व्यापारिक सम्बन्ध बढ़ रहा है। इसी के फलस्वरूप इस मार्ग की उपयोगिता भी बढ़ रही है। भारत से आस्ट्रेलिया दो मार्गों द्वारा जा सकते हैं—(अ) कलकत्ते से सिंगापुर होकर तथा (आ) कोलम्बो से सीधा आस्ट्रेलिया को। इस मार्ग द्वारा आस्ट्रेलिया के सारे बन्दरगाह, जहां पर ही वहाँ की आबादी का अधिकांश है, भारत से जुड़े हुये हैं।

५. कराची मार्गः—पाकिस्तान के अलग हो जाने से कराची अब भारत का बन्दरगाह नहीं है परन्तु भारत तथा पाकिस्तान के बीच इस मार्ग द्वारा आवागमन होता है। इसी मार्ग द्वारा भारत से फारस, ईराक आदि देशों को जाते हैं।

(इ) वायु-मार्ग

जलवायु के दृष्टिकोण से भारत की स्थिति बहुत उत्तम है। यूरोप तथा आस्ट्रेलिया के बीच होने के कारण भारत होकर कई वायुयान जाते हैं। देश की विशालता भी वायुयान की उन्नति में सहायक है। मानसून के दिनों को छोड़कर भारत का जलवायु भी वायुयान के उड़ने में बाधक नहीं है। आकाश साफ रहता है।

आजकल समय की बचत करने के लिए व्यापारी लोग हवाई जहाज से यात्रा अधिक करने लगे हैं। हल्का सामान तथा डाक भी वायुयानों द्वारा ले जाया जाता है।

सन् १६५५ में भारतीय वायुयान २०,७४० हजार मील उड़े। उनके द्वारा ४५२ हजार यात्रियों ने यात्रा की और ६२,२०६ हजार पौंड वजन का सामान ढोया गया।

भारत में हवाई मार्गों की कुल लम्बाई लगभग २८ हजार मील है। पहले हमारे यहाँ वायु-यातायात की ६ कम्पनियाँ थीं।
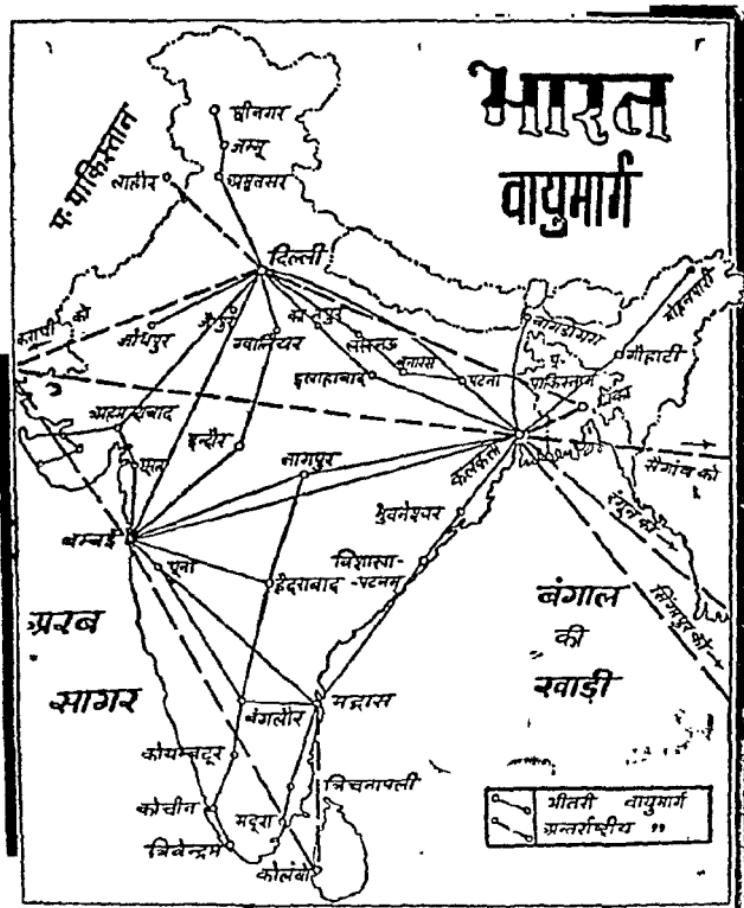
चित्र सं० ८१. भारत के प्रमुख वायु-मार्ग

(१) इण्डियन नेशनल एयरवेज, दिल्ली, (२) एयर इण्डिया, बम्बई, (३) एयर सर्विसेज ऑफ इण्डिया, बम्बई, (४) एयरवेज (इण्डिया), कलकत्ता, (५) डेकन एयरवेज, बेगमपैठ, (६) भारत एयरवेज, कलकत्ता, (७) हिमालय एवियेशन, कलकत्ता, (८) कलिंगा एयरलाइन्स, कलकत्ता और (६) एयर इण्डिया इन्टरनेशनल, बम्बई। इनके अतिरिक्त कई विदेशी कम्पनियों के वायुयान भारत में से गुजरते थे।

१ अगस्त सन् १६५३ को भारत में वायु-यातायात का राष्ट्रीयकरण हो गया। इसके

फलस्वरूप दो कारपोरेशन स्थापित किये गये—(१) 'इण्डियन एयर लाइन्स कारपोरेशन' और (२) 'एयर इण्डिया इन्टरनेशनल'।

'इडिया एयरलाइन्स कारपोरेशन' भारत के भीतरी भागों में वायु-यातायात का प्रबन्ध करती है। इसके सात विभाग या मार्ग हैं:—

प्रथम विभाग:—

(१) बम्बई-मद्रास-कोलम्बो।
(२) बम्बई-अहमदाबाद-जयपुर-दिल्ली।
(३) बम्बई-कलकत्ता।
(४) मद्रास-बंगलौर-कोयम्बटूर-कोचीन-त्रिवेन्द्रम्।
(५) बम्बई-दिल्ली।
(६) बम्बई-कराची।

द्वितीय विभाग:—

(१) दिल्ली-लाहौर।
(२) दिल्ली-अमृतसर-श्रीनगर।
(३) दिल्ली-कलकत्ता।
(४) दिल्ली-जोधपुर-कराची।
(५) कलकत्ता-रंगून।
(५) कलकत्ता-काठमंडू-पटना।

तृतीय विभाग:—

(१) बम्बई-पोरबन्दर-जामनगर-भुज-कराची।
(२) जामनगर-अहमदाबाद।
(३) बम्बई-भावनगर-राजकोट।
(४) बम्बई-ग्वालियर-कानपुर।
(५) बम्बई-पूना-बंगलौर।
(६) बम्बई-बेलगाँव-कोचीन।

चतुर्थ विभाग:—

(१) दिल्ली-नागपुर-हैदराबाद-मद्रास।
(२) हैदराबाद-बंगलौर।
(३) हैदराबाद-बम्बई।

पंचम विभाग:—

(१) बम्बई-नागपुर-कलकत्ता।

षष्ठ विभागः—

(१) कलकत्ता-विशाखापटनम्-मद्रास-बंगलौर ।

(२) कलकत्ता-डिब्रूगढ़ ।

(३) कलकत्ता-अगडोगरा ।

(४) कलकत्ता-नागपुर-बम्बई ।

सप्तम विभागः—

(१) कलकत्ता-चटगांव ।

(२) दिल्ली-लखनऊ-कलकत्ता ।

(३) दिल्ली-कानपुर-कलकत्ता ।

(४) कलकत्ता-गौहाटी-तेजपुर ।

(५) कलकत्ता-सिलचर ।

'एयर इण्डिया इन्टरनेशनल कारपोरेशन' द्वारा वायु मार्ग से विदेशों से सम्पर्क रखा गया है। उसके द्वारा भारत और ब्रिटेन, भारत और अफ्रीका तथा भारत और सिंगापुर को जाते हैं। अन्य राष्ट्रों को भी हमारे वायुयान जाने लगे हैं।

भारतीय वायुयानों के अतिरिक्त हमारे यहाँ पर कई विदेशी वायुयान भी आते जाते रहते हैं।

वायु-यातायात के विकास के लिए द्वितीय पंचवर्षीय योजना में ४४ करोड़ रुपये की रकम निर्धारित की गई है। इसके द्वारा नए वायुयान खरीदे जावेंगे, हवाई अड्डों में सुधार किए जायेंगे और वायुयान सम्बन्धी यंत्र भी खरीदे जावेंगे।

सारांश

भारत के आवागमन के साधनों के तीन विभाग किये जा सकते हैं:—

(अ) स्थल मार्ग

(१) रेल मार्गः—भारत के उत्तरी मैदान में रेल-मार्ग अधिक हैं। पहाड़ी भाग में कम हैं। भारतीय रेलमार्गों का राष्ट्रीयकरण कर दिया गया है—उन्हें आठ विभागों में बाँट दिया है—(१) उत्तरी रेलवे, (२) दक्षिणी रेलवे, (३) पश्चिमी रेलवे, (४) पूर्वी रेलवे, (५) मध्यवर्ती रेलवे, (६) उत्तरी-पूर्वी रेलवे, (७) दक्षिणी-पूर्वी रेलवे और (८) उत्तरी-पूर्वी फ्रंटियर रेलवे।

(२) सड़कें:—गाँवों का देश होने के कारण भारत में सड़कों की अधिक आवश्यकता है। ग्रांड ट्रंक रोड, कलकत्ता-मद्रास रोड, मद्रास-बम्बई रोड, दक्कन रोड आदि हमारे यहाँ की सड़कें हैं।

(३) कच्चे मार्गः—रेलवे और सड़कों के अतिरिक्त गाँवों में कई कच्चे मार्ग तथा पहाड़ों में कई पग-डण्डियाँ हैं।

(आ) जल-मार्ग

भारत में दो तरह के जल-मार्ग हैं—नदी-मार्ग और समुद्री-मार्ग ।

१. नदी-मार्गः—प्राचीन काल में उत्तरी भारत की नदियाँ यातायात की प्रमुख साधन थीं। यही कारण है कि वहाँ के बड़े बड़े नगर नदियों के किनारे बसे हुए हैं। परन्तु रेल-मार्ग के बन जाने से नदी-मार्ग का महत्व कम हो गया है फिर भी आसाम में ब्रह्मपुत्र नदी तथा बंगाल में हुगली नदी में बड़े-बड़े स्टीमर चलते हैं। इसी प्रकार दक्षिण भारत में 'बकिंघम नहर' कृष्णा के डेल्टे को गोदावरी नदी के डेल्टे से मिलाती है।

२. समुद्री मार्गः—भारत के दक्षिण में हिन्द महासागर आया हुआ है। इस देश को इस महासागर से बहुत लाभ पहुँचा है। हमारे यहां से विश्व के अन्य देशों को जाने के लिए कई समुद्र-मार्ग हैं। जिनमें मुख्य ये हैं:—

(अ) स्वेज मार्गः—स्वेज नहर बन जाने से भूमध्यसागर और अरब सागर मिल गये हैं। इस मार्ग के द्वारा भारत और यूरोप के बीच व्यापार होता है।

(आ) उत्तमाशा अन्तरीप मार्गः—इस मार्ग द्वारा हमारा देश दक्षिणी तथा पश्चिमी अफ्रीका से जुड़ा हुआ है। आगे यह मार्ग यूरोप को जाता है। इसकी एक शाखा अमेरिका को भी जाती है।

(इ) सिंगापुर मार्गः—इसके द्वारा भारत एशिया के पूर्वी देशों से सम्बन्धित है। भारत और इण्डोनेशिया, चीन, जापान आदि से व्यापार इसी मार्ग द्वारा होता है।

(ई) आस्ट्रेलिया मार्गः—भारत और आस्ट्रेलिया के बीच इसी मार्ग से व्यापार होता है।

(उ) कराची मार्गः—इसके द्वारा भारत और पाकिस्तान, फारस, ईराक आदि देशों के बीच आवागमन होता है।

(इ) वायु-मार्ग

वायु-मार्ग के दृष्टिकोण से भारत का स्थान बड़े महत्व का है। यूरोप तथा आस्ट्रेलिया के बीच में होने के कारण कई विदेशी यान भारत होकर जाते हैं। इनके अतिरिक्त देश के बड़े बड़े नगरों को मिलाने के लिये भी कई वायु-मार्ग हैं। भारत का जलवायु वायुयानों के उड़ने में बाधक नहीं है। साल के अधिकांश दिनों आकाश साफ रहता है और यहाँ ठण्ड भी कम पड़ती है। आज कल हमारे यहाँ वायु-मार्ग में बहुत उन्नति हो रही है।

प्रश्न

(१) यातायात के साधनों से देश की उन्नति का अनुमान किस प्रकार किया जाता है?

(२) भारत में कौन कौन से यातायात के साधन हैं?

(३) गंगा-सिंधु के मैदान में रेल-मार्ग का जाल-सा क्यों बन गया है?

(४) भारत के जल मार्गों का संक्षेप में वर्णन करो।

(५) वायु-मार्ग की वृद्धि के लिये भारत में क्या सुविधा है? वायु-मार्ग का भविष्य भारत में कैसा है?

———

अध्याय २१

संवाद-वहन के साधन

रेल गाड़ी, मोटरें, जहाज, वायुयान आदि जिस प्रकार से यात्रियों और माल को लाने-ले जाने में सुविधा देते हैं उसी प्रकार संवाद वहन के साधन भी व्यापार की वृद्धि में सहायक होते हैं। मुख्य संवाद-वहन के साधन डाक, तार और टेलीफून हैं। इनके द्वारा कम खर्च में समाचार सुदूर स्थानों को पहुँचा देते हैं। इसी कारण ऐसे साधनों का आर्थिक तथा व्यापारिक दृष्टिकोण से बड़ा महत्व है।

रेल्वे की भांति डाक और तार-विभाग का संचालन भी हमारे यहाँ सरकार की ओर से होता है। यह विभाग 'कोमूनिकेशन मिनिस्ट्री' से सम्बन्धित है।

पोस्ट और टेलीग्राफ विभाग के अन्तर्गत ही टेलीफून भी है। संचालन की सुविधा के लिए यह विभाग कई भागों में बांट दिया गया है। उनके क्षेत्र इस प्रकार हैं:—

[अ] पोस्ट और टेलीग्राफ के विभाग

क्र० सं०	विभाग और अधिकारी का पद	क्षेत्र
१	पोस्टर मास्टर जनरल, पश्चिमी बंगाल	पश्चिमी बंगाल, अण्डमान और निकोबार द्वीप तथा सिकिम
२	पोस्ट मास्टर जनरल, बिहार	बिहार
३	पोस्ट मास्टर जनरल, उत्तर प्रदेश सर्किल	उत्तर प्रदेश
४	पोस्ट मास्टर जनरल, पंजाब सर्किल	पंजाब, हिमाचल प्रदेश, जम्मू और काश्मीर तथा दिल्ली
५	पोस्ट मास्टर जनरल, बम्बई	बम्बई
६	पोस्ट मास्टर जनरल, मद्रास	मद्रास, मैसूर और केरल

७	पोस्ट मास्टर जनरल, सेन्ट्रल सर्किल	मध्य प्रदेश
८	डायरेक्टर ऑफ पोस्ट्स एण्ड टेली-ग्राफ्स, राजस्थान सर्किल	राजस्थान
९	डायरेक्टर ऑफ पोस्ट्स एण्ड-टेली-ग्राफ्स, आंध्र सर्किल	आंध्र राज्य
१०	डायरेक्टर ऑफ पोस्ट्स एण्ड टेली-ग्राफ्स, उड़ीसा	उड़ीसा
११	डायरेक्टर ऑफ पोस्ट्स एण्ड टेली-ग्राफ्स, आसाम	आसाम, मनीपुर और त्रिपुरा
१२	डायरेक्टर ऑफ पोस्टल सर्विसेज, दिल्ली	दिल्ली
१३	डायरेक्टर ऑफ पोस्टल सर्विसेज, हैदराबाद	हैदराबाद (आंध्र)

[आ] टेलीफून के केन्द्र-विभाग

क्रम संख्या	विभाग और अधिकारी का पद	केन्द्र
१	जनरल मैनेजर, कलकत्ता टेलीफून डिस्ट्रिक्ट	कलकत्ता नगर
२	जनरल मैनेजर, बम्बई टेलीफून डिस्ट्रिक्ट	बम्बई
३	डिस्ट्रिक्ट मैनेजर, दिल्ली टेलीफून डिस्ट्रिक्ट	दिल्ली और नई दिल्ली
४	डिस्ट्रिक्ट मैनेजर, मद्रास टेलीफून डिस्ट्रिक्ट	मद्रास नगर

पोस्ट और टेलीग्राफ विभाग में २,६३,००० मनुष्य काम करते हैं। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् इस विभाग ने बहुत उन्नति की है। भारत के डाकघर, तारघर और टेलीफून कनेक्शन की संख्या इस प्रकार है:—

ऑफिस

१	ग्रामीण पोस्ट ऑफिस....	३६,७२८
२	नगरों के डाकघर	६,१७६
३	टेलीग्राफ ऑफिस	८,५६०
४	टेलीफून	२,६५,०००

१. डाक विभागः—डाक द्वारा पत्रों के अतिरिक्त मनीआर्डर, पार्सल आदि भी भेजे जाते हैं। भारतीय डाक का मार्ग १,१६०,००० मील है। इनमें २४% रेल मार्ग द्वारा, १७% मोटर द्वारा, ५% बैलगाड़ी, घोड़े, ऊँट आदि द्वारा और शेष ५४% हरकारों तथा छोटे स्टीमरों द्वारा तय किया जाता है। जल और भू-भाग के अतिरिक्त आजकल हवाई मार्ग से भी डाक जाती है। वायुयान तथा जल-जहाज से डाक विश्व के सभी देशों को जाती है।

२. तार-विभागः—भारत के बड़े-बड़े कस्बों और नगरों में तारघर हैं। प्रायः तारघर और डाकघर एक ही जगह काम करते हैं। ऐसी योजना बनाई जा रही है कि पांच हजार की जनसंख्या के कस्बे में टेलीग्राफ ऑफिस अवश्य हो। इसी प्रकार प्रत्येक सब-डिवीजन के केन्द्र में भी तारघर का होना आवश्यक समझा गया है।

१ नवम्बर सन् १६५३ को टेलीग्राफ विभाग की शताब्दी मनाई गई। पहले तो तार अंग्रेजी में ही दिये जाते थे परन्तु अब हिन्दी में भी तार दिये जाने लगे हैं। देवनागरी लिपि में देने वाले तारघरों की संख्या ६५१ हैं। हिन्दी में तार देने की शिक्षा देने के लिए कलकत्ता, आगरा, पूना जबलपुर और पटना में पांच शिक्षण केन्द्र खोले गये हैं।

समाचार भेजने के अतिरिक्त तार से मनीआर्डर भी भेजे जाते हैं। भारत के तारघरों को मिलाने वाले तारों की कुल लम्बाई ४०० हजार मील है। साल में लगभग तीन करोड़ समाचार तार द्वारा भेजे जाते हैं।

विदेशों को भी तार द्वारा समाचार भेजते हैं। ऐसे तार को 'केबल' कहते हैं। ये तार समुद्र के पानी में लगे होते हैं। विश्व के प्रायः सभी बड़े बड़े राष्ट्र केबल द्वारा भारत से जुड़े हुए हैं।

३. टेलीफून विभागः—प्रारम्भ में टेलीफून एक्सचेंज लगाने की सरकारी आज्ञा 'ओरियन्ट टेलीफून कम्पनी' को दी गयी थी जिसके द्वारा बम्बई, कलकत्ता, कराची, मद्रास और रंगून में टेलीफून लगाए गए। सन १६४२ में टेलीफून की लाइनों को सरकार ने ले लिया। साल में लगभग १ करोड़ १० लाख टेलीफून से बातचीत होती है।

बड़े बड़े नगरों में स्थानीय टेलीफून हैं। एक नगर से दूसरे नगर को जाने वाले टेलीफून को ट्रंक टेलीफून कहते हैं।

विदेशों को भी टेलीफून से बातचीत करते हैं। भारत से मिश्र, ब्रह्मा, इण्डोनेशिया, ईरान, जापान, इङ्गलैंड और नैरोबी के बीच टेलीफून का सीधा सम्बन्ध है। इसके अतिरिक्त अन्य अनेक राष्ट्रों के साथ रेडियो टेलीफून का सम्बन्ध है।

बंगलौर नगर में टेलीफून तथा तत्सम्बन्धी सामान बनाने का कारखाना है। टेलीफून से काम करने वाले आपरेटर्स की शिक्षा के लिए बम्बई, कलकत्ता, सहारनपुर, दिल्ली, मद्रास, अम्बाला और नागपुर में सात शिक्षण-केन्द्र हैं।

४. वायरलैसः—तार और टेलीफून के अतिरिक्त बेतार के तार अर्थात् वायरलैस के द्वारा भी समाचार भेजे जाते हैं। टेलीफून तथा टेलीग्राफ के तार के टूटने से बातचीत नहीं हो सकती। तब वायरलैस ही काम आता है।

समुद्र-किनारे पर स्थित नगरों को पानी में चलने वाले जहाजों से वायलैस द्वारा समाचार मिलते हैं। इसी प्रकार आसमान में उड़ने वाले वायुयान में बैठे हुए व्यक्तियों को भी वायरलैस से समाचार मिल जाते हैं। कलकत्ता, बम्बई और मद्रास तथा अन्य बन्दरगाहों पर भी वायरलैस स्टेशन हैं। भारत के बड़े हवाई अड्डों पर भी वायरलैस स्टेशन हैं।

वायरलैस में शिक्षा देने के लिए भारत में पाँच शिक्षण-केन्द्र हैंः—बम्बई, दिल्ली, कलकत्ता, बंगलौर और जबलपुर।

इस प्रकार डाक, तार और टेलीफून से बहुत लाभ हैं। आर्थिक और व्यापारिक दृष्टिकोण से तो इनका इतना महत्व है कि इनके बिना आजकल काम ही नहीं चल सकता। दूर दूर के नगरों में बैठे हुए लोग बातें करके करोड़ों रुपयों की कीमत के माल की खरीद-बिक्री कर लेते हैं। राष्ट्र की सुरक्षा के लिए भी इन साधनों का होना बहुत आवश्यक है। इनके महत्त्व को ध्यान में रखते हुए प्रथम पंचवर्षीय-योजना में डाक, तार और टेलीफून में वृद्धि करने के लिए ५० करोड़ रुपये की रकम रखी गई थी। विशेष ध्यान गाँवों में डाकखानों की संख्या में वृद्धि करने तथा नगरों में टेलीफून की स्थापना करने की ओर है। दूसरी योजना में इन संवाद-वहन के साधनों में वृद्धि करने के लिये ७५ करोड़ रुपये की धनराशि निर्धारित की गई है।

सारांश

रेल, मोटर, वायुयान आदि का भारत के आर्थिक विकास में बहुत योग रहा है। उसी भाँति डाक, तार और टेलीफून का महत्व भी कम नहीं है। पोस्ट और टेलीग्राफ डिपार्टमेन्ट द्वारा इनकी व्यवस्था होती है। देश के विभाजन के पश्चात् इस विभाग ने बहुत उन्नति की है। भारत के भीतरी भागों के अतिरिक्त विदेश भी इन संवादवाहक साधनों से भारत से सम्बन्धित हैं, इन साधनों के प्रयोग से समय की बड़ी बचत होती है और घर बैठे ही संसार के किसी भाग में स्थित नगर से बातचीत की जा सकती है।

प्रश्न

१. भारतीय पोस्टल विभाग का संचालन किस प्रकार होता है?
२. भारत के ग्रामीण तथा शहरी डाकखाने कितने हैं?
३. डाक के द्वारा कौन कौन सी वस्तुएँ भेजी जाती हैं?
४. ट्रंक टेलीफून किसे कहते हैं?
५. वायरलैस से क्या लाभ होते हैं?

अध्याय २२

व्यापार

बड़े पैमाने पर उत्पादन होने के कारण वस्तुओं का आदान-प्रदान होना आज के युग की विशेषता है। इसी को व्यापार कहते हैं। एक ही राष्ट्र के विभिन्न भागों में जो वस्तुओं का आदान-प्रदान होता है उसे देश का 'भीतरी' व्यापार या 'घरेलू' व्यापार कहते हैं। अन्य राष्ट्रों से होने वाला 'विदेशी' व्यापार होता है। किसी भी राष्ट्र से बाहर जाने वाला माल 'निर्यात' कहलाता है। विदेशों से आने वाला माल 'आयात' कहलाता है। निर्यात और आयात के अन्तर को 'व्यापार का संतुलन' कहते हैं। जब कोई राष्ट्र निर्यात की तुलनामें आयात कम करता है तो व्यापार का संतुलन उस राष्ट्र के अनुकूल होता है। यदि आयात अधिक और निर्यात कम हो तो व्यापार का संतुलन राष्ट्र के विपरीत गिना जाता है। ऐसा होना राष्ट्र के हित में अच्छा नहीं।

भारत का घरेलू व्यापार तो पर्याप्त मात्रा में होता है परन्तु यहाँ का विदेशी व्यापार अन्य बड़े राष्ट्रों की तुलना में कम होता है राष्ट्र के विदेशी व्यापार की उन्नति करने के लिए निम्नलिखित उपाय किये जा रहे हैं:—

(१) विदेशों में भारत सरकार की ओर से व्यापार-प्रतिनिधि रखे गये हैं। वे व्यापार में सुविधा देते हैं।

(२) विदेशों और भारत के बीच व्यापार सम्बन्धी संधियाँ होने लगी हैं।

(३) जिन वस्तुओं का उत्पादन हमारे यहाँ आवश्यकता से अधिक होता है उनके निर्यात को प्रोत्साहन दिया जाता है।

(४) आयात की मात्रा में कमी की जा रही है। बहुत ही आवश्यकता की वस्तुएँ विदेशों से मँगाई जाती हैं।

(५) भारत सरकार के 'व्यापार तथा उद्योग' मंत्रालय की ओर से भारतीय माल के व्यापार की वृद्धि करने सम्बन्धी विज्ञापन, प्रचार आदि के रूप में प्रयत्न किये जाते हैं।

(६) आजकल भारत भी व्यापार सम्बन्धी अन्तर्राष्ट्रीय मेलों में भाग लेने लगा है। भारतीय मालके व्यापार में वृद्धि करने के लिए विदेशों में जहाँ भारतीय दूतावास हैं वहाँ कई जगह प्रदर्शिनी गृहों की स्थापना की गई हैं जैसे लन्दन, न्यूयार्क, बैंगकोक आदि में।

(क) भारत का भीतरी व्यापार

हमारा देश बहुत विशाल है। यहाँ भूमि की रचना और जलवायु में विभिन्नता होने से कई प्रकार की पैदावार होती है। देश के भिन्न-भिन्न भागों में उपज में विभिन्नता होने से यहाँ

कई प्रकार की वस्तुओं का प्रयोग होता है। उदाहरण के लिये देश के एक भाग में गेहूँ पैदा होता है, तो दूसरे में चावल। गेहूँ पैदा करने वाले राज्य चावल मँगाएँगे और चावल वाले राज्यों में गेहूँ पैदा करने वाले राज्यों से गेहूँ लाया जायगा। इस प्रकार देश के भीतरी व्यापार की उत्पत्ति हुई है।

निम्नलिखित वस्तुओं में भारत का आंतरिक व्यापार अधिक होता है:—

(१) अन्न (गेहूँ, चावल आदि)।
(२) शक्कर और गुड़।
(३) तिलहन (मूँगफली, सरसों, तिल आदि)।
(४) जूट का सामान तथा कच्चा जूट।
(५) कोयला।
(६) कपास और सूती वस्त्र।
(७) चमड़ा तथा चमड़े की बनी वस्तुएँ।
(८) चाय।

खाद्यान्नों में से चावल बंगाल और बिहार से निर्यात किया जाता है, क्योंकि वहाँ उसकी उपज अच्छी होती है। मद्रास राज्य में चावल भेजा जाता है। पंजाब तथा उत्तर-प्रदेश में गेहूँ अधिक होता है। वहाँ से वह विशेषतः दक्षिणी भारत को भेजा जाता है। कलकत्ते नगर में भी गेहूँ मँगवाया जाता है। शक्कर उत्तर-प्रदेश और बिहार से भारत के प्रत्येक राज्य को भेजी जाती है। मूँगफली मद्रास से उत्तरी-भारत के राज्यों में आती है। जूट तथा पाट का सामान पश्चिमी बंगाल से देश के प्रत्येक भाग को जाता है। कोयले की अधिक खानें बिहार और बंगाल में हैं। अतः वहीं से यह भारत के सब राज्यों को भेजा जाता है। जहाँ रेल के कारखाने हैं, वहाँ इसकी खपत अधिक होती है। सूती वस्त्र का अधिकांश बम्बई राज्य से निर्यात होता है और भारत के कई भागों में यह पहुँचाया जाता है। आजकल मद्रास से भी सूती वस्त्र का निर्यात होने लगा है। चमड़ा दक्षिणी भारत से अधिक निर्यात होता है। आंध्र प्रदेश का चमड़ा मद्रास में आता है। उत्तर में राजस्थान और पंजाब के पशुओं का चमड़ा उत्तर-प्रदेश के कानपुर के कारखानों में अधिक काम आता है। चाय आसाम राज्य से भारत के सभी भागों को भेजी जाती है।

देश में इतनी अधिक वस्तुएँ उत्पन्न होने पर भी हमारा भीतरी व्यापार बहुत कम है। विदेशी व्यापार से यह केवल तीन गुना अधिक है जब कि यूरोप के पाश्चात्य देशों तथा संयुक्त राष्ट्र अमेरिका का भीतरी व्यापार विदेशी व्यापार से कई गुना अधिक है। इसके कई कारण हैं—देश के अधिकांश निवासी खेती करते हैं और उनकी आवश्यकताएँ कम हैं। यातायात के साधन भी पर्याप्त नहीं हैं। हमारे उद्योग-धन्धों के विकास के साथ-साथ देश के भीतरी व्यापार की उन्नति अवश्य होगी।

(ख) भारत का विदेशी व्यापार

हमारे विदेशी व्यापार में समय समय पर कई परिवर्तन हुए जैसा कि नीचे के वर्णन से स्पष्ट होता है।

(अ) गत महायुद्ध से पूर्व भारत के विदेशी व्यापार की विशेषताएँ—

(१) युद्ध से पूर्व हमारे विदेशी व्यापार का ६० प्रतिशत से अधिक भाग समुद्र द्वारा होता था।

(२) द्वितीय महायुद्ध से पूर्व व्यापार का संतुलन भारत के अनुकूल था अर्थात् हमारे देश का निर्यात उसके आयात से अधिक था।

(३) हमारे देश के आयात में तैयार माल (Manufactured Goods) ही मुख्य था, किन्तु हमारे निर्यात का मुख्य अंश कच्चा माल अथवा अर्द्ध-निर्मित माल था।

(४) हमारे निर्यात किये हुये कच्चे माल का सामान तैयार होकर फिर हमारे देश में बने माल के रूप में आयात होता था।

(५) हमारे आयात व्यापार का अधिक भाग ब्रिटेन से आता था और ब्रिटेन हमारे निर्यात व्यापार का सबसे बड़ा ग्राहक था।

(अ) युद्ध से पूर्व प्रमुख निर्यात

१. कपास:—हमारी रूई जापान, ब्रिटेन, जर्मनी, फ्रांस, बेलजियम, हॉलैण्ड आदि देशों को जाती थीं। जापान हमारी कपास का सबसे बड़ा ग्राहक था और हमारी निर्यात कपास के आधे से अधिक भाग को खरीदता था। ब्रिटेन हमारी कपास का लगभग १५ प्रतिशत खरीदता था। सन् १६३७—३८ में हमारी कपास के निर्यात का मूल्य ३० करोड़ से कुछ कम ही था।

कपास के बने हुए माल का निर्यात भी हमारे यहाँ से होता था। सन् १६३७—३८ में लगभग ६ करोड़ रुपये के मूल्य का वस्त्र का निर्यात हुआ जो मुख्यतया लंका, मलाया, अदन और पूर्वी अफ्रीका ने ख़रीदा।

२. पाट का सामान——संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, आर्जेन्टाइना, आस्ट्रेलिया, कनाडा आदि कृषि-प्रधान देश हमारे प्रमुख ग्राहक थे। संयुक्त राष्ट्र हमारे जूट के सामान का ३२ प्रतिशत खरीदता था। सन् १६३७—३८ में जूट के सामान के निर्यात का मूल्य २६ करोड़ रुपये था।

३. कच्चा जूट:—कच्चे जूट पर भारत का एकाधिकार था। हमारे जूट के ग्राहक ब्रिटेन, जर्मनी, संयुक्तराष्ट्र अमेरिका, फ्रांस, इटली, बेलजियम आदि थे। ब्रिटेन हमारे जूट का सबसे बड़ा ग्राहक (निर्यात जूट का २५%) था, और जर्मनी को २० प्रतिशत जाता था। सन् १६३७—३८ में कच्चा जूट लगभग ४५ करोड़ रुपयों से अधिक का निर्यात हुआ।

४. चाय:——चाय भी हमारे निर्यात की मुख्य वस्तु है। हमारी चाय का सबसे बड़ा ग्राहक ब्रिटेन था, जहाँ हमारे निर्यात के तीन-चौथाई भाग से भी अधिक चाय जाती है। कनाडा, आस्ट्रेलिया, संयुक्तराष्ट्र अमेरिका आदि हमारी चाय के अब भी ग्राहक हैं।

५. तिलहन:—तिलहनों में मूँगफली और अलसी प्रमुख हैं। ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी, इटली, बेलजियम, हॉलैंड आदि हमारे तिलहन के मुख्य खरीददार थे। युद्ध से पूर्व ब्रिटेन में हमारे निर्यात का ३० प्रतिशत और इटली में १५ प्रतिशत तिलहन जाता था।
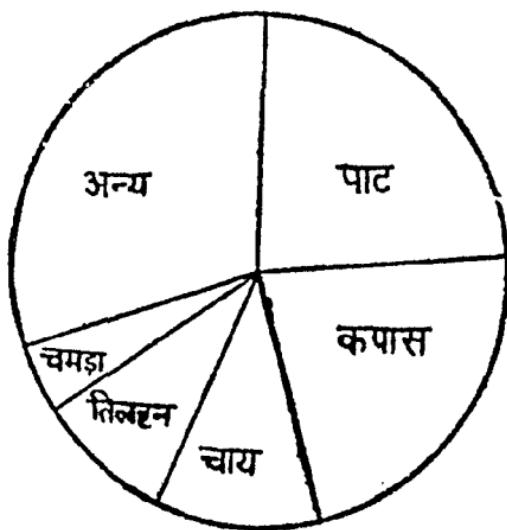
चित्र सं० ८२. युद्ध से पूर्व भारत के प्रमुख निर्यात

६. खाल व चमड़ा:—भारत के पांच प्रमुख निर्यात में (जूट, कपास, चाय, तिलहन और चमड़ा) चमड़े का भी स्थान है। हमारे चमड़े का सबसे बड़ा ग्राहक ब्रिटेन और दूसरा संयुक्तराष्ट्र अमेरिका है। जर्मनी, फ्रांस, जापान, इटली आदि भी हमारा चमड़ा खरीदते थे।

७. धातुएँ:—धातुओं में मैंगनीज, अभ्रक और लोहा मुख्य हैं। मैंगनीज के प्रमुख ग्राहक ब्रिटेन, बेलजियम, जापान, संयुक्तराष्ट्र और फ्रांस थे। कच्चा लोहा जापान, ब्रिटेन, संयुक्तराष्ट्र और चीन को जाता था। अभ्रक संयुक्तराष्ट्र, ब्रिटेन, फ्रांस और जर्मनी खरीदते थे।

८. खाद्यान्न:—खाद्यान्न भी विदेशों को निर्यात होते थे। सन् १९३७–३८ में २॥ करोड़ रुपये का बढ़िया चावल निर्यात करके ११ करोड़ रुपये का घटिया चावल ब्रह्मा से आयात किया गया। गेहूँ भी थोड़ा बहुत बाहर जाता था। लंका, ब्रिटेन, जर्मनी, जापान, फ्रांस, ईरान, मलाया आदि हमारे खाद्यान्नों के ग्राहक थे।

इनके अतिरिक्त लाख, ऊन व ऊनी सामान, तम्बाकू, मसाले, खली, कहवा, रबर आदि अन्य वस्तुएँ विदेशों को भेजी जाती थीं।

(आ) युद्ध से पूर्व प्रमुख आयात

१. सूती वस्त्र:—भारत के आयात में सूत व सूती वस्त्र का प्रमुख स्थान था। हमारे आयात के मूल्य का लगभग चौथाई भाग कपास और सूती वस्त्रों का था।

युद्ध से पूर्व ब्रिटेन हमारे वस्त्र के आयात का लगभग ५०% और जापान ४०% माल भेजता था। चीन, हॉलैंड, फ्रांस, स्विट्जरलैंड, इटली और जर्मनी से भी सूती वस्त्र आया करता था। १९३७–३८ में भारत ने १४ करोड़ रुपये का रुई का सामान खरीदा।

२. लोहे का सामानः—इस सामान में मशीनें और मिलों का आवश्यक सामान प्रमुख है। ब्रिटेन हमारे आयात का ३/४ भाग भेजता था। जर्मनी, बेलजियम, जापान, फ्रांस और संयुक्तराष्ट्र से भी हम लोहे का सामान खरीदते थे। मशीनों में रुई, जूट तथा चीनी के कारखानों में काम आने वाली मशीनें प्रमुख थीं। मशीनों के आयात की वृद्धि प्रति वर्ष अब भी हो रही है।

३. मोटरें:—हमारे यहाँ मोटरकार और बसें संयुक्तराष्ट्र, ब्रिटेन, कनाडा, जर्मनी, इटली, फ्रांस, जापान आदि देशों से आती हैं।

४. शक्करः—सन् १९३७–३८ में लगभग ३९ करोड़ रुपये की चीनी बाहर से आई। हमारे यहाँ जावा, मलाया आदि देशों से चीनी आती है। आधी से अधिक चीनी अकेले जावा से आती है।
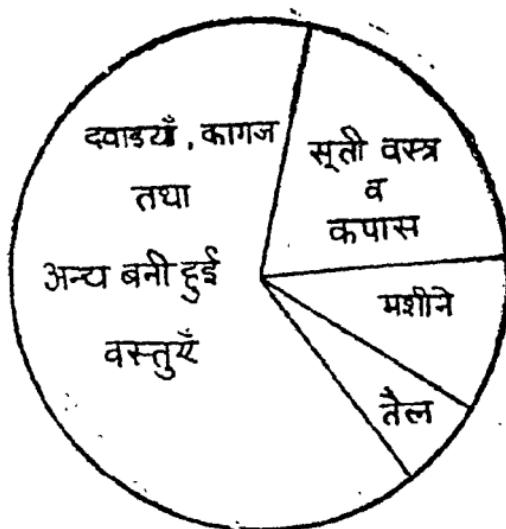
चित्र सं० ८३. युद्ध से पूर्व भारत के प्रमुख आयात

५. खनिज तेलः—खनिज तेल हमारी आयात का प्रमुख अंग था। हम ईरान, ईराक, पूर्वी द्वीप-समूह, संयुक्तराष्ट्र, ब्रह्मा आदि देशों से तेल मँगाते थे। लगभग ८ करोड़ रुपये का विविध प्रकार का खनिज तेल हमारे यहाँ आता था।

६. कागजः—हमारे देश में ३ करोड़ रुपये से कुछ ही कम का कागज और कार्ड-बोर्ड बाहर से आता था। ब्रिटेन, जर्मनी, स्वीडन, नार्वे आदि से कागज आता था।

७. रबर का सामानः—लगभग पौने दो करोड़ रुपये के टायर, ट्यूब आदि सामान संयुक्तराष्ट्र, जर्मनी और जापान से आता था।

८. रेशम का मालः—अधिकतर नकली रेशम और रेशमी वस्त्र का ७०% प्रतिशत जापान से आता था। चीन, इटली, ब्रिटेन आदि से भी रेशम आता था।

६. रासायनिक पदार्थः—सन् १६३८ में ६ करोड़ रुपये के मूल्य के रासायनिक पदार्थ आये थे। ये अधिकतर ब्रिटेन, जर्मनी, जापान, संयुक्तराष्ट्र आदि से मंगाये जाते थे।

१०. अन्य आयातः—भारत में ऊनी कपड़ा, शीशे का सामान, नमक आदि भी विदेशों से आता था।

(इ) द्वितीय महायुध्द के समय भारतीय व्यापार

इस महायुद्ध का हमारे व्यापार पर भारी प्रभाव पड़ा। केवल जर्मनी आदि शत्रु देशों से ही हमारा व्यापारिक सम्बन्ध-विच्छेद नहीं हुआ, किन्तु योरोप के प्रमुख देशों से भी व्यापार बन्द हो गया। मित्र देशों से हमारा सम्बन्ध बढ़ गया, दूसरा गहरा प्रभाव यह पड़ा कि पहले हमारा देश कच्चे माल का ही निर्यातक था, किन्तु युद्ध के परिणाम-स्वरूप विदेशों से बना हुआ माल आना बन्द होगया और हमारे कारखानों की बहुत उन्नति हुई और हम बाहर का बना हुआ माल कम मँगाने लगे। युद्ध से पूर्व सन् १६३६-३७ में हम समस्त आयात का ७५% तैयार सामान मँगाते थे, किन्तु युद्धकाल में सन् १६३१-४२ में उसका भाग ५५% ही रह गया। तीसरा प्रभाव व्यापार की दशा में भी पड़ा। ब्रिटेन से हमारा व्यापार घटने लगा और उस अभाव की पूर्ति संयुक्त राष्ट्र, कनाडा, आस्ट्रेलिया आदि देशों ने की। सन् १६३६-३७ में हमारे आयात का ३८ प्रतिशत ब्रिटेन से आया था किन्तु सन् १६४१-४२ में वह केवल २१% रह गया। कनाड़ा, आस्ट्रेलिया आदि ने इस अभाव की ही पूर्ति नहीं की, किन्तु उसमें बहुत अधिक वृद्धि की। हमारे निर्यात में भी ऐसा ही परिवर्तन हुआ। ब्रिटेन को हम कम माल भेजने लगे और कनाड़ा, आस्ट्रेलिया, दक्षिणी अफ्रीका, लंका, ब्रह्मा, ईरान, मलाया आदि देशों को हमारा निर्यात बढ़ने लगा। चौथा मुख्य प्रभाव यह पड़ा कि जापान के युद्धरत हो जाने से मध्य-पूर्व के बाजार पर हमारा भी थोड़ा सा अधिकार हो गया। मध्य-पूर्व में मिश्र, ईराक आदि देशों से हमारा व्यापार विशेष रूप से बढ़ गया।

युद्ध के समय हमारे आयात निर्यात पर नियन्त्रण हो गया, जिससे व्यापार की स्वाभाविक गति अवरुद्ध हो गई।

(ई) महायुद्ध के पश्चात् भारतीय व्यापार

यद्यपि छः वर्ष के युद्ध के बाद शान्ति होगई किन्तु व्यापार को अपने स्वाभाविक ढंग पर आने में कई वर्ष लगे। युद्ध के पश्चात् सन् १६४५-४६ में अन्न के आयात में अधिक

वृद्धि हुई जिससे व्यापार का संतुलन बढ़ने लगा। आयात-व्यापार पर कोई नियंत्रण न होने के कारण भोग-विलास की वस्तुओं के आयात से देश का व्यापार पट गया किन्तु उसके बदले में निर्यात करने के लिए हम पर्याप्त कपास और जूट पैदा न कर सके; क्योंकि खाद्यान्नों के अभाव के कारण भूमि के अधिकांश भाग में उन्हीं की पैदावार बढ़ रही थी। अतः व्यापार का संतुलन हमारे विपरीत होने लगा। इसको रोकने के लिये भारत सरकार ने हमारे आयात-व्यापार पर नियन्त्रण लगा दिया। युद्धकालीन निर्यात-नियन्त्रण को यथासम्भव ढीला कर दिया गया। अन्न के आयात में अत्यधिक वृद्धि हो जाने के कारण हम निर्यात की अपेक्षा अधिक आयात करने लगे हैं।

युद्धकाल से देश का भीतरी व्यापार बढ़ गया था। युद्ध के पश्चात् और विशेषतः स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद भारत में उद्योग-धन्धों का विकास होने के कारण भीतरी व्यापार और भी अधिक बढ़ गया।

पाकिस्तान के अलग हो जाने के कारण हमारे देश के व्यापार पर पर्याप्त प्रभाव पड़ा। पाट का निर्यात कम हो गया। हम पाट पाकिस्तान से मँगवाने भी लगे। इसी प्रकार उत्तम कोटि की कपास पैदा करने वाले पंजाब के भाग के पाकिस्तान में चले जाने के कारण हमें कपास भी बाहर से मँगवानी पड़ती है जबकि पहले हम कपास का निर्यात किया करते थे। पंजाब के गेहूँ उत्पन्न करने वाले भाग का अधिकांश व सिंध भी पाकिस्तान में गए। अतः हमें खाद्य-सामग्री के आयात में वृद्धि करनी पड़ी।

(ङ) भारत का वर्तमान विदेशी व्यापार

स्वतंत्रता प्राप्त हो जाने के पश्चात् भारत के विदेशी व्यापार में पर्याप्त परिवर्तन हो गया। प्रथम पंचवर्षीय योजना काल में सिंचाई के साधनों में वृद्धि करके खेती का उत्पादन बढ़ाया गया जिसके फलस्वरूप हमें विदेशों से अधिक अन्न मंगाने की आवश्यकता नहीं रही। देश में कई कारखाने खुल गए जिनमें कई प्रकार की वस्तुएँ बनने लगीं। इसका फल यह हुआ कि विदेशों से आने वाले निर्मित माल में कमी होने लगी। हमारे यहाँ का कच्चा माल कारखानों में ही अधिक काम में आने लगा अतः उसका निर्यात घटता गया। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में भी औद्योगिक विकास की ओर विशेष ध्यान दिया गया है अतः कारखानों में बने हुए माल का आयात अब बहुत ही कम हो जायगा।

आयात की प्रमुख वस्तुएँ:—

निम्नलिखित तालिका में पिछले दो वर्षों में आयात की गई वस्तुओं की सूची दी जाती है:—

(मूल्य करोड़ रुपये में)

नाम वस्तुः—	सन् १६५६	सन् १६५७.
धातु और ढलाई की वस्तुएँ	१५६.४६	२२६.१६
मशीनें	१२५.६४	१७१.८३
खनिज तेल	७५.८१	१०७.५१
गाड़ियाँ	६८.६०	७५.८१
बिजली का सामान और मशीनें	४५.१३	६१.१४
दाल एवं आटा	४.३६	५५.३६
दवाइयाँ	४१.६६	५१.८०
कपास	५३५. ६	२१.२७
फल और शाक-सब्जी	१५.०६	२१.२७
कागज एवं स्टेशनरी	१६.००	१७.००
सुगंधित द्रव्य	२७.३३	१४.३१
रसायनिक पदार्थ	१४.८१	१४.२४
ऊन	६.६४	१२.६८
पटसन	१३.८२	७.२०
मसाले	८.१२	२.६३
कुल योग	८१५.०३	१०२५.८२

आयात की वस्तुओं की सूची को देखने से ज्ञात होता है कि सबसे अधिक रकम मशीनें और गाड़ियाँ मंगाने में खर्च हुई है। यह स्वाभाविक ही है क्योंकि द्वितीय पंचवर्षीय योजना काल में बड़े बड़े उद्योगों का विकास किया जा रहा है जिनके लिए मशीनों की आवश्यकता है। परिवहन के साधनों में वृद्धि करने के लिए गाड़ियाँ मंगाई जा रही हैं। कारखानों की माँग की पूर्ति करने के लिए ही लोहा और फौलाद का आयात किया गया है।

अनाज पहले हमारे यहाँ पर्याप्त मात्रा में आयात किया जाता था परन्तु धीरे धीरे इस आयात में कमी हो रही है। सन् १६५२ में हमारे देश में लगभग २८८ करोड़ रुपये का अनाज बाहर से आया, परन्तु प्रथम पंचवर्षीय योजना में खेती के विकास पर अधिक जोर देने से बाहर से अनाज बहुत कम आने लगा है। सन् १६५५ में इसके आयात में केवल ३५ करोड़ रुपया ही व्यय हुआ। यह संतोष की बात है। इसी प्रकार शक्कर का आयात भी कम होता जा रहा है।

हमारे देश में खनिज तेल का अभाव है अतः इस पदार्थ को हमें बाहर से ही मंगाना पड़ता है। इन दिनों भूगर्भ में तेल को खोजा जा रहा है अतः यदि हमारे देश में ही तेल अधिक मात्रा में मिल गया तो फिर हमें इसके आयात पर भारी रकम व्यय करने की

आवश्यकता नहीं होगी ।

आयात की अन्य वस्तुओं में रासायनिक पदार्थ, रंग, कागज, बिजली का सामान आदि हैं। इन पदार्थों को तैयार करने के कारखाने भी हमारे यहाँ खुल रहे हैं अतः आशा है इनका आयात भी कम हो जायगा ।

निर्यात की प्रमुख वस्तुएँ

आयात की भाँति निम्नलिखित तालिका में भारत से निर्यात होने वाली वस्तुओं की सूची दी जाती है :—

(मूल्य करोड़ रुपये में)

नाम वस्तु—	सन् १९५६	सन् १९५७
चाय	१४३.१६	१२३.४०
जूट एवं जूट का सामान	११२.४९	११३.२०
कपास की वस्तुएँ	५७.३२	६५.१९
मैंगनीज	२१.८२	३१.५१
खाल एवं चमड़े की वस्तुएँ	२३.०६	२१.७५
कपास	२५.२१	१८.६६
खनिज धातु	१७.२७	१४.७९
ऊन	१०.६५	१२.९३
शक्कर	०.८०	१२.८८
तम्बाकू	१५.५१	१२.८३
लोहा	९.१९	११.७६
खाद्य तेल	२०.८०	११.४२
सुगन्धित द्रव्य	९.६१	९.७८
अभ्रक	८.७८	९.६९
मसाले	९.५६	८.४३
कहवा	५.३४	७.७३
लाख	९.७३	७.०५
खाल और कच्चा चमड़ा	६.०७	६.९९
पेट्रोलियम	०.९६	६.६२
कुल योग	५०७.३२	५०६.६१

ऊपर की सूची से ज्ञात होता है कि हमारे यहाँ से बाहर जाने वाली वस्तुओं में चाय का स्थान सर्व प्रथम है । यह ऐसा पदार्थ है कि विश्व के अनेक उन्नतिशील राष्ट्रों में इसकी मांग है, अतः इसका निर्यात तो बढ़ता ही जायगा और उससे भारत को अधिक आमदनी होगी ।

चाय के पश्चात् निर्यात की वस्तुओं में पाट के सामान का स्थान है, पाट से बनी हुई बोरी, सुतली, रस्सियां, निवार आदि विदेशों को भेजी जाती हैं और उनके बदले में यहां की आवश्यक वस्तुएँ आयात की जाती हैं।

औद्योगिक विकास होने से भारत से आजकल सूत और सूती वस्त्र भी निर्यात किए जाने लगे हैं।

निर्यात की अन्य वस्तुओं में कई प्रकार का कच्चा माल है जैसे खालें तथा कमाया हुआ चमड़ा, कपास, कच्ची धातुएँ, तम्बाकू, कोयला आदि। पहले तो इन वस्तुओं का निर्यात हमारे यहां से पर्याप्त होता था परन्तु इन दिनों हमारे यहां के कारखानों में भी इनकी मांग निरन्तर बढ़ रही है अतः इनका निर्यात भी कम हो रहा है। यह बात आशाजनक है क्योंकि राष्ट्र में ही इन वस्तुओं के काम में आ जाने से लोगों को बड़ा लाभ होगा।

भारत के आयात और निर्यात के आंकड़ों से एक बात और स्पष्ट होती है। वह यह है कि सन् १९५७ में १०२५.८२ करोड़ रुपये की वस्तुओं का आयात हुआ और उस साल के निर्यात का मूल्य ५०६.६१ करोड़ रुपया है। अतः उस वर्ष व्यापार का संतुलन हमारे प्रतिकूल रहा। परन्तु सन् १९५९ में भी यही स्थिति रही अर्थात् व्यापार का संतुलन हमारे प्रतिकूल रहा क्योंकि आयात अधिक हुआ और निर्यात कम। आगे के कुछ वर्षों में भी ऐसी ही स्थिति रहने का अनुमान है। देखने में तो यह बात भारत के हित की नहीं है क्योंकि हम विदेशों से अधिक रकम का माल मँगाते हैं और बाहर कम रुपये का माल भेजते हैं परन्तु वास्तविक बात यह है कि इन दिनों विदेशों से मशीनें कारखानों के काम में लेने के लिए अधिक मँगवाई जा रही हैं जिनकी कीमत अत्यधिक है। इन मशीनों के मूल्य के कारण आयात अधिक हो गया। धीरे धीरे इन मशीनों के कारण हमारे कारखानों में वस्तुएँ बनाई जा रही हैं और फिर उनको निर्यात किया जायगा जिससे हमें अधिक रुपया मिलेगा और तब निर्यात का मूल्य आयात से बढ़ जायगा और हमारे विदेशी व्यापार का संतुलन हमारे अनुकूल हो जावेगा।

भारत के विदेशी व्यापार की रचना

द्वितीय महायुद्ध से पूर्व सन् १९३८-३९ में खाद्य पदार्थ आयात के कुल मूल्य का १६ प्रतिशत थे परन्तु वर्तमान समय में इन पदार्थों का आयात केवल ६ प्रतिशत ही रह गया। इस प्रकार खाद्य-पदार्थों के आयात में कमी हो रही है। इसका अर्थ यह हुआ कि भोजन-सामग्री में देश आत्म-निर्भरता की ओर लगातार बढ़ता जा रहा है। कच्चा माल एवं निर्मित माल और मशीनों का आयात बढ़ता जा रहा है। यह इस बात का द्योतक है कि हमारे यहां पर औद्योगिक विकास द्रुत गति से हो रहा है। आयात की भाँति निर्यात व्यापार में भी पर्याप्त परिवर्तन हुए हैं। खाद्य तथा पेय पदार्थ युद्ध से पूर्व विदेशी व्यापार का केवल २३ प्रतिशत थे परन्तु वर्तमान समय में यह प्रतिशत २८ है। इस प्रतिशत के बढ़ने का कारण यह है कि हमारी चाय की माँग विदेशों में निरन्तर बढ़ती जा रही है। युद्ध से पूर्व कच्चे माल का प्रतिशत ४५ था और अब वह केवल ३८ ही रह गया है। इससे स्पष्ट होता है कि देश का

कच्चा माल यहीं के कारखानों में काम आता है। निर्मित माल का प्रतिशत ३० से ४२ हो गया। ये बातें इस बात की द्योतक हैं कि हमारे यहाँ पर औद्योगिक प्रगति बड़ी तेज गति से हो रही है।

युद्ध काल से पूर्व और वर्तमान समय के भारत के विदेशी व्यापार से हमने दो तथ्य निकाले—(१) हमारे यहाँ की खाद्य सामग्री में निरन्तर वृद्धि हो रही है और (२) हमारे यहाँ औद्योगिक विकास बड़ी तेज गति से हो रहा है। इन दोनों तथ्यों के आधार हर हम कह सकते हैं कि भारत अब आत्म-निर्भरता की ओर अग्रसर हो रहा है।

व्यापार की दिशा

भारत का विदेशी व्यापार सबसे अधिक संयुक्त राष्ट्र अमेरिका से होता है। हमारे आयात का लगभग एक चौथाई अंश संयुक्त राष्ट्र अमेरिका से ही आता है। दूसरा स्थान ब्रिटेन का है जहाँ से हमारे आयात की लगभग १२½ प्रतिशत वस्तुएँ आती हैं। इनके पश्चात् कामनवेल्थ के देशों का स्थान है।

भारत से घनिष्ठ व्यापारिक सम्बन्ध रखने वाले राष्ट्रों के नाम इस प्रकार हैं:—

१. **संयुक्त राष्ट्र अमेरिका**:—हमारे यहाँ से चाय, पाट का सामान, लाख, अभ्रक आदि वहाँ भेजे जाते हैं और उनके बदले में मशीनें, रासायनिक पदार्थ, पेट्रोल, वस्त्र, कपास का आयात किया जाता है। आजकल संयुक्त राष्ट्र और भारत के बीच व्यापारिक सम्बन्ध निरन्तर बढ़ रहे हैं।

२. **ब्रिटेन**:—भारत और ब्रिटेन में बहुत पहले से ही विदेशी व्यापार अधिक होता रहा है। यहाँ से चाय, तिलहन, चमड़ा, ऊन आदि भेजकर मशीनें, मोटरें, काँच और बिजली का सामान तथा रासायनिक पदार्थ मँगाये जाते हैं।

३. **आस्ट्रेलिया**:—वहाँ की आबादी कम है अतः वहाँ पर बची हुई वस्तुएँ बाहर भेज दी जाती हैं। कामनवेल्थ का देश होने के कारण भारत और आस्ट्रेलिया में बहुत पहले से ही व्यापार होता आ रहा है।

आस्ट्रेलिया को हम गेहूँ भरने के लिये जूट के बोरे, चाय और कुछ चावल भेजते हैं। इनके बदले हमें गेहूँ मिलता है। वहाँ से हम कुछ कोयला तथा थोड़ी ऊन भी मंगाते हैं।

४. **कनाडा**:—आस्ट्रेलिया की भाँति कनाडा से भी हमारा व्यापारिक सम्बन्ध अंग्रेजी शासन काल में बढ़ा। यद्यपि वह देश भारत से बहुत दूर है परन्तु फिर भी राज्य की ओर से व्यापार में सुविधा होने के कारण इन दोनों देशों में काफी आदान-प्रदान होता है। कनाडा से हमारे यहाँ आने वाली वस्तुओं में दो मुख्य हैं—कागज और मोटरें। हमारे यहाँ से जाने वाली वस्तुएँ भी मुख्यतः दो ही हैं—पाट का सामान और चाय। वहाँ अंग्रेजों की आबादी होने के कारण चाय का अच्छा आयात होता है।

५. **लंका**:—यह हमारा निकटतम पड़ोसी है। लंका और भारत के बीच बहुत प्राचीन काल से व्यापार होता आ रहा है। वहाँ से हम नारियल, नारियल का तेल, चाय तथा गर्म

मसाले मंगाते हैं। भारत से लंका भेजी जाने वाली वस्तुओं में सूती वस्त्र, कोयला, घटिया चावल, मछली आदि मुख्य हैं।

६. ब्रह्मा:—राजनैतिक दृष्टि से यह सन् १६३७ से पहले भारत का ही भाग था। परन्तु फिर भारत से अलग होने पर इन दोनों देशों के बीच विदेशी व्यापार होने लगा। ब्रह्मा से हम चावल, पेट्रोल तथा सागौन की लकड़ी मंगवाते हैं। हमारे यहाँ से ब्रह्मा को सूती वस्त्र, पाट का सामान, चाय, शक्कर, कोयला आदि भेजे जाते हैं।

७. पाकिस्तान:—१५ अगस्त सन् १६४७ से पहले जब भारत और पाकिस्तान दोनों एक ही थे तो इन दोनों के बीच आन्तरिक व्यापार ही होता था परन्तु विभाजन हो जाने के कारण दोनों में विदेशी व्यापार होने लगा। डालर के मूल्यांकन में अन्तर होने के कारण काफी समय तक दोनों देशों के बीच व्यापार स्थगित रहा। व्यापारिक समझौते के अनुसार भारत से पाकिस्तान भेजी जाने वाली वस्तुओं में कोयला, सूती वस्त्र, लोहा, पाट का सामान, कागज, कई प्रकार का वनस्पति तेल, चमड़े का सामान, रासायनिक पदार्थ, ऊनी वस्त्र आदि हैं। पाकिस्तान से भारत आने वाली वस्तुओं में कच्चा पाट, कपास, गेहूँ, चट्टानी नमक और खड़ी मुख्य हैं।

८. फ्रांस:—हमारे यहाँ फ्रांस से कई छोटी मोटी कारीगरी की चीजें आती हैं। विदेशों से आने वाली शराब का अधिकांश उसी देश से आता है। रेशमी, सूती व ऊनी वस्त्र भी फ्रांस से आते हैं। पेरिस नगर में बनी हुई फैशन की वस्तुएँ भारत के बड़े बड़े नगरों के बाजारों में देखने को मिलती हैं। भारत से फ्रांस को भेजी जाने वाली वस्तुओं में मूंगफली तथा अन्य तिलहनों का प्रमुख स्थान है। इनके अतिरिक्त पाट, कपास, चमड़ा, मैंगनीज तथा लाख का भी निर्यात होता है।

६. बेलजियम:—यह एक औद्योगिक देश है। वहाँ से भारत को काँच का सामान बहुत आता है। बेलजियम का काँच अच्छा गिना जाता है। इसके अतिरिक्त उत्तम कोटि के सूती व ऊनी वस्त्र भी आते हैं। वहीं से कुछ हीरे तथा जवाहरात मंगाते हैं। भारत बेलजियम को तिलहन, पाट की बोरियाँ तथा मैंगनीज भेजता है।

१०. जापान:—गत महायुद्ध से पूर्व भारत और जापान के बीच बहुत व्यापार होता था। हमारे यहाँ के बाजारों में सस्ती जापानी वस्तुएँ बहुत बिकती थीं। जापान से भारत में सूती वस्त्र, शुद्ध रेशम, ऊनी वस्त्र, रबर के खिलौने, कागज, दियासलाई, चीनी मिट्टी के बर्तन, साइकिलें, मोटरें, काँच का सामान आदि का आयात होता था। इसके बदले में जापान को कपास, कच्चा पाट व पाट की बोरियाँ, लोहा, मैंगनीज, अभ्रक, लाख आदि भेजते थे।

गत महायुद्ध के समय भारत और जापान के बीच व्यापार बन्द हो गया। युद्ध के पश्चात् भी यह कुछ समय तक बन्द रहा परन्तु अब व्यापार पुनः आरम्भ हो गया है।

इन देशों के अतिरिक्त इटली, स्वीडन, इण्डोनेशिया, नार्वे, मिश्र आदि से भी

भारत का व्यापार होता है। भारत उन्हें चाय, पाट का सामान, चमड़ा, तिलहन, लाख आदि ही भेजता है परन्तु उन देशों से यहाँ छोटी-मोटी कई वस्तुएँ आती हैं।

सारांश

संसार के भिन्न-भिन्न देशों की पैदावार भिन्न-भिन्न होती है। कला-कौशल की उन्नति भी सब जगह एक सी नहीं होती। यही कारण है कि प्रत्येक देश कुछ वस्तुएँ अपने यहाँ से बाहर भेजता है और अपनी आवश्यकता की वस्तुएँ बाहर से मँगवाता हैं। आदान-प्रदान की इस क्रिया को व्यापार कहते हैं।

व्यापार दो प्रकार का होता है—घरेलू व्यापार और विदेशी व्यापार।

घरेलू व्यापार

भारत के कुछ भागों में गेहूँ अधिक होता है तो कुछ में चावल। कहीं पर सूती कपड़ा तैयार होता है तो कहीं पर लोहे का सामान, अधिक उत्पन्न करने वाले राज्यों से कमी वाले राज्यों को वस्तुएँ भेजी जाती हैं। घरेलू व्यापार खाद्यान्न, शक्कर, तिलहन, जूट, कोयला, कपास, सूती वस्त्र, चमड़ा, चाय आदि में होता है।

विदेशी व्यापार

हमारे विदेशी व्यापार में निरन्तर परिवर्तन होता आ रहा है। पहले हमारे यहाँ कारखानों में तैयार किया हुआ सामान बाहर से अधिक आता था और यहाँ से विदेशों को कच्चा माल बहुत जाया करता था। पिछले दोनों महायुद्धों का प्रभाव हमारे विदेशी व्यापार पर बहुत पड़ा। अब हमारे देश में कई चीजें—वस्त्र, शक्कर, लोहे का सामान आदि बनने लगी हैं। यहाँ के कारखानों में तैयार की गई कुछ वस्तुएँ बाहर भी भेजी जाने लगी हैं। बाहर से आने वाली वस्तुओं में मशीनों का प्रमुख स्थान है। पहले हमारे यहाँ से जूट का निर्यात बहुत होता था परन्तु देश के विभाजन के पश्चात् इसमें कमी हो गई। आजकल चाय, तिलहन, चमड़ा आदि बाहर भेजते हैं।

भारत से घनिष्ठ व्यापारिक सम्बन्ध रखने वाले देश:—

१. ग्रेट ब्रिटेन:—भारत और ब्रिटेन के बीच व्यापारिक सम्बन्ध बहुत घनिष्ठ हैं। वहाँ से हमारे यहाँ कई प्रकार की, मशीनें, औजार, मोटरें, कागज, काँच का सामान, बिजली का सामान आदि आता है। हमारे यहाँ से ब्रिटेन को चाय, पाट, तिलहन, चमड़ा, ऊन, धातुएँ आदि भेजते हैं।

२. संयुक्त राष्ट्र अमेरिका:—आजकल भारत और सं० रा० अमेरिका के बीच व्यापारिक सम्बन्ध बढ़ रहा है। उस देश को हम चाय, पाट का सामान, चमड़ा, लाख, अभ्रक आदि भेजते हैं। हम वहाँ से गेहूँ, मशीनें, पेट्रोल, तम्बाकू, रासायनिक पदार्थ आदि मँगवाते हैं। आजकल अमेरिका हमारी मिलों के लिए बढ़िया कपास भी भेजता है।

३. आस्ट्रेलिया:—हम आस्ट्रेलिया से गेहूँ मँगवाते हैं। गेहूँ वहाँ अधिक तो नहीं होता परन्तु कम आबादी के कारण वह बच रहता है। इसके अतिरिक्त वहाँ से हम कुछ

कोयला और ऊन भी मँगवाते हैं। भारत से आस्ट्रेलिया भेजी जाने वाली वस्तुओं में पाट के बोरे और चाय मुख्य हैं।

४. कनाड़ाः—भारत से यह देश बहुत दूर है परन्तु कॉमनवेल्थ में होने के कारण हमारा उससे बहुत सम्बन्ध है। वहाँ से हमारे यहाँ गेहूँ, कागज और मोटरें आती हैं। हम कनाडा को चाय और पाट का सामान भेजते हैं।

५. फ्रांसः—छोटी-मोटी कई कारीगरी की वस्तुएँ फ्रांस से हमारे देश में आती हैं। रेशमी व सूती वस्त्र, शराब, रंगीन वस्त्र, खिलौने, दवाइयाँ आदि हमारे आयात हैं। भारत से फ्रांस भेजी जाने वाली वस्तुओं में मूंगफली, पाट, कपास, चमड़ा, मैंगनीज लाख आदि मुख्य हैं।

६. बेलजियमः—वहाँ से भारतमें काँच का सामान अधिक आता है। इसके अतिरिक्त हम सूती और ऊनी वस्त्र भी मंगवाते हैं। भारत से उस देश को हम तिलहन, पाट के बोरे, चमड़ा और धातुएँ भेजते हैं।

७. जापानः—गत महायुद्ध के पश्चात् भारत और जापान के बीच कम व्यापार होने लगा है। जापान से हमारे यहाँ सूती वस्त्र, रेशम, रबर के खिलौने, साइकिलें, कागज, दियासलाई आदि आते हैं। हमारे यहाँ से जापान भेजी जाने वाली वस्तुओं में कपास, पाट, लोहा, अभ्रक, लाख आदि मुख्य हैं।

८. अन्य देशः—भारत अपने पड़ौसी लंका, बह्मा, पाकिस्तान आदि से भी खूब व्यापार करता है। इनके अतिरिक्त हमारा व्यापारिक सम्बन्ध सुदूर देश इटली, स्वीडन, नार्वे, मिश्र, इण्डोनेशिया आदि के साथ भी है।

प्रश्न

१. युद्ध से पूर्व भारत के विदेशी व्यापार की क्या अवस्था थी ?

२. हमारे व्यापार पर गत महायुद्ध का प्रभाव पड़ा ?

३. भारत का विदेशी व्यापार किस प्रकार से बढ़ाया जा सकता है ?

४. भारत का विदेशी व्यापार किन किन देशों से होता है ?

५. देश के विभाजन से भारत के व्यापार पर क्या प्रभाव पड़ा ?

———

अध्याय २३

प्रधान नगर और बन्दरगाह

कृषि प्रधान राष्ट्र होने के कारण भारत में बड़े नगरों की कमी है। एक लाख से अधिक आबादी की बस्ती नगर गिनी जाती है। ऐसे नगर भारत में कुल मिलाकर ७२ हैं। हमारे यहाँ कस्बे और गाँव ही अधिक हैं। पाश्चात्य देशों में गाँवों की संख्या कम है और वहाँ नगर अधिक हैं। व्यवसाय-प्रधान राष्ट्र होने से वहाँ के अधिकांश लोग कारखानों में काम करने से नगरों में ही रहते हैं। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, कनाडा, आस्ट्रेलिया आदि में पश्चिमी यूरोप के लोगों ने जाकर नगर बसाये। नगरों में रहने की आदत पड़ जाने से विदेशों में जाकर भी उन्होंने नगरों में रहना पसन्द किया। भारत में भी नगरों की संख्या में ब्रिटिश काल में ही वृद्धि हुई। इस प्रकार सबसे अधिक नगर उत्तर प्रदेश में हैं। आसाम में तो एक लाख की आबादी का नगर है भी नहीं।

भारतीय नगरों को दो श्रेणियों में बाँट सकते हैं:—(अ) नगर और (आ) बंदरगाह। उनकी उत्पत्ति के कारण अलग होने से ही उनकी दो श्रेणियाँ की गई हैं। आगे से पृष्ठों में यह बताने की चेष्टा की गई है कि नगर तथा बंदरगाहों की उन्नति के क्या क्या कारण हैं? कुछ नगरों तथा बन्दरगाहों को उदाहरण के रूप में लिया गया है।

(अ) प्रमुख नगर

प्रायः निम्नलिखित कारणों से एक छोटी बस्ती भी बड़ा नगर बन जाती है।

(१) यातायात का केन्द्रः—जो स्थान यातायात का केन्द्र होता है, वह बड़ा नगर बन जाता है। वहाँ कई रेलगाड़ियाँ आती जाती हैं। कई सड़कें भी मिलने के कारण आमद-रफ्त बढ़ जाती है।

(२) उपजाऊ भूमिः—किसी भी देश के उपजाऊ भाग में जहाँ खेती की पैदावार अच्छी होती हो, कई नगर स्थापित हो जाते हैं। आस-पास की पैदावार को एकत्रित करने के लिए पहले छोटी मण्डी बनती है और फिर वहाँ बड़ा नगर हो जाता है। कानपुर इसका उदाहरण है।

(३) व्यावसायिक केन्द्रः—जहाँ कई कारखाने खुल जाते हैं वहाँ बस्ती बढ़ जाती है। जमशेदपुर लोहे के कारखाने के कारण ही बड़ा नगर हो गया।

(४) उत्तम बन्दरगाहः—देश के जो उत्तम बन्दरगाह हैं, वे वहाँ के बड़े नगर भी होते हैं—जैसे कलकत्ता, बम्बई आदि।

(५) राजधानीः—किसी भी राज्य की राजधानी भी शासन का केन्द्र होने के कारण बड़ा नगर हो जाता है। दिल्ली इसी प्रकार से बड़ा नगर बना।

(६) धार्मिक स्थानः—तीर्थ स्थानों में हर साल बहुत से मनुष्य यात्रा के लिए आते रहते हैं। उनकी सहूलियत के लिए वहाँ अनेक दुकानें, मकान आदि भी होते हैं। फिर वे ही स्थान बड़े नगर हो जाते हैं। हरिद्वार, प्रयाग आदि की उत्पत्ति इसी प्रकार हुई।

(७) फौजी केन्द्रः—फौज की छावनी रहने के कारण भी नगर की उन्नति हो जाती है। मेरठ, अम्बाला आदि इसी प्रकार नगर बन गये।

८. पहाड़ी स्थानः—पहाड़ी स्थान पर जहाँ कि प्राकृतिक दृश्य सुन्दर हो और जल वायु स्वास्थ्यप्रद हो, वहाँ मैदान के लोग जाया करते हैं। धीरे धीरे वहाँ अच्छा नगर बस जाता है। शिमल, दार्जिलिंग आदि इसके इसके उदाहरण है।

इन्हीं बातों के आधार पर हम यहाँ भारत के कुछ नगरों की उन्नति के कारण बताते हैं—

१. दिल्ली

यह नगर भारत की वर्तमान राजधानी है। इसी कारण यहाँ बड़े बड़े महकमे हैं। विदेशों के राजदूत भी यहाँ रहते हैं। प्राचीन काल से ही यह कई सम्राटों की राजधानी रह चुकी है। इसी कारण यह ऐतिहासिक स्थान है।
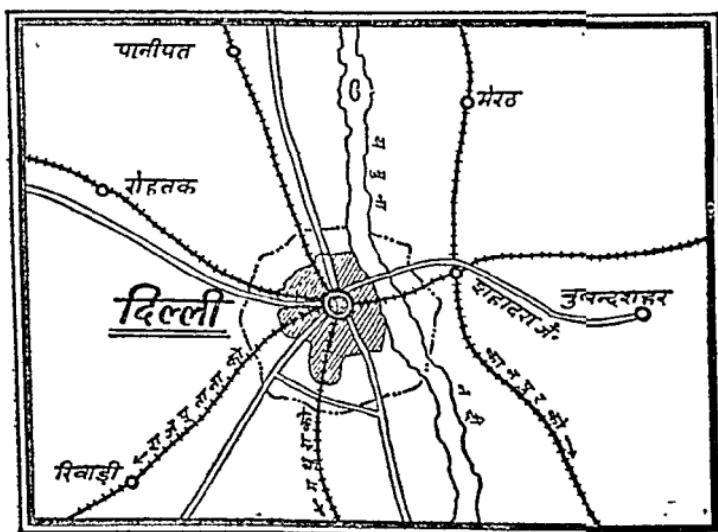
चित्र सं० ८४. दिल्ली की स्थिति

दिल्ली की स्थिति उत्तरी भारत के मध्य में होने के कारण यह यातायात का केन्द्र है। मैदान में होने के कारण यहाँ सड़कें और रेल-मार्ग बनाने में सहूलियत रही। यह एक व्यापारिक नगर बन गया है।

दिल्ली में कई कारखाने भी हैं। यहाँ सूती कपड़ा बनता है। सलमा-सतारा आदि का बारीक काम भी यहाँ होता है।

यमुना नदी के किनारे होने के कारण दिल्ली में पानी की कमी नहीं है। यमुना से नहरें निकालकर आस-पास की भूमि में सिंचाई की जाती है। कृषि प्रधान प्रदेश के बीच होने के कारण दिल्ली का महत्व और भी बढ़ गया है।

२. अहमदाबाद

यह गुजरात में साबरमती नदी के किनारे पर बसा हुआ। गुजरात और सौराष्ट्र के कपास उत्पन्न करने वाले क्षेत्र में होने के कारण पहले यह कपास एकत्रित करने का केन्द्र बना। फिर यहाँ सूत कातने का व्यवसाय प्रारम्भ हुआ। यूरोप से मशीनों के आयात हो जाने पर यहाँ आधुनिक ढंग की सूती कपड़े की कई मिलें खुल गईं। तब से इनकी उन्नति निरन्तर हो रही है।
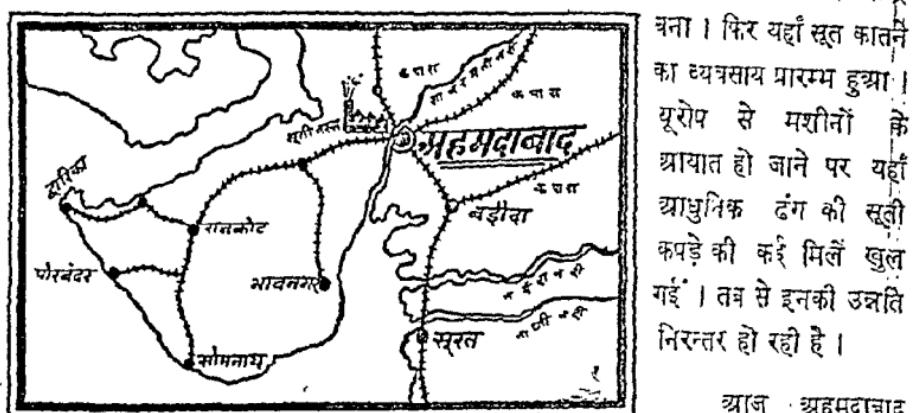
चित्र सं० ८५. अहमदाबाद

आज अहमदाबाद भारत का प्रमुख औद्योगिक नगर है। यहाँ कई प्रकार का सूती व रेशमी कपड़ा बनता है। यह रेलों का केन्द्र भी बन गया है।

३. आगरा

यह नगर यमुना नदी के किनारे बसा हुआ है। प्राचीन काल में यह मुगलों की राजधानी भी रहा है। गंगा के मैदान में आगरे की स्थिति बड़े महत्व की है। आजकल यह विद्या का केन्द्र बन गया है।

चित्र सं० ८६. आगरे की स्थिति

आगरे में दरियाँ बहुत सुन्दर बनती हैं। वहाँ पर जूते तथा चमड़े का अन्य सामान भी तैयार किया जाता है।
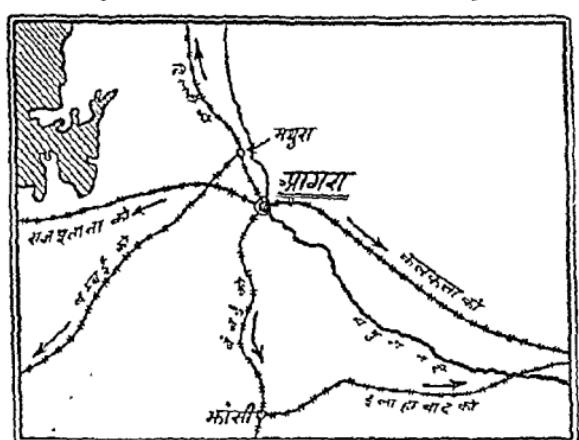
ताजमहल आगरे का सुविख्यात स्थान है जिसको देखने प्रतिवर्ष बहुत से मनुष्य सुदूर स्थानों से आते हैं।

४. इलाहाबाद

इस नगर को प्रयाग भी कहते हैं। यह नगर गंगा नदी के मैदान में स्थित है। प्राचीन काल में प्रयाग नदी-मार्ग का बड़ा केन्द्र था। समतल मैदान में स्थित होने के कारण इलाहाबाद व्यापारिक केन्द्र हो गया है।

चित्र सं० ८७. इलाहाबाद
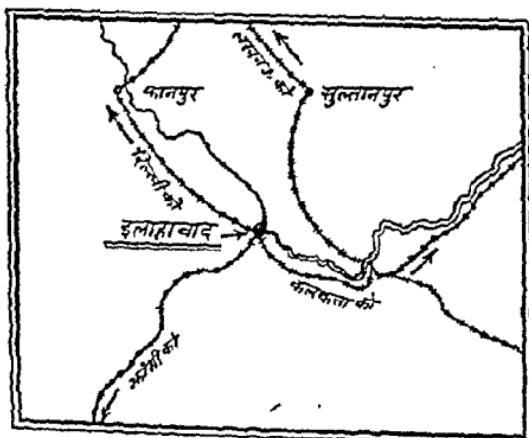
इलाहाबाद की बड़ी विशेषता यह है कि यह गंगा और यमुना इन दोनों नदियों के संगम पर स्थित है। नदियों के संगम पर होने के कारण ही यह हिन्दुओं का प्रमुख तीर्थ स्थान बन गया है। यहाँ देश के प्रत्येक भाग से प्रतिवर्ष लाखों यात्री आते हैं।

प्रयाग विद्या का भी बड़ा केन्द्र है। यहाँ के विश्व-विद्यालयों में हजारों विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त करते हैं। उत्तर प्रदेश का हाईकोर्ट भी यहाँ पर है।

प्रयाग रेल का जंक्शन भी है। गंगा के मैदान के मध्य में स्थित होने के कारण यातायात की दृष्टि से इसका प्रमुख स्थान है। यह सड़कों का भी केन्द्र है।

५. कानपुर

इस नगर ने थोड़े ही समय में बहुत उन्नति करली। इसके आसपास के मैदान में गंगा की नहरों द्वारा सिंचाई करके कई प्रकार की खेती की जाती है। गन्ना, गेहूँ, कपास आदि यहाँ की मुख्य उपज हैं। पहले यह कृषि की उपज को एकत्रित करने के लिए मंडी था परन्तु धीरे-धीरे इसकी उन्नति होती गई। गन्ने की पैदावार होने के कारण वहाँ शक्कर बनाने के कई कारखाने खुल गये। कपास के कारण यहाँ सूती वस्त्र व्यवसाय होने लगा। पंजाब तथा राजस्थान से ऊन लाकर यहाँ ऊनी वस्त्र बनाने लगे। आसपास के क्षेत्र में पशु
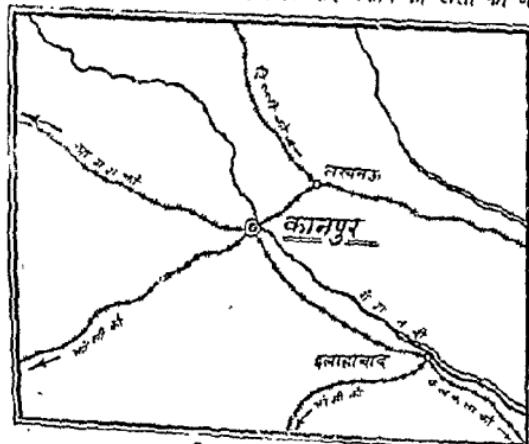
चित्र सं० ८८. कानपुर

अधिक होने के कारण यहां चमड़ा कमाने के तथा चमड़े की वस्तुएँ बनाने के लिए कई कारखाने खुल गये। मैदान में होने के कारण यह सड़कों और रेल-मार्गों का केन्द्र बन गया है।

आज कानपुर भारत का बहुत बड़ा औद्योगिक नगर बन गया है।

६. जमशेदपुर

जहाँ आजकल यह नगर स्थित है वहाँ पहले उजाड़ था। छोटा नागपुर के पठार के
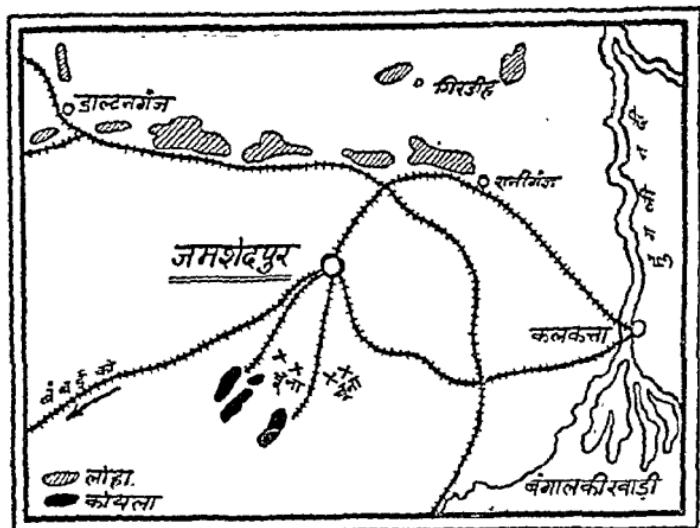
चित्र सं० ८६. जमशेदपुर

उस भाग में यह आया हुआ है जहाँ विशेष बस्ती नहीं थी। परन्तु एक बात इसकी उन्नति में बहुत सहायक सिद्ध हुई। वह यह है कि यहाँ खनिज पदार्थों का बाहुल्य है। इसी कारण टाटा महोदय ने यहाँ पर लोहे का कारखाना खोलने का निश्चय किया।

जमशेदपुर के निकट ही गुरुमहेशानी नामक लोहे की बड़ी खान है। कोयला झरिया क्षेत्र से प्राप्त होता है। वह स्थान यहाँ से १०० मील की दूरी पर है। लोहे को साफ करने के लिए चूने के पत्थर की आवश्यकता होती है। वह भी निकट ही गंगापुर की खानों से प्राप्त होता है। वहाँ केवल दो कठिनाइयाँ थीं—एक तो पानी की और दूसरी मजदूरों की। जमशेदपुर जहाँ पर बसाया गया है वहाँ सुवर्ण रेखा और खोरकाई नामक दो नदियाँ मिलती हैं। वर्षा ऋतु में तो उनमें पानी रहता है परन्तु सर्दी और गर्मी की ऋतु के लिए उन नदियों में बाँध बनाकर पानी एकत्रित कर लिया जाता है।

मजदूरों की समस्या भी सुलझ गई। बंगाल और बिहार के घनी आबादी वाले भागों से लोग यहाँ आ जाते हैं क्योंकि यहाँ तक रेल मार्ग बना हुआ है।

इस प्रकार जमशेदपुर अपनी उत्तम भौगोलिक स्थिति के कारण केवल थोड़े ही समय

में भारत का बड़ा औद्योगिक क्षेत्र बन गया। इसमें आश्चर्य की बात नहीं कि निकट भविष्य में वह विश्व के बड़े बड़े लोहे के क्षेत्रों में गिना जाय।

७. पटना

यह नगर बिहार की राजधानी है। इसका प्राचीन नाम पाटलिपुत्र है। इस नगर की उन्नति का मुख्य कारण है, इसकी महत्वपूर्ण स्थिति।
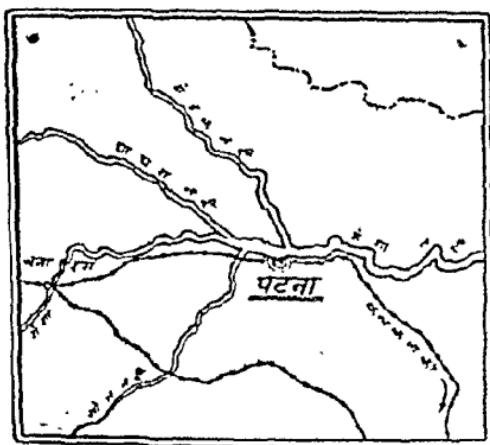
चित्र सं० ९०. पटना की स्थिति

पटना नगर गंगा नदी के दक्षिणी किनारे पर बसा हुआ है। इसके पास ही दक्षिण की ओर से सोन नदी और उत्तर से घाघरा और गण्डक नदियाँ आकर गंगा में मिलती हैं। इस प्रकार यह जल-मार्गों का केन्द्र बन गया है। आजकल पटना रेलवे का बड़ा जंक्शन है। इस प्रकार यह नगर जल और स्थल मार्गों का केन्द्र बन गया है। नदी-मार्ग के कारण इसका महत्व प्राचीन काल में था और रेल-मार्ग के कारण यह आजकल बढ गया है। पूर्व में यह कलकत्ते से रेल-मार्ग के द्वारा जुड़ा हुआ है और पश्चिम में बनारस, प्रयाग, कानपुर आदि उत्तर प्रदेश के नगरों से सम्बन्धित है।

गंगा के मैदान के मध्य भाग में होने के कारण पटना में मैदान की उपज एकत्रित की जाती है और फिर उसको देश के भिन्न भिन्न भागों को भेज देते हैं।

८. बड़ौदा

यह नगर गुजरात के बड़ौदा राज्य की राजधानी था। अब यह बम्बई राज्य का औद्योगिक और व्यापारिक नगर है।

काली मिट्टी वाले प्रदेश में स्थित होने के कारण बड़ौदे के आसपास में कपास की उपज अच्छी होती है यही कारण है कि इस नगर में सूती वस्त्र बनाने के कई कारखाने हैं। वेस्टर्न

रेलवे का यह प्रमुख स्टेशन है। रेल मार्ग द्वारा यह अहमदाबाद और बम्बई से जुड़ा हुआ है। यहाँ आसपास की कपास को एकत्रित करके उसे इन दोनों नगरों की सूती मिलों को भेज देते हैं।
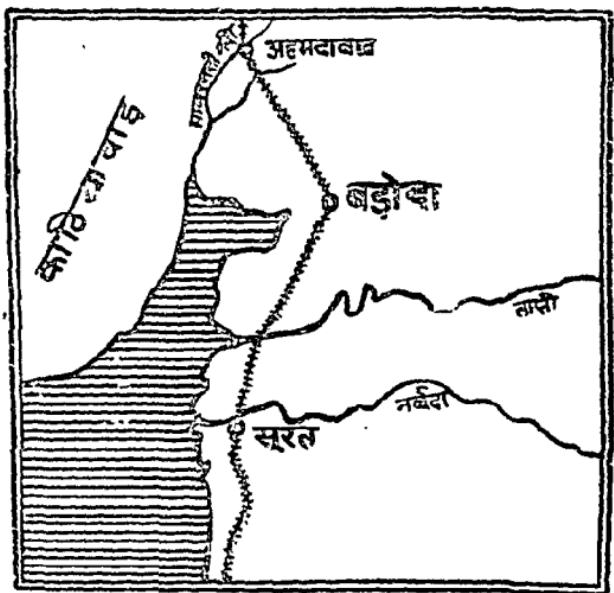
चित्र सं० ९१. बड़ौदा नगर

बड़ौदे में औषधियाँ भी कई प्रकार की बनती हैं। यहाँ लकड़ी का सामान अच्छा तैयार होता है। आजकल बड़ौदा उद्योग और शिक्षा का केन्द्र बन गया है।

६. नागपुर

मध्य प्रदेश का यह सबसे बड़ा नगर है। यह इस राज्य की राजधानी भी है। हमारे
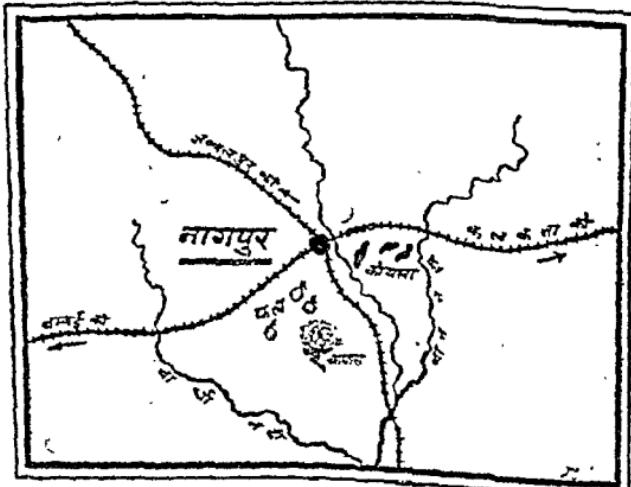
चित्र सं० ९२ नागपुर की स्थिति

देश में नागपुर की स्थिति लगभग केन्द्रीय है। यही कारण है कि भारतीय पोस्ट और टेली-ग्राम का सबसे बड़ा कार्यालय यहाँ पर है।

नागपुर कलकत्ते से बम्बई जाने वाले रेल मार्ग पर है। अतः यह भारत के इन दोनों प्रमुख बन्दरगाहों से जुड़ा हुआ है। इसी प्रकार दिल्ली से मद्रास जाने वाला रेल-मार्ग भी नागपुर होकर जाता है। इन रेल-मार्गों ने नागपुर को एक बड़ा जंक्शन बना दिया है।

नागपुर के आसपास विशेषतः पश्चिमी भाग में कपास बहुत होती है। इसलिए यह नगर कपास की बड़ी मण्डी बन गया है। यहाँ कपड़ा बुनने की कई मिलें हैं। मिलों के लिए कोयला मध्य प्रदेश की खानों व बिहार से आता है। कपड़े के अतिरिक्त नगर में काँच का सामान बनाने के कारखाने हैं। यहाँ चिकनी मिट्टी के बर्तन भी बनते हैं।

नागपुर के आसपास नारंगी के बाग हैं। यहाँ की नारंगी बहुत मीठी होती है और यहाँ से भारत के सभी भागों को भेजी जाती है।

१०. बंगलौर

मैसूर राज्य का सबसे बड़ा नगर है। समुद्र की सतह से यह तीन हजार फीट की ऊँचाई पर बसा हुआ है। अतः यहाँ का जलवायु सुहावना है। यहाँ पर रेशमी और ऊनी कपड़ा बुनने की मिलें हैं। सूती कपड़ा भी यहाँ उत्तम कोटि का बनता है।
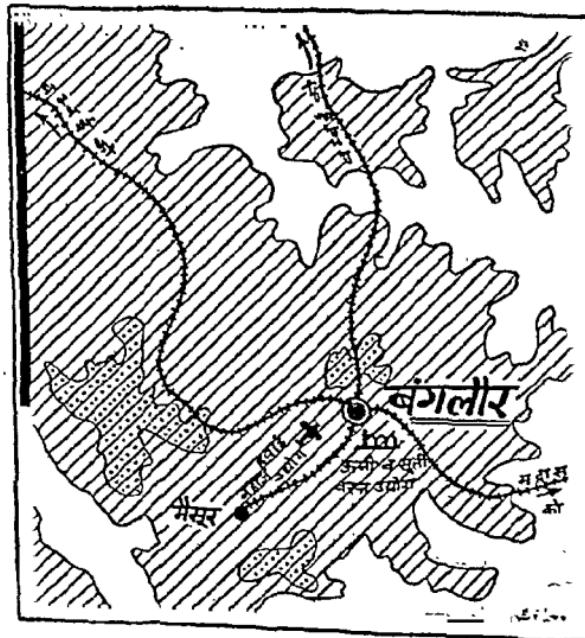
चित्र सं० ६३. बंगलौर नगर

दुग्ध-व्यवसाय सम्बन्धी शिक्षा देने का सरकारी विद्यालय भी बंगलौर में है। इस नगर में भारत सरकार की विज्ञान-परिशोध-शाला है। यही कारण है कि यह नगर भारतीय

आविष्कारों का केन्द्र है। यहाँ पर 'हिन्दुस्तान एयरक्राफ्ट' कम्पनी है, जिसमें हवाई जहाजों के पुर्जे तैयार किये जाते हैं। आजकल बंगलौर में बिजली का सामान, रेडियो और टेलीफून बनाने के कारखाने भी हैं। इन सब कारखानों के लिए शिवसमुद्रम् जल-प्रपात से सस्ती बिजली मिल जाती है।

११. जयपुर
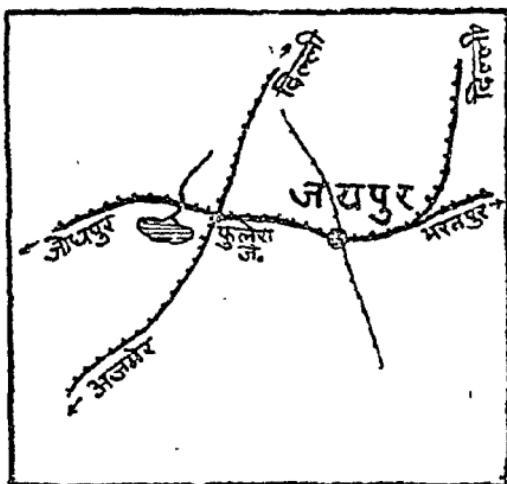
चित्र संख्या ६४. जयपुर नगर

यह नगर राजस्थान राज्य की राजधानी है। इस राज्य का सबसे बड़ा नगर भी यही है। जयपुर एक व्यापारिक शहर है। यहाँ से दिल्ली और आगरा पास में होने के कारण व्यापार में बड़ी सुविधा रहती है। राजस्थान के अन्य बड़े बड़े नगर जैसे जोधपुर, बीकानेर, उदयपुर आदि उत्तरी भारत के नगरों से दूर होने के कारण उनका व्यापारिक महत्व कम है।

जयपुर नगर बहुत सुन्दर ढंग से बसा हुआ है। यहाँ का मुख्य बाजार देखने योग्य है। नगर में पीतल और तांबे के बर्तन बनते हैं। यहाँ की चित्रकारी तथा कला-कौशल की छोटी-मोटी वस्तुएँ प्राचीन काल से प्रसिद्ध रही है।

राजस्थान की राजधानी बन जाने से इस नगर की उन्नति और भी अधिक हो गई है।

[आ] मुख्य बन्दरगाह

देश के विदेशी व्यापार में बन्दरगाहों का बड़ा हाथ रहता है। भारत के बन्दरगाहों की उन्नति विदेशी प्रभाव के कारण हुई। यूरोप-निवासी पहले-पहल जब भारत में आये तो वे समुद्र के किनारे ठहरे। उन्होंने अपनी कोठियां स्थापित कीं। कलकत्ता, बम्बई, मद्रास आदि की उन्नति इसी प्रकार हुई। इन्हीं स्थानों से देश के भीतरी भागों में रेल-मार्ग बनाए गए।

एक बन्दरगाह की उन्नति के लिए निम्नलिखित बातों का होना आवश्यक है:—

(१) कटा हुआ समुद्र किनारा:—जिस जगह बन्दरगाह बनाना हो वहां समुद्र किनारा कटा हुआ हो। ऐसा होने से जहाज सुरक्षित रहते हैं।

गये। अतः हमारा समस्त व्यापार कलकत्ता, बम्बई और मद्रास द्वारा ही होता है। भौगोलिक कारणों के अतिरिक्त इनकी उन्नति के राजनैतिक कारण भी हैं। ईस्ट इण्डिया कम्पनी के पैर जमते ही उसके कर्मचारियों ने इन्हीं तीन नगरों को अपने शासन का केन्द्र बनाया, जिससे इनकी जन-संख्या की वृद्धि के साथ व्यापारिक उन्नति भी होती गई। भारत के विभाजन के बाद केन्द्रीय सरकार कच्छ की खाड़ी में काँधला बन्दरगाह को उन्नत करने का प्रयत्न कर रही है ताकि कराची बन्दरगाह का अभाव पूरा हो सके।

१. बम्बई

बम्बई का बन्दरगाह विश्व के सबसे सुरक्षित और प्रशस्त बन्दरगाहों में से है। इसके हार्बर (Harbour) के उत्तर और पूर्व में भूमि का मुख्य भाग स्थित है और इसके पश्चिम में बम्बई का संकरा प्रायद्वीप है। अतः इस बन्दरगाह में ऐसी झील-सी बन गई है जिसमें जहाज वर्ष की प्रत्येक ऋतु में सुरक्षित रह सकते हैं। दक्षिण-पश्चिमी मानसूनी हवाओं के प्रकोप से बन्दरगाह बचा रहता है। यह झील लगभग १४ मील लम्बी और ४ से ६ मील तक चौड़ी है। इसकी न्यूनतम गहराई ३२ फीट है जो स्वेज नहर की अधिकतम गहराई के बराबर है।
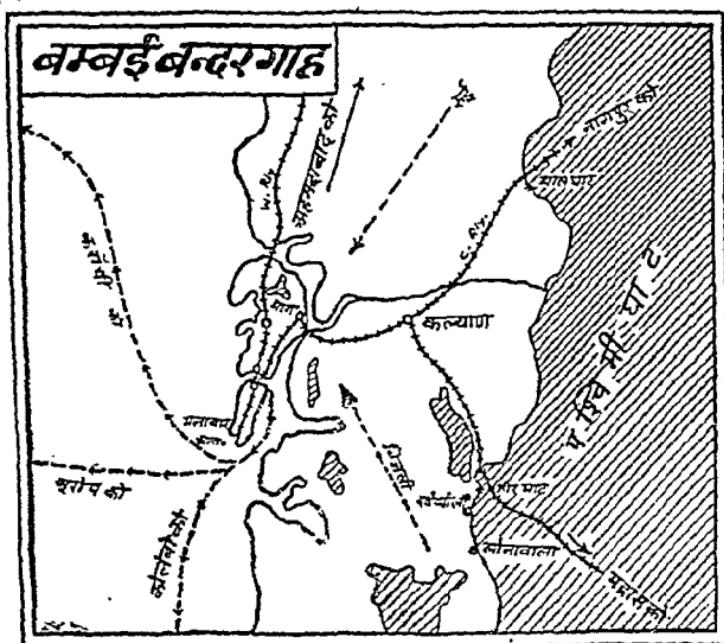
चित्र सं० ९५. बम्बई का प्राकृतिक बन्दरगाह

देश के भीतरी भाग से भी बन्दरगाह भली भाँति सम्बन्धित है। दीवाल की भाँति ऊँचे उठे हुए पश्चिमी घाट के दो दर्रे, थाल घाट और भोरघाट इसके सामने पड़ते हैं जो देश के भीतरी भाग में जाने के लिए उत्तम साधन हैं। इसका सम्बन्ध उत्तरी भारत और गुज-रात में बी० बी० एण्ड सी० आई० रेल द्वारा और मध्य तथा दक्षिणी भारत में जी० आई०

पी० रेल द्वारा है। बम्बई का पृष्ठ देश दक्षिण में मद्रास राज्य के पश्चिमी भाग से लेकर उत्तर में ठेठ काश्मीर तक हो गया है क्योंकि भारत-विभाजन के कारण कराची का बन्दरगाह भारत के लिए बन्द हो गया है। इस पृष्ठ देश का बहुत-सा व्यापार सौराष्ट्र के छोटे-छोटे बन्दरगाहों द्वारा भी बँट जाता है।

बम्बई का प्रमुख निर्यात कपास है। समस्त भारत की आधी से अधिक कपास इसी बन्दरगाह से जाती है। निर्यात की अन्य वस्तुओं में सूती वस्त्र व सूत, ऊन व ऊनी कपड़े, खाल व चमड़ा, अनाज, तिलहन तथा मैंगनीज धातु मुख्य हैं। आयात में सूती कपड़ा, मशीनें और औजार, भांति भांति के लोहे का सामान, धातुएँ, खनिज, इमारती लकड़ी, मोटरकार, चाँदी, अनाज तथा कृत्रिम रेशम मुख्य हैं। इस बन्दरगाह से प्रतिवर्ष ५० लाख टन से अधिक माल आया जाया करता है।

२. कलकत्ता

उत्तरी मैदान का द्वार तथा भारत का प्रमुख बन्दरगाह कलकत्ता, हुगली नदी के बायें किनारे पर स्थित है। नदी के मुहाने से यह ८० मील भीतरी की ओर है। इस बन्दरगाह में जहाज ज्वार के साथ आते हैं और भाटे के साथ चले जाते हैं। बन्दरगाह का मुख्य दोष यह है कि हुगली में बालू और रेत जमती रहती है जिससे उसको हमेशा साफ करना पड़ता है। यह बन्दरगाह जलमार्गों और रेलों द्वारा देश के भीतरी भागों से जुड़ा हुआ है। गंगा नदी से यह भागीरथी द्वारा, महानदी से मिदनापुर नहर द्वारा तथा ब्रह्मपुत्र से सुन्दर बन नहर द्वारा सम्बन्धित है। भारत की प्रमुख रेलवे ई० आई० आर० और बंगाल-नागपुर रेलवे तथा पूर्वी पाकिस्तान से मिलाने वाली ईस्ट बंगाल रेलवे यहीं मिलती है। यहाँ से बहुत सी सड़कें भी जाती हैं। इसका पृष्ठ देश अत्यन्त धनी और देश की सबसे घनी आबादी वाला भाग है। पृष्ठ प्रदेश में पूर्वी पाकिस्तान, आसाम, परिचम बंगाल, बिहार, उत्तरप्रदेश, उड़ीसा और मध्य प्रदेश सम्मिलित हैं। इन सबसे कलकत्ता रेलों और सड़कों द्वारा संबंधित है।

चित्र सं० ६६. कलकत्ते की स्थिति

कलकत्ता भारत का सबसे बड़ा व्यावसायिक क्षेत्र भी है। यहाँ पर जूट, कागज, दिया-

सलाई, सूती वस्त्र और चीनी की बड़ी मिलें तथा इन्जीनियरिंग के बड़े बड़े कारखाने हैं। भारत की प्रमुख कोयला और लोहे की खानें इसके समीप हैं।
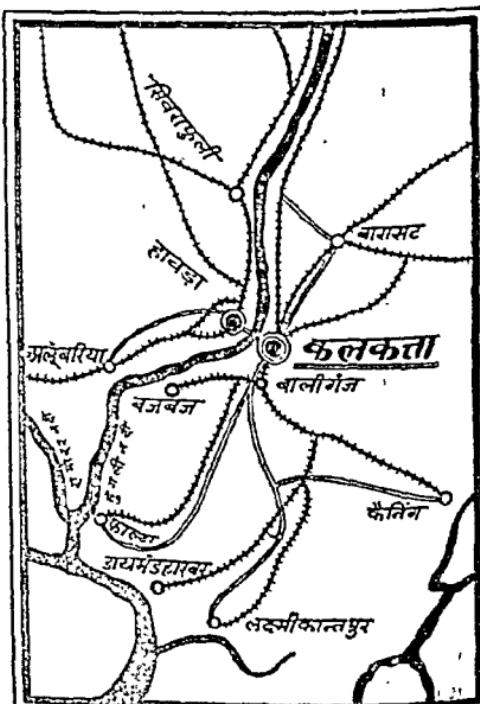
कलकत्ते के पृष्ठ देश में भारत के समस्त तेल-कूप, प्रमुख अभ्रक और मैंगनीज की खानें तथा चाय के बगीचे हैं। ऐसी सुविधाजनक परिस्थितियों में कलकत्ता यदि भारत का सर्व प्रमुख बन्दरगाह हो तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है। जन-संख्या की दृष्टि से भी यह भारत का सबसे बड़ा नगर है।

यहाँ से प्रमुख निर्यात जूट का सामान, चाय, चमड़ा, कच्चा जूट, लाख, कोयला, लोहा, अभ्रक, मैंगनीज, लोहे से निर्मित चीजें, रुई और चावल आदि हैं। प्रमुख आयात सूती वस्त्र, पेट्रोल, मशीनें, रासायनिक चीजें, भाँति भाँति के औजार, कागज, मोटरें, रबर की चीजें और स्प्रिट हैं।

३. मद्रास

भारत का तीसरा बड़ा नगर मद्रास पूर्वी समुद्र-तट का दूसरा बड़ा बन्दरगाह है। इसका हार्बर समुद्र तट में दो कंक्रीट की दीवारें बनाकर तैयार किया गया है। इन दीवारों से २०० एकड़ समुद्र घिर जाता है जहाँ ३१½ फीट तक नीचे १४ जहाज ठहर सकते हैं। कई रेलें इसे कलकत्ता, बम्बई, तूतीकोरन और कालीकट से मिलाती हैं। इसका पृष्ठ भाग धनी नहीं है। यही कारण है कि कई प्रकार के कारखानों का केन्द्र होने पर भी मद्रास कलकत्ते या बम्बई की समता का बन्दरगाह नहीं है।
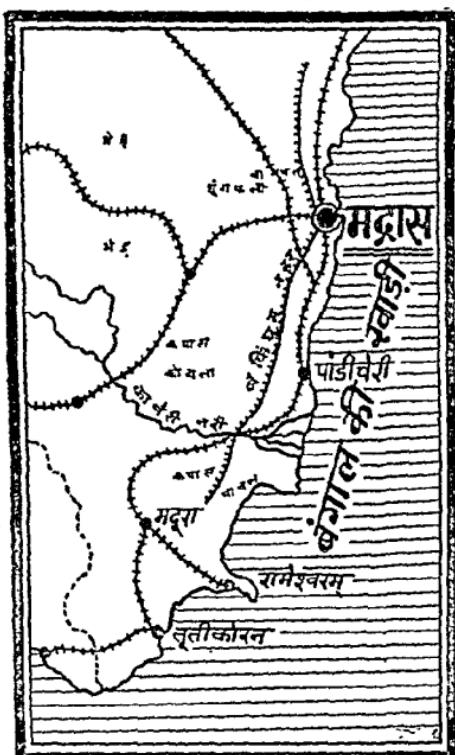
चित्र सं० ६७. मद्रास की स्थिति

यहाँ के प्रमुख निर्यात मूंगफली, चमड़ा व खाल, तम्बाकू, रूई, धातुएँ, सूती वस्त्र, तेल की खली, कहवा, हल्दी और नारियल आदि हैं। आयात में चावल, अनाज, खनिज तेल कागज, लकड़ी, चमड़े बनाने का सामान, रंग, धातुएँ, मशीनें, मोटर, साइकिलें, रासायनिक चीजें आदि हैं।

४. विशखापटनम्

भारत के पूर्वी तट पर विशखापटनम् एक श्रेष्ठ बन्दरगाह बनता जा रहा है। यह कलकत्ता और मद्रास के लगभग मध्य में स्थित है। खनिज सम्पत्ति से पूर्ण तथा धनी पृष्ठ

देश की उपज को विदेशों को भेजने के लिए यहाँ पर हार्बर बनाने की योजना बनी और सन् १६३३ में बड़े जहाजों के लिए यह बन्दरगाह खुला।
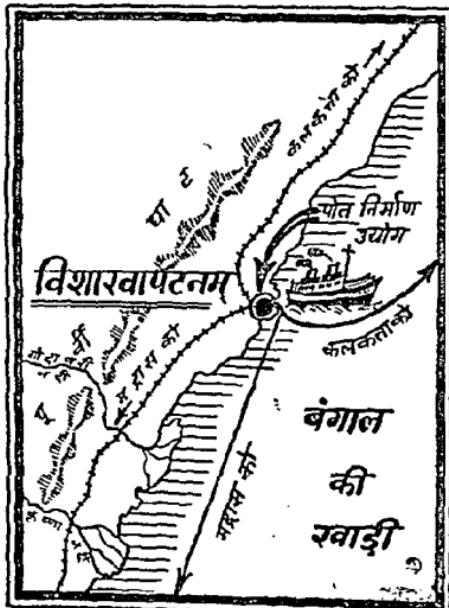
चित्र सं० ६८. विशाखापटनम्

विशाखापटनम् से दो मील दूर वाल्टेयर रेलवे का जंक्शन है। वाल्टेयर से रायपुर तक रेलवे लाइन बन जाने से इस बन्दरगाह से मध्य-प्रदेश की दूरी कम होगई। इसके पृष्ठ देश में उड़ीसा और मध्य प्रदेश का पूर्वी भाग सम्मिलित है। यहाँ के प्रमुख निर्यात मैंगनीज, मूँगफली, अलसी और चमड़ा है तथा मुख्य आयात सूती वस्त्र, मशीनें, लकड़ी आदि हैं।

विशाखापटनम् में हाल ही में जलपोत बनाने का केन्द्र स्थापित होजाने से इसका महत्व बहुत बढ़ गया है। आजकल यह भारत के मुख्य बन्दरगाहों में से है।

५. कोचीन

चित्र सं० ६६. कोचीन बन्दरगाह
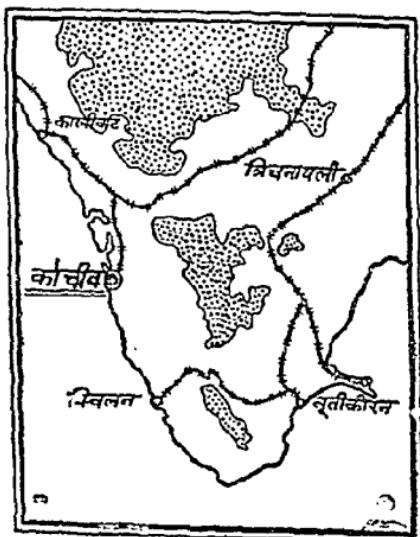
यह बन्दरगाह भारत के पाँच प्रसिद्ध बन्दरगाहों में से है। इसका हार्बर भी बम्बई की भांति प्राकृतिक है तथा यह योरोप से आस्ट्रेलिया अथवा सुदूर पूर्व को सीधे जाने वाले समुद्री मार्ग में पड़ता है। यह अदन से बम्बई की अपेक्षा २०० मील निकट है। दक्षिणी-पूर्वी एशिया में इसका सामरिक महत्व भी है। अतः इसका महत्व बहुत बढ़ गया है। इसके पृष्ठ देश में ट्रावनकोर कोचीन राज्य तथा मद्रास राज्य के दक्षिणी जिले सम्मिलित हैं। यहं रेलों द्वारा देश के भीतरी भाग से सम्बन्धित है। प्रमुख निर्यात नारियल की जटा तथा उससे बना सामान, चाय, रबर, अदरक, काली-मिर्च तथा अन्य मसाले हैं। प्रमुख आयात खाद्यान्न, खनिज तेल, कोयला, सूती वस्त्र तथा लोहे का सामान है।

पश्चिमी तट के अन्य बन्दरगाह

१. **मांडवीः**—कच्छ की खाड़ी में छोटा सा बन्दरगाह है। दक्षिणी पश्चिमी मानसून हवाओं के प्रकोप के कारण यह मई से सितम्बर तक बन्द रहता है। यहाँ डेढ़ करोड़ रुपये का व्यापार प्रतिवर्ष होता है। हाल ही में यहाँ दियासलाई का एक कारखाना तथा तेल की मिलें और पीतल के बर्तन बनाने के कारखाने स्थापित हो गये हैं।

२. **कांधलाः**—कच्छ की खाड़ी में कांधला एक प्राकृतिक बन्दरगाह है। माल ढोने वाले जहाजों के ठहरने योग्य यहां पर्याप्त गहराई है तथा बड़े बन्दरगाह बनाने योग्य पर्याप्त
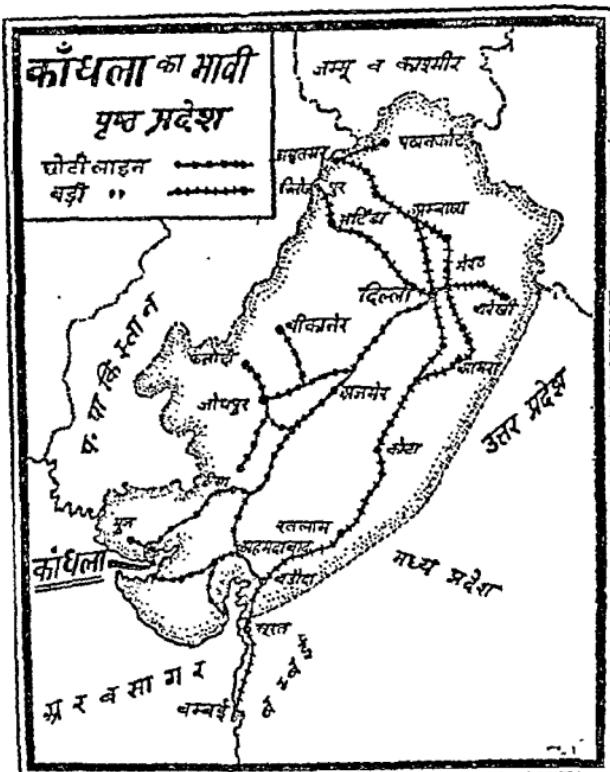
चित्र सं० १००. कांधला बन्दरगाह

सुविधाएँ हैं। यही कारण है कि भारत सरकार कराची की कमी को पूरा करने के लिए इसको एक बड़ा बन्दरगाह बना रही है। अभी इसका पृष्ठ देश बहुत थोड़ा है क्योंकि रेलों द्वारा यह बहुत थोड़े भाग से सम्बन्धित है। आशा है शीघ्र ही इसकी उन्नति हो जायगी और इसका पृष्ठ प्रदेश दूर तक फैल जायगा।

३. **नवलाखीः**—सौराष्ट्र तट पर मोरवी का मुख्य बन्दरगाह है। यह छोटी लाइन द्वारा दिल्ली, राजस्थान, गुजरात और सौराष्ट्र से सम्बन्धित है। यह बन्दरगाह साल भर खुला रहता है और हाल ही में इसकी काफी उन्नति हुई है।

४. बेदी बन्दरः—यह नवानगर (सौराष्ट्र) का मुख्य बन्दरगाह है। यह रेल द्वारा भीतरी भाग से सम्बन्धित है। यहाँ से तटीय व्यापार (Coastal Trade) अधिक होता है।

५. ओखाः—सौराष्ट्र के तट पर बड़ौदे का बन्दरगाह है। काठियावाड़ प्रायद्वीप के उत्तरी-पश्चिमी कोने पर बसा होने से इसका सामरिक महत्त्व भी है। राज्य ने इस बन्दरगाह को आधुनिक ढंग से बनाया है। यद्यपि यहाँ पर समुद्र इतना गहरा है कि बड़े बड़े जहाज ठहर सकते हैं, किन्तु यहाँ तक पहुँचने का मार्ग अत्यन्त टेढ़ा-मेड़ा होने के कारण खतरनाक है। यह साल भर खुला रहता है, किन्तु यहाँ की जन-संख्या कम है। यहाँ से सीमेंट, नमक, तिलहन तथा रासायनिक द्रव्यों का निर्यात तथा कोयला पेट्रोल, मशीन, रेलों का सामान और हर प्रकार का माल आयात होता है।

६. पोरबन्दरः—पोरबन्दर सौराष्ट्र का बन्दरगाह है। द्वितीय महायुद्ध के समय यहाँ व्यापार होता था। यह बन्दरगाह दिल्ली, अहमदाबाद आदि नगरों से रेलों द्वारा मिला हुआ है। यहाँ से नमक, सीमेंट आदि बाहर जाते हैं और कोयला, खजूर, मशीनें आदि बाहर से आती हैं।

७. भावनगरः—खम्भात की खाड़ी पर यह सौराष्ट्र का उत्तम बन्दरगाह है।

८. मारमगोआः—कोनकन तट पर पुर्तगाली बस्ती गोआ का प्रसिद्ध बन्दरगाह है। यह रेलों द्वारा बम्बई, हैदराबाद और मैसूर से जुड़ा हुआ है।

९. मंगलौरः—मारमगोआ से १३० मील पर दक्षिण की ओर यह छोटा सा बन्दरगाह गोपुर और नेत्रावती नदियों के संगम पर स्थित है। यहाँ से चाय, काली मिर्च, कहवा, चन्दन की लकड़ी, रबर आदि विदेशों को जाता है। यहाँ का आयात व्यापार भी धीरे धीरे बढ़ रहा है।

१०. कालीकटः—इसके निकट समुद्र उथला है। यह कोचीन से ९० मील उत्तर की ओर है। यहाँ से नारियल की जटा, कहवा, चाय, मसाले आदि निर्यात होते हैं तथा मुख्यतः धातुएँ आयात होती हैं।

११. ऐलेप्पीः—ट्रावनकोर राज्य का बन्दरगाह है। यहाँ से तटीय व्यापार होता है। इसके दक्षिण में राज्य का दूसरा बन्दरगाह क्वीलोन है जो रेलों द्वारा सीधा मद्रास से जुड़ा हुआ है।

पूर्वी तट के अन्य बन्दरगाह

१. तूती कोरनः—कारोमंडल तट के दक्षिणी भाग का प्रसिद्ध बन्दरगाह है। मद्रास और कोचीन के बाद मद्रास राज्य का यह प्रसिद्ध बन्दरगाह है। यह बन्दरगाह उथला है। यहाँ से कपास, मिर्च तथा इलायची आदि निर्यात होते हैं। यहाँ से लंका को काफी सामान जाता है।

२. नेगापट्टमः—यह तंजोर जिले का छोटा बन्दरगाह है। यह यूरोप को मूंगफली तथा मलाया और लंका को सूती कपड़े, तम्बाकू तथा ताजी तरकारियाँ निर्यात करता है और सुपारी आयात करता है।

३. कुड्डालोरः—पांडेचेरी से १५ मील दक्षिण की ओर एक छोटा बन्दरगाह है। यह मलाया को मूंगफली और सूती वस्त्र भेजता है और वहाँ से सुपारी मंगाता है, यहाँ तटीय व्यापार अधिक होता है।

४. मछलीपट्टमः—कृष्णा नदी के डेल्टे पर यह एक छोटा बन्दरगाह है। यहाँ से मुख्यतया मूंगफली विदेशों को निर्यात करते हैं। प्रतिवर्ष लगभग एक लाख टन मूंगफली बाहर भेजी जाती है। यहाँ का आयात व्यापार बहुत थोड़ा है। आयात में ब्रह्मा से आने वाली लकड़ी मुख्य है।

५. कोकोनाडाः—विजगापट्टम् बन्दरगाह से ८० मील दक्षिण की ओर यह स्थित है। यहाँ से बड़े बड़े जहाज समुद्र तट से ६-७ मील दूर लंगर डालते हैं। यहाँ के प्रमुख निर्यात कपास, मूँगफली और रेन्डी हैं। आयात में संयुक्त राष्ट्र से मिट्टी का तेल, जावा से चीनी तथा ब्रिटेन, जर्मनी और बेलजियम से धातुएँ मुख्य हैं।

६. गोपालपुरः—यह उड़ीसा के गंजम जिले का छोटा बन्दरगाह है। इसके द्वारा अधिकतर तटीय व्यापार होता है।

७. अन्य बन्दरगाहः—बालासेर और चन्द्रबाली उड़ीसा-तट पर छोटे-छोटे बन्दरगाह हैं।

सारांश

(अ) प्रमुख नगर

नगरों की उत्पत्ति के कई कारण हैं जिनमें से मुख्य ये हैं:—

(१) यातायात के केन्द्र का होना-रेल का जंक्शन होना या सड़कों का केन्द्र होना। (२) उपजाऊ भागों में होना—वहाँ आस-पास की पैदावार एकत्रित होने से वह स्थान व्यापार की मंडी बन जाता है। (३) व्यावसायिक स्थान होना-कारखानों के कारण आबादी बढ़ जाती है। (४) उत्तम बन्दरगाह होना। (५) किसी प्रान्त या राज्य की राजधानी होना। (६) तीर्थ स्थान होना। (७)-फौजी केन्द्र। (८) पहाड़ी स्थान होना—जैसे शिमला, नैनीताल आदि।

भारत के बड़े नगरों में मुख्य ये हैं:—

१. दिल्लीः—भारत की राजधानी है। देश के उत्तरी मैदान में इसकी स्थिति बड़े महत्व की है। यह रेलों और सड़कों का केन्द्र भी है। आजकल यह व्यावसायिक नगर भी बन गया है। यह नगर व्यापार का केन्द्र भी है।

२. अहमदाबादः—कपास उत्पन्न करने वाले भाग में स्थित होने के कारण पहले

यह कपास की मंडी था। आज यहाँ सूती कपड़ा बुनने की कई मिलें हैं। यहाँ बहुत सुन्दर कपड़ा तैयार होता है, जो भारत के सभी राज्यों को भेजा जाता है।

३. कानपुरः—यह नया शहर है। थोड़े ही दिनों में इस नगर ने बहुत उन्नति करली है। कृषि–प्रधान प्रदेश में होने के कारण यह अनाज की मंडी है। पास में गन्ना पैदा होने से यहाँ शक्कर बनाने के कारखाने खुल गये हैं। यहाँ सूती और ऊनी वस्त्र भी बनते हैं। कानपुर में चमड़े का सामान बनाने के कई कारखाने हैं। इस प्रकार यह व्यापारिक और औद्योगिक नगर है।

४. पटनाः—यह बिहार की राजधानी है। प्राचीन काल में इसको पाटलिपुत्र कहते थे। पटना नदी मार्गों का केन्द्र है। आजकल यह ईस्टर्न रेलवे का जंक्शन भी है। गंगा के उपजाऊ मैदान में होने के कारण यह व्यापार की मंडी है।

५. जमशेदपुरः—छोटा नागपुर के उजाड़ भाग में यह बसा हुआ है। परन्तु निकट ही लोहा और कोयला मिलने के कारण यह भारत का प्रमुख औद्योगिक नगर बन गया है। यहाँ पर कई प्रकार का लोहे का सामान बनता है। आजकल इसकी बहुत उन्नति हो रही है। रेल-मार्गों से यह कलकत्ते से जुड़ा हुआ है।

६. नागपुरः—यह मध्य प्रदेश की राजधानी थी। यह कलकत्ते से बम्बई जाने वाले रेल-मार्ग पर है। दिल्ली से मद्रास जाने वाला रेल-मार्ग भी नागपुर होकर जाता है। नागपुर के पास कपास अधिक होती है। अतः नागपुर में सूती वस्त्र बनाने के कई कारखाने हैं। कपड़े के अतिरिक्त कांच का सामान और चीनी मिट्टी के बर्तन भी यहाँ बनाये जाते हैं।

७. बंगलौरः—मैसूर राज्य का सबसे बड़ा नगर है। पहाड़ी भूमि पर बसा होने के कारण यहाँ का जलवायु बड़ा सुहावना है। यहाँ रेशमी, सूती व ऊनी वस्त्र बहुत अच्छे बनते हैं। भारत सरकार की ओर से दुग्ध-व्यवसाय सम्बन्धी शिक्षा देने के लिये यहाँ एक बड़ा विद्यालय है। हवाई जहाज का सामान तैयार करने का कारखाना भी इसी नगर में है। इन सब कारखानों के लिए शिवसमुद्रम् जल-प्रपात से सस्ती बिजली मिल जाती है।

८. जयपुरः—नव-निर्मित राजस्थान राज्य की राजधानी है। जयपुर राजस्थान का सबसे बड़ा नगर भी है। दिल्ली और आगरे के निकट होने के कारण यह व्यापारिक केन्द्र बन गया है। नगर बहुत ही सुन्दर ढंग से बसा हुआ है। यहाँ पर ताम्बे और पीतल के अच्छे बर्तन बनते हैं। आजकल काँच का सामान तैयार करने का कारखाना भी यहाँ खुल गया है।

(आ) प्रमुख बन्दरगाह

पाश्चात्य देशों से व्यापार बन्दरगाहों द्वारा ही होता है। पाश्चात्य देशवासियों के संसर्ग में आने के कारण हमारे बन्दरगाहों की उन्नति हुई। एक बन्दरगाह की उन्नति के निम्नलिखित कारण हैं:—

(१) कटा हुआ समुद्री किनारा होना जहाँ पर जहाज सुरक्षित रह सकें, (२) बन्दरगाह के निकट गहरा पानी होना जिससे बड़े बड़े जहाज वहाँ तक आ सकें, (३) बन्दरगाह काफी चौड़ा हो। ऐसा होने से कई जहाज ठहरने में सुविधा रहती है, (४) बन्दरगाह के पीछे वाली भूमि उपजाऊ हो जिससे निर्यात करने के लिए सामान उत्पन्न हो, (५) बन्दरगाह देश के भीतरी भागों में रेल-मार्ग अथवा सड़कों द्वारा जुड़ा हुआ हो, (६) बन्दरगाह साल भर खुला हो वहाँ का पानी जमे नहीं, (७) समुद्र से आने वाले तूफानों से बचने के लिए सहूलियत होना भी एक उत्तम बन्दरगाह का लक्षण है।

भारत के प्रसिद्ध बन्दरगाह ये हैं:—

१. **बम्बई:**—इसका बन्दरगाह प्राकृतिक होने के कारण सुरक्षित है। इससे पीछे वाले काली मिट्टी के प्रदेश में कपास अधिक होती है। पहले यहाँ से कपास बाहर भेजी जाती थी। आजकल बम्बई और उसके निकट वाले नगरों में सूती वस्त्र तैयार किया जाता है जिसका निर्यात होता है। वेस्टर्न रेलवे तथा जी० आई० पी० रे०वे से बम्बई उत्तरी भारत तथा दक्षिणी भारत के प्रमुख नगरों से सम्बन्धित है। आजकल बम्बई एक सुन्दर हवाई अड्डा भी है।

२. **कलकत्ता:**—यह भारत के उत्तरी मैदान का प्रमुख बन्दरगाह है। कलकत्ता हुगली नदी के बायें किनारे पर बसा हुआ है। नदी में ज्वारभाटा आने से इसका पानी घटता बढ़ता रहता है। अतः जहाजों के आने और जाने में सुविधा रहती है। ईस्ट इण्डियन रेलवे, बंगाल-नागपुर रेलवे और आसाम रेलवे इस नगर को भारत के विभिन्न प्रदेशों से मिलाती हैं। कलकत्ते के निकट वाली भूमि उपजाऊ है। वहाँ पाट और चावल की उपज होती है। आसाम में चाय होती है। कलकत्ते में पाट के कई कारखाने भी हैं। इस प्रकार कलकत्ता औद्योगिक नगर भी है। इसकी आबादी धीरे धीरे बढ़ती गई और आज यह हमारे देश का सबसे बड़ा नगर है।

३. **मद्रास:**—यह भारत का तीसरा बन्दरगाह है। मद्रास का बन्दरगाह कृत्रिम है। यह नगर भारत के भीतरी भागों से रेल-मार्गों द्वारा जुड़ा हुआ है। दक्षिणी भारत की पैदावार इसी बन्दरगाह द्वारा निर्यात की जाती थी। आजकल मद्रास में सूती कपड़ा बुनने तथा तेल निकालने के कई कारखाने खुल गए हैं।

मद्रास बन्दरगाह को बनाने में बहुत खर्च करना पड़ा।

४. **विशाखापटनम्:**—भारत के पूर्वी समुद्र तट पर यह एक उत्तम बन्दरगाह है। कलकत्ते और मद्रास के मध्य में स्थित होने के कारण इसका महत्व और भी अधिक हो गया है। भारत की मैंगनीज धातु भेजने के लिये यह बन्दरगाह तैयार किया गया था परन्तु अब यहाँ से दक्षिणी भारत की अन्य पैदावार भी निर्यात की जाने लगी है। इस बन्दरगाह के बन जाने से मद्रास बन्दरगाह पर कम भीड़ रहती है।

विजगापट्टम में जलयान बनाने का कारखाना खुल जाने से इसकी अधिक उन्नति हो गई है ।

५. अन्य बन्दरगाह:—इन बड़े बड़े बन्दरगाहों का विकास आधुनिक समय में हुआ है, परन्तु भारत में प्राचीन काल में भी कई बन्दरगाह थे जैसे कालीकट, कोचीन, भड़ौंच आदि। आज उनका महत्व कम हो गया है। कुछ नवीन बन्दरगाहों का विकास किया जा रहा है जैसे काँदला, मांडवी, नवलाखी आदि। इनके अतिरिक्त पोरबन्दर, ओखा, तूतीकोरन, मछलीपट्टम् आदि बन्दरगाह भी उन्नति कर रहे हैं।

देश का विभाजन हो जाने से अरब सागर पर स्थित कराची और बंगाल की खाड़ी का चटगांव बन्दरगाह अब पाकिस्तान में है।

प्रश्न

१. अच्छे बन्दरगाह के लिए किन किन बातों का होना आवश्यक है ?
२. भारत में उत्तम बन्दरगाहों की कमी क्यों है ?
३. कलकत्ते की उन्नति के क्या कारण हैं ?
४. बम्बई उत्तम बन्दरगाह क्यों गिना जाता है ?
५. पश्चिमी तट पर कौन से नये बन्दरगाह तैयार हो रहे हैं ?

तृतीय भाग

[नव भारत-निर्माण की नई योजनाएँ]

अध्याय २४

द्वितीय पंचवर्षीय योजना

हमारे देश भारत में प्रथम पन्चवर्षीय योजना की सफलता ने लोगों में उत्साह भर दिया। आज देशवासियों को योजना का इतिहास और उसका महत्व बताने की आवश्यकता नहीं है। क्योंकि योजना शब्द हमारे यहाँ पर पर्याप्त व्यापक हो चुका है।

प्रथम पंचवर्षीय योजना का समय अप्रैल ५१ से मार्च ५६ तक रखा गया। उस बीच राष्ट्र में विकास के अनेक कार्य हुए। उन पांच वर्ष के समय में कुल मिलाकर २३५६ करोड़ रु० व्यय किए गए। योजना का कार्य प्रारम्भ होने से पहले हमारे यहाँ अन्न का संकट था। हमें विदेशों से अन्न मंगाकर उसके बदले पर्याप्त धन राशि देनी पड़ती थी। योजना की समाप्ति के समय हम इस स्थिति में हो गये कि अन्न के लिए हमें विदेशों पर निर्भर रहने की आवश्यकता न रही। उस समय हमारे देश में सबसे बड़ी समस्या खाद्यान्न की कमी ही थी और इसलिए प्रथम योजना में कृषि की उपज के उत्पादन पर ही अधिक जोर दिया गया। इसलिए सिंचाई और बाढ़ नियंत्रण के कार्यों को भी हाथ में लिया गया। सिंचाई के बृहत् साधन बहुमुखी हैं अतः उनसे बिजली का उत्पादन भी बढ़ता है। इन कृषि, सिंचाई और शक्ति के साधनों की वृद्धि करने के लिए पहली योजना की सम्पूर्ण धन राशि का लगभग ४० प्रतिशत व्यय किया गया।

परन्तु पहली योजना में विशाल उद्योग धन्धों का अधिक विकास न हो पाया। राष्ट्र के लिए खेती और उद्योग धन्धों दोनों का ही विकास करना आवश्यक है। इन दोनों के विकास से बेरोजगारी दूर हो सकती है। योजना काल की सफलता के साथ साथ लोगों में समाजवादी ढंग की समाज व्यवस्था की भावना भी जागृत होने लगी। धन का असमान वितरण लोगों को अखरने लगा। इन्हीं सब बातों को ध्यान में रखते हुए प्रथम पंचवर्षीय योजनाकाल में ही दूसरी पंचवर्षीय योजना का ढांचा तैयार किया जाने लगा।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना वास्तव में जनता की योजना है। इसको तैयार करते समय जनता के सुझावों को विशेष रूप से ध्यान में रखा गया। प्रो० पी० सी० महलानवीस ने दूसरी योजना के निर्माण के लिए अपने सुझाव रखे। वित्त मन्त्रालय एवं योजना आयोग की अर्थ-शास्त्री शाखाओं ने योजना के लिये प्रस्तावित रूप रेखा तैयार की। राष्ट्र के प्रमुख अर्थ-शास्त्रियों ने भी अपने अपने सुझाव दिए। इन सब प्रपत्रों पर राष्ट्रीय विकास परिषद ने मई सन् १६५५ में विचार किया। फरवरी ५६ में योजना की पूर्ण प्रस्तावित रूप रेखा प्रस्तुत की गई और उसे जनता के सामने सूचना तथा सुझाव एवं आलोचना के लिए रखा गया। उन सब आमंत्रित सुझावों को ध्यान में रखकर राष्ट्रीय विकास परिषद ने योजना के मसविदे में

सुधार कर उसको पूर्णरूप दे दिया और २ मई ५६ को परिषद ने तत्सम्बन्धी प्रस्ताव पास किया तदनन्तर योजना के अंतिम रूप को संसद से स्वीकृति प्राप्त हो गई। प्रथम योजना का अंतिम दिवस ३१ मार्च ५६ था अतः द्वितीय योजना १ अप्रैल ५६ से प्रारम्भ मानी गई। इस प्रकार हमारी दूसरी योजना का एक वर्ष अब समाप्त हो गया है।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना का मूल उद्देश्य समाजवादी ढंग से समाज की व्यवस्था करना है। इनका अर्थ यह है कि राष्ट्र की उन्नति में समाज के हित की बात को विशेष महत्व दिया गया है। किसी विशेष वर्ग या व्यक्ति के लाभ को ध्यान में नहीं रखा गया। यह भी ध्यान में रखा गया है कि न केवल राष्ट्रीय आय और रोजगार के अवसरों में ही वृद्धि हो, बल्कि लोगोंकी आय और सम्पत्ति में विषमता घटती जाय और इस प्रकार हर मनुष्य को अपना जीवन सफल बनाने का अवसर प्राप्त हो।

मोटे तौर पर द्वितीय पंचवर्षीय योजना के उद्देश्यों को हम चार भागों में बांट सकते हैं।

१. राष्ट्रीय आय में वृद्धि करनाः—इसमें इतनी वृद्धि कर देना कि जिससे देश के लोगों का जीवन स्तर ऊंचा हो जाय। प्रथम योजना काल में हमारी सम्पूर्ण राष्ट्रीय आय में १८ प्रतिशत और प्रतिव्यक्ति की आय में १० प्रतिशत की वृद्धि हुई थी। दूसरी योजना में हमें आगे बढ़ना है। पांच साल में सम्पूर्ण राष्ट्रीय आय में २५ प्रतिशत की वृद्धि करने का लक्ष्य रखा गया है।

२. तीव्रगति से औद्योगीकरण करनाः—जैसा कि पहले बताया गया है, एक स्वावलम्बी राष्ट्र को खेती के साथ साथ उद्योग धन्धों का विकास करना होता है। औद्योगीकरण के लिए मूल और भारी उद्योगों के विकास पर जोर देने की आवश्यकता है। इसी कारण दूसरी योजना में भारी और मूल उद्योगों की स्थापना पर विशेष ध्यान रखा गया है। इसके लिए लोहा और इस्पात, बिजली के भारी यंत्र, कोयला व्यवसाय, खनिज तेल निकालना, परिवहन के साधनों का निर्माण करना आदि पर जोर दिया गया है। इन सबका कार्य सरकार ने अपने हाथ में ले रखा है।

हमारे देश के अधिकांश मनुष्य ग्रामों में ही रहते हैं अतः भारी उद्योगों के साथ लघु एवं ग्राम उद्योगों को हटाया नहीं जा सकता। इसीलिए हमारी औद्योगिक नीति ऐसी बनी हुई है कि भारी उद्योगों के साथ साथ लघु एवं कुटीर उद्योगों को भी प्रोत्साहन दिया जाय जिससे सभी वर्ग के लोगों को लाभ पहुँच सके।

३. रोजगार के अवसरों का अधिक विस्तारः—हमारे देश में बेकारी की समस्या बड़ी पेचीदी है। इस समय देहातों और नगरों में लगभग ५३ लाख व्यक्ति रोजगार चाहने वाले हैं। इसके अतिरिक्त रोजगार चाहने वाले व्यक्तियों में लगभग २० लाख की वृद्धि प्रति वर्ष होती है। इसके हिसाब से पांच वर्ष में १ करोड़ मनुष्य रोजगार तलाश करने वाले और बढ़ जाएंगे। द्वितीय योजना में गैर कृषि क्षेत्रों में ८० लाख और सिंचाई से १६ लाख व्यक्तियों को रोजगार देने की व्यवस्था की गई है। इस प्रकार योजना द्वारा बढ़ती हुई जनसंख्या की

बेरोजगारी की समस्या तो हल हो जायगी परन्तु वर्तमान काल के रोजगार चाहने वाले व्यक्तियों की संख्या वही बनी रहेगी। परन्तु द्वितीय योजना पूर्ण हो जाने पर आगे की योजनाओं में इतना अधिक काम बढ़ जायगा कि बेरोजगार लोग बहुत कम रह जावेंगे।

४. आय तथा सम्पत्ति की विषमताओं का निराकरण:—योजना आयोग ने समाजवादी ढंग की समाज व्यवस्था की स्थापना को अपनी मूल आर्थिक नीति के रूप में स्वीकार किया है। इसमें समाज के कल्याण की ओर अधिक ध्यान दिया गया है। आय एवं सम्पत्ति का ऐसा वितरण हो कि सभी वर्गों के लोगों को लाभ पहुँचे। धन का अधिक अंश समाज कल्याण के कार्यों में खर्च करने की व्यवस्था की गई है। आय की विषमता को कम करने के लिए दो कार्य करने होंगे। जिन लोगों की आय सबसे कम हो, उनकी आय बढ़ानी होगी और जिनकी आय बहुत अधिक हो, उसे घटाना पड़ेगा। अधिक आय जमींदारी उन्मूलन नियम, टैक्स लगाने आदि से कम होगी और उस आय को समाज कल्याण के कार्यों में लगाया जायगा जिससे सर्वसाधारण को लाभ पहुँचेगा। वास्तव में यह आधारभूत विचार सर्वोदय के आदर्श से सम्बन्धित है।

अब हम द्वितीय योजना के आकार एवं विभिन्न मदों पर उसके बंटवारे की विवेचना करते हैं। इस योजना में केन्द्रीय और राज्य सरकारों द्वारा सभी प्रकार के विकास कार्यों के लिए लगभग ४८०० करोड़ रुपया खर्च करने का अनुमान है। इसके अतिरिक्त लगभग २३०० करोड़ रुपया निजी क्षेत्र में लगाया जायगा। सार्वजनिक या सरकार की ओर से व्यय की जाने वाली रकम का प्रतिशत विभिन्न कार्यों के लिए इस प्रकार है-कृषि और सामूहिक विकास १२ प्रतिशत, सिंचाई और बाढ़ नियंत्रण ९ प्रतिशत, परिवहन और संचार के साधन २९ प्रतिशत, शक्ति के साधनों का विकास १२ प्रतिशत, उद्योग और खनिज १९ प्रतिशत, सामाजिक सेवाएं २० प्रतिशत और विविध २ प्रतिशत।

दूसरी योजना की लागत को देखते हुए यह बात स्पष्ट हो जाती है कि इस वर्तमान योजना का आकार पहली योजना के दूने से भी अधिक है। यह भी स्पष्ट हो जाता है कि इस योजना में औद्योगीकरण को प्राथमिकता दी गई है। खनिज शक्ति एवं रेलों का सम्बन्ध उद्योगों से ही है अतः इस सब पर व्यय होने वाली धनराशि योजना की लागत का आधा अंश है। प्रथम योजना में इन सबके लिए केवल एक तिहाई धनराशि की व्यवस्था की गई थी। प्रथम योजना में खेती एवं सिंचाई के लिए एक तिहाई धन रखा गया था परन्तु दूसरी योजना में इन कार्यों के लिए कुल लागत का पांचवा अंश निर्धारित किया गया है। फिर भी खेती और सिंचाई के लिए जो रकम दूसरी योजना में खर्च की जाएगी वह पहली योजना में खर्च की गई रकम से अधिक है। सामाजिक सेवाओं पर किया जाने वाला व्यय दोनों योज-नाओं में लगभग बराबर है।

अब प्रश्न यह उठता है कि इतना धन कहाँ से आएगा। योजना आयोग ने इसकी व्यवस्था भी की है। सरकारी वित्तीय साधन कई स्रोतों से प्राप्त किए जाएँगे। वर्तमान करों

की दरों तथा अतिरिक्त करों से ८०० करोड़ रुपया प्राप्त किया जायगा। योजनायें खर्च होने वाली धन राशि का चौथाई अंश अर्थात् १२०० करोड़ रुपया बाजार ऋण एवं अल्प बचत योजनाओं से प्राप्त किया जायगा। लगभग ८०० करोड़ रुपया विदेशों से सहायता के रूप में मिलने का अनुमान है। १५० करोड़ रुपया रेलों से मिलने की संभावना है और आशा की जाती है कि २५० करोड़ रुपया प्रोविडेन्ट फंड एवं अन्य निधियों से मिल सकेगा। इस प्रकार १६०० करोड़ की कमी रहती है। इसमें से १२०० करोड़ रुपये की कमी घाटे की अर्थ व्यवस्था से पूरी की जायगी। फिर जो ४०० करोड़ रुपये की कमी रहती है वह घरेलू बचत से पूरी की जायगी, ऐसी संभावना है। इस प्रकार आशा है कि योजना के लिए आवश्यक धन राशि अनेक स्रोतों से उपलब्ध हो सकेगी।

द्वितीय योजना काल में सरकारी और निजी क्षेत्रों में किए जाने वाले उत्पत्ति और विकास के मुख्य लक्ष्यों का अनुमान इस प्रकार है—खेती की उपज में १८ प्रतिशत की वृद्धि होने की आशा है जिसमें खाद्यान्नों में १५ प्रतिशत, कपास में ३४ प्रतिशत, शक्कर और गुड़ के उत्पादन में २८ प्रतिशत और तिलहन की उपज में २१ प्रतिशत की वृद्धि होने का अनुमान है। लगभग २१० लाख एकड़ भूमि पर अतिरिक्त सिंचाई होगी। प्रथम पंचवर्षीय योजना काल में बिजली का उत्पादन २३ लाख किलोवाट था। दूसरी योजना की समाप्ति तक ६८ लाख किलोवाट बिजली उत्पन्न की जायगी। औद्योगिक क्षेत्र में लोहा और इस्पात के कारखानों, कोयला व्यवसाय, सीमेंट एवं रासायनिक खाद बनाने के कारखानों में कई गुना वृद्धि हो जायगी। अनुमान है कि देश में उत्पादक वस्तुओं की उत्पत्ति लगभग १५० प्रतिशत बढ़ जावेगी। इसके अतिरिक्त शिक्षा, स्वास्थ्य, गृह निर्माण, पुनःस्थापन आदि सामाजिक सेवाओं में भी पर्याप्त वृद्धि होगी। सामुदायिक विकास योजनाओं द्वारा लगभग ३२ करोड़ व्यक्तियों को लाभ प्राप्त हो सकेगा।

इस प्रकार दूसरी योजना प्रथम योजना की अपेक्षा अधिक महत्वाकांक्षापूर्ण है और उसे पूरा करने के लिए देश के लोगों को पहले की अपेक्षा कहीं अधिक प्रयत्न करना होगा।

प्रश्न

१. प्रथम पंचवर्षीय योजना में किन बातों की कमी रही?
२. द्वितीय योजना का सूत्रपात किस प्रकार हुआ?
३. द्वितीय योजना के क्या उद्देश्य हैं?
४. दूसरी योजना में व्यय होने वाली धन राशि किस प्रकार से प्राप्त की जायगी?
५. दूसरी योजना के क्या लक्ष्य हैं?

———

अध्याय २५

नदी घाटी योजनाएँ

हमारे देश भारत में नदियों का महत्व सदा से ही रहा है। नदियों के किनारे पर बड़े बड़े प्राचीन नगर बसे हुए हैं। रेलों से पहले नदियाँ आवागमन के सुगम साधन थीं। नदियों के मैदान की मिट्टी उपजाऊ होने के कारण वहाँ खेती की पैदावार अच्छी होती है। इन्हीं सब कारणों से न केवल प्राचीन काल में ही, बल्कि वर्तमान समय में भी नदियों की उपयोगिता को सभी मानते हैं। उत्तरी भारत की नदियों से निकलने वाली नहरों का वर्णन पिछले अध्याय में किया जा चुका है। उन नहरों से सिंचाई कर उजाड़ जमीन को हरी-भरी बना दिया है।

आजकल नदियों के पानी का सदुपयोग विशेष प्रकार से किया जाने लगा है। नदी पर बाँध बनाकर पानी को एकत्रित कर लेते हैं और फिर उसे सिंचाई, जल-विद्युत के उत्पादन आदि में काम लेते हैं। ऐसी योजनाओं से कई काम होने के कारण उन्हें बहुमुखी (Multi-Purpose Projects) योजनाएँ कहते हैं। उनके द्वारा कई काम होने से खर्च कम पड़ता है और लाभ अधिक होता है।

बहुमुखी योजनाओं का सूत्रपात

संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में एपेलेचियन पठार से निकल कर टेनैसी नामक नदी पश्चिम की ओर मैदान में बहती है। उस नदी में अधिक बाढ़ आने के कारण मैदान में रहने वाले लोगों को जन और धन की बहुत हानि होती थी। उस नदी में बाढ कम करने के लिए बीस बाँध बनाए गए। इस प्रकार से रोके हुए पानी को सिंचाई के काम लेने लगे जिससे खेती की पैदावार कई गुना बढ़ गई। उस पानी से सस्ती जल-विद्युत भी उत्पन्न की गई जिससे गाँवों में रोशनी के साथ साथ कई प्रकार के उद्योग-धन्धे चलने लगे। इस प्रकार नदी पर बाँध बना देने से बाढ़ रुक गई, खेतों में सिंचाई होने लगी और लाखों किलोवाट बिजली का उत्पादन होने लगा। एक ही योजना से कई काम होने लगे। अतः ऐसी योजना को बहुसूत्री या बहुमुखी योजना कहने लगे। आज संयुक्त राष्ट्र में अनेक बहुमुखी योजनाएँ बनाई जा चुकी हैं।

हमारे यहाँ भारत में भी टेनैसी नदी की भाँति दामोदर नदी पर योजना बनाई गई। इसका उद्देश्य बाढ़ रोकना, सिंचाई करना, बिजली पैदा करना आदि है। फिर तो ऐसी कई योजनाएँ बनाई गई और बनाई जा रही हैं। प्रथम पंचवर्षीय योजना में तो ऐसी नदी घाटी योजनाओं को इतना अधिक महत्व दिया गया है कि योजना पर पाँच साल में खर्च की जाने वाली कुल रकम का लगभग तीसरा अंश ऐसी योजनाओं पर खर्च किया जायगा।

इस समय हमारे यहाँ कुल मिलाकर १५३ नदी-घाटी योजनाएँ हैं जो भारत के भिन्न-भिन्न राज्यों में हैं। इनमें से ६ योजनाएँ तो बहुमुखी हैं, १०४ योजनाएँ केवल सिंचाई के लिए हैं और ४३ योजनाएँ जल-विद्युत उत्पन्न करने के लिए हैं। इन १५३ योजनाओं में से १२ योजनाओं को विशाल योजनाएँ माना गया है। इन १२ में से ६ बहुमुखी हैं, ३ सिंचाई की हैं और शेष ३ बिजली उत्पन्न करने की हैं। इन १२ विशाल योजनाओं के निर्माण में लगभग ४३६ करोड़ रुपया खर्च होगा। शेष १४१ योजनाओं पर १५१ करोड़ रुपया व्यय किया जायगा। इस प्रकार सब प्रकार की योजनाओं में कुल मिलाकर ६८० करोड़ रुपया खर्च होगा।

बहुमुखी योजनाओं के कार्य

भारत की बहुमुखी योजनाओं के लाभ इस प्रकार हैं:—

१. **सिंचाई**:—जैसा कि पहले बताया जा चुका है हमारे यहाँ पर योजनाओं का मुख्य कार्य सिंचाई करना है। देश में नहरों, कुओं और तालाबों से सिंचाई होती आरही है परन्तु फिर भी जितनी भूमि में खेती होती है उसके केवल १८% में ही सिंचाई होती है। नदी-घाटी योजनाओं के बन जाने से पर्याप्त भूमि की सिंचाई होने लगेगी।

२. **जल-विद्युत का उत्पादन**:—पाश्चात्य देशों की तुलना में हमारे यहाँ पर अभी तक बिजली का प्रयोग कम ही होता है। कोयले से उत्पन्न की जाने वाली बिजली महँगी पड़ती है। पानी की बिजली सस्ती पड़ती है। नदियों पर बाँध बनाकर पहले बिजली उत्पन्न की जायगी और बचे हुए पानी को नहरों द्वारा मैदानों में पहुँचाकर उससे सिंचाई की जायगी। इस प्रकार उत्पन्न की हुई बिजली सस्ती पड़ेगी। यह बिजली गाँव-गाँव में पहुँचा दी जायगी जहाँ उसका उपयोग रोशनी तथा ग्रामोद्योगों की उन्नति करने में किया जायगा।

३. **जल-मार्ग**:—बाँध बनाकर नदी को रोक लेने से नदी में पानी की गहराई अधिक हो जाती है। ऐसे गहरे पानी में बड़े-बड़े स्टीमर और नावें चल सकती हैं जिनके द्वारा माल भी ढोया जा सकता है और सवारियाँ भी ले जाई जा सकती हैं। पहले तो यह कार्य नदियों द्वारा ही होता था।

४. **बाढ़ की रोक**:—नदियों की बाढ़ से होने वाली हानियों के विषय में प्रायः हर साल सुना जाता है। आसाम, बिहार, बंगाल आदि में बहने वाली वेगवती नदियाँ सैकड़ों गाँवों को नष्ट कर देती हैं। नदियों में बाँध बना देने से नदी का वेग कम हो जाता है और मैदान में पहुँचने पर उसमें बाढ़ नहीं आती। कोसी नदी की योजना से सबसे बड़ा लाभ यह होगा कि बिहार में आने वाली बाढ़ सदा के लिये आनी बन्द हो जायगी।

५. **मछली पालना**:—भारत में खाद्यान्न की कमी है। इसकी पूर्ति का एक साधन मछली पालना भी है। समुद्र-तट पर ही अधिक मछली इस समय पकड़ी जाती है। नदियों पर बाँध बना देने से एकत्रित किये हुए पानी में मछली पालने की अच्छी व्यवस्था हो जायगी। मछलियों के होने से बाँध का पानी साफ भी रहेगा।

६. वृक्षारोपण:—भारत में धीरे-धीरे वनों की कमी हो रही है। वनस्पति की कमी के कारण मिट्टी का कटाव अधिक होता है। खेती की पैदावार के लिए मिट्टी का कटाव बहुत घातक है। इसीलिए आजकल वृक्षारोपण की ओर अधिक ध्यान दिया जाता है। नदियों पर बनाए गए बांधों के किनारे पानी की सुविधा के कारण कई प्रकार के वृक्ष लगाये जा सकते हैं। फलदार वृक्ष लगाने से तो और भी अधिक लाभ होगा।

७. आमोद-प्रमोद के स्थल:—नदियों पर बनाये गये बांध झीलों के रूप में बन जाते हैं। ऐसे स्थान सुन्दर दृश्यों के स्थल होते हैं। वहाँ के मनोरम दृश्यों को देखने के लिए नगरों के लोग कुछ समय के लिए जाते हैं। इस प्रकार ऐसे बाँध आमोद-प्रमोद के स्थल बन जाते हैं।

८. पीने के पानी की व्यवस्था:—बाँधों में एकत्रित किया हुआ पानी साफ करके आस-पास के नगरों और कस्बों में नलों द्वारा पहुँचा दिया जाता है। पीने के अतिरिक्त वह पानी नगरों में चलने वाले कारखानों में भी काम आ जाता है। जिन नगरों के पास ऐसे बाँध बन गए हैं वहाँ पानी की बड़ी सुविधा हो गई है।

भारत की प्रमुख नदियों का वार्षिक प्रवाह और उसका उपयोग

वैसे तो भारत में अनेक नदियाँ हैं और उनका उपयोग सिंचाई आदि के लिए सभी जगह किया जाता है, परन्तु राष्ट्र की निम्नलिखित नदियों का प्रवाह अधिक है और उन पर नदी-घाटी योजना बनाने में अधिक सुविधा रहेगी।

१. गंगा नदी:—यह उत्तरी भारत की प्रमुख नदी है। इससे सिंचाई करने के लिए कई नहरें निकाली गई हैं। परन्तु फिर भी इसका पर्याप्त पानी यों ही बंगाल की खाड़ी में जा गिरता है। इसके वार्षिक प्रवाह का अनुमान ४० करोड़ एकड़ फीट है। इस पर दामोदर योजना से केवल २७ लाख एकड़ फीट जल का ही उपयोग हो सकेगा। अतः इस पर कई घाटी योजनाएँ बनाने के लिए गुंजाइश है।

२. सिन्धु नदी:—इस नदी से भारत और पाकिस्तान दोनों को ही लाभ होता है। पंजाब की नहरें इसी नदी से निकाली गई हैं। नदी का वार्षिक प्रवाह लगभग १७ करोड़ एकड़ फीट जल है। बड़ी योजना इस पर भाकरा-नांगल है जिसके द्वारा केवल ८० लाख एकड़ फीट जल के प्रवाह का उपयोग हो सकेगा।

३. ब्रह्मपुत्र:—इसका मार्ग अधिकांश रूप में पहाड़ी प्रदेश में है। आसाम और बंगाल के जिस भाग में यह बहती है वहाँ अधिक वर्षा होने के कारण सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती अतः उस समय तक नदी के पानी का प्रयोग नहीं किया जाता है। वैसे इसका अनुमानित वार्षिक प्रवाह ३० करोड़ एकड़ फीट है जो गंगा नदी को छोड़कर भारत की शेष सब नदियों से अधिक है।

४. महानदी:—डेल्टा प्रदेश में कुछ पानी नहरों द्वारा काम में लिया जाता है।

इसका अनुमानित वार्षिक प्रवाह ७ करोड़ ४० लाख एकड़ फीट है। इसी नदी पर हीराकुड योजना तैयार हो रही है। उसके तैयार हो जाने पर नदी का केवल १ करोड़ १० लाख एकड़ फीट पानी ही काम में आ सकेगा।

५. गोदावरी:—इस नदी का वार्षिक प्रवाह लगभग ८ करोड़ ४० लाख एकड़ फीट है जिसमें से इस समय तक केवल कुल का १४ प्रतिशत ही काम आता है।

६. कृष्णा:—नदी का वार्षिक प्रवाह ५ करोड़ एकड़ फीट है। जिसका १८ प्रतिशत तो अभी तक काम में आता है और तुंगभद्रा बाँध के बन जाने से ६ प्रतिशत और काम में आने लगेगा।

७. कावेरी:—इसके वार्षिक प्रवाह का अनुमान १ करोड़ २० लाख एकड़ फीट है जिसमें से लगभग ६० प्रतिशत पानी मद्रास और मैसूर राज्य की विभिन्न सिंचाई की योजनाओं में काम आजाता है।

८. नर्बदा:—नदी का वार्षिक प्रवाह ३ करोड़ २० लाख एकड़ फीट है। अभी तक इसका पानी सिंचाई में काम नहीं आता।

९. ताप्ती नदी:—इसका वार्षिक प्रवाह १ करोड़ ७० लाख एकड़ फीट है। अभी तक तो इसका पानी सिंचाई के काम में नहीं आता परन्तु काकरपारा योजना के बन जाने से कुछ पानी काम में आ सकेगा।

ऐसा अनुमान किया जाता है कि भारत की नदियों का कुल प्रवाह १३५.६ करोड़ एकड़ फीट है। इसमें से अभी केवल ७.६ करोड़ एकड़ फीट ही काम में आता है अर्थात् कुल जल का केवल ५.६% ही सिंचाई में प्रयुक्त होता है। शेष जल यों ही बहकर समुद्र में जा गिरता है। इस प्रकार हमारे यहाँ पर इस पानी के काम में लाने के लिए पर्याप्त संभावना है।

भारत की प्रमुख नदी योजनायें

यों तो भारत में विभिन्न प्रकार की सिंचाई तथा बिजली की अनेक योजनाएँ हैं परन्तु उनमें से निम्नलिखित योजनाओं का विशेष महत्व है:—

(१) दामोदर घाटी योजना:—दामोदर नदी छोटा नागपुर से निकल कर १८० मील तक बिहार में बहती है और फिर बंगाल में प्रवेश करती है। अंत में यह नदी हुगली में जा गिरती है। पठारी भाग में बहने के कारण नदी का प्रवाह तेज है अतः इससे बाढ़ उत्पन्न होती है। सन् १९४३ में इस नदी में बड़ी भयंकर बाढ़ आई जिससे बहुत हानि हुई। बाढ़ को रोकने के लिए एक योजना तैयार कराई। दूसरा ख्याल यह भी रखा गया कि रुके हुए पानी से जल-विद्युत उत्पन्न की जाय। सन् १९४८ में योजना कार्यरूप में परिणत करने के लिए भारतीय संसद में 'दामोदर घाटी कारपोरेशन अधिनियम' पास किया गया। उसके पश्चात् स्वतंत्र कारपोरेशन की स्थापना की गई जिसकी देख रेख में निर्माण का कार्य प्रारम्भ किया गया।

प्रारम्भ में दामोदर घाटी योजना पर ५५ करोड़ रुपया खर्च करने का अनुमान था परन्तु ठीक जाँच करने पर पता लगा कि योजना के सम्पूर्ण होने तक लगभग ११० करोड़
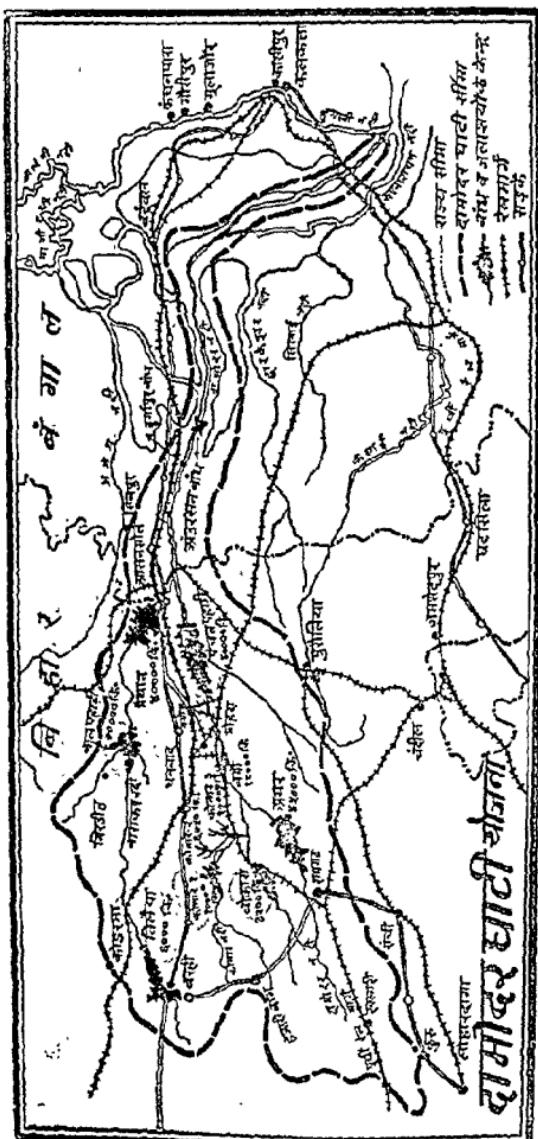
चित्र सं० १०२. दामोदर घाटी योजना

रुपया खर्च होगा। यह रकम केन्द्रीय सरकार तथा बंगाल और बिहार राज्यों से प्राप्त की जायेगी। संयुक्त राज्य अमेरिका से भी मशीनें तथा अन्य आवश्यक सामग्री खरीदने के लिए पर्याप्त ऋण मिल चुका है।

सम्पूर्ण योजना में दामोदर नदी तथा उसकी सहायक नदियों पर दस बाँध बनाने की योजना है। सारी योजना के दो विभाग कर दिए गए हैं। प्रथम पंचवर्षीय योजना के

अन्तर्गत प्रथम चरण को लिया गया जिसमें बोकारो का बिजलीघर, तिलैया बाँध और उसका बिजलीघर, कोनार बांध, माइथान बांध एवं उसका शक्तिगृह, पंचेत पहाड़ी बांध, दुर्गापुर

चित्र सं० २०२. भाकरा-नांगल के बाँध
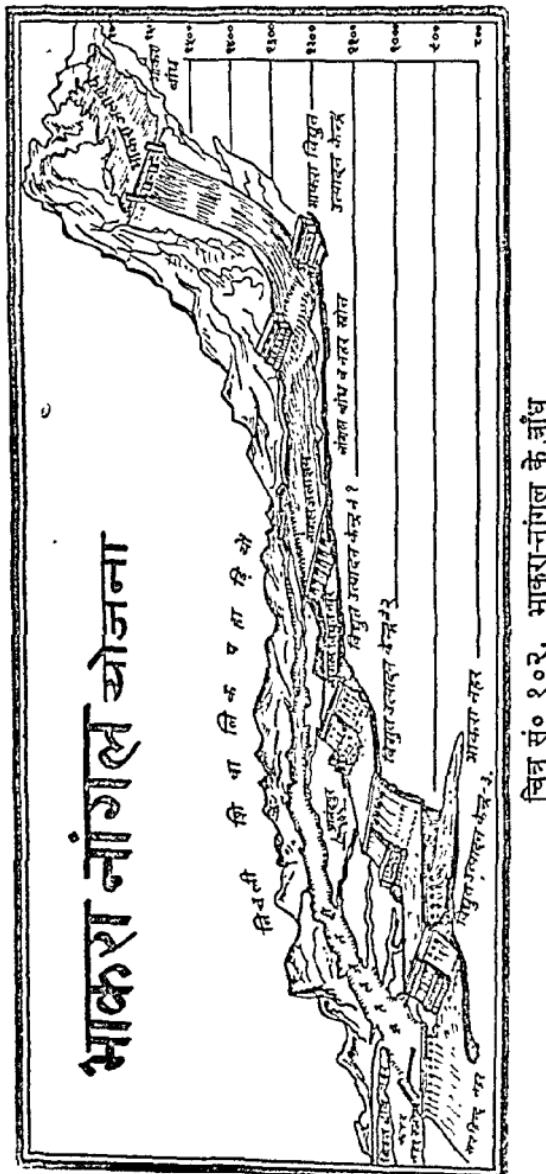
बांध तथा अन्य छोटे बिजलीघर बनाने की योजना रखी गई। शेष काम द्वितीय पंचवर्षीय योजना काल में समाप्त होगा।

दामोदर योजना के पूर्ण हो जाने पर ऐसा अनुमान है कि लगभग ११४१ हजार एकड़ भूमि की सिंचाई होगी और २७४ हजार किलोवाट बिजली का उत्पादन होगा। इस योजना के क्षेत्र में कोयले का भण्डार है। अभ्रक और तांबे की खानें भी हैं। उनके निकालने

के लिए सस्ती बिजली उपलब्ध हो सकेगी। पटना, जमशेदपुर, कलकत्ता और डालमिया नगर को पर्याप्त बिजली मिल जायगी। इस प्रकार दामोदर योजना से खेती की उपज बढ़ने के अतिरिक्त भारत के सुप्रसिद्ध व्यावसायिक प्रदेश की उन्नति भी हो सकेगी।

२. भाकरा-नांगल योजना:—पंजाब और राजस्थान की यह संयुक्त योजना है। इसकी देख-रेख के लिए एक कंट्रोल बोर्ड है जिसमें पंजाब और राजस्थान के प्रतिनिधि हैं। कुल खर्च का अनुमान १५० करोड़ रुपया है जिसकी व्यवस्था केन्द्रीय सरकार, पंजाब और राजस्थान द्वारा की जा रही है।

भाकरा योजना में पाँच निर्माण कार्य होंगे—(अ) सतलज नदी पर भाकरा बाँध, (आ) वहाँ से आठ मील दूर नांगल बांध, (इ) नांगल नहर, (ई) नांगल के दो बिजलीघर और (उ) भाकरा की नहरें।

भाकरा योजना हमारे देश की एक बड़ी योजना है। इसके निर्माण का कार्य सन् १९४६ में प्रारम्भ हो गया था। जुलाई सन् ५४ से सिंचाई का कार्य प्रारम्भ हो गया है। भाकरा बांध तो लगभग तैयार हो गया है और आशा की जाती है कि नांगल का कार्य भी सन् १९५९ तक समाप्त हो जायगा।

योजना के समाप्त हो जाने पर अनुमानतः ३६ लाख एकड़ भूमि की सिंचाई होगी और १ लाख ४४ हजार किलोवाट बिजली प्रतिवर्ष उत्पन्न की जायगी। खेती की पैदावार में पर्याप्त वृद्धि हो जायगी। ऐसा अनुमान है कि इस योजना के बन जाने पर लगभग ११.३ लाख टन अनाज, ५ लाख टन गन्ना, १ लाख टन तिलहन एवं दालें और ८ लाख रुई की गांठें प्रति वर्ष मिलेंगी। इनके अतिरिक्त पंजाब और राजस्थान राज्यों को प्रति वर्ष लगभग तीन करोड़ रुपये से भी अधिक की आमदनी होगी।

३. हीराकुड योजना:—उड़ीसा राज्य में वर्षा अनिश्चित रूप से होती है अतः

चित्र सं० १०३. हीराकुड बाँध

वहाँ अकाल का भय बना रहता है। इसी कमी को दूर करने के लिए महानदी के पानी को काम में लाने की योजना तैयार की गई। इस योजना का नाम हीराकुड योजना है जिसके अंतर्गत हीराकुड, टिक्करपारा और नराज नामक तीन बांध बनाने का कार्य है। सन् १९४८ में निर्माण-कार्य प्रारम्भ हुआ था और अब हीराकुड बाँध तैयार हो गया है।

हीराकुड बाँध महानदी पर सम्बलपुर से ९ मील की दूरी पर है। बाँध की लम्बाई १५,७४८ फीट है। मुख्य बाँध के दोनों ओर लगभग १३ मील लम्बे बाँध हैं। बाँध से तीन नहरें निकाली गई हैं। उन नहरों एवं उनकी शाखाओं से लगभग साढ़े चार लाख एकड़ भूमि की सिंचाई होने की सम्भावना है और वहाँ पर लगभग ४५ लाख मन अनाज उत्पन्न होगा। लगभग ३५ हजार टन गन्ने के उत्पादन की आशा है। ऐसा अनुमान है कि योजना से लगभग १२३ हजार किलोवाट बिजली उत्पन्न की जायगी।

सिंचाई एवं बिजली के उत्पादन के अतिरिक्त हीराकुड योजना से बाढ़ नियन्त्रण का कार्य भी किया जाता है। भविष्य में वहाँ नावें भी चलाई जाएँगी। इसके अतिरिक्त हीराकुड योजना का सबसे बड़ा महत्व तो यह है कि वह भारत के ऐसे स्थान में है जहाँ पर खनिज सम्पत्ति का अतुल भंडार है। खनिजों और धातुओं को निकालने के लिए सस्ती बिजली उपलब्ध होने लगी है। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि हीराकुड योजना के द्वारा कृषि की उन्नति के साथ साथ उड़ीसा एक व्यवसाय प्रधान राज्य बन जायगा।

४. कोसी योजनाः—कोसी नदी नैपाल से निकल कर बिहार में प्रवेश करती है।

चित्र सं० १०४. कोसी बाँध

नदी का वेग अधिक होने से बिहार राज्य में इसमें बाढ़ें अधिक आती हैं जिनमें प्रतिवर्ष जन और धन की बड़ी हानि होती है। गाँव के गाँव बह जाते हैं और खेतों में फसल नष्ट हो जाती है। बाढ़ को रोकने के लिए भारत सरकार और नैपाल की सलाह से कोसी नदी पर बाँध बनाने की योजना तैयार की गई। २५ अप्रैल सन् १९५४ को भारत और नैपाल के बीच एक समझौता हुआ जिसके अनुसार यह निर्णय किया गया कि कोसी पर दो बाँध बनाए जाएँ। पहला बाँध नैपाल में हनुमाननगर से तीन मील दूर होगा और दूसरा बाँध उत्तरी बिहार में नैपाल-बिहार की सीमा के निकट होगा।

पहला बाँध जो नैपाल में होगा, उसकी ऊँचाई ७५० फीट होगी। उसके द्वारा १ करोड़ १० लाख एकड़ फीट पानी एकत्रित किया जायगा जिससे नैपाल की लगभग दस लाख एकड़ भूमि की सिंचाई होगी। दूसरा बाँध जो बिहार में होगा, उससे तीन नहरें निकाल कर बिहार राज्य के पूर्णिमा, मुज्जफरपुर, दरभंगा आदि जिलों में २० लाख एकड़ भूमि की सिंचाई की जायगी।

सिंचाई तथा बाढ़ नियन्त्रण के अतिरिक्त कोसी बाँध से १८ लाख किलोवाट जल-शक्ति उत्पन्न की जायगी। सम्पूर्ण योजना के बनने में दस वर्ष लगेंगे और उसमें १७७ करोड़ रुपया व्यय होगा।

५. रिहन्द योजना:—यह योजना उत्तर प्रदेश में है। सोन नदी की एक सहायक रिहन्द नदी पर मिर्जापुर जिले में पीपरी नामक स्थान पर बाँध बनाया जा रहा है। उस बाँध द्वारा २३० हजार किलोवाट बिजली उत्पन्न की जायगी और लगभग २४ लाख एकड़ भूमि की सिंचाई होगी। इनके अतिरिक्त इसके द्वारा सोन नदी से गंगा नदी के बेसिन तक नावें चलाई जाएँगी।

चित्र सं० १०५. रिहन्द योजना

दक्षिण के पठारी भाग में खनिज पदार्थों को निकालकर उद्योग-धन्धों की उन्नति की जायगी। नहरों के किनारे वन लगाने की योजना है और बाँध में मछली पालने की व्यवस्था भी की गई है। इस प्रकार रिहन्द योजना वास्तव में बहुमुखी योजना है।

प्रारम्भ में रिहन्द योजना पर ३५ करोड़ रुपया व्यय करने का अनुमान था परन्तु अब यह रकम बढ़ाकर ४५.७५ रुपया कर दी गई है।

रिहन्द योजना वैसे तो उत्तर प्रदेश की योजना है, परन्तु इसके द्वारा बिहार के भी कुछ प्रदेश की सिंचाई की जायगी।

६. **चम्बल योजनाः**—मध्य प्रदेश और राजस्थान की यह संयुक्त योजना है। इस योजना के अनुसार चम्बल नदी पर तीन बाँध बनाये जा रहे हैं। पहला बाँध मध्य प्रदेश के चौरासीगढ़ नामक स्थान से ५ मील की दूरी पर बन रहा है। उसका नाम गांधी सागर है। दूसरे बाँध का नाम राणा प्रताप सागर है जो कोटा नगर से ३२ मील की दूरी पर रावतभाय नामक स्थान पर बनाया जा रहा है। तीसरा बाँध कोटा बाँध है जो इसी नगर के पास होगा।

चम्बल योजना से मध्य प्रदेश और राजस्थान की लगभग १२ करोड़ एकड़ भूमि की सिंचाई की जायगी। पानी से बिजली भी उत्पन्न की जायगी। सम्पूर्ण योजना में ५० करोड़ रुपया व्यय करने का अनुभव है।

७. **मोर योजनाः**—यह योजना मुख्यतः पश्चिमी बंगाल राज्य की है, परन्तु इससे बिहार को भी लाभ पहुँचेगा।

बिहार के पठारी प्रदेश से मयूराक्षी नदी निकलती है। उस पर दो बाँध बनाये जाएँगे—पहला बाँध बिहार के संथाल परगने में मेसनजोर नामक स्थान पर और दूसरा बंगाल के सूरी नामक स्थान पर होगा। इस योजना द्वारा वीरभूमि, मुर्शिदाबाद और बर्दमान जिलों में लगभग ६ लाख एकड़ भूमि की सिंचाई होगी और ४ हजार किलोवाट बिजली पैदा की जायगी। सम्पूर्ण योजना में ७ करोड़ रुपया व्यय करने का अनुमान है।

८. **काकरपारा योजनाः**—बम्बई राज्य की यह योजना है। इसके द्वारा सूरत नगर के ५० मील दूर काकरपारा स्थान पर ताप्ती नदी पर बाँध बनाया जा रहा है। निर्माण का कार्य सन् १९५३ में प्रारम्भ हो गया है।

काकरपारा बाँध की लम्बाई २,१७५ फीट होगी और यह ४५ फीट ऊँचा होगा। बाँध से निकलने वाली नहरों की कुल लम्बाई ८५० मील होगी। इस योजना द्वारा ६ लाख ५२ हजार एकड़ भूमि की सिंचाई होगी।

९. **मचकुण्ड योजनाः**—आंध्र और उड़ीसा राज्यों की सीमा पर मचकुण्ड नदी बहती है। उस नदी पर विशाखापटनम् बन्दरगाह से लगभग १२५ मील दूर भीतर की ओर दूदूमा नामक स्थान पर एक विशाल बाँध बनाया जा रहा है। योजना का सम्पूर्ण व्यय आंध्र और उड़ीसा राज्यों के बीच ७ और ३ के अनुपात में विभक्त कर दिया जायगा। योजना का मुख्य उद्देश्य पानी से बिजली उत्पन्न करना है परन्तु इसके द्वारा सिंचाई भी की जायगी।

१०. **तुङ्गभद्रा योजनाः**—इस योजना से आंध्र और मैसूर राज्यों को लाभ पहुँचेगा। कृष्णा नदी की सहायक तुङ्गभद्रा नदी पर मल्लाहापुरम् नामक स्थान पर बाँध बनाया गया है। निर्माण कार्य द्वितीय विश्व व्यापी युद्ध के समाप्त होते ही प्रारम्भ कर दिया गया था और

३० जून सन् १६५३ से बाँध से नहरें निकाल कर सिंचाई का कार्य भी प्रारम्भ कर दिया था।

तुङ्गभद्रा योजना से लगभग ६० लाख एकड़ भूमि की सिंचाई की जाने का अनुमान है। इसके द्वारा १५५ हजार किलोवाट बिजली भी उत्पन्न की जायगी।

चित्र सं० १०६. तुङ्गभद्रा, रामपद सागर तथा दक्षिण भारत की अन्य प्रमुख योजनाएँ

इस योजना के बन जाने से आंध्र प्रदेश के रायलसीमा प्रान्त में अकाल का भय दूर हो गया है। सम्पूर्ण योजना के व्यय का अनुमान ६०.७६ करोड़ रुपया है।

११. रामपद सागर योजना:—आंध्र और मद्रास की यह विशाल योजना है। इसके अन्तर्गत गोदावरी नदी पर रामपद सागर बांध बनेगा जिसकी ऊँचाई ४२८ फीट होगी। बांध से दो नहरें निकाली जायँगी। पहली नहर विशाखापटनम् बन्दरगाह तक जायगी और दूसरी नहर गंटूर जिले में सिंचाई करेगी।

इस योजना द्वारा लगभग २५ लाख एकड़ भूमि की सिंचाई की जायगी और एक

लाख किलोवाट बिजली का उत्पादन होगा। कुल व्यय का अनुमान लगभग एक अरब रुपया है।

१२. लोअर भवानी योजनाः—मद्रास राज्य के कोयम्बटूर जिले में कावेरी नदी की सहायक भवानी नदी बहती है। उस पर साढ़े पांच मील लम्बा और २०० फीट ऊँचा बांध बनाने की योजना है। यह बांध बंगलौर नगर से १२५ मील दूर दक्षिण में होगा। बांध का कुल क्षेत्रफल ३० वर्ग मील होगा और किनारे की कुल लम्बाई लगभग ७८ मील होगी।

लोअर भवानी योजना द्वारा लगभग २ लाख एकड़ भूमि की सिंचाई की जायगी और उसके फलस्वरूप ५० हजार टन अनाज प्रतिवर्ष उत्पन्न होगा।

प्रश्न

१. नदी घाटी योजनाओं का सूत्रपात किस प्रकार हुआ?
२. इन योजनाओं को बहुमुखी योजनाएँ क्यों कहते हैं?
३. दामोदर योजना से किन राज्यों को लाभ होता है?
४. भाकरा-नांगल योजना से खेती की उन्नति किस प्रकार होगी?
५. दक्षिणी भारत की प्रमुख नदी घाटी योजनाएँ कौन कौन सी हैं?

———

अध्याय २६

सामुदायिक विकास योजनाएँ

स्वतन्त्रता मिलने से पहले भारत के कुछ प्रान्तों में ग्रामों के विकास के लिये कई योजनाएँ बनाई गईं। सेवाग्राम और बम्बई के सर्वोदय केन्द्रों में ऐसी योजनाओं को पूर्ण सफलता मिली। इसी सफलता से प्रेरित होकर स्वतन्त्र भारत में ऐसी योजनाएँ बनाने की चेष्टा की गई। प्रथम पंचवर्षीय योजना में "सामुदायिक विकास योजनाएँ" इनका नाम रखा गया और इनके लिये ६० करोड़ रुपये की धन-राशि निर्धारित की गई।

सामुदायिक योजनाओं का जन्म

जिस आधार पर आज की सामुदायिक योजनाएँ भारत में हैं, वैसी योजना सर्व प्रथम चीन के एक सुप्रसिद्ध दर्शन-शास्त्री श्री जार्ज येन नामक व्यक्ति के दिमाग में आई। उन्होंने उसका प्रयोग अपने देश में करना प्रारम्भ किया ही था कि इतने में देश में साम्यवादियों की सत्ता हो गई। फलस्वरूप उन्हें अपने कार्य को बन्द करना पड़ा। थोड़े ही समय के पश्चात् संयुक्त राष्ट्र संघ की यूनेस्को (Unesco) की शाखा के तत्वावधान में एक सम्मेलन हुआ जिसमें श्री येन को जाने का अवसर मिला। वहाँ पर उन्होंने अपने विचार रखे जिनसे वहाँ के सुप्रसिद्ध कार्यकर्त्ता श्री बाउल्स बड़े प्रभावित हुये। कुछ ही समय पश्चात् श्री बावल्स भारत में अमेरिका के राजदूत बनकर आये। उन्होंने ग्रामोत्थान सम्बन्धी अपने विचार भारत के प्रधानमन्त्री श्री नेहरू के सामने रखे। अमेरिकी राजदूत ने ऐसी योजनाओं के लिये संयुक्त राष्ट्र से आर्थिक सहायता दिलाने की आशा भी प्रकट की। प्रधान मंत्री ने इसे स्वीकार कर लिया। जनवरी सन् १९५२ को भारत और अमेरिका के बीच भारत अमेरिकन औद्योगिक सहयोग संधि (Indo-U.S. Technical Co-operation Agreement) हुई, जिसके अनुसार अमेरिका ने भारत को ५ करोड़ डालर दिये। इस प्रकार भारत में सामुदायिक विकास योजनाओं का श्रीगणेश हुआ।

योजना का क्षेत्र

ता० २ अक्टूबर सन् १९५२ को भारत के विभिन्न राज्यों में ५५ सामुदायिक विकास योजनाओं का कार्य प्रारम्भ हुआ। प्रत्येक विकास योजना में ३०० गांव सम्मिलित किये गये। इन गाँवों में से प्रत्येक का क्षेत्रफल ४५० से ५०० वर्ग मील निर्धारित किया गया। एक योजना में यह ध्यान रखा गया कि लगभग दो लाख व्यक्तियों को लाभ पहुंचे। अनुमानतः एक योजना में डेढ़ लाख एकड़ भूमि में खेती की उन्नति करने का प्रबन्ध किया गया।

सुविधा के अनुसार एक बड़ी योजना तीन छोटी योजनाओं में विभक्त की गई। प्रत्येक को एक विभाग या ब्लाक कहते हैं। प्रत्येक ब्लाक में १०० गांव होते हैं। इन गांवों को पाँच-

पाँच गाँवों के अनुसार २० ग्रूपों में बाँटा गया। प्रत्येक ग्रूप की देख भाल करने के लिये एक ग्राम सेवक नियुक्त किया गया।

योजना के कार्य

सामुदायिक योजनाओं का मुख्य उद्देश्य कृषि में उत्पादन बढ़ाना, गाँवों में बेरोजगारी को मिटाना, आवागमन के साधनों में वृद्धि करना, शिक्षा और स्वास्थ्य में सुधार करना, गाँवों के कुटीर-धन्धों को प्रोत्साहन देना आदि। इन सारे कार्यों का विवरण इस प्रकार है:—

[१] कृषि तथा तत्सम्बन्धी कार्य

(अ) परती भूमि को कृषि योग्य बनाना।
(आ) सिंचाई के लिये नहरों, कुओं तथा तालाबों का प्रबन्ध करना।
(इ) खेती के लिये नवीन प्रकार के यन्त्र देना।
(ई) खेती करने के तरीकों में सुधार करना।
(उ) उत्तम कोटि के बीज की व्यवस्था करना।
(ऊ) पशुओं की चिकित्सा का सुप्रबन्ध।
(ए) खेती की पैदावार की बिक्री के लिये प्रबन्ध करना।
(ऐ) मिट्टी की जाँच और खाद देने की व्यवस्था।
(ओ) फल तथा शाक-सब्जियों के उत्पादन में वृद्धि करना।
(औ) पशुओं की नस्ल सुधारने के लिये प्रजनन केन्द्र खोलना।
(अं) वृक्षारोपण पर विशेष ध्यान देना।
(अः) जहाँ सम्भव हो वहाँ मछली व्यवसाय की उन्नति करना।

[२] शिक्षा

(अ) प्रारम्भिक शिक्षा अनिवार्य और निःशुल्क हो।
(आ) यथासम्भव मिडिल और उच्च कक्षा की पढ़ाई की व्यवस्था।
(इ) सामाजिक शिक्षा की व्यवस्था।
(ई) गाँवों में पुस्तकालयों की व्यवस्था।
(उ) गाँव के कारीगरों को शिक्षा देना।
(ऊ) कृषकों को शिक्षा देना।
(ए) निरीक्षकों का प्रशिक्षण।
(ऐ) योजना के अधिकारियों का प्रशिक्षण।

[३] स्वास्थ्य

(अ) सार्वजनिक स्वास्थ्य की व्यवस्था।
(आ) रोगियों की चिकित्सा करना।
(इ) प्रसव से पहले और बाद स्त्रियों की देख भाल करना।

(ई) गाँव की सफाई का प्रबन्ध ।
(उ) दवाइयों की व्यवस्था ।

[४] रोजगार की व्यवस्था

(अ) कुटीर-उद्योगों को प्रोत्साहन देना ।
(आ) नये धन्धे खोलना ।
(इ) लोगों को अनेक प्रकार के कार्य दिलाने की व्यवस्था करना ।

[५] यातायात के साधन

(अ) सड़कों में सुधार और वृद्धि करना ।
(आ) मोटर तथा अन्य सवारियों को प्रोत्साहन देना ।
(इ) पशु-परिवहन का विकास करना ।

[६] गृह-निर्माण

(अ) गांवों में मकान बनाने के लिये अच्छे तरीकों को अपनाना ।
(आ) मकान बनाने में सहायता देना ।
(इ) कस्बों में भी मकान बनाने की व्यवस्था कराना ।

[७] सामाजिक कार्य

(अ) सहकारिता आन्दोलन का संगठन करना ।
(आ) जन-समुदाय के मनोरंजन के लिये व्यवस्था करना ।
(इ) चल-चित्रों द्वारा शिक्षा सम्बन्धी बातों का प्रदर्शन करना ।
(ई) अनेक प्रकार के खेल-कूदों का प्रबन्ध करना ।
(उ) ग्राम-मेलों का प्रबन्ध करना ।

इन बातों को देखने से ज्ञात होता है कि सामुदायिक योजनाओं द्वारा गाँवों की चतुर्मुखी उन्नति की जायगी । सारे कार्य सरकार ही करे, यह बात ठीक नहीं है । ग्रामवासी भी अपने सुधार के कार्यों में पूर्ण सहयोग दें, ऐसा किया भी है । योजना के दो वर्षों की उन्नति को देखने से पता चलता है कि सामुदायिक योजनाओं के संचालन में जनता ने पर्याप्त योग दिया है ।

सामुदायिक योजनाओं का प्रबन्ध

सामुदायिक विकास योजना का कार्य पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत है । सम्पूर्ण भारत के विभिन्न प्रोजेक्ट्स की देख-रेख एक केन्द्रीय कमेटी द्वारा होती है । फिर विभिन्न राज्यों में सुचारु कार्य होने के लिये राज्यों की समितियाँ हैं । उसके बाद जिले की कमेटी होती है । फिर प्रोजेक्ट को चलाने की कमेटी होती है । इस प्रकार सामुदायिक विकास के कार्य को निम्नलिखित विभागों में बाँट सकते हैं:—

१. केन्द्रीय कमेटी:—यह कमेटी दिल्ली में है और इसके अध्यक्ष भारत के प्रधान मन्त्री हैं। कमेटी की सहायता के लिये एक परामर्शदात्री कमेटी है जिसमें भारत सरकार के सम्बन्धित विभागों के सचिव हैं। कार्य संचालन के लिये एक प्रशासक है।

२. राज्य कमेटी:—प्रत्येक विकास कार्यों को सुचारु रूप से चलाने के लिये 'राज्य विकास कमेटी' है जिससे अध्यक्ष राज्य के मुख्य मन्त्री होंगे। राज्य के विकास मन्त्री, वित्त मन्त्री और कृषि तथा सिंचाई के मन्त्री कमेटी के सदस्य होंगे। कार्य संचालक के पद पर 'विकास कमिश्नर' हैं जो कमेटी के सचिव हैं।

३. जिले की कमेटी:—जहाँ सामुदायिक योजना है वहाँ उस जिले की कमेटी होती है। जिले का कलेक्टर अध्यक्ष होता है और जिले के विकास विभागों के प्रतिनिधि सदस्य होते हैं। विकास अफसर जिले की कमेटी के सेक्रेटरी होते हैं।

४. योजना संचालन का प्रबन्ध:—जिस स्थान पर सामुदायिक विकास योजना का क्षेत्र है वहाँ पर योजना का कार्याधिकारी रहता है। उसकी सहायता के लिये परामर्शदात्री कमेटी होती है जिसके सदस्य विधान सभा के सदस्य, जिला बोर्ड के अध्यक्ष, कृषकों के प्रमुख प्रतिनिधि तथा मुख्य सामाजिक कार्यकर्त्ता होते हैं।

५. ग्रामों का कार्य:—जैसा कि पहले बताया जा चुका है, हर पाँच गांवों के लिए एक 'ग्रामसेवक' होता है। उसे कृषि, पशु-चिकित्सा, स्वास्थ्य, प्रौढ़ शिक्षा आदि कार्यों सम्बन्धी शिक्षा दी जाती है। वही वास्तव में ग्रामवासियों का सच्चा साथी है।

इस तरह सामुदायिक विकास योजना का कार्य बहुत ही सुचारु रूप से चलता है। कार्य-कर्त्ताओं की सुविधा के लिए ३५ प्रशिक्षण केन्द्र हैं। इनके अतिरिक्त सामाजिक शिक्षा संबंधी कार्य करने वाले व्यक्तियों की शिक्षा के लिए पांच प्रशिक्षण केन्द्र खोले गये हैं।

राष्ट्रीय विस्तार सेवा

गाँवों की उन्नति के लिए एक और योजना अप्रैल सन् १९५३ को बनाई गई। इसका नाम राष्ट्रीय विस्तार सेवा रखा गया है। इसका उद्घाटन २ अक्टूबर सन् १९५३ को हुआ। इस योजना द्वारा पंचवर्षीय योजना के कार्यकाल में भारत के लगभग २५% गांवों में सुधार किया जायगा। यह अनुमान है कि दस वर्ष में इस योजना का विस्तार सम्पूर्ण भारत के गाँवों में हो जायेगा।

'सामुदायिक विकास' और 'राष्ट्रीय विकास' दोनों ही योजनाओं का उद्देश्य एक ही है—गाँवों का सुधार करना। इसी कारण इन दोनों का एकीकरण कर दिया गया है। सामुदायिक विकास योजना का कार्यकाल तीन साल ही है। 'राष्ट्रीय विस्तार' का दस वर्ष है। अतः तीन साल समाप्त हो जाने पर सामुदायिक योजनाओं का कार्य 'विस्तार सेवा' द्वारा पूर्ण किया जायगा।

आर्थिक व्यवस्था

सामुदायिक विकास योजना पर होने वाले व्यय का अनुमान १०१ करोड़ रुपया है जिसकी व्यवस्था प्रथम पंचवर्षीय योजना में की गई है। इसमें केन्द्रीय सरकार कुल रेकरिंग खर्च का तीन-चौथाई अंश खर्च करेगी और सदा होने वाले खर्च का आधा भाग देगी। शेष धन राज्यों की ओर से व्यय किया जायगा। केन्द्रीय सरकार स्टाफ का खर्च भी आधा देगी। इस प्रकार लगभग ८५ हजार कारीगरों और अन्य श्रेणी के कार्यकर्ताओं को रोजगार मिल सकेगा। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में सामुदायिक विकास के लिए २०० करोड़ रुपया रखा गया है। योजना काल में ३८०० अतिरिक्त राष्ट्रीय विस्तार क्षेत्र खोले जाएँगे और उनमें से ११२० को सामुदायिक क्षेत्रों में परिणत किया जायगा।

योजना की आलोचना

[१] सामुदायिक योजनाओं का कार्यकाल केवल तीन साल रखा है। यह समय बहुत कम है। इन योजनाओं के समझने मात्र में बहुत समय लग गया क्योंकि बहुत से देशवासी अनपढ़ हैं। इसके अन्तर्गत प्रारम्भ किए हुए बहुत से कार्य इस थोड़े समय में पूर्ण नहीं हो सकेंगे।

[२] योजना में खर्च होने वाली रकम अधिक है। भारत जैसे कम आमदनी वाले देश में इतनी अधिक रकम थोड़े ही समय में खर्च कर देना ठीक नहीं। थोड़े खर्च की योजनाएँ प्रारम्भ में बनाना अधिक अच्छा होता है।

[३] धन अमेरिका से लिया गया है। इसके बदले में विकास के लिये काम आने वाला सामान भी अमेरिका से ही खर्च किया जायगा, यह तय हुआ है। यह अवस्था आर्थिक दासता की है और राष्ट्र के हित में नहीं हो सकती।

[४] खेती की उन्नति करने में विदेशी तरीके काम में लिये जायेंगे जिनमें से अधिकांश भारत के अनुकूल नहीं पड़ते।

[५] योजनाओं के अन्तर्गत जो कार्यक्रम है, उसके द्वारा बेकारी की समस्या अधिक हल नहीं होती दिखाई देती। छोटे उद्योगों की ओर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है।

[६] योजनाओं में कार्य करने वाले कर्मचारी सरकारी हैं। जनता के प्रतिनिधियों को अधिक उत्साह देने की आवश्यकता है।

[७] सामाजिक योजनाएँ अकस्मात् प्रारम्भ कर दी गईं। उनके लिये पहले प्रचार नहीं किया गया। लोग इसके महत्व को बहुत देर से समझे अतः उन्हें पूर्ण लाभ न हुआ।

ये सब कमियाँ होते हुए भी यह कहने में कोई संकोच नहीं होता है कि सामुदायिक योजनाएँ देशहित को लक्ष्य मानकर बनाई गई हैं। स्वतन्त्रता-प्राप्ति के पश्चात् यह पहला ही क़दम है। अतः त्रुटियाँ रहना स्वाभाविक है परन्तु हम देखते हैं कि जो गाँव इन योजनाओं

में लिये गए हैं उनमें पर्याप्त सुधार हुआ है। कुछ समय बाद देश में जब ऐसी योजनाओं का प्रचार हो जायगा तो पूर्ण लाभ होने की संभावना है।

प्रश्न

१. सामुदायिक विकास योजनाओं का जन्म किस प्रकार हुआ ?
२. इन योजनाओं के अन्तर्गत क्या कार्य होते हैं ?
३. सामुदायिक विकास योजना और राष्ट्रीय विस्तार सेवा खण्ड में क्या अन्तर है ?
४. सामुदायिक विकास योजनाओं का प्रबन्ध किस प्रकार होता है ?
५. इन विकास योजनाओं की आलोचना किस प्रकार की जाती है ?

चतुर्थ भाग

राजस्थान का आर्थिक विकास

अध्याय २७

राजस्थान का आर्थिक विकास

१. साधारण परिचय

राजस्थान राज्य का निर्माण दस वर्ष पूर्व हुआ। यह राजपूताने की रियासतों को मिलाकर बनाया गया है। इस राज्य के निर्माण काल को चार भागों में बाँट सकते हैं—(अ) सबसे पहले ता० १७ मार्च सन् १९४८ को राजपूताने के पूर्वी भाग की चार रियासतें—अलवर, भरतपुर, धौलपुर और करौली ने मिलकर 'मत्स्य' राज्य का निर्माण किया। (आ) ता० २५ मार्च सन् १९४८ को राजपूताने की उदयपुर, कोटा, बूंदी, झालावाड़, टोंक, प्रतापगढ़, डूंगरपुर, बांसवाड़ा, किशनगढ़, शाहपुरा और कुशालगढ़ रियासतों ने मिलकर अलग राज्य बनाया जिसका नाम 'संयुक्त राजस्थान' रखा गया। (इ) ३० मार्च सन् १९४९ को जयपुर, जोधपुर, बीकानेर और जैसलमेर राज्यों को संयुक्त राजस्थान में मिला दिया गया। इस विशाल राज्य का नाम 'बृहत् राजस्थान' रखा गया। कुछ ही समय पश्चात् १५ मई सन् १९४९ को मत्स्य भी बृहत् राजस्थान में मिल गया और इस बड़े राज्य का नाम 'राजस्थान' पड़ा। राजपूताने की सिरोही रियासत कुछ समय तक बम्बई के अधीन रही, परन्तु फिर आबू क्षेत्र को छोड़कर सिरोही भी राजस्थान में मिला दी गई। (ई) १ नवम्बर सन् १९५६ को 'राज्य-पुनर्गठन आयोग' की सिफारिश पर अजमेर और आबू को भी राजस्थान में मिला दिया गया। इसके अतिरिक्त मध्य भारत से सुनील टप्पा क्षेत्र राजस्थान को मिला और उसके बदले टोंक का सिरोंज क्षेत्र मध्य प्रदेश को दे दिया गया।

वर्तमान राजस्थान राज्य का क्षेत्रफल लगभग १,३२,३०० वर्ग मील है। क्षेत्रफल के अनुसार सम्पूर्ण भारत में राजस्थान का तीसरा स्थान है। अतः राजस्थान एक विशाल राज्य है।

२. स्थिति और सीमा

राजस्थान राज्य हमारे भारत के उत्तरी पश्चिमी भाग में स्थित है। यह २३°३' और ३०°१२' उत्तरी अक्षांशों तथा ६९°३०' और ७८°१७' पूर्वी देशान्तरों के बीच फैला हुआ है। राज्य की पूर्व से पश्चिम की ओर अधिक से अधिक लम्बाई ५४० मील है और चौड़ाई उत्तर से दक्षिण की ओर ५१० मील है। अतः यह राज्य आकार में वर्गाकार है।

राज्य के उत्तर में पंजाब, पूर्व में उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश, दक्षिण में मध्य प्रदेश और बम्बई राज्य एवं पश्चिम और उत्तर पश्चिम में पाकिस्तान है। राजस्थान और पाकिस्तान

चित्र सं० १०७. वर्तमान राजस्थान

के बीच की सीमा लगभग ७०० मील है अतः अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण से राजस्थान का विशेष महत्व है।

३. प्राकृतिक दशा

राजस्थान के मध्य में अरावली श्रेणी है। यह उत्तर-पूर्व से दक्षिण-पश्चिम की ओर फैली हुई है। अरावली की लम्बाई लगभग ४०० मील है। अरावली के उत्तर-पश्चिम में

रेतीली भूमि है जो मरुस्थल है। पर्वत श्रृंखला के दक्षिण पश्चिम में पठारी प्रदेश है। राज्य के उत्तरी भाग में मैदान है।

इस प्रकार राजस्थान चार प्राकृतिक भागों में बाँटा जा सकता है।

(अ) मध्य का पहाड़ी भागः–इस प्रदेश में अरावली पर्वत और उसकी शाखाएँ हैं। राजस्थान का उदयपुर, बांसवाड़ा, डूँगरपुर और सिरोही जिले इसी भाग में हैं। यह पर्वतीय
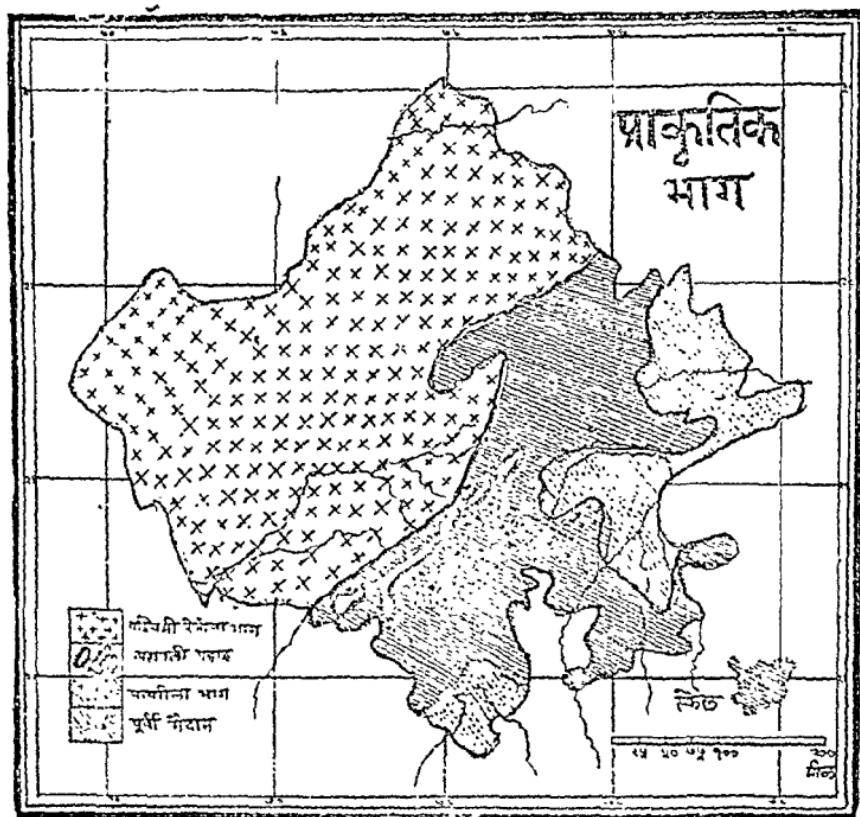
चित्र सं० १०८. राजस्थान के प्राकृतिक भाग

प्रदेश सम्पूर्ण राजस्थान की ९·२% भूमि में फैला हुआ है और इस क्षेत्र में राज्य के लगभग १४% मनुष्य निवास करते हैं।

अरावली प्रदेश में कम आबादी होने के दो प्रमुख कारण हैं। पहाड़ी भूमि और आवागमन के साधनों की कमी।

(आ) मरुस्थली प्रदेशः—जैसा कि पहले बताया गया है यह प्रदेश राजस्थान के उत्तरी-पश्चिमी भाग में स्थित है। इस प्रदेश में बीकानेर, चुरु, गंगानगर, जोधपुर, बाड़मेर, जालोर, पाली, नागौर और जैसलमेर जिले हैं। वर्षा के अभाव के कारण यह प्रदेश मरुस्थल

बन गया है। ग्रीष्मकाल में यहाँ कड़ाके की गर्मी पड़ती है और आंधियाँ चलती हैं।

पानी के अभाव में मरुस्थली प्रदेश में बहुत कम खेती होती है, लोगों का जीवन बड़ा कठिन है।

विस्तार के अनुसार मरुस्थली प्रदेश राजस्थान का सबसे बड़ा प्राकृतिक भाग है। समूचे राज्य की ५७.८% भूमि में मरुस्थल का विस्तार है, परन्तु इस विशाल क्षेत्र में राज्य की ३०% जन संख्या है।

(इ) पठारी प्रदेशः—राजस्थान के कोटा, बूँदी, झालावाड़ और चित्तौड़ जिलों में पठारी भूमि है। यह प्रदेश राजस्थान के ६.६% भाग में फैला हुआ है। इस भाग में राज्य की १३% आबादी है।

पठारी प्रदेश में वर्षा अधिक होती है, परन्तु पथरीली भूमि होने से वहाँ खेती कठिनाई से होती है। बीच बीच में जहाँ कहीं मैदान आ गए हैं वहाँ खेती अच्छी होती है।

पठारी प्रदेश में चम्बल नदी बहती है। अब इसको रोक कर बाँध तैयार किए जा रहे हैं जिनसे सिंचाई होगी और जल-विद्युत भी उत्पन्न की जायगी।

(ई) पूर्वी मैदानः—राजस्थान के पूर्वी भाग में कुछ समतल भूमि है जो यमुना के मैदान से मिलती हुई है। इस प्रदेश में अलवर, भरतपुर, सवाई माधोपुर, जयपुर, सीकर, झुंझुनू आदि जिले हैं।

मैदानी भाग राजस्थान की २३.३% भूमि में फैला हुआ है और वहाँ राज्य के ४३% मनुष्य रहते हैं। इस प्रदेश के अलवर और भरतपुर जिलों में समतल भूमि है और सिंचाई के साधन भी उपलब्ध हैं। इसी कारण इस भाग में राजस्थान के अधिक लोग रहते हैं।

४. जलवायु

राजस्थान के मरुस्थली प्रदेश में गर्मी के दिनों में अधिक गर्मी पड़ती है। जुलाई का औसत तापमान ६०° फ० होता है। कहीं कहीं पर तो तापमान ११५° फ० तक पहुँच जाता है। इस प्रदेश में शीतकाल में ठंड अधिक पड़ती है। जनवरी का औसत तापमान ६५° फ० होता है। सरदी और गर्मी के तापमान का अन्तर बहुत होता है। राजस्थान के जलवायु की यही विशेषता है।

अरावली पर्वतीय प्रदेश में ऊँचाई के कारण गर्मी कम पड़ती है। यही अवस्था पठारी प्रदेश की है। पूर्वी मैदानी प्रदेश में गर्मी और सरदी के तापमान में अधिक अन्तर नहीं रहता।

वर्षा की राजस्थान में कमी रहती है। पर्वतीय प्रदेश में ३०—४० इंच वर्षा हो जाती है परन्तु मरुस्थली प्रदेश में तो ५ इंच से भी कम वर्षा होती है। राज्य के कई भागों में वर्षा का औसत २० इंच है।

इस प्रकार राजस्थान का जलवायु गर्म और शुष्क है। वर्षा की कमी के कारण यहाँ पर प्राकृतिक वनस्पति की भी कमी रहती है। अरावली पर्वत पर वन अवश्य हैं परन्तु
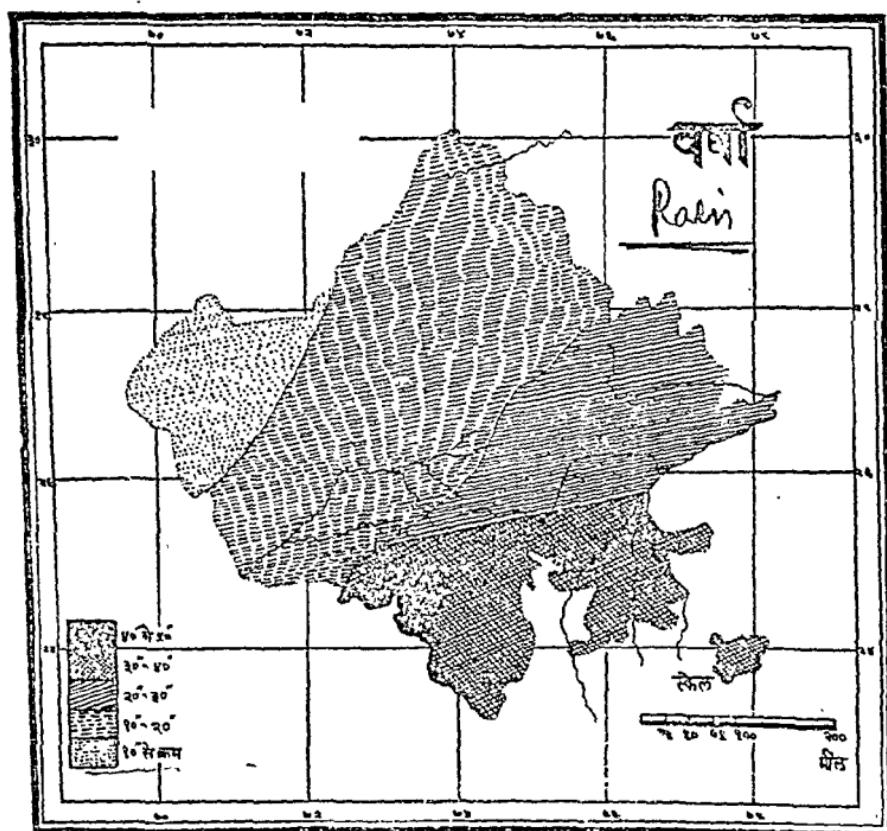
चित्र सं० १०६. राजस्थान में वर्षा का वितरण

शुष्क प्रदेश में तो वनस्पति का पूर्ण अभाव रहता है।

५. खनिज सम्पत्ति

राजस्थान की भूमि के नीचे खनिज सम्पत्ति का अपार भंडार है। यहाँ की चट्टानें प्राचीन होने से ही राज्य में खनिजों का बाहुल्य है। खनिज सम्पत्ति के अनुसार राजस्थान का भारत में तीसरा स्थान है (प्रथम बिहार का और दूसरा मध्य प्रदेश का)।

राजस्थान के मुख्य खनिज पदार्थ इस प्रकार हैं:—

(१) अभ्रक:—इसको राज्य में भोडल कहते हैं। इसका प्रयोग बिजली के यंत्रों में होता है। इससे रबर के टायरों के छिद्र भी भरते हैं। अभ्रक पर ताप का असर नहीं होता।

अभ्रक के उत्पादन में बिहार के पश्चात् राजस्थान का ही स्थान है। यह उदयपुर,

जयपुर और अजमेर क्षेत्रों में मिलता है। भीलवाड़ा जिला अभ्रक के व्यापार का केन्द्र है।

राजस्थान में औद्योगिक विकास की कमी के कारण अभ्रक का निर्यात ही अधिक होता है।

(२) टंग्सटनः—इसको वोल्फ्रेम भी कहते हैं। नागौर जिले के डेगाना ग्राम के निकट एक पहाड़ी से इस धातु को निकालते हैं। इस धातु से युद्ध के औजार बनाए जाते हैं अतः युद्ध काल में इसकी कीमत बहुत बढ़ गई थी। टंग्सटन के उत्पादन में राजस्थान का भारत में प्रमुख स्थान है।

(३) शीशा और जस्ताः—ये दोनों धातुएँ पास पास पाई जाती हैं। उदयपुर के निकट जावर स्थान में इन्हें निकालते हैं। धातुओं को साफ करने के लिये वहाँ पर एक बड़े कारखाने की स्थापना हो रही है।

(४) कोयलाः—राजस्थान में भूरे रंग का कोयला जिसे लिग्नाइट कहते हैं, बीकानेर के निकट पलाना क्षेत्र से प्राप्त किया जाता है। इसका प्रयोग रेल के इंजिन एवं बिजलीघरों में होता है। जोधपुर विभाग में भी लिग्नाइट निकलने के चिन्ह पाए गए हैं।

(५) बिरलः—इसका प्रयोग अणुशक्ति के उत्पादन के लिए किया जाता है, अतः इसे खरीदने का एकाधिकार भारत सरकार को ही है। यह धातु अभ्रक की खानों के निकट ही पाई जाती है, अतः इसके उत्पादन के लिये जयपुर, उदयपुर और अजमेर क्षेत्र विख्यात हैं।

(६) ताम्बाः—यह धातु राजस्थान में बहुत कम मात्रा में पाई जाती है। जयपुर के खेतड़ी तथा दरिबा क्षेत्रों में ताम्बे की खानें हैं।

(७) जिप्समः—इसको खड़िया भी कहते हैं। राजस्थान में इसका उत्पादन बहुत होता है। इसका प्रयोग मकान बनाने, सीमेन्ट बनाने एवं रासायनिक खाद तैयार करने में होता है। सिंदरी के रासायनिक खाद के विशाल कारखाने में काम आने वाली जिप्सम राजस्थान से ही भेजी जाती है।

राजस्थान के बीकानेर और जोधपुर विभाग के कई स्थानों में जिप्सम का अतुल भंडार है। वहाँ की खानों से प्रतिवर्ष लगभग ८० हजार टन जिप्सम निकलती है।

(८) घिया पत्थरः—इसको अंग्रेजी में टाल्क कहते हैं। इसे कागज, काँच, साबुन, रबर और रोगन तैयार करने में काम में लेते हैं। मकान की छत तैयार करने में भी इसका प्रयोग होता है।

राजस्थान से घिया पत्थर पाउडर बनाकर निर्यात करते हैं। जयपुर और उदयपुर विभागों में घिया पत्थर की कई खानें हैं।

(९) मुल्तानी मिट्टीः—इसे राजस्थान में 'मेट' भी कहते हैं। इसका वास्तविक प्रयोग मिट्टी के तेल को साफ करने में होता है। राज्य में इसका प्रयोग कम होने से यह निर्यात

अधिक की जाती है। जोधपुर और बीकानेर विभागों के मरुस्थली प्रदेश में मुल्तानी मिट्टी की खानें हैं।

(१०) चूनाः—चूना मकान बनाने में काम आता है। इससे सीमेन्ट भी बनाते हैं।

जोधपुर डिवीजन में गोटन, सोजत आदि स्थानों में चूने की खानें हैं। चित्तौड़ जिले में भी चूने का पत्थर बहुत मात्रा में निकाला जाता है।

(११) नमकः—राजस्थान में खारी पानी की झीलों से नमक निकलता है। ऐसी झीलों में सांभर बहुत प्रसिद्ध है। जोधपुर विभाग के डीडवाना और पचपद्रा में भी नमक तैयार किया जाता है। जैसलमेर और भरतपुर जिलों में भी नमक मिलता है।

सम्पूर्ण भारत में जितना नमक तैयार किया जाता है उसका एक चौथाई अंश अकेले राजस्थान से प्राप्त होता है।

(१२) सोडियम सल्फेटः—यह खनिज कागज बनाने व चमड़ा साफ करने के काम में आता है। नागौर जिले की डीडवाना झील के निकट सोडियम सल्फेट पर्याप्त मात्रा में मिलता है। उसे जोधपुर भेज देते हैं जहाँ इसको कारखाने में साफ कर सोडियम सल्फाइड के रूप में परिवर्तित कर देते हैं।

राजस्थान से सोडियम सल्फेट का निर्यात करते हैं।

(१३) इमारती पत्थरः—भव्य इमारतों में काम आने वाला सुन्दर पत्थर राजस्थान के कई भागों में पाया जाता है। मकराने का संगमरमर तो बहुत विख्यात हो गया है। डूंगरपुर का काला पत्थर और जैसलमेर का छींटदार पीला पत्थर भी उत्तम कोटि का गिना जाता है।

मकान बनाने का साधारण पत्थर तो राजस्थान में प्रायः सभी स्थानों में मिल जाता है।

इस प्रकार राजस्थान में कई प्रकार के खनिज और धातुएँ विद्यमान हैं, परन्तु अभी तक उनमें से बहुत ही कम निकाली गई हैं। आवागमन के साधनों की कमी, उद्योग-धंधों की कम उन्नति, खान के मालिकों की बुरी आर्थिक अवस्था आदि इसके कारण हैं। अब राज्य सरकार की ओर से खनिजों के निकालने में विशेष प्रयत्न किए जा रहे हैं।

८. पशु धन

राजस्थान का एक बड़ा भाग मरुस्थल और अर्द्ध-मरुस्थल है अतः यहाँ खेती की उपज कम होती है। परन्तु ऐसे प्रदेश में पशु पालन का व्यवसाय अधिक होता है। इस प्रकार पशु धन राजस्थान के लोगों की आमदनी का पूरक है।

राज्य का पशु धन इस प्रकार है :—

(१) गो–धनः—राजस्थान में भारत के गो–धन का लगभग ८% है। उत्तमता की दृष्टि से भी यहाँ गो वंश उच्च कोटि का है। इस राज्य में कई प्रकार की जाति के गाय और बैल हैं जिनमें नागौरी, मालवी, मेवाती, थारी, रथ, हरियाना, साँचौर, रैंडा आदि प्रमुख हैं। इनमें भी सांचौरी गायें और नागौरी बैल बहुत प्रसिद्ध हैं।

गो धन राज्य का मुख्य धन होने पर भी उसकी हीन अवस्था है। इसके कई कारण हैं जैसे पशुओं का ठीक तरह से पोषण न होना, अव्यवस्थित संयोग और पशुओं सम्बन्धी रोगों की समुचित चिकित्सा न होना।

गो धन के सुधार करने के लिए पशुओं की नस्ल सुधारनी चाहिए, चरागाहों की व्यवस्था करनी चाहिए, रोगों के निवारण के लिए अधिक चिकित्सालय खोलने की आवश्यकता है और पशुओं को रखने के लिये सुव्यवस्था करनी चाहिए।

(२) भेड़ें:—ऐसा अनुमान है कि समस्त भारत में जितनी भेड़ें हैं उनका पाँचवा भाग राजस्थान में है। भेड़ों से ऊन मिलती है जिससे गड़रियों को अच्छी आमदनी होती है। सम्पूर्ण भारत में जितनी ऊन मिलती है उसका एक तिहाई भाग राजस्थान से ही प्राप्त किया जाता है। उस ऊन की वार्षिक कीमत चार करोड़ से पाँच करोड़ रुपये तक आँकी जाती है।

राजस्थान में पाई जाने वाली भेड़ों की नस्लें इस प्रकार हैं—मगरा, नाली, मारवाड़ी, जैसलमेरी, मालपुरी, सोनाड़ी, बागड़ी आदि।

ऊन के अतिरिक्त भेड़ों से माँस, दूध और चमड़ा भी मिलता है। भेड़ों के साथ बकरियाँ भी पाली जाती हैं। उनका उपयोग दूध और माँस के लिये होता है।

(३) ऊँट:—राजस्थान के उष्ण मरुस्थली प्रदेश में ऊँट ही लोगों का एक मात्र सहारा है। जहाँ रेल मार्ग और मोटर–मार्ग न हों वहाँ पर ऊँट ही काम में आता है। इसीलिए ऊँट को 'मरुस्थल का जहाज' कहते हैं।

राज्य के मरुस्थली प्रदेश में विशेषतः बीकानेर और जैसलमेर में ऊँट अधिक पाए जाते हैं। समूचे राज्य में लगभग चार लाख ऊँट हैं, परन्तु अब धीरे धीरे ऊँटों की संख्या कम हो रही है।

(४) अन्य पशुः—गाय-बैल, भेड़-बकरी और ऊँट के अतिरिक्त राजस्थान में भैंस और घोड़े भी कई जगह मिलते हैं परन्तु उनकी संख्या अधिक नहीं है।

पशुओं के क्रय–विक्रय के लिये राजस्थान के विभिन्न भागों में पशु–मेले लगते हैं। नागौर, तिलवाड़ा, परबतसर, अलवर, भरतपुर, धौलपुर और पुष्कर के पशु मेले विशेष उल्लेखनीय हैं। आर्थिक दृष्टिकोण से इन पशु मेलों का विशेष महत्व इसलिये है कि पशुओं

वहाँ पर कपास की खेती की जाती है। उदयपुर विभाग के भीलवाड़ा और चित्तौड़, कोटा के झालावाड़ और बीकानेर के गंगानगर जिले में कपास का उत्पादन करते हैं। यह कपास यहाँ की पाली, भीलवाड़ा, किशनगढ़, विजयनगर और ब्यावर की कपड़े की मिलों में काम में आती है। थोड़ी-सी कपास निर्यात भी करते हैं।

(ऊ) तिलहनः—राज्य में कई प्रकार के तिलहन की खेती होती है। बाजरे के साथ शुष्क भागों में तिल को बोते हैं। गेहूँ के साथ सरसों, राई और अलसी बोते हैं। आजकल मूंगफली की पैदावार भी बढ़ाई जा रही है। अधिकांश तिलहन तेल निकालने के काम में आती हैं।

(ए) अन्य पैदावारः—उपजाऊ भूमि में सिंचाई कर गन्ने को बोते हैं। गंगानगर, टोंक, सवाई माधोपुर, उदयपुर और कोटा जिलों में गन्ने की खेती होती है। कई जगह तम्बाकू भी बोते हैं। नगरों के पास कुछ फल और शाक-सब्जी भी बोते हैं। परन्तु उनकी उपज बहुत कम होती है।

६. यांत्रिक शक्ति के साधन

कारखाने चलाने के लिये शक्ति के साधनों की आवश्यकता होती है। इन साधनों की राजस्थान में कमी है। राज्य में कोयले का अभाव है। हाँ, बीकानेर विभाग के पलाना स्थान में कुछ घटिया कोयला, जिसे लिग्नाइट कहते हैं, मिलता है। इसको बीकानेर के पावर हाउस और रेल के चलाने में काम में लेते हैं। पेट्रोलियम का उत्पादन भी राज्य में नहीं होता है। यह बात अवश्य है कि मरुस्थली प्रदेश में इसकी खोज जरूर की जा रही है। राज्य की बहुमुखी योजनाओं के समाप्त हो जाने पर जल-विद्युत अवश्य मिलने लगेगी।

इस समय राज्य के बड़े बड़े नगरों में बिजलीघर हैं जो बाहर से मंगाए हुए कोयले और तेल के आधार पर चलते हैं। इन बिजलीघरों से रोशनी और कारखाने चलाने के लिए बिजली मिलती है। राज्य की ओर से एक 'बिजली बोर्ड' की स्थापना हो चुकी है। इसके द्वारा बिजली का विकास किया जा रहा है। राज्य की ओर से २१ बिजलीघर हैं। भारत सरकार की ओर से १७ विद्युत-उत्पादक यंत्र ग्रामीण विद्युत् योजना के आधार पर लगाए जा रहे हैं।

इस प्रकार राजस्थान में विद्युत विकास के चार साधन उपलब्ध हो रहे हैं—कोयले और तेल पर चलने वाले पावर हाउस, भाकरा-नांगल की जल-विद्युत योजना, ग्रामीण विद्युत योजना और चम्बल जल-विद्युत योजना।

१०. मुख्य उद्योग

राजस्थान के बड़े उद्योग इस प्रकार हैं:—

(अ) सूती वस्त्र व्यवसायः—इस समय राजस्थान में कुल मिलाकर ११ ऐसे बड़े

११. ग्रामोद्योग

राजस्थान में विविध प्रकार के कुटीर उद्योग बहुत प्राचीन काल से ही प्रचलित हैं। उनमें मुख्य ये हैं :—

(अ) वस्त्र सम्बन्धी उद्योग:—राज्य के विभिन्न भागों में सूती कपड़ा हाथ से तैयार किया जाता है। हाथ से बुने कपड़े में खादी, रेजा और टुकड़ी मुख्य हैं। कोटा, गोविन्दगढ़, करौली और जालौर का कपड़ा प्रसिद्ध है। सूती कपड़े के अतिरिक्त मरुस्थली प्रदेश में ऊनी वस्त्र विशेषत: कम्बल तैयार किए जाते हैं। बीकानेर, फलौदी, जैसलमेर और बाड़मेर इनके लिए प्रसिद्ध हैं।

जोधपुर, पीपाड़, जयपुर, सांगानेर और कोटा में कपड़े की रंगाई अच्छी होती है। छपाई का काम जयपुर, जोधपुर और चित्तौड़ में अधिक होता है। कपड़े की बंधाई के लिए जोधपुर, नागौर, उदयपुर और कोटा प्रसिद्ध हैं।

(आ) चमड़े का व्यवसाय:—यह व्यवसाय दो प्रकार का है—चमड़ा कमाना और चमड़े से सामान बनाना। देहातों में कई जगह चमड़ा कमाकर उसे जूते बनाने योग्य बनाते हैं। चमड़े की वस्तुओं में जूते, काठियाँ, म्यान आदि बनते हैं। यह कार्य बड़े बड़े नगरों में होता है। जोधपुर नगर में बने जूते इतने सुन्दर होते हैं कि उन्हें बाहर भी निर्यात करते हैं।

(इ) दुग्ध व्यवसाय:—राज्य में पशुओं की संख्या पर्याप्त होने से दुग्ध व्यवसाय भी ग्रामीणों का धंधा है। आधुनिक ढंग की डेरियाँ तो बहुत कम हैं, परन्तु बड़े नगरों के निकट के गाँवों का दूध एकत्रित कर शहरों में भेज दिया जाता है। गाँवों में दूध से घी निकालते हैं।

राज्य के मरुस्थली और अर्द्ध मरुस्थली प्रदेश में घी अधिक उत्पन्न किया जाता है। जैसलमेर, बाड़मेर, फलौदी, सरदार शहर आदि नगर घी की मंडियाँ हैं।

(ई) मिट्टी का काम:—विविध रंग की मिट्टी से सुन्दर बर्तन बनाए जाते हैं। कई जगह मिट्टी से ईंटें बनाई जाती हैं जिनसे मकान बनाते हैं। जयपुर और मेड़ता में मिट्टी के सुन्दर खिलौने बनते हैं। मकानों की छत पाटने के लिये खपरेल भी मिट्टी से तैयार किये जाते हैं।

(उ) धातु संबंधी व्यवसाय:—लोहे की अंगीठी, कढ़ाई, चाकू, कैंची आदि वस्तुएँ कई जगह तैयार की जाती हैं। इन्हें बनाने में गाडिये लोहार कुशल होते हैं। वे इन्हें बेचते हुए फिरते रहते हैं।

जयपुर, पाली, जोधपुर और भरतपुर में पीतल के बर्तन अच्छे बनते हैं। भीलवाड़े में बर्तनों पर सुन्दर कलई करते हैं।

बीकानेर, सरदार शहर, चुरू, नागौर, फतेहपुर, लाडनूँ आदि नगरों में जहाँ धनाढ्य व्यक्ति रहते हैं, सोने और चाँदी के सुन्दर आभूषण तैयार होते हैं।

(ऊ) लकड़ी का काम:—डूँगरपुर, प्रतापगढ़, कोटा और उदयपुर में वन्य प्रदेश से लकड़ी प्राप्त कर उससे चारपाइयाँ, मेज, कुर्सी, तख्ते आदि बनाते हैं। बड़े नगरों में फर्नीचर के कारखाने भी हैं। उदयपुर, जहाजपुर, सज्जनपुर और सवाई माधोपुर में खैराद का काम बड़ा सुन्दर होता है। सवाई माधोपुर और उदयपुर के लकड़ी के कारखाने प्रसिद्ध हैं।

अरावली की तलहटी में कई स्थानों पर बाँस से सुन्दर टोकरियाँ बनाते हैं।

(ए) पत्थर का काम:—मकराने में संगमरमर पर सुन्दर खुदाई होती है। जैसलमेर के पीले पत्थर और डूंगरपुर के काले पत्थर से भी कई सुन्दर वस्तुएँ तैयार की जाती हैं। मकराने में बने संगमरमर के प्याले, गिलास, चकले आदि दूर दूर तक भेजे जाते हैं।

(ऐ) अन्य उद्योग:—कस्बों और नगरों में कोल्हू द्वारा तेल निकालते हैं। गंगानगर, कोटा और उदयपुर में गुड़ बनता है। नगरों में कई जगह साबुन बनाने के छोटे छोटे कारखाने हैं। नागौर, पाली, बालोतरा और जयपुर में बनी हाथी दाँत की वस्तुओं की बड़ी माँग रहती हैं।

१२. आबादी

राजस्थानी आबादी लगभग डेढ़ करोड़ है। आबादी का वितरण सब जगह समान नहीं हैं। सबसे अधिक लोग राज्य के पूर्वी मैदानी भाग में रहते हैं। सबसे कम आबादी पठारी भाग में है। राज्य के चारों प्राकृतिक भागों में जन-संख्या का वितरण इस प्रकार है:—

प्राकृतिक भाग	सम्पूर्ण जन-संख्या का प्रतिशत
१. शुष्क प्रदेश	३०
२. पूर्वी मैदान	४३
३. पठारी प्रदेश	१३
४. पहाड़ी प्रदेश	१४

पहाड़ी और पठारी प्रदेश में खेती के लिए सुविधा न होने से कम लोग रहते हैं। शुष्क प्रदेश की आबादी अपेक्षाकृत अधिक इसलिए है कि इसका विस्तार बहुत है।

जन-संख्या के घनत्व के अनुसार राज्य के विभिन्न प्राकृतिक भागों की अवस्था इस प्रकार है:—

प्राकृतिक भाग	जन-संख्या का घनत्व
शुष्क भाग	६१
पूर्वी मैदान	२१७
पठारी भाग	१६१
पहाड़ी प्रदेश	१७४
सम्पूर्ण राजस्थान	११७

राजस्थान के भरतपुर जिले में घनत्व सबसे अधिक है। वहाँ प्रति वर्ग मील में २६० मनुष्य पाए जाते हैं। जैसलमेर जिले में घनत्व सबसे कम है। वहाँ औसत मील में ६ मनुष्य ही रहते हैं।
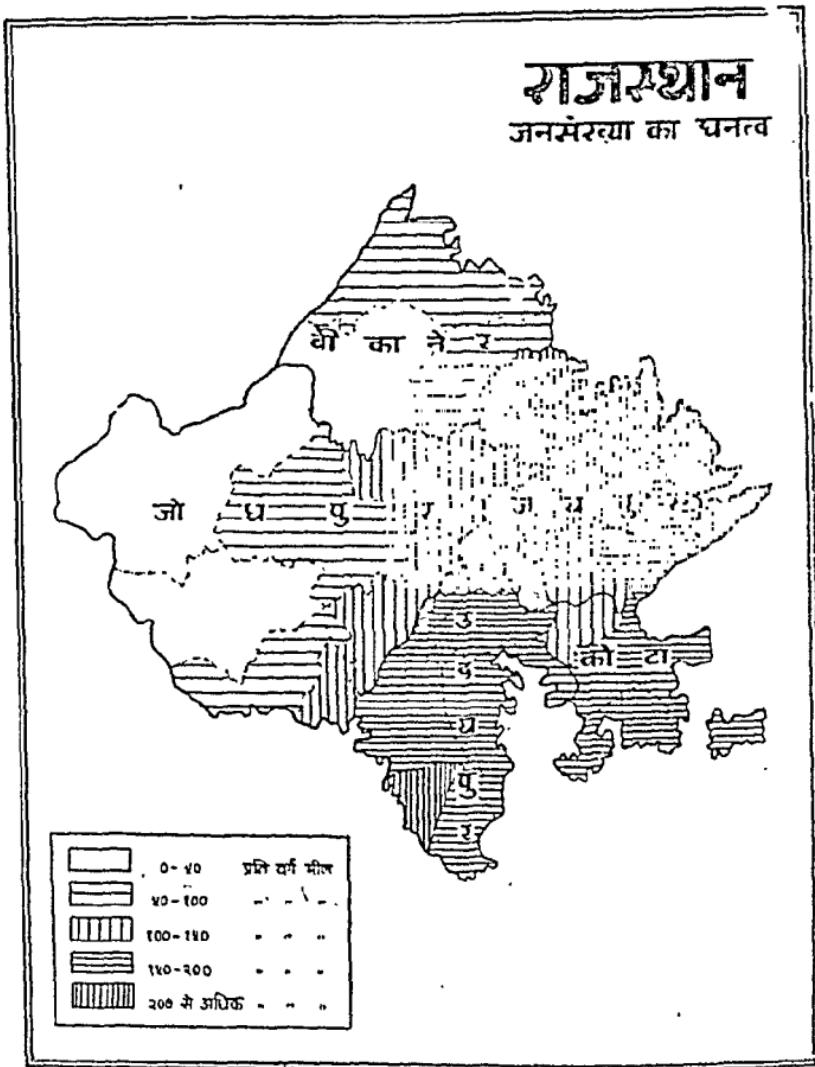
चित्र सं० १११. राजस्थान में जन-संख्या

राज्य की जन संख्या का लगभग ६८ प्रतिशत भाग खेती करके अपना गुजारा करता है अतः खेती ही लोगों का मुख्य धंधा है।

१३. यातायात के साधन

राजस्थान में यातायात के साधनों की कमी है। राज्य में दो मुख्य रेल-मार्ग हैं—उत्तरी रेलवे और पश्चिमी रेलवे। राज्य के क्षेत्रफल को देखते हुए रेल-मार्ग बहुत कम हैं।

की बिक्री से पशु-पालकों को अच्छी आमदनी होती है और सरकार को भी अच्छी रकम मिलती है।

७. सिंचाई का प्रबन्ध

राजस्थान की सबसे बड़ी कठिनाई सिंचाई के साधनों की कमी होना है। राज्य की जितनी भूमि में खेती होती है उसके लगभग दसवें भाग में सिंचाई के साधन उपलब्ध हैं। इन दिनों राज्य की विकास योजनाओं में सिंचाई के साधनों में वृद्धि करने की ओर विशेष ध्यान दिया जा रहा है।

सिंचाई के तीन साधन राजस्थान में प्रचलित हैं—

(अ) कुएँ:—राज्य की अधिकांश भूमि कुओं द्वारा ही सींची जाती है। जिन भागों में जमीन के नीचे २० फीट की गहराई तक पानी मिल जाता है वहाँ कुओं की संख्या अधिक है। उदयपुर, कोटा और जयपुर विभागों के कई भागों में किसान कुओं द्वारा सिंचाई करते हैं। जोधपुर विभाग के जैसलमेर और बाडमेर जिले तथा बीकानेर विभाग में कुओं की कमी है।

आजकल कुओं में बिजली के पम्प लगाकर भी सिंचाई की जाने लगी है। ऐसा करने से थोड़े समय में एक बड़े खेत की सिंचाई हो जाती है। कुएँ खोदने के लिए राज्य सरकार की ओर से तकावी ऋण मिलता है।

(आ) तालाब:—कुओं के पश्चात सिंचाई का सुलभ साधन तालाब है। पहाड़ी भाग में तालाबों में कई दिनों तक पानी ठहर जाता है। उदयपुर विभाग, कोटा विभाग और जोधपुर के उन क्षेत्रों में जो कि अरावली के निकट हैं, कई तालाब हैं जिनसे सिंचाई की जाती है।

(इ) नहरें:—राजस्थान में सिंचाई की तीन बड़ी योजनाएँ हैं—ये हैं—भाकरा नांगल, चम्बल और जवाई। इन योजनाओं द्वारा नदियों में बड़े बांध बनाकर पानी रोक लिया गया है और उससे नहरें निकाल कर खेतों की सिंचाई की जाती है।

भाकरा नांगल:—पंजाब और राजस्थान की यह संयुक्त योजना है। पंजाब में सतलज नदी पर बाँध बनाकर उससे नहरें निकाली गई हैं। सिंचाई के अतिरिक्त इसके पानी से जल-विद्युत भी पैदा की जा रही है।

इस योजना से राजस्थान के बीकानेर डिवीजन में स्थित गंगानगर जिले के मादरा, सूरतगढ़, नौहर, हनुमानगढ़, रायसिंहनगर, पदमपुर, गंगानगर आदि स्थानों में बहुत [illegible] पहुँचेगा। इसी योजना के आधार पर सूरतगढ़ में भारत सरकार की ओर से एक बड़ा [illegible] तैयार किया गया है जिसमें रूस की ओर से पर्याप्त सहायता मिली है।

भाखरा नाँगल की नहरों से भूमि की सिंचाई होने के साथ साथ सबसे बड़ा लाभ यह होगा कि इस क्षेत्र के गांव गांव में बिजली की रोशनी हो जायगी।

चम्बल योजनाः—राजस्थान में सदा बहने वाली चम्बल ही ऐसी नदी है जिससे साल भर पानी सिंचाई के लिए मिल सके। चम्बल सिंचाई की योजना के अन्तर्गत चार बाँध बन रहे हैं। पहला बाँध 'गांधी सागर' मध्य प्रदेश में है। दूसरा बाँध 'राणा प्रताप सागर' है। यह गांधी सागर से ३१ मील दूर है। तीसरा 'कोटा बाँध' है जो कोटा नगर से १० मील दूर दक्षिण में है। चौथा बाँध 'कोटा सिंचाई बाँध' है जो कोटा नगर के पास है।

चम्बल योजना से मध्य प्रदेश और राजस्थान दोनों ही राज्यों को सिंचाई का लाभ होगा। योजना सन् १९६२–६३ तक पूर्ण रूप से काम करने लगेगी।

जवाई योजनाः—जोधपुर विभाग में लूनी नदी की सहायक जवाई को रोककर यह बाँध तैयार किया गया है। इस बाँध से सिंचाई का कार्य प्रारम्भ हो गया है और पाली जिले की कई तहसीलों में इसके द्वारा खेती का उत्पादन बढ़ गया है।

इन तीन बड़ी योजनाओं के अतिरिक्त राजस्थान में एक विशाल सिंचाई की योजना तैयार हो रही है। इसका नाम 'राजस्थान नहर' है। राज्य के मरुस्थली प्रदेश अर्थात् जोधपुर और बीकानेर विभागों की उजाड़ भूमि इस नहर के बन जाने से हरी-भरी हो जायगी। न केवल राजस्थान ही बल्कि भारत की यह एक बड़ी योजना मानी गई। इसकी लागत ६६ करोड़ रुपया है और इसके तैयार हो जाने पर लगभग २६ लाख एकड़ भूमि की सिंचाई होगी।

इन बड़ी योजनाओं के अतिरिक्त राज्य के विभिन्न भागों में मध्य एवं लघु योजनाएँ हैं जिनसे अतिरिक्त सिंचाई की जा रही है।

८. खेती की उपज

राजस्थान के अधिकांश लोग खेती करके ही अपना जीवन निर्वाह करते हैं। राज्य की मुख्य पैदावार इस प्रकार हैः—

(अ) गेहूँः—जहाँ पर दुमट मिट्टी है और सिंचाई के साधन उपलब्ध हैं, वहाँ गेहूँ बोया जाता है। राज्य के पूर्वी भाग विशेषतः अलवर, भरतपुर और जयपुर जिलों में गेहूँ की खेती अच्छी होती है। बीकानेर के गंगानगर जिले में नहरों की सिंचाई की व्यवस्था होने से गेहूँ का उत्पादन बहुत होने लगा है।

(आ) जवार-बाजराः—इन उपजों के लिए अधिक पानी की आवश्यकता नहीं होती। न ही इनके लिये बहुत उपजाऊ मिट्टी की जरूरत होती है। बाजरे की खेती मरुस्थली प्रदेश में वर्षा के दिनों में होती है। बीकानेर, चूरू, सीकर, जैसलमेर, बाड़मेर, नागौर आदि जिलों की मुख्य पैदावार बाजरा ही है। जवार कोटा विभाग में अधिक होती है।

आजकल गांवों में, जहाँ रेल-मार्ग नहीं हैं, मोटरें चलने लगी हैं। इनके लिये सड़कों में वृद्धि की जा रही है। द्वितीय पंचवर्षीय योजना काल में कुल मिलाकर २,७०० मील लम्बी नई सड़कें बनाई जायँगी और वर्तमान सड़कों में से १,८३० मील सड़कों में सुधार किया जायगा।

फिर भी मरुस्थली प्रदेश में सड़कों का अभाव है। वहाँ आज भी ऊँट ही सवारी और बोझा ढोने का मुख्य साधन बना हुआ है।

१४. व्यापार

राज्य की आबादी का लगभग ५.४ प्रतिशत व्यापार में लगा हुआ है। यहाँ के व्यापारी भारत भर में प्रसिद्ध हैं।

राज्य से निर्यात होनी वाली वस्तुओं में ऊन, मुलतानी मिट्टी, जिप्सम, नमक, चमड़ा, कम्बल, घी, संगमरमर, हाथी दाँत का सामान आदि हैं।

बाहर से आने वाली वस्तुओं में विभिन्न प्रकार का वस्त्र, खनिज तेल, शक्कर, चाय, गेहूँ, कपास, मशीनें, रासायनिक पदार्थ, दवाइयाँ, लोहे का सामान आदि हैं।

राजस्थान के व्यापार का अधिकांश भारत के अन्य राज्यों से ही संबंधित है। विदेशों से इस सम्बन्ध में इस राज्य का सीधा सम्पर्क नहीं है।

१५. प्रमुख नगर

राजस्थान के बड़े बड़े नगर वे ही हैं जो पहले देशी राज्यों की राजधानियाँ थीं।

(अ) जयपुरः—यह नगर राजस्थान की वर्तमान राजधानी है। उत्तर प्रदेश और दिल्ली से निकट होने के कारण जयपुर का विशेष महत्व है। बहुत पहले से ही यह व्यापारिक नगर रहा है और आजकल यह औद्योगिक नगर बन रहा है। यह सड़कों और रेलों का केन्द्र भी है।

(आ) अजमेरः—राजस्थान में इस नगर की केन्द्रीय स्थिति है। अजमेर प्राचीन काल से ही कई राजाओं की राजधानी रही है। प्राचीन नगर होने से इसका विशेष महत्व है। यह धार्मिक स्थान भी है। नगर में पश्चिमी रेलवे का बड़ा कारखाना है। अहमदाबाद और दिल्ली के बीच के रेल-मार्ग में अजमेर स्थित होने से इसका महत्व और भी बढ़ गया है। राजस्थान में सम्मिलित होने के पश्चात् नगर में राज्य के कई महत्वपूर्ण महकमों की बैठक रख दी गई है।

(इ) जोधपुरः—उत्तरी रेलवे का यह बड़ा स्टेशन है। यहाँ पर रेलवे का बड़ा कारखाना है। राजस्थान का हाई कोर्ट जोधपुर में है। नगर के पास ही वायु सेना का शिक्षण केन्द्र है। मरुस्थली प्रदेश के किनारे पर स्थित होने से जोधपुर का विशेष महत्व है। यहीं पर

भारत सरकार की ओर से मरुस्थल को आगे बढ़ने से रोकने के लिये एक विज्ञानशाला बनी हुई है।

(ई) उदयपुरः—नगर के आसपास का प्राकृतिक दृश्य बड़ा सुन्दर है। निकट ही बड़ी झील है जो देखने योग्य है। आजकल नगर में बहुत सुधार होगया है। यह विद्या का केन्द्र बन गया है। रेलवे कर्मचारियों के प्रशिक्षण के लिये भी उदयपुर में एक केन्द्र खोल दिया गया है।

(उ) बीकानेरः—पहले यह नगर बीकानेर राज्य की राजधानी था। यह मरुस्थल में स्थित है और उत्तरी रेलवे का स्टेशन है।

बीकानेर में ऊन के कम्बल, लोई और गलीचे अच्छे बनते हैं।

(ऊ) कोटाः—पठारी प्रदेश में यह सुन्दर नगर है। चम्बल बांध के तैयार हो जाने पर यह नगर बहुत उन्नति कर जायगा। यह रेलों का केन्द्र है।

(ए) माउन्ट आबूः—राजस्थान का पर्वतीय नगर है। यह लगभग साढे तीन हजार फीट की ऊंचाई पर स्थित है। गर्मी के दिनों में बहुत से लोग वहां जाते हैं। वहां का प्राकृतिक सौंदर्य दर्शनीय है।

प्रश्न

१. राजस्थान का निर्माण किस प्रकार हुआ?
२. राजस्थान को कितने प्राकृतिक भागों में बांट सकते है? कौन कौन से?
३. राज्य के मुख्य मुख्य सिंचाई के साधन कौन कौन से हैं?
४. राजस्थान के बड़े बड़े उद्योग कौन कौन से हैं।
५. राज्य के पूर्वी मैदान में आबादी घनी क्यों है?